माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

पूरन सिंह एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (SJ) No. 104 of 2004. Decided on 10th April, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 152 वर्ष 1998 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 5, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 25.11.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147/323, 149/307, 148, 323 एवं 324—हत्या का प्रयास एवं घोर उपहति—विधि विरूद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—पक्षगण गोत्रज हैं और पक्षों के बीच मामला एवं प्रति-मामला है—वर्तमान घटना भूमि विवाद के संबंध में पक्षों के बीच 22 वर्ष पहले हुई—डॉक्टर ने तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित गंभीर प्रकृति की उपहति पाया है जो मामला के सूचक एवं घायल का बयान संपुष्ट करता है—अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि एवं दंडादेश उपांतरित। (पैराएँ 23, 24 एवं 25)

निर्णयज विधि.—2003(9) SCC 426; 2002 (7) SCC 210—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. P. K. Mukhopadhyay, For the Petitioner; Mr. Vikash Kishore, For the Resp.-State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. अपीलार्थीगण बलियापुर पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 42 वर्ष 1995 (दिनांकित 24.6.1995), जी॰ आर॰ सं॰ 2281 वर्ष 1995 के तत्सम से उद्भूत होनेवाले सत्र विचारण सं॰ 152 वर्ष 1998 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 5, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 25.11.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा समस्त अपीलार्थियों को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया है। जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 2 बाबूलाल सिंह का संबंध है, उसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 एवं 324 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और जहाँ तक अन्य अपीलार्थियों अर्थात पूरन सिंह, आयन सिंह, सरवन सिंह, मोती लाल सिंह, केशव सिंह और भुचुंग सिंह का संबंध है, उन्हें भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/323 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है किंतु समस्त अभियुक्तों/अपीलार्थियों को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 149/307 के अधीन अपराध के लिए दोषमुक्त किया गया है। जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 2 बाबूलाल सिंह का संबंध है, विद्वान विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष का कठोर कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन अपराध के लिए दो वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया है। जहाँ तक अन्य दोषसिद्धों/अपीलार्थियों का संबंध है, उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन छह माह का कठोर कारावास और भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन अपराध के लिए छह माह का कारावास दंडादेशित किया गया है।

3. बलियापुर पुलिस थाना के सबइंसपेक्टर राजेन्द्र सिंह द्वारा बलियापुर में अपराह्न 1 बजे दर्ज सूचक बासुदेव राय (अ॰ सा॰ 6) के फर्दबयान के मुताबिक अभियोजन मामला यह है कि सूचक ने कथन किया है कि 24.6.1995 को प्रातः लगभग 6 बजे जब सूचक और उसके भाई भरत, मथुरा एवं प्रयाग

अपना खेत जोत रहे थे, इस बीच उनके गोत्रज अर्थात बाबूलाल सिंह, जगरनाथ सिंह (मृतक), पूरन सिंह, आयन सिंह, सरवन सिंह, मोती लाल सिंह, केशव सिंह एवं भुचुंग सिंह लाठी एवं टांगी से लैस होकर वहाँ आए और उसको गाली देने लगे और उनको खेत नहीं जोतने को कहा क्योंकि भूमि उनकी थी जिस पर अभियुक्तगण क्रोधित हो गए और तत्पश्चात बाबूलाल सिंह ने सूचक (वासुदेव राय) पर टांगी से प्रहार किया, पूरन सिंह ने सूचक पर लाठी से प्रहार किया और उसके मस्तक तथा शरीर पर खून बहने की उपहतियाँ कारित किया। सूचक द्वारा आगे अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तों ने सूचक के भाइयों भरत राय तथा प्रयाग राय पर लाठी एवं टांगी से प्रहार किया। भरत राय ने दायीं बाँह एवं छाती पर उपहति पाया है। मथुरा राय ने अपने दाएँ हाथ एवं दाएँ पैर पर उपहति पाया है। प्रयाग राय ने दाएँ हाथ एवं दाएँ पैर पर उपहति पाया है, किंतु विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं किया गया है जहाँ तक सूचक के भाइयों पर ये उपहतियाँ कारित की गयी है। आगे यह कथन किया गया है कि हल्ला करने पर सहग्रामीण जीतू गोप, कालू गोप एवं छोटू सिंह एवं अन्य वहाँ आए और उनको शांत कराया और उन्होंने घटना देखा है और वे घटना के बारे में कहेंगे। सूचक ने कहा है कि प्रश्नगत भूमि उनकी है चूँकि वे अरसे से इस पर खेती कर रहे हैं और इस दशा में अभियुक्तों का हिस्सा नहीं है।

4. सूचक वासुदेव राय के फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 323, 341, 324 के अधीन दिनांक 24.6.1995 का बलियापुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 42 वर्ष 1995 दर्ज किया।

5. मामले का अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 323, 324, 341 के अधीन समस्त अभियुक्तों के विरूद्ध दिनांक 30 जून, 1995 का आरोप पत्र सं॰ 36 वर्ष 1995 दाखिल किया।

6. विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने अपराध का संज्ञान लिया और मामला सत्र न्यायालय को 1.4.1998 को सुपुर्द किया। समस्त अभियुक्तों के विरूद्ध 1.6.2001 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149 एवं 307 के अधीन आरोप विरचित किया गया है जिसके प्रति अभियुक्तों/अपीलार्थियों ने निर्दोषिता का अभिवचन किया, अत: उनका विचारण किया गया था।

7. अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल सात गवाहों का परीक्षण किया है। छोटू सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने मुख्य प्रतिपरीक्षण के दौरान कथन किया है कि हल्ला सुनने पर वह घटनास्थल पर आया और गवाह के मस्तक से खून बहते देखा और आगे कथन किया कि उसने किसी व्यक्ति को वहाँ से भागते नहीं देखा था। इस गवाह ने अभियुक्तों को न्यायालय में पहचाना है और स्वीकार करता है कि अभियुक्तगण गोत्रज हैं। इस गवाह ने बाबूलाल एवं अन्य पर कारित उपहति और बाबूलाल द्वारा माथुर, भरत तथा बसु एवं अन्य के विरूद्ध दाखिल प्रति मामला के बारे में इनकार किया है।

8. तालो गोप का परीक्षण अ॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि छह वर्ष पहले प्रात: 6 बजे जब वह धान के खेत जा रहा था, उसने माथुर, भरत, प्रयाग एवं बसु को अपना बाड़ी जाते देखा और तत्पश्चात बाबूलाल, मोतीलाल सिंह, आयन सिंह, जगन्नाथ सिंह, भुचुंग सिंह वहाँ आए और प्रहार करने लगे। इस गवाह ने कथन किया है कि बाबूलाल सिंह ने टांगी से बासु राय के मस्तक पर प्रहार किया और अन्य सात अभियुक्तों ने तीन भाइयों भरत, प्रयाग एवं माथुर पर उपहति

कारित करते हुए प्रहार किया। माथुर सिंह ने अपने हाथ पर फ्रैक्चर उपहति पाया और अपने घुटना पर भी उपहति पाया। प्रयाग ने अपने मस्तक एवं दाएँ हाथ पर उपहति पाया। भरत ने अपनी छाती उप उपहति पाया। उसने आगे कथन किया कि बासुदेव राय ने अपने मस्तक पर टांगी से उपहति पाया है जिस कारण खून बह रहा था। इस गवाह ने कहा है कि घटना स्थल माथुर सिंह का है। इस गवाह ने प्रतिपरीक्षण के दौरान पैराग्राफ 9 में कथन किया है कि उसे जानकारी नहीं है कि घटना स्थल पूर्वजों के संयुक्त नाम में दर्ज किया गया है। उसने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 14 पर स्वीकार किया है कि इसी घटना के लिए उसे भी झूठा मामला में अभियुक्त बनाया गया है, किंतु उसने कोई उपहति नहीं पाया है जैसा उसके प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 16 में कथन किया गया है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि घटना के 10-12 दिन बाद पुलिस गाँव आयी, किंतु कोई वस्तु जब्त नहीं किया था। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैरा 20 में कथन किया है कि बाबूलाल ने कोई उपहति नहीं पाया है और उसने नहीं कहा है कि बाबूलाल का इलाज अस्पताल में किया गया है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि पक्षों के बीच भूमि के संबंध में विवाद नहीं है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि उसने बासुदेव राय की खून बहती उपहति देखा है और बाबूलाल कुछ दूरी पर खड़ा था।

9. श्री भरत राय का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। वह घायल गवाह और सूचक का भाई है। इस गवाह ने कथन किया है कि जब वे खेत जोत रहे थे, बाबूलाल वहाँ गया और उनको खेत जोतने से मना किया। जब उन्होंने कारण पूछा, प्रहार किया गया था। बाबूलाल ने वासुदेव राय के मस्तक पर खून बहती उपहति कारित किया। इस गवाह पर आयन सिंह द्वारा उसकी छाती के बाएँ भाग पर उपहति कारित करते हुए प्रहार किया गया था। पूरन सिंह ने माथुर राय पर लाठी से प्रहार किया और सरवन सिंह द्वारा लाठी से उसके हाथ पर उपहति कारित करते हुए प्रयाग राय पर प्रहार किया गया था। हल्ला करने पर सहग्रामीण कालो गोप, जीतू गोप एवं छोटू सिंह वहाँ आए और तत्पश्चात अभियुक्तगण भाग गए। इस गवाह ने प्रतिपरीक्षण के दौरान स्वीकर किया है कि अभियुक्तगण उसके गोत्रज हैं किंतु उनकी भूमि का बँटवारा हो चुका है। कुछ जमीन खरीदी गयी है, कुछ पैतृक है और उसके जन्म के पहले अचल संपत्ति का बँटवारा किया गया था। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि विवादित भूमि खरीदी गयी भूमि है और इसे बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा ले लिया गया है और समस्त व्यक्तियों के विरूद्ध नोटिस जारी की गयी है। इस गवाह ने आगे स्वीकार किया है कि अभियुक्तों द्वारा झूठा मामला संस्थित किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि पुलिस द्वारा अस्पताल में बयान दर्ज किया गया था।

10. माथुर राय का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया है। यह गवाह घायल गवाह है और सूचक का भाई है जिसने अभियोजन मामला का समर्थन यह कथन करते हुए किया है कि बाबूलाल ने टांगी से बासुदेव राय के मस्तक पर प्रहार किया। इस गवाह माथुर राय के दाएँ हाथ एवं दाएँ पैर पर पूरन सिंह द्वारा प्रहार किया गया है। भरत राय की छाती के बाएँ भाग पर ज्ञान सिंह द्वारा प्रहार किया गया है। सरवन सिंह ने लाठी से उसके हाथ पर प्रहार किया। इस गवाह ने कथन किया है कि घटना के बाद वे पुलिस थाना गए और तत्पश्चात डॉक्टरों द्वारा उनका परीक्षण किया गया था। प्रतिपरीक्षण के दौरान, इस गवाह ने स्वीकार किया है कि अभियुक्तगण उनके गोत्रज हैं और विवादित भूमि बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा अर्जित नहीं की गयी है और न ही उन्हें मुआवजा का भुगतान किया गया है। इस गवाह ने यह भी स्वीकार किया है कि इस अभिकथन के साथ कि बाबूलाल सिंह एवं अन्य द्वारा उनपर प्रहार किया गया है, मामला

संस्थित किया गया है जो न्यायालय में लंबित है और इसे उनके अपने बचाव के लिए संस्थित किया गया है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि बाबूलाल सिंह एवं पूरन सिंह का अस्पताल में परीक्षण नहीं किया गया है। इस गवाह ने अपने हाथ पर एवं अपने पैर पर फ्रैक्चर उपहति पाया है।

11. प्रयाग राय का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है जो सूचक का भाई एवं एक अन्य घायल है। इस गवाह ने यह भी कथन किया है कि बाबूलाल ने टांगी से वासुदेव राय के मस्तक पर प्रहार किया। प्रयाग सिंह ने माथुर राय पर लाठी से प्रहार किया और सरवन सिंह द्वारा उसके मस्तक दाएँ हाथ तथा पैर पर लाठी से प्रहार किया गया था। मोती लाल ने वासुदेव के दाएँ हाथ पर लाठी से प्रहार किया। हल्ला होने पर सह ग्रामीण लालो, जीतो, छोटू आए और उन्होंने अभियुक्तों को शांत किया। इस गवाह ने कहा है कि डॉक्टर द्वारा उसका चिकित्सीय परीक्षण किया गया था। अपने प्रतिपरीक्षण के पैरा 9 पर इस गवाह ने कथन किया है कि विवादित भूमि संयुक्त संपत्ति है जिसमें गोपी राय, स्वपन राय, सदन राय का भी हिस्सा है किंतु वह जमीन के आयाम के बारे में नहीं कह सकता था। इस गवाह ने यह कथन भी किया है कि भूमि बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा अर्जित नहीं की गयी है अथवा कोई नोटिस जारी नहीं किया गया है। इस गवाह ने आगे स्वीकार किया कि भूमि का विलेख कागज उसके पिता एवं चाचाओं के नाम में दर्ज है और इसे उसके पिता एवं चाचा द्वारा 7.7.1958 को बाउरी सिंह से खरीदा गया था जिसे प्रदर्श 3 के रूप में आपत्ति के साथ चिन्हित किया गया है क्योंकि इस गवाह का परीक्षण वापस बुलाने पर 25.3.2003 को किया गया था।

12. इस मामला का सूचक एवं घायल वासुदेव राय का परीक्षण अ॰ सा॰ 6 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि 24.6.1995 को प्रातः 6 बजे जब सूचक अपने भाइयों माथुर, प्रयाग, भरत के साथ खेत जोत रहा था, अभियुक्त बाबूलाल सिंह, पूरन सिंह, मोती लाल सिंह, आयन सिंह, सरवन सिंह, भुचुंग सिंह, केशव सिंह, जगरनाथ सिंह वहाँ आए और उनको खेत जोतने से मना किया। जब सूचक ने यह कहकर भूमि पर दावा किया कि वे इसे जोतेंगे। तत्पश्चात बाबूलाल सिंह ने टांगी से उसके मस्तक पर वार किया। पूरन सिंह ने लाठी से उसके हाथ पर प्रहार किया और दाएँ बाँह का फ्रैक्चर कारित किया और अन्य अभियुक्तों ने माथुर, प्रयाग, भरत पर प्रहार किया और माथुर राय का फ्रैक्चर तथा इस गवाह के दोनों घुटनों पर उपहति कारित किया। भरत राय ने छाती, बाएँ हाथ एवं दोनों घुटनों पर उपहति पाया। प्रयाग ने मस्तक एवं पूरे शरीर पर उपहति पाया है जिसे लाठी द्वारा कारित किया गया है। जब पड़ोसी छोटू सिंह, जीतू गोप, कालू गोप एवं अन्य वहाँ आए, उन्होंने उनको बचाया और उन्होंने घटना देखा है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि विवादित भूमि बड़ा भूखंड है और वे दस्तावेज तथा इलाज का कागज प्रस्तुत करेगी, यदि ऐसा आवश्यक हुआ। इस गवाह ने स्वीकार किया है कि अभियुक्त जगरनाथ सिंह की मृत्यु हो गयी है किंतु अन्य जीवित हैं। प्रतिपरीक्षण के दौरान, इस गवाह ने यह भी स्वीकार किया है कि बाबू लाल सिंह उनका गोत्रज है और आगे स्वीकार किया है कि बाबूलाल सिंह ने उसी तिथि की घटना के लिए उनके विरूद्ध मामला भी दाखिल किया है जिसमें यह गवाह और प्रयाग राय, माथुर राय, बाबूलाल राय गोबर्धन गोप, कालू गोप अभियुक्त हैं। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि उसे कोई जानकारी नहीं है कि क्या प्रश्नगत भूमि बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा अर्जित की गयी है और न ही उसे यह जानकारी है कि यही भूमि एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 25 वर्ष 1991 के अधीन अर्जित की गयी है जिसमें पक्षों के बीच सुलह हुआ है। प्रतिपरीक्षण के दौरान, इस गवाह ने कथन किया है कि उपहति पाने के बाद वह पुलिस थाना गया, उसका बयान दोपहर 1 बजे बलियापुर अस्पताल में पुलिस सब इंसपेक्टर

द्वारा दर्ज किया गया था। उसने फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया और इसे प्रदर्श–1 चिन्हित किया गया था, किंतु अन्य भाइयों का हस्ताक्षर उस पर नहीं था। इस गवाह ने कथन किया है कि पुलिस को रक्तरंजित वस्त्र दिए गए थे, किंतु उसे जानकारी नहीं है कि पुलिस ने इसे जब्त किया है या नहीं, इस गवाह ने आगे कथन किया है कि वह नहीं कह सकता था कि किस अभियुक्त ने किस पर किस चीज से प्रहार किया और न ही वह कह सकता है कि किस पर प्रहार किया गया था। इस गवाह ने कहा है कि उसे कालू गोप, छोटू सिंह एवं जीतू गोप ने बचाया।

13. डॉ॰ जितेन्द्र कुमार, चिकित्सा अधिकारी, प्राथमिक अस्पताल, बलियापुर का परीक्षण अ॰ सा॰ 7 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि 25.6.1995 को जब वह चिकित्सा अधिकारी, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, बलियापुर के रूप में पदस्थापित था, पुलिस तलब पर उसने वासुदेव राय का परीक्षण किया और (i) 2" x ½"x½ का कटने का जख्म पाया। धमनी कटने के कारण काफी खून बह रहा था। मरीज हेमरेज के कारण आघात में था। (ii) दायीं कलाई पर 2"x1" का सूजन। उपहति सं॰ 1 तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित की गयी थी और गंभीर प्रकृति की थी। उपहति सं॰ 2 कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी थी और सामान्य प्रकृति की थी। उसी दिन उसने भरत राय का परीक्षण किया और दो उपहतियाँ पाया (1"x½" का सूजन और छाती पर 1"x1/2" का सूजन/समस्त उपहतियाँ सामान्य प्रकृति की थी ओर कड़े एवं भोथरे पदार्थ जैसे लाठी द्वारा कारित की गयी थी।

इस गवाह ने उसी दिन पर माथुर राय का परीक्षण भी किया है और तीन उपहतियाँ पाया है। (i) दाएँ अग्रबाहु की एक अस्थि का फ्रैक्चर (ii) दाएँ घुटना पर 2"x2" का सूजन और (iii) बाएँ घुटना पर 2"x1" का सूजन। उपहति सं॰ 1 कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित गंभीर प्रकृति की थी। उपहति सं॰ 2 एवं 3 कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित सामान्य प्रकृति की थी।

इस गवाह ने उसी दिन पर प्रयाग राय का भी परीक्षण किया है और चार उपहतियाँ पाया है:–(i) अग्रबाहु के दाएं भाग पर 1" x ½" x ½" का विदीर्ण जख्म, (ii) बाँह पर हेमाटोमा 2½"x1" सूजन, (iii) दाएँ पैर पर 1"x1" का सूजन (iv) बाएँ कंधा पर 2½" x 2" का सूजन, समस्त उपहतियाँ कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित सामान्य प्रकृति की थी। इस गवाह ने उपहति रिपोर्ट को सिद्ध किया है जिन्हें प्रदर्श 2, 2/1, 2/2 एवं 2/3 चिन्हित किया गया है। प्रतिपरीक्षण के दौरान, इस गवाह ने स्वीकार किया है कि उसने उल्लेख नहीं किया है कि वासुदेव राय की उपहति संख्या 1 प्रवेश का जख्म नहीं हैं और न ही उसने उल्लेख किया है कि ऐसी उपहति मस्तक पर कारित की गयी थी। इस गवाह ने आगे स्वीकार किया है कि फ्रैक्चर उपहति की किसी एक्सरे रिपोर्ट के बिना उसने रिपोर्ट दिया है, किंतु वह नहीं कह सकता था कि दाएँ अग्रबाहु की कौन सी अस्थि फ्रैक्चर हुई है। इस गवाह ने अभियुक्तों जगरनाथ सिंह एवं बाबूलाल सिंह की उपहति भी सिद्ध किया है और इसे प्रदर्श x एवं y चिन्हित किया गया है, किंतु उसने कहा है कि वह नहीं कह सकता है किसने ऐसी उपहति रिपोर्टों को जारी किया है क्योंकि उस दिन उस प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में चार डॉक्टर थे।

14. अभियुक्तों का 12.9.2003 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन परीक्षण किया गया था जिसमें उन्होंने पीड़ितों पर कारित प्रहार से इनकार किया है।

15. संतू राय का परीक्षण बचाव गवाह के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि वह दोनों पक्षों को जानता है और भूखंड सं॰ 81 की एक एकड़ 49 डिसमिल माप वाली भूमि सुखलाल सिंह के नाम में दर्ज की गयी है जिस पर केवल 37 डिसमिल के संबंध में अभियुक्तों द्वारा खेती की जा रही है क्योंकि यह उनकी पूर्वज की संपत्ति है। इस गवाह ने आगे कथन किया है कि भूमि अभियोजन पक्ष एवं अभियुक्त पक्ष दोनों की संयुक्त संपत्ति है।

16. विद्वान विचारण न्यायालय ने पक्षों को सुनने के बाद अपीलार्थियों को दिनांक 25.11.2003 के आक्षेपित निर्णय के तहत दोषसिद्ध किया। अपीलार्थी बाबूलाल सिंह को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148/324 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और शेष अपीलार्थियों अर्थात पूरन सिंह, आयन सिंह, सरवन सिंह, मोतीलाल सिंह, केशव सिंह एवं भुचुंग सिंह को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147/323 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, किंतु विद्वान विचारण न्यायालय ने समस्त अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 149/307 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया है।

17. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री पी॰ के॰ मुखोपाध्याय ने निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से पक्षों के बीच भूमि विवाद है और उसी घटना के संबंध में प्रति मामला बलियापुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 41 वर्ष 1995 (जी॰ आर॰ सं॰ 2280 वर्ष 1995) है। उन्होंने आगे स्वीकार किया है कि इस मामला में आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया है जिसने अभियोजन मामला पर गंभीर प्रतिकूलता कारित किया है क्योंकि अपीलार्थियों को घटना स्थल, घटना के तरीका और जगरनाथ सिंह, पूरन सिंह एवं बाबूलाल द्वारा पायी गयी उपहतियों, जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है के संबंध में अन्वेषण अधिकारी का प्रतिपरीक्षण करने का अवसर नहीं दिया गया था।

18. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि प्राथमिकी बलियापुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 41 वर्ष 1995 प्रदर्श 1 के रूप में चिन्हित की गयी है और आरोप-पत्र सं॰ 36 वर्ष 1995 प्रदर्श B के रूप में चिन्हित किया गया है।

19. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि **म॰ प्र॰ राज्य बनाम मिसरी लाल (मृत) एवं अन्य, 2003 (9) SCC 426** में प्रकाशित निर्णय की दृष्टि में, मामला तथा प्रति मामला का साथ विचारण किया जाना चाहिए ताकि उसी घटना के लिए विरोधी निर्णय नहीं हो, किंतु इस मामला में विद्वान विचारण न्यायालय ने केवल वर्तमान मामला का विचारण किया है और बलियापुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 41 वर्ष 1995 का वर्तमान मामला में संयुक्त रूप से विचारण नहीं किया गया है।

20. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि बासुदेव राय द्वारा लाया गया अभियोजन मामला जगरनाथ सिंह, पूरन सिंह एवं बाबूलाल सिंह द्वारा पायी गयी उपहति के बारे में प्रकट नहीं करता है और **सुब्रमनियम एवं अन्य बनाम तमिलनाडू राज्य, 2002(7) SCC 210** में निर्णय की दृष्टि में अभियुक्त पर उपहति स्पष्ट करने में अभियोजन की ओर विफलता की ओर ले जाता है यद्यपि उपहतियाँ सामान्य प्रकृति की थी और अभियोजन को अपनी बाध्यता से युक्त नहीं करती है, अत: न्यायालय निष्कर्ष निकाल सकता है कि अभियोजन ने घटना का सच्चा विवरण नहीं दिया है। ऐसी पृष्ठभूमि में, अभियुक्त/अपीलार्थियों को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए क्योंकि मामला वर्ष 1995 का है और उन्होंने भूमि विवाद के संबंध में 22 वर्ष से अधिक तक विचारण की कठोरता का सामना किया है।

21. राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री विकास किशोर प्रसाद निवेदन करते हैं कि आक्षेपित निर्णय में दुर्बलता एवं अवैधता नहीं है क्योंकि गवाहों ने साक्ष्य संपुष्ट किया है और उपहतियाँ भी डॉक्टर द्वारा संपुष्ट की गयी हैं।

22. जहाँ तक अपीलार्थियों पूरन सिंह एवं मोती लाल सिंह का संबंध है, दिनांक 18.1.2018 के आदेश के अनुसरण में शपथपत्र के मुताबिक कथन किया गया है कि अपील लंबित रहने के दौरान दोनों की मृत्यु हो गयी और इस दशा में उनकी अपील उपशमनित हो गयी है।

23. दोनों पक्षों को सुनने के बाद एवं अभिलेख के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि पक्षगण गोत्रज हैं और पक्षों के बीच मामला एवं प्रति मामला है। वर्तमान घटना गोत्रज के बीच भूमि विवाद के संबंध में 22 वर्ष पहले हुई। अपीलार्थी बाबूलाल सिंह को वासुदेव राय (अ॰ सा॰ 6) सूचक) पर प्रहार करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 148 सहपठित धारा 324 के अधीन अपराध के लिए विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया है और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324 के अधीन दो वर्ष का कठोर कारावास तथा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 148 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया है। घायल वासुदेव राय (अ॰ सा॰ 6) का परीक्षण डॉ॰ जितेन्द्र कुमार (अ॰ सा॰ 7) द्वारा किया गया है जिन्होंने तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित गंभीर प्रकृति की उपहति पाया है जो मामला के सूचक एवं घायल अ॰ सा॰ 6 (वासुदेव राय) का बयान संपुष्ट करता है।

अपीलार्थी बाबूलाल सिंह विचारण के दौरान जो वर्ष 2003 में समाप्त हुआ, लगभग 46 वर्ष का था और अब 14 वर्ष से अधिक बीत गया है और वह लगभग 60 वर्ष का है।

अभिकथन एवं उपहति की प्रकृति, वाद की अवधि (22 वर्ष) और पक्षों के बीच संबंध पर विचार करते हुए मेरा मत है कि पूर्वोक्त आधारों पर दंडादेश में उपांतरण के साथ अपीलार्थी बाबूलाल सिंह की दोषसिद्ध मान्य ठहरायी जाती है। अपीलार्थी बाबूलाल सिंह की जमानत रद्द की जाती है और विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 8 सप्ताह की अवधि के भीतर अवर न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324 के अधीन 2 वर्ष का कठोर कारावास और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 148 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास सूचक/पीड़ित को 10,000/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करने की शर्त पर पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक उपांतरित किया जाता है।

24. जहाँ तक अन्य अपीलार्थियों अर्थात, आयन सिंह, सरवन सिंह, केशव सिंह एवं भुचुंग सिंह का संबंध है, उन्हें भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 147 के अधीन छह माह और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन छह माह के लिए दोषसिद्ध किया गया है। इन व्यक्तियों के विरूद्ध साक्ष्य पर विचार करते हुए, उनका दंडादेश पहले भुगत ली गयी अवधि तक घटाया जाता है।

25. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ जैसा उपर कहा गया है, दंडादेश में उपांतरण के साथ वर्तमान अपील खारिज की जाती है।

26. इस निर्णय की प्रति संबंधित विचारण न्यायालय को संसूचित की जाए तथा संबंधित विचारण न्यायालय को तुरंत अवर न्यायालय के अभिलेख भेजे जायें।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

जितेन्द्र कुमार अग्रवाल

बनाम

विष्णु चंद्र मोदी एवं अन्य

W.P.(C) No. 3511 of 2017. Decided on 7th March, 2018.

झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011—धाराएँ 2(b) एवं 12—भारत का संविधान—अनुच्छेद 227—मानक किराया का नियतिकरण—विक्रय विलेख जिसमें याची को शेष भूमि के पट्टाधारी के रूप में घोषित किया गया है के आधार पर किराया

नियंत्रक द्वारा तथ्य का निष्कर्ष दर्ज किया गया है—यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने प्रश्नगत भूमि का पट्टा दर्शाने वाला कोई किराया रसीद प्रस्तुत नहीं किया है, वर्तमान मामला का तथ्य स्पष्टतः प्रकट करता है कि खरीदी गयी भूमि के विक्रय के बाद भी याची ने पट्टा के बूते पर शेष भूमि का उपभोग करना जारी रखा—भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त उच्च न्यायालय की पर्यवेक्षणीय अधिकारिता के अधीन अवर न्यायालयों द्वारा दर्ज तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है जबतक अवर न्यायालयों के निष्कर्ष कुछ सामग्रियों जो इस प्रयोजन के लिए प्रासंगिक हैं, पर आधारित हैं—रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 14, 19, 20 एवं 21)

निर्णयज विधि.—(2000)3 SCC 190; (2000) 4 SCC 245; (2003) 6 SCC 675; (2006) 8 SCC 294; (2010) 8 SCC 329; (2011) 2 SCC 772; (2016) 9 SCC 414—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Jai Prakash, For the Petitioner; Ms. Khusboo Kataruka, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा जे॰ बी॰ सी॰ पुनरीक्षण सं॰ 108 वर्ष 2016 में पारित दिनांक 21.2.2017 के आदेश (रिट याचिका का परिशिष्ट 11) के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची द्वारा दाखिल पुनरीक्षण खारिज किया गया है और याची को प्रत्यर्थी सं॰ 1 को किराया नियंत्रक-सह-सब डिविजनल अधिकारी, सदर, राँची द्वारा विनिश्चित किराया बकाया एवं मासिक किराया का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है। याची ने आगे उपायुक्त, राँची द्वारा जे॰ बी॰ सी॰ अपील सं॰ 39R 15 वर्ष 2015-16 में पारित दिनांक 3.10.2016 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा याची द्वारा जे॰ बी॰ सी॰ केस सं॰ 75 वर्ष 2015 में किराया नियंत्रक-सह-सबडिविजनल अधिकारी, सदर, राँची द्वारा पारित दिनांक 14.10.2015 के आदेश के विरूद्ध याची द्वारा दाखिल अपील खारिज किया गया था। याची ने जे॰ बी॰ सी॰ केस सं॰ 75 वर्ष 2015 में किराया नियंत्रक-सह-सबडिविजनल अधिकारी, सदर, राँची द्वारा पारित दिनांक 14.10.2015 के आदेश (रिट याचिका का परिशिष्ट 9) के अभिखंडन के लिए भी प्रार्थना किया है जिसके द्वारा झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम, 2011' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 12 के अधीन प्रत्यर्थी सं॰ 1 की याचिका अनुज्ञात की गयी थी और कुल 43200 वर्ग फीट वाली प्रश्नगत भूमि का मानक किराया 9/- रुपया प्रति वर्ग फीट की दर पर नियत किया गया था और तद्नुसार, प्रश्नगत भूमि पर कुल मानक किराया 3,88,800/- रुपया प्रतिमाह नियत किया गया था जो याची द्वारा भुगतेय था।

2. रिट याचिका में यथा कथित मामला का ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि याची की माता अर्थात श्रीमती सरस्वती अग्रवाल ने किसी श्री सत्यनारायण मोदी (प्रत्यर्थी सं॰ 1 का पिता) से दिनांक 1.5.1973 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरूप राँची नगरपालिका टाउन, राँची, मोहल्ला कोंका, पुरूलिया रोड, लालपुर, राँची के वार्ड सं॰ VII में एस॰ ए॰ भूखंड सं॰ 2366 का अभिन्न अंग और नगरपालिका धृति सं॰ 1829 में अवस्थित 1 बीघा 16 कठ्ठा 5 छटांक, 15 वर्ग फीट मापवाली भूमि (इसमें इसके बाद 'खरीदी गयी भूमि' के रूप में निर्दिष्ट) खरीदा था। तत्पश्चात, याची का परिवार खरीदी गयी भूमि तथा एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 2366 के लगभग 54 कठ्ठा की शेष भूमि (इसमें इसके बाद 'शेष भूमि' के रूप में निर्दिष्ट) पर काबिज हुआ और वर्ष 1973 के अंत में संपूर्ण भूमि पर चारदीवार निर्मित किया। प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने यह अभिकथित करते हुए कि याची उसकी शेष भूमि पर किराएदार हैं, शेष भूमि के लिए मानक एवं उचित किराया के नियतकरण/विनिश्चयकरण के लिए किराया नियंत्रक-सह-सबडिविजनल अधिकारी, सदर, राँची के समक्ष अधिनियम, 2011 की धारा 12 के अधीन याची के विरूद्ध आवेदन जे॰ बी॰ सी॰

केस सं॰ 75 वर्ष 2015 दाखिल किया। याची उक्त मामला में उपस्थित हुआ और प्रत्यर्थी सं॰ 1 के दावा के प्रति इस आधार पर आपत्ति किया कि याची एवं प्रत्यर्थी सं॰ 1 के बीच किराएदार–मकानमालिक का संबंध नहीं है। किंतु, शेष भूमि का किराया 3,88,800/- रुपया प्रतिमाह नियत करते हुए और याची को जे॰ बी॰ सी॰ मामला सं॰ 75 वर्ष 2015 की दाखिली की तिथि से किराया के बकाया का भुगतान करने का निर्देश देते हुए किराया नियंत्रक–सह–सबडिविजनल अधिकारी, सदर, राँची द्वारा 14.10.2015 को प्रत्यर्थी सं॰1 का आवेदन अनुज्ञात किया गया था। तद्द्वारा व्यथित होकर, याची ने उपायुक्त, राँची के समक्ष जे॰ बी सी॰ अपील सं॰ 39R15/2015-16 दाखिल किया। किंतु, इसे भी दिनांक 3.10.2016 के आदेश के तहत खारिज किया गया था। तत्पश्चात, याची ने आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची के समक्ष जे॰ बी॰ सी॰ पुनरीक्षण सं॰ 108 वर्ष 2016 दाखिल किया और इसे भी याची को किराया के बकाया तथा किराया नियंत्रक द्वारा विनिश्चित मासिक किराया का भुगतान करने का निर्देश देते हुए दिनांक 21.2.2017 के आदेश के तहत खारिज किया गया था।

3. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हें कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 और याची के परिवार के बीच किराएदार–मकानमालिक का संबंध नहीं है, पक्षों के बीच प्रश्नगत भूमि पर कब्जा के संबंध में विवाद है। किराया नियंत्रक को ऐसा विवाद विनिश्चित करने की अधिकारिता नहीं है जिसे केवल सक्षम सिविल न्यायालय के समक्ष न्यायनिर्णीत किया जा सकता है। आगे निवेदन किया गया है कि पहले भी प्रत्यर्थी सं॰ 1 एवं उसके परिवार के सदस्यों ने याची एवं उसके परिवार के सदस्यों का कब्जा अस्त व्यस्त करने का प्रयास किया था किंतु, वे समस्त प्रयास विफल रहे और कोई रास्ता नहीं पाते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने किराएदारी की कहानी गढ़ा और याची की भूमि जिस पर याची एवं उसके परिवार के सदस्य शांतिपूर्ण रूप से 50 वर्षों से अधिक से काबिज है, हड़पने का प्रयास कर रहा है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा 15.1.2002 को पुरूलिया रोड, कोंका, लालपुर, राँची में राँची नगर पालिका के वार्ड VII के भीतर धृति सं॰ 1829 में अवस्थित एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 2366 पर अवैध निर्माण अभिकथित करते हुए याची एवं उसके परिवार के सदस्यों के विरूद्ध यू॰ सी॰ केस सं॰ 96 वर्ष 2001 भी दाखिल किया था किंतु उक्त परिवाद उपाध्यक्ष, राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण (संक्षेप में आर॰ आर॰ डी॰ ए॰) द्वारा दिनांक 31.8.2004 के आदेश के तहत इस आधार पर खारिज किया गया था कि याची ने एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 2366 पर कोई नया एवं अप्राधिकृत निर्माण नहीं किया है। उपाध्यक्ष, आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के आदेश को अपील में विद्वान अपीलीय अधिकरण, आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ राँची द्वारा अपील सं॰ 8/2004 में संपुष्ट किया गया था। उक्त यू॰ सी॰ मामला में प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने उपाध्यक्ष, आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के समक्ष अथवा अपीलीय अधिकरण के समक्ष पक्षों के बीच किसी किरायादारी संबंध के बारे में अभिकथित नहीं किया था जो दर्शाता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने बाद में केवल याची की भूमि हड़पने के लिए अपना मामला निर्मित किया। विद्वान अवर न्यायालयों ने वर्ष 1960-61 में राँची नगर निगम (संक्षेप में आर॰ एम॰ सी॰) द्वारा किए गए भूखंड सं॰ 1829 के निर्धारण पर भारी विश्वास किया है जिसमें सूरजमल मोदी को उक्त भूखंड के किराएदार के रूप में दर्शाया गया है, किंतु जब याची ने आर॰ एम॰ सी॰ के कार्यालय से उक्त दस्तावेज की प्रमाणपत्रित प्रति इप्सित किया, उसे दिनांक 9.5.2017 के आदेश के तहत सूचित किया गया था कि वर्ष 1960-61 के लिए वार्ड सं॰ VII के धृति सं॰ 1829 का निर्धारण अभिलेख फटा हुआ था और इस प्रकार प्रमाणपत्रित प्रति प्रदान करना संभव नहीं था जो उक्त दस्तावेज के अस्तित्व पर गंभीर संदेह उत्पन्न करता है। यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰

1 ने प्रतिवाद किया कि किराया नियतकरण मामला में याची एवं उसके परिवार के सदस्य शेष भूमि पर किराएदार थे और वे नियमित रूप से किराया का भुगतान कर रहे थे किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने उक्त प्रतिवाद के समर्थन में अवर न्यायालयों के समक्ष अथवा इस न्यायालय के समक्ष कोई 'पट्टा करार अथवा किराया रसीद नहीं लाया था। किराया नियंत्रक का आदेश गलत निष्कर्ष पर आधारित है कि श्री सत्यनारायण मोदी एवं श्रीमती सरस्वती अग्रवाल के बीच निष्पादित दिनांक 1.5.1973 का विक्रय विलेख प्रावधानित करता है कि विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद याची का परिवार किरायेदार के रूप में शेष भूमि पर काबिज बना रहेगा। विक्रय विलेख केवल यह प्रावधानित करता है कि विक्रय विलेख के निष्पादन के पहले याची का परिवार भूमि का किराएदार था जिसे याची की माता ने उक्त विक्रय विलेख के फलस्वरूप खरीदा था। जब एक बार विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था, उक्त किराएदारी भी समाप्त हो गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि अधिनियम, 2011 की धारा 2(g) में ''मकानमालिक'' की परिभाषा दी गयी है जो भवन के संबंध में और न कि भूमि के संबंध में व्यक्ति को मकानमालिक के रूप में मान्यता देता है और इस दशा में प्रत्यर्थी सं॰ 1 अधिनियम, 2011 की धारा 2 (g) के अर्थ के अंतर्गत मकानमालिक नहीं है। इस प्रकार स्वयं जे॰ बी॰ सी॰ केस सं॰ 75 वर्ष 2015 पोषणीय नहीं था।

4. प्रत्यर्थी सं॰ 1 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 का चाचा अर्थात स्वर्गीय सूरजमल मोदी खरीदी गयी भूमि और शेष भूमि का भी स्वामी था और इसे वर्ष 1958 में 100/- रुपया के मासिक किराया के लिए उसपर पर खड़े भवन एवं अन्य निर्माणों के साथ मौखिक रूप से स्वर्गीय राम बल्लभ अग्रवाल के पक्ष में पट्टा पर दिया गया था जिसमें स्वर्गीय राम बल्लभ अग्रवाल मेसर्स हिन्दुस्तान टिम्बर वर्क्स के नाम एवं शैली में लकड़ी का व्यवसाय चला रहा था। वर्ष 1960 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 के पिता तथा सूरजमल मोदी के बीच पारिवारिक बँटवारा हुआ था और उक्त संपत्ति प्रत्यर्थी सं॰ 1 के परिवार के हिस्सा में आयी और तब से प्रत्यर्थी का पिता उक्त संपत्ति के करों का भुगतान कर रहा था। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्ष 1973 में खरीदी गयी भूमि याची के माता को बेची गयी थी किंतु, शेष भूमि याची के परिवार को किराया पर दी गयी थी और तत्पश्चात याची के परिवार द्वारा उनके बीच समय-समय पर सहमत दर पर किराया का भुगतान कर रहा था। आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची के समक्ष दाखिल पुनरीक्षण में, याची ने स्वयं किराएदारी का तथ्य स्वीकार किया है और पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष उसके द्वारा उठाया गया एकमात्र आधार यह था कि यह खाली भूमि थी किंतु उक्त आधार आयुक्त द्वारा सीमांकन मामला सं॰ 115 वर्ष 2002-03 में अंचलाधिकारी, टाउन, राँची और अमीन द्वारा तैयार की गयी रिपोर्टों को परिशीलन करने पर अस्वीकार किया गया था। आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के समक्ष कार्यवाही अवैध निर्माण से संबंधित थी और इस दशा में किराएदारी के संबंध में उक्त कार्यवाही में प्रकथन नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 तथा उसके पूर्वाधिकारी नियमित रूप से नगरपालिका और अन्य राजस्व करों का भुगतान कर रहे थे जिसके लिए उन्हें रसीदों को भी जारी किया गया था। किराया बढ़ाने के प्रत्यर्थी सं॰ 1 के अनेक अनुरोधों के बावजूद याची भूमि के 60 कठ्ठा क्षेत्र का उपयोग करने के लिए मात्र 3500/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान कर रहा था और इस दशा में प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने किराया की वृद्धि के लिए और मानक किराया के नियतकरण के लिए किराया नियंत्रक के समक्ष आवेदन दाखिल किया जिस पर दिनांक 14.10.2015 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था जिसे अपीलीय एवं पुनरीक्षण न्यायालय दोनों द्वारा संपुष्ट किया गया था।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया गया। याची ने किराया नियंत्रक-सह-सबडिविजनल अधिकारी, सदर, राँची के आदेश को चुनौती

दिया है जिसके द्वारा याची का आवेदन अनुज्ञात किया गया है और शेष भूमि का किराया बढ़ाया गया है। याची ने उपायुक्त, राँची द्वारा पारित अपीलीय आदेश तथा आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा पारित पुनरीक्षण आदेश को भी चुनौती दिया है जिसके द्वारा किराया नियंत्रक का आदेश संपुष्ट किया गया है।

6. वर्तमान रिट याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद-227 के अधीन दाखिल की गयी है जो अवर न्यायालयों के उपर उच्च न्यायालयों को पर्यवेक्षणीय अधिकारिता प्रदत्त करती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णयों में विभिन्न स्थितियों को वर्णित किया जिसके अधीन उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन अधीक्षण शक्ति का प्रयोग कर सकता है।

7. मोहन अंबा प्रसाद अग्निहोत्री बनाम भाष्कर बलवंत अहीर, (2000)3 SCC 190, मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता अपीलीय नहीं बल्कि पर्यवेक्षणीय प्रकृति की है और इस प्रकार, यह अवर न्यायालयों द्वारा दर्ज निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए साक्ष्य नहीं है अथवा निष्कर्ष पूर्णत: विकृत नहीं है।

8. इंडियन ओवरसीज बैंक बनाम इंडियन ओवरसीज बैंक स्टाफ कैंटीन वर्कर्स यूनियन, (2000)4 SCC 245, मामला में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि उदारतापूर्वक साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्ययन करना और तथ्य के शुद्ध प्रश्नों पर निष्कर्ष निकालना रिट न्यायालय के लिए इस कारण से अननुज्ञेय है कि यह अधिकरण द्वारा पारित आदेश/अधिनिर्णय के उपर अपीलीय अधिकारिता का प्रयोग नहीं कर रहा है। अधिकरण द्वारा दर्ज निष्कर्ष सामान्यत: अंतिम बन गया माना जाना चाहिए और इस साक्ष्य अथवा सामग्री, जो रिट न्यायालय के मत में उन निष्कर्षों में हस्तक्षेप आवश्यक बनाने के लिए पर्याप्त अथवा विश्वसनीय नहीं हैं, पर आधारित होने के कारण मात्र से अस्त व्यस्त नहीं किया जाना चाहिए। जब तक वे कुछ सामग्री जो इस प्रयोजन से प्रासंगिक हैं पर आधारित हैं, हस्तक्षेप अनावश्यक है।

9. सूर्यदेव राय बनाम रामचंदर राय एवं अन्य, (2003)6 SCC 675, मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षणीय शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा की गयी अधिकारिता की गलतियों को सुधार सकता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि जब अवर न्यायालय ने अधिकारिता धारण किया है जो इसके पास नहीं है अथवा अधिकरिता जो वस्तुत: इसके पास है का प्रयोग करने में विफल रहा है अथवा अधिकारिता, जो यद्यपि उपलब्ध है, का प्रयोग विधि द्वारा अनुमति नहीं दिए गए तरीके से किया जा रहा है और न्याय विफल हुआ है अथवा घोर अन्याय हुआ है, न्यायालय अपनी पर्यवेक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है। किंतु, यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि चाहे उत्प्रेषण रिट हो या पर्यवेक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग, विधि अथवा तथ्य की गलती मात्र सुधारने के लिए उपलब्ध नहीं है जब तक गलती स्पष्ट एवं कार्यवाही को देखते ही प्रकट नहीं है जैसे जब यह विधि के प्रावधान की स्पष्ट अनभिज्ञता अथवा उपेक्षा पर आधारित है; अथवा घोर अन्याय अथवा न्याय की घोर विफलता तद्द्वारा कारित किया गया है।

10. आगे, **जसबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य, (2006)8 SCC 294,** मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *''13. ... संविधान के अनुच्छेद 227 के प्रावधानों का अवलंब लेते हुए यह प्रावधानित किया गया है कि उच्च न्यायालय ऐसी शक्तियों का प्रयोग अत्यन्त किफायतपूर्वक और केवल समुचित मामलों में अधीनस्थ न्यायालयों को उनके प्राधिकार*

की सीमा के भीतर रखने के लिए करेगी। अधीनस्थ न्यायालयों एवं अधिकरणों पर प्रयोग की गयी अधीक्षण शक्ति विवक्षित नहीं करती है कि उच्च न्यायालय अवर न्यायपालिका के न्यायिक कार्यों में हस्तक्षेप कर सकता है। अपने न्यायिक कार्यों के निर्वहन में अधीनस्थ न्यायालयों की स्वतंत्रता सर्वाधिक महत्व की है, ठीक उसी तरह जैसे अपने न्यायिक कार्यों के निर्वहन में उच्चतर न्यायालयों को स्वतंत्रता..''

11. शालिनी श्याम शेट्टी एवं एक अन्य बनाम राजेन्द्र शंकर पाटिल, (2010) 8 SCC 329, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अनुच्छेद 227 के अधीन हस्तक्षेप की शक्ति यह सुनिश्चित करने के लिए न्यूनतम रखी जानी है कि न्याय का पहिया न रूके और न्याय की धारा उच्च न्यायालय के अधीनस्थ अधिकरणों एवं न्यायालयों की क्रियाशीलता में लोक विश्वास बनाए रखने के लिए शुद्ध एवं प्रदूषणहीन बनी रहती है।

12. टी॰ जी॰ एन॰ कुमार बनाम केरल राज्य एवं अन्य, (2011)2 SCC 772, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय पर प्रदत्त अधीक्षण की शक्ति प्रशासनिक एवं न्यायिक दोनों है, किंतु ऐसी शक्ति का प्रयोग किफायतपूर्वक और केवल समुचित मामलों में अधीनस्थ न्यायालयों को अपने प्राधिकार की सीमाओं के भीतर रखने के लिए किया जाना है।

13. आगे, **गुलशेरा खन्नम बनाम आफताब अहमद, (2016) 9 SCC 414,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने किराया नियंत्रण मामला पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय की तरह साक्ष्य का गहराई से अधिमूल्यन करके किसी ताथ्यिक विवाद्यक की पुनः जाँच करने और निष्कर्ष उलटने की अधिकारिता उच्च न्यायालय को नहीं है।

14. वर्तमान मामला के ताथ्यिक संदर्भ में, किराया नियंत्रक द्वारा दिनांक 1.5.1973 के विक्रय विलेख के आधार पर तथ्य के निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं जिसमें याची को शेष भूमि का पट्टाधारी घोषित किया गया है। किराया नियंत्रक ने वर्ष 1960-61 के लिए आर॰ एम॰ सी॰ की निर्धारण सूची के आधार पर भी आदेश पारित किया है जिसमें स्वर्गीय राम बल्लभ अग्रवाल को पट्टाधारी के रूप में दर्शाया गया है। याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता प्रतिवाद करते हैं कि यद्यपि संपत्ति पहले याची के पिता को पट्टा पर दी गयी थी, किंतु, खरीदी गयी भूमि के विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद पट्टा करार स्वतः समाप्त हो गया। मैं याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता के उक्त प्रतिवाद में कोई गुणागुण इस तथ्य की दृष्टि में नहीं पाता हूँ कि याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 के ऐसे बयान का खंडन करने के लिए और खरीदी गयी भूमि के विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद शेष भूमि पर अपना अभिधान प्रथम दृष्टया दर्शाने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया था। यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने प्रश्नगत भूमि का पट्टा दर्शाने वाला कोई किराया रसीद प्रस्तुत नहीं किया है, वर्तमान मामला के तथ्य स्पष्टतः प्रकट करते हैं कि खरीद गयी भूमि के विक्रय के बाद भी याची ने पट्टा के बूता पर शेष भूमि का उपभोग करना जारी रखा।

15. याची ने पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष दावा किया कि शेष भूमि अधिनियम, 2011 के अधीन यथा प्रावधानित 'भवन' की परिभाषा के अधीन नहीं आता है। किंतु, याची का उक्त तर्क आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा अंचलाधिकारी, टाउन अंचल, राँची की रिपोर्ट पर विश्वास करते हुए स्वीकार नहीं किया गया था जिसमें श्रमिक कक्ष एवं शौचालय शेष भूमि के भाग के रूप में दर्शाया गया है। आयुक्त, दक्षित छोटानागपुर डिविजन, राँची ने आगे संप्रेक्षित किया है कि नगरपालिका किराया रसीदें दर्शाती है कि याची से गृह टैक्स एवं शौचालय टैक्स वसूल किया जा रहा है।

16. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता यह प्रतिवाद भी करते हैं कि अंचलाधिकारी, टाउन अंचल, राँची की दिनांक 15.6.2004 की रिपोर्ट अधिनियम, 2011 की धारा 2(b) के अधीन प्रावधानित 'भवन' की परिभाषा की दृष्टि में, भूमि को 'भवन' के रूप में मानने के लिए ताथ्यिक आधार नहीं बनायी जा सकती है क्योंकि उक्त रिपोर्ट प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा याची की खरीदी गयी भूमि पर अप्राधिकृत निर्माण अभिकथित करते हुए दिए गए आवेदन पर आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ द्वारा आरंभ की गयी कार्यवाही में प्रस्तुत की गयी थी। अंचलाधिकारी की उक्त रिपोर्ट किराया नियंत्रण कार्यवाही में विचार में नहीं ली जा सकती है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 इस तथ्य के समर्थन में कोई दस्तावेज दर्शाने में सक्षम नहीं हुआ है कि याची 1958 से शेष भूमि पर प्रत्यर्थी सं॰ 1 का किराएदार है। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि अंचलाधिकारी, टाउन अंचल, राँची की दिनांक 15.6.2004 की रिपोर्ट पर किराया नियंत्रक द्वारा और अपीलीय एवं पुनरीक्षण प्राधिकारियों द्वारा भी अधिनियम, 2011 के अधीन विश्वास नहीं किया जा सकता था। क्योंकि उक्त रिपोर्ट याची द्वारा अपनी खरीदी गयी भूमि पर किए गए अभिकथित अप्राधिकृत निर्माण के लिए आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के समक्ष भिन्न कार्यवाही में प्रस्तुत की गयी थी।

17. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता का उक्त प्रतिवाद स्वीकार्य नहीं है क्योंकि यह तात्विक नहीं है कि किस कार्यवाही में उक्त रिपोर्ट अंचलाधिकारी, टाउन अंचल, राँची द्वारा प्रस्तुत की गयी थी, बल्कि प्रासंगिक यह है कि उक्त रिपोर्ट के तहत भूमि/परिसर की प्रकृति के संबंध में ताथ्यिक विनिश्चयकरण किया गया था। उक्त रिपोर्ट की प्रामाणिकता किसी कार्यवाही में याची द्वारा विवादित नहीं की गयी है। इस प्रकार, तथ्य जो उक्त रिपोर्ट से सामने आया यह है कि सेवक आवास एवं शौचालय शेष भूमि पर विद्यमान है जिसे याची द्वारा स्वीकार किया गया है।

18. झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011 की धारा 2(b) का पठन निम्नलिखित है:–

> *''भवन'' का अर्थ है आवासीय अथवा गैर आवासीय प्रयोजन से पृथक रूप से किराया पर दिया अथवा लिया गया कोई भवन या झोपड़ी अथवा भवन या झोपड़ी का भाग और यहः–*
>
> *i. बाग, मैदान/खुला स्थान एवं बाह्य कक्ष, यदि हो, ऐसे भवन या झोपड़ी का अनुलग्न अथवा भवन या झोपड़ी का भाग, और*
>
> *ii. ऐसे भवन या झोपड़ी अथवा ऐसे भवन या झोपड़ी के भाग में उपयोग के लिए मकानमालिक द्वारा आपूर्ति किया गया कोई फर्नीचर सम्मिलित करता है।''*

19. उक्त परिभाषा की दृष्टि में, यह नहीं कहा जा सकता है कि विद्वान अवर न्यायालयों ने प्रश्नगत परिसर को 'भवन' के रूप में मानने तथा याची द्वारा उपयोग किए जाने के लिए किराया नियत करने में कोई गलती किया।

20. इस प्रकार, मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में, विद्वान अवर न्यायालयों द्वारा दर्ज निष्कर्ष भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन हस्तक्षेप आवश्यक बनाने के लिए किसी स्पष्ट गलती से पीड़ित नहीं है क्योंकि याची यह प्रदर्शित करने में पूर्णतः विफल रहा है कि निष्कर्ष इतने विकृत अथवा अयुक्तियुक्त हैं कि कोई न्यायालय ऐसे निष्कर्षों पर पहुँच नहीं सकता था। भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन शक्ति साक्ष्य की अपर्याप्तता के आधार मात्र पर उच्च न्यायालय को साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करने के लिए सक्षम बनाते हुए और अवर न्यायालयों द्वारा पहुँचे गए निष्कर्षों को अस्तव्यस्त करने के लिए अपीलीय शक्ति की प्रकृति की नहीं है। याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा ऐसी कोई दुर्बलता इंगित नहीं की जा सकी थी ताकि यह प्रदर्शित किया जा सके कि अवर न्यायालयों द्वारा दर्ज निष्कर्ष

विकृत हैं। अत:, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त उच्च न्यायालय के पर्यवेक्षणीय अधिकारिता के अधीन अवर न्यायालयों द्वारा दर्ज तथ्यों के निष्कर्ष में हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है जब तक अवर न्यायालयों के निष्कर्ष कुछ सामग्री पर आधारित हैं जो इस प्रयोजन से प्रासंगिक हैं।

21. यहाँ उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं वर्तमान रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

22. परिणामत: आई॰ ए॰ सं॰ 736 वर्ष 2018 तथा आई॰ ए॰ सं॰ 7433 वर्ष 2017 भी खारिज किए जाते हैं।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

श्रीमती माधुरी देवी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 3630 of 2002. Decided on 19th March, 2018.

बिहार भूमि सुधार (अधिकतम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961—धारा 16(3)—अग्रक्रयाधिकार—प्रत्यर्थी सं॰ 5 का दावा कि वह संपत्ति का सह-अंशधारी है, अभिधान वाद में उद्घोषित निर्णय द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विरूद्ध विनिश्चित किया गया जिसके विरूद्ध प्राईवेट प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने कोई अपील दाखिल नहीं किया है—अभिधान वाद में पारित निर्णय में विनिर्दिष्ट निष्कर्षों की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 5 को संपत्ति का सहअंशधारी नहीं कहा जा सकता है और तद्नुसार संपत्ति का सहअंशधारी होने का उसका दावा अस्वीकार किया जाता है—सदस्य, राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया—प्रत्यर्थी सं॰ 5 धारा 16(3) के अधीन किसी अनुतोष का हकदार नहीं है। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.—Mr. L.K. Lal, For the Petitioners; Mr. Asit Baran Mahatha, For the Respondents; Mr. Shahid Khan, For the State.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री एल॰ के॰ लाल सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 5 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री असित बारन महथा सुने गए।

3. राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री शाहिद खान सुने गए।

4. यह रिट याचिका लोहरदगा पुनरीक्षण मामला सं॰ 08/2001 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित रिट याचिका के परिशिष्ट 4 में यथा अंतर्विष्ट दिनांक 8.5.2002 के आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अग्रक्रय अपील सं॰ 18R 15/19-2000 में प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा पारित दिनांक 23.1.2001 के आदेश को अपास्त करने के बाद अगक्रय मामला सं॰ 1/99 में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा पारित दिनांक 12.11.99 के आदेश को मान्य ठहराते हुए पुनरीक्षण अनुज्ञात किया गया है। याचीगण ने अग्रक्रय मामला सं॰ 1/99 में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा पारित दिनांक 12.11.1999 के आदेश (परिशिष्ट-2) को भी ध्यान में लाया है जिसके द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दाखिल अग्रक्रय के लिए आवेदन बिहार भूमि सुधार (अधिकतम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 की धारा 16(3) के

प्रावधान के अधीन इस आधार पर अनुज्ञात किया गया था कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 विक्रय की गयी संपत्ति का सह–अंशधारी है।

5. याचीगण के अधिवक्ता ने निम्नलिखित निवेदन किया है:–

(i) इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति याची सं॰ 1 एवं 2 (जो तिलकधारी राम के पुत्र हैं) द्वारा पाँच भिन्न रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के फलस्वरूप याची सं॰ 3 से 7 के पक्ष में बेची गयी थी।

(ii) प्रत्यर्थी सं॰ 5 (गया महतो का पुत्र तथा तिलकधारी राम का भतीजा) ने पाँच विक्रय विलेखों द्वारा आच्छादित समस्त संपत्तियों के लिए अग्रक्रयाधिकार का अपने अधिकार का दावा करते हुए बिहार भूमि सुधार (अधिकतम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 की धारा 16(3) के प्रावधानों के अधीन अग्रक्रय के लिए एकल आवेदन दाखिल किया जिसे अग्रक्रय मामला सं॰ 1/1999 के रूप में संख्यांकित किया गया था।

(iii) वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 5 संपत्ति का सह–अंशधारी होने का दावा करता है और अग्रक्रय मामला सं॰ 1/1999 में उसको संपत्ति के सहअंशधारी के रूप में अभिनिर्धारित करते हुए विद्वान उपसमाहर्ता, भूमि सुधार, लोहरदगा द्वारा अग्रक्रय के लिए उसका आवेदन अनुज्ञात किया गया था।

(iv) इसके विरूद्ध याची ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दाखिल किया जिसे अपील मामला सं॰ 18R15/99-2000 के रूप में संख्यांकित किया गया था। अपीलीय न्यायालय ने अग्रक्रय मामला सं॰ 1/1999 में पारित आदेश इस आधार पर अपास्त करते हुए दिनांक 12.11.1999 का आदेश पारित किया कि इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति कृषि संपत्ति नहीं कही जा सकती है और इसलिए बिहार भूमि सुधार (अधिकतम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 के प्रावधानों की प्रयोज्यता नहीं है।

(v) दिनांक 12.11.1999 के इस आदेश के विरूद्ध वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने सदस्य, राजस्व बोर्ड, झारखंड के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे पुनरीक्षण केस लोहरदग्गा सं॰ 8/01 के रूप में संख्यांकित किया गया था और दिनांक 8.5.2002 के आदेश के तहत अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 संपत्ति का सहअंशधारी था और तद्नुसार, अग्रक्रय मामला सं॰ 1/1999 में विद्वान उपायुक्त, भूमि सुधार, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 12.11.1999 का आदेश पुनर्स्थापित किया गया था और मान्य ठहराया गया था।

(vi) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विद्वान उपायुक्त, भूमि सुधार, लोहरदग्गा द्वारा पारित मूल आदेश के बाद वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने अपने भाई चमार राम के साथ पाँच विक्रय विलेखों में अंतर्ग्रस्त पाँच भिन्न संपत्तियों के संबंध में पाँच अभिधान वाद सं॰ 9/2001, 10/2001, 11/2001, 12/2001 एवं 13/2001 दाखिल किया जिसमें पाँचों खरीदारों को प्रतिवादी बनाया गया था। समस्त अभिधान वादों को दिनांक 21.1.2009 के आदेश के तहत आपस में मिलाया गया था और अभिधान वाद सं॰ 9/01 के रूप संख्यांकित किया गया था और तद्नुसार विभिन्न विक्रय विलेखों में समस्त खरीदारों को प्रतिवादी 11A से 11E के रूप में नामित किया गया था जो रिट याचिका में याची सं॰ 3 से 7 हैं।

(vii) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त वाद में विरचित विवाद्यकों में से एक यह था कि क्या उक्त प्रश्नगत संपत्ति वादीगण एवं प्रतिवादीगण के पूर्वजों के बीच विभाजित की गयी थी। अभिधान वाद सं॰ 9/01 में पारित उक्त निर्णय के पैरा 39 में अभिनिर्धारित किया गया है कि यह स्वीकृत तथ्य था कि वादीगण एवं प्रतिवादीगण दोनों का सामान्य पूर्वज महादेव कुम्हार था जो वाद भूमि से संबंधित अभिलिखित रैयत था। यह भी स्वीकृत तथ्य है कि सगे भाइयों अर्थात गया महतो, शिव शंकर महतो,

धनुकधारी महतो एवं तिलकधारी महतो के बीच पारिवारिक बँटवारा हुआ था। आगे यह भी स्वीकार किया गया है कि गया महतो एवं तिलकधारी महतो को संपत्ति का एक हिस्सा आवंटित किया गया था और दूसरा हिस्सा शिव शंकर महतो एवं धनुकधारी महतो को आवंटित किया गया था। अभिधान वाद के पैरा 41 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *''41. ...यहाँ मैं पाता हूँ कि विभाजन ज्ञापन जिसपर वादीगण गया महतो एवं तिलकधारी महतो के पिता द्वारा हस्ताक्षर किया गया है, गया महतो पर अधिक बाध्यकारी है और इसमें खाता सं० 53 के वर्तमान सर्वे खतियान जो प्रदर्श 4 है की तुलना में अधिक विधिक बल है। इस तरीके से मैं पाता हूँ कि यह स्थापित किया गया है कि गया महतो के साथ 1963 में मैत्रीपूर्ण पारिवारिक बँटवारा हुआ जिसे दिनांक 22.2.1966 के विभाजन ज्ञापन द्वारा लेखबद्ध किया गया था। इस तरीका से मैं पाता हूँ कि प्रतिवादी सं० 1 एवं 2 का वाद भूमि पर पूर्ण अधिकार, अभिधान हित एवं कब्जा है और उन्हें विभिन्न व्यक्तियों को वाद भूमि बेचने का पूर्ण अधिकार है जैसा उनके द्वारा वर्तमान वाद में प्रतिवादी सं० 11A से 11D के साथ किया है। मैं पाता हूँ कि वादीगण एवं उनके सहदायिक वर्तमान वाद में संयोजित नहीं हुए हैं। मैं पाता हूँ कि वादीगण एवं उनके सहदायिक का अनुसूची संपत्ति पर संयुक्त अधिकार, अभिधान एवं कब्जा नहीं है, वादीगण तथा प्रतिवादी सं० 1, 2, 3 अपने पूर्वजों के बीच वर्ष 1963 में पारिवारिक व्यवस्थापन के मुताबिक पृथक अचल संपत्ति धारण कर रहे हैं, प्रतिवादी सं० 11A से 11E के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख प्रवर्तित है और वादीगण अथवा उनके सहदायिक पर बाध्यकारी हैं, वादीगण का अनुसूची B की वाद भूमि पर वैध अधिकार, अभिधान एवं हित नहीं है। इस प्रकार, उपर की गयी चर्चा के आधार पर मैं पाता हूँ कि विवाद्यक सं० 7, 8, 9 एवं 10 वादीगण के विरूद्ध नकारात्मक रूप से विनिश्चित किए जाते हैं।''*

(viii) याचीगण के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अभिधान वाद सं॰ 9/01 में दर्ज पूर्वोक्त निष्कर्षों की दृष्टि में प्राइवेट प्रत्यर्थी सं॰ 5 का दावा कि वे संपत्ति में सहअंशधारी थे और इसलिए प्रश्नगत भूमि के अग्रक्रयाधिकार का दावा करने के हकदार थे, आधारहीन है। पुनरीक्षण मामला सं॰ 8/01 में अभिधान वाद का लंबित रहना न्यायालय के ध्यान में नहीं लाया गया था जिसमें आदेश पारित किया गया था कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 विक्रय की गयी संपत्ति का सहअंशधारी है। याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभिधान वाद में विनिर्दिष्ट निष्कर्ष की दृष्टि में कि विभाजन वर्ष 1963 में हुआ, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 विक्रय की गयी संपत्ति का अंशधारी है राजस्व बोर्ड के विद्वान सदस्य द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 5 के अधिवक्ता अभिधान वाद सं॰ 09 वर्ष 2001 में दर्ज निष्कर्ष को विवादित करने की अवस्था में नहीं हैं, किंतु उन्होंने जोर दिया कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 अभी भी संपत्ति का सहअंशधारी है। प्रत्यर्थी सं॰ 5 के अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 न केवल संपत्ति का सहअंशधारी था बल्कि पार्श्व रैयत भी था और उसके लिए उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दाखिल अग्रक्रय आवेदन निर्दिष्ट किया जिसमें दोनों बिंदुओं पर विचार किया गया है। वह निवेदन करते हैं कि भले ही यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 संपत्ति का सह अंशधारी नहीं है, फिर भी पार्श्व रैयत होने के बूते पर अग्रक्रय का उसका अधिकार अक्षुण्ण बना रहता है।

7. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभिधान वाद के लंबित रहने पर विचार करने का अवसर राजस्व बोर्ड के विद्वान सदस्य के पास नहीं था क्योंकि यह तथ्य उक्त प्राधिकारी के ध्यान में नहीं लाया गया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि पार्श्व रैयत के बिंदु पर कोई निष्कर्ष देने का

अवसर सदस्य, राजस्व बोर्ड के पास नहीं था क्योंकि मूल प्राधिकारी ने पार्श्व रैयत के बिंदु पर अग्रक्रय याचिका अनुज्ञात नहीं किया था बल्कि इसे संपत्ति के सह–अंशधारी के आधार पर निपटाया गया था। इसके विरूद्ध अपील दाखिल की गयी थी किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने पार्श्व रैयत होने के अपने दावा के संबंध में कोई प्रति आपत्ति अथवा प्रति अपील दाखिल नहीं किया था और अब भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता में इस विवाद्यक का परीक्षण नहीं किया जा सकता है।

8. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने तथा अनेक आक्षेपित आदेशों पर विचार करने एवं अभिधान वाद सं॰ 09/01 में पारित निर्णय के परिशीलन के बाद यह न्यायालय पाता है कि यह रिट याचिका इस आधार पर अनुज्ञात किए जाने योग्य है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 का दावा कि वह संपत्ति का सह अंशधारी है, अभिधान वाद सं॰ 9/01 में उद्घोषित निर्णय द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विरूद्ध विनिश्चित किया गया था जिसके विरूद्ध प्राईवेट प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने कोई अपील दाखिल नहीं किया है। उक्त उद्धृत अभिधान वाद में पारित निर्णय में विनिर्दिष्ट निष्कर्ष की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 5 को संपत्ति का सह–अंशधारी नहीं कहा जा सकता है और तद्नुसार उसका संपत्ति का सह–अंशधारी होने का दावा अस्वीकार किया जाता है। यद्यपि अभिधान वाद का निर्णय पुनरीक्षण मामला के आक्षेपित आदेश पारित करने के बाद दिया गया था किंतु यह स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज करता है कि विभाजन काफी पहले 1963 में हुआ था और इसे 1966 में लेखबद्ध किया गया था और गया महतो (प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पिता) पर बाध्यकारी है। इस न्यायालय ने विद्वान उपसमाहर्ता, भूमि सुधार, लोहरदग्गा के समक्ष प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दाखिल अग्रक्रय आवेदन का परिशीलन किया और पाया कि याचिका में प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने सहअंशधारी तथा विक्रय की गयी संपत्ति का पार्श्व रैयत होने का दावा किया था किंतु याचिका केवल इस आधार पर अनुज्ञात की गयी थी कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 संपत्ति का का अंशधारी था और ऐसा निष्कर्ष नहीं है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 पार्श्व रैयत था। अपीलीय चरण पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने कोई प्रति अपील अथवा कोई प्रति आपत्ति दाखिल नहीं किया था और पार्श्व रैयत के रूप में दावा नहीं किया था। तद्नुसार, इस चरण पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 को पार्श्व रैयत की हैसियत में अपना दावा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

9. तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। रिट याचिका के परिशिष्ट–4 में यथा अंतर्विष्ट पुनरीक्षण मामला सं॰ 8/2001 में सदस्य, राजस्व बोर्ड, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 8.5.2002 का आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। और तद्नुसार अग्रक्रय मामला सं॰ 1/99 में विद्वान उपायुक्त, भूमि सुधार, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 12.11.1999 का आदेश अपास्त किया जाता है और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 बिहार भूमि सुधार (अधिकतम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 की धारा 16(3) के अधीन किसी अनुतोष का हकदार नहीं है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

शिवनारायण साह एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No.428 of 2004. Decided on 25th April, 2018.

एस॰ सी॰ केस सं॰ 52 वर्ष 1999/55 वर्ष 2001 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश IV फास्ट ट्रैक कोर्ट, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 28 जनवरी, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323 एवं 324—घोर उपहति—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—अभियोजन पक्ष को उपहति कारित करने वाले अपीलार्थियों के विरूद्ध संगत साक्ष्य है—वे भारतीय दंड संहिता की धारा 334 का लाभ नहीं ले सकते हैं कि जो कोई भी स्वेच्छापूर्वक गंभीर एवं अचानक उकसावा पर उपहति कारित करता है, चूँकि उनके द्वारा प्रति मामला दाखिल किया गया है, अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया है—इस दशा में, भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि में उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है—जहाँ तक दंड की मात्रा का संबंध है, मामला वर्ष 1996 में दाखिल किया गया है, आक्षेपित निर्णय वर्ष 2004 में पारित किया गया था, वर्तमान अपील वर्ष 2018 में ग्रहण की गयी है और गोत्रज के बीच विवाद है जिसमें अपीलार्थीगण भी पीड़ित हुए हैं और नौ माह के सामान्य कारावास में से अपीलार्थीगण सात माह पहले ही भुगत चुके हैं—अपीलार्थियों द्वारा पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक दंडादेश उपातरित किया गया है। (पैराएँ 10 से 13)

अधिवक्तागण.—Mr. Nityanand Pd. Choudhary, For the Appellants; Mr. Ravi Prakash, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक सुने गए।

2. वर्तमान अपील सत्र मामला सं॰ 52 वर्ष 1999/55 वर्ष 2001 (जामतारा पी॰ एस॰ केस सं॰ 128 वर्ष 1996, जी॰ आर॰ सं॰ 304 वर्ष 1996 के तत्सम, से उद्भूत) में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश IV, फास्ट ट्रैक कोर्ट, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 28 जनवरी, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी सं॰ 1 शिबनारायण साह को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध किया है और तीन वर्षों के सामान्य कारावास का दंडादेश अधिनिर्णीत किया है और अपीलार्थी सं॰ 2 एवं 3 मनोज साह एवं निमई साह को भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध किया गया था और नौ माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था।

अपीलार्थी सं॰ 1 शिबनारायण साह की मृत्य हो गयी थी और इस प्रकार, अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल अपील उपशमनित हो गयी है। वर्तमान अपील केवल मनोज साह एवं निमई साह, क्रमशः अपीलार्थी सं॰ 2 एवं 3 के लिए अग्रसर की गयी है, जिन्हें भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया है और नौ माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

3. अभियोजन मामला 3.7.1996 को प्रातः 5 बजे जामतारा अस्पताल में जामतारा पी॰ एस॰ के सब इंसपेक्टर के॰ पी॰ सिंह द्वारा दर्ज सूचक सुरेन्द्र प्रसाद साह के फर्दबयान पर आधारित है। सूचक ने अभिकथित किया है कि जब वह अपने घर से बाहर आया, उसके सहअंशधारी शिव नारायण साह टांगी के साथ, मनोज साह लाठी के साथ, निमई साह भी लाठी के साथ आया और दरवाजा पर उस पर प्रहार करने लगा। यह अभिकथित किया गया है कि शिबनारायण साह ने सूचक पर टांगी से उपहति कारित किया जिस कारण सूचक गिर गया। जब सूचक की पुत्री बचाने आयी, अभियुक्तों ने उसको भी उपहति कारित किया। अभियुक्तों द्वारा कुछ गहनों एवं बर्तनों को भी ले जाया गया था। घटना का कारण उनके भाई लक्ष्मी

साह जिसकी किसी विधिक उत्तराधिकारी के बिना मृत्यु हो गयी की भूमि के हिस्सा का वितरण बताया जाता है। सूचक ने फर्दबयान में यह भी कथित किया है कि अभियुक्तों ने भी कुछ उपहति पाया है। यह कथन भी किया गया है कि मनसू महतो, कामदेब प्रसाद साह, प्रभु महतो वहाँ आए। सूचक ने अपने मस्तक एवं पीठ पर उपहति पाया।

फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने तीन अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341, 324, 323, 379 एवं 34 के अधीन दिनांक 3.7.1996 का जामतारा पी॰ एस॰ केस सं॰ 128 वर्ष 1996 दर्ज किया और अन्वेषण शुरू किया और अन्वेषण के दौरान सूचक सुरेन्द्र प्रसाद साह की आसनसोल अस्पताल में मृत्यु हो गयी। इस प्रकार, अन्वेषण अधिकारी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 जोड़ने के लिए प्रार्थना किया है जिसे दिनांक 12.1.1996 के आदेश के तहत अनुज्ञात किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 जोड़ी गयी है।

4. अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने समस्त तीनों अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 341, 324 एवं 302/34 के अधीन अपराध के लिए दिनांक 20.9.1996 का आरोप पत्र सं॰ 104 दाखिल किया। अपराध का संज्ञान 11.10.1996 को लिया गया था और दिनांक 7.5.1999 की अधिसूचना के तहत मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। अपीलार्थियों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 324 एवं 302/34 के अधीन आरोप विरचित किए गए थे। जिनके प्रति अपीलार्थियों ने निर्दोषिता का अभिवचन किया, अत: उनका विचारण किया गया था।

5. अभियोजन के कुल दस गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1 मनसू महतो, अ॰ सा॰ 2 कामदेव प्रसाद साह, अ॰ सा॰ 3 डॉ॰ अशोक कुमार, अ॰ सा॰ 4 प्रभु महतो, अ॰ सा॰ 5 विरेन्द्र प्रसाद साह, अ॰ सा॰ 6 जनार्दन प्रसाद साह, अ॰ सा॰ 7 मुक्ता देवी, अ॰ सा॰ 8 सावित्री देवी, अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ सतीनाथ बनर्जी जिन्होंने मृतक सुरेन्द्र प्रसाद साह का शव परीक्षण किया और अ॰ सा॰ 10 कमला प्रसाद सिंह, मामला का अन्वेषण अधिकारी हैं। अभियोजन ने दस्तावेज भी पेश किया है—प्रदर्श 1 सुरेन्द्र प्रसाद साह की उपहति रिपोर्ट है। प्रदर्श 1/1 धिरेन्द्र साह की उपहति रिपोर्ट है, प्रदर्श 2 सुरेन्द्र साह का फर्दबयान पर हस्ताक्षर है। प्रदर्श 2/1 फर्दबयान पर किया गया जनार्दन प्रसाद साह का हस्ताक्षर है। प्रदर्श 3 शव परीक्षण रिपोर्ट है। प्रदर्श 4 प्राथमिकी पर प्रभारी अधिकारी का हस्ताक्षर है। प्रदर्श 5 फर्दबयान है। प्रदर्श 6 फर्दबयान पर पृष्ठांकन है। प्रदर्श 7 से 7/1 दोनों घायलों का पुलिस तलब है। प्रदर्श 8 सुरेन्द्र प्रसाद साह का दिनांक 5.7.1996 तथा 6.7.1996 का डिसचार्ज स्लिप की छाया प्रतिलिपि है और प्रदर्श 9 जी॰ आर॰ सं॰ 305 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 310 वर्ष 2000 के निर्णय की प्रमाणपत्रित प्रति है।

6. अभियोजन मामला बंद करने के बाद अपीलार्थियों के बयानों को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन भी दर्ज किया गया था, जिसमें उन्होंने निर्दोषिता का अभिवचन किया और बचाव की ओर से साक्ष्य देने के लिए प्रार्थना किया। बचाव ने भी तीन गवाहों अर्थात ब॰ सा॰ 1 हेमवती देवी, ब॰ सा॰ 2 देबनारायण महतो एवं ब॰ सा॰ 3 रविन्द्र कुमार का परीक्षण किया गया है।

7. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अभियोजन की ओर से परीक्षण किए गए समस्त दसों गवाह संबंधित गवाह हैं और वे गोत्रज हैं। पक्षों के बीच मामला एवं प्रति मामला है और विवाद उनके भाई लक्ष्मी साह जिसकी निस्संतान मृत्यु हो गयी के हिस्सा के संबंध में है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि दोनों पक्षों के गवाहों ने उपहतियाँ पाया है और पुलिस द्वारा उनके परस्पर मामलों में दोनों पक्षों के विरूद्ध आरोप पत्र दाखिल किया गया है, किंतु बाद में

अपीलार्थियों द्वारा दाखिल मामला जिसमे वर्तमान अभियोजन पक्ष अभियुक्त है और उस मामला के अभियुक्तों को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया है और इन अपीलार्थियों निमई साह एवं मनोज साह को भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और नौ माह का सामान्य कारावास अधिनिर्णीत किया गया है जिसमें से उन्होंने सात माह का दंडादेश भुगत लिया है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि पक्षों के बीच संबंध तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करते हुए अपीलार्थियों को अपराधी परीवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ दिया जा सकता है क्योंकि उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन नौ माह का सामान्य कारावास अधिनिर्णीत किया गया है।

8. राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री रवि प्रकाश ने निवेदन किया है कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और अपीलार्थियों के विरूद्ध विरचित आरोप के परिशीलन से इसे सिद्ध किया गया है और विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है।

9. यह सत्य है कि अपीलार्थी शिव नारायण साह को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 324 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध किया गया है और उसको तीन वर्ष के सामान्य कारावास का दंडादेश दिया गया है, किंतु अपील लंबित रहने के दौरान शिव नारायण साह की मृत्यु हो गयी। जहाँ तक इन दो अपीलार्थियों अर्थात निमई साह एवं मनोज साह के विरूद्ध सामग्री का संबंध है, उन्हें सही प्रकार से भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन आरोप के लिए दोषसिद्ध किया गया है और इस दशा में उन्हें अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 का लाभ नहीं दिया जा सकता है।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता नित्यानंद प्रसाद चौधरी तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री रवि प्रकाश तथा राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक सुने गए और प्राथमिकी, अभिसाक्ष्य, प्रदर्शों एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। इस न्यायालय का मत है कि अभियोजन पक्ष को उपहति कारित करने वाले इन दो अपीलार्थियों के विरूद्ध संगत साक्ष्य है। वे भारतीय दंड संहिता की धारा 334 का लाभ नहीं ले सकते हैं कि जो कोई भी गंभीर एवं अचानक उकसावा पर स्वेच्छापूर्वक उपहति कारित करता है, क्योंकि उनके द्वारा प्रति मामला दाखिल किया गया है, अभियुक्तों को दोषमुक्त किया गया है। इस दशा में, भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और इस प्रकार, इसे इस न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया जाता है।

11. जहाँ तक दंड की मात्रा का संबंध है, इस न्यायालय का मत है कि मामला वर्ष 1996 में दाखिल किया गया है, आक्षेपित निर्णय वर्ष 2004 में पारित किया गया था, वर्तमान अपील वर्ष 2018 में ग्रहण की गयी है और विवाद गोत्रज के बीच है, जिसमें अपीलार्थीगण भी पीड़ित हुए हैं और नौ माह के सामान्य कारावास में से अपीलार्थियों ने पहले ही सात माह भुगत लिया है और इस दशा में, दंडादेश अपीलार्थियों द्वारा पहले ही भुगत ली गयी अवधि जो पर्याप्त है तक उपांतरित किया जाता है।

12. पूर्वोक्त कारणों से विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश IV, फास्ट ट्रैक कोर्ट, जामतारा द्वारा एस॰ सी॰ केस सं॰ 52 वर्ष 1999/55 वर्ष 2001 में अपीलार्थी सं॰ 2 एवं 3 अर्थात मनोज साह एवं निमई साह को अधिनिर्णीत दंडादेश एतद् द्वारा नौ माह के सामान्य कारावास से भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन दंड के लिए यथा अधिनिर्णीत पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक उपांतरित किया जाता है।

13. इस प्रकार, तद्नुसार, पूर्वोक्तानुसार दंड में उपांतरण के साथ यह अपील खारिज की जाती है। इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को तुरन्त भेजा जाए।

14. अपीलार्थी सं॰ 2 एवं 3 न्यायालय में उपस्थित हैं क्योंकि इस न्यायालय के निर्देश पर पुलिस द्वारा उन्हें लाया गया है। उन्हें निर्मुक्त किया जाता है। तद्नुसार, उनकी उपस्थिति एतद्द्वारा अभिमोचित की जाती है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

शंकर भुइया

बनाम

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (L) No.3437 of 2015. Decided on 21st March, 2018.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 10(1)(d)—औद्योगिक विवाद—विलंब के आधार पर याची द्वारा अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले दावा का अस्वीकरण—याची का नाम जीवित रोस्टर रजिस्टर में नहीं रखा गया था क्योंकि वह अपने पिता की मृत्यु के समय पर मात्र दस वर्ष का था—प्रचलित एन॰ सी॰ डब्लू॰ ए॰ के अधीन, जब वह बाद में 18 वर्ष की आयु प्राप्त करता है, उसके कौशल एवं अर्हता के अनुरूप नियोजन पाने के लिए जीवित रोस्टर रजिस्टर में उसका नाम रखने के लिए मृतक कर्मचारी के अवयस्क आश्रित पुत्र की न्यूनतम आयु 12 वर्ष होनी चाहिए थी—याची ने अपनी जन्मतिथि का उल्लेख नहीं किया है—याची का मामला यह नहीं है कि वह अपने पिता की मृत्यु के समय पर 12 वर्ष से अधिक आयु का था ताकि यह उसके 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद नियोजन पाने के लिए उसको हकदार बनाने के लिए जीवित रोस्टर रजिस्टर में अपना नाम रखवाने के लिए मृतक कर्मचारी का आश्रित पुत्र होने के नाते उसे अर्हित कर सके—वाद हेतुक उद्भूत हुआ ज्योंही परियोजना अधिकारी ने याची का दावा अस्वीकार किया—किंतु औद्योगिक विवाद याची की प्रेरणा पर एक दशक से अधिक बाद संबंधित यूनियन द्वारा उठाया गया था—आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट किया गया।

(पैराएँ 8, 9, 12, 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.—(2009)11 SCC 609—Distinguished; (2000) 3 SCC 93—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Sarvendra Kumar, For the Petitioner; Mr. A. K. Mehta, For the BCCL.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका अनुभाग अधिकारी, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली के हस्ताक्षर के अधीन जारी मेमो सं॰ L-20012/76/2014-IR (CM-1) में यथा अंतर्विष्ट दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा उक्त मंत्रालय ने याची की ओर से उठाए गए विवाद के औद्योगिक न्यायनिर्णयन के लिए निर्दिष्ट करना समुचित नहीं पाया था।

2. रिट याचिका में यथाकथित मामला का ताथ्यिक मैट्रिक्स यह है कि याची का पिता अर्थात अकलू भूइया को 28 अगस्त, 1972 को मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के कुस्तोर क्षेत्र सं॰ 2 में स्टोर टिन्डाल के रूप में नियुक्त किया गया था जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हुए 22 जून, 1993 को हो गयी। याची की माता जसवा देवी ने संबंधित कर्मकार (स्व॰ अकलू भूइया) की पत्नी होने के नाते याची का नाम इस आधार पर कि प्रासंगिक समय के दौरान याची अवयस्क था, जीवित रोस्टर में रखवाने के लिए 17 अगस्त, 1993 तथा 10 जुलाई, 1995 को मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के कुस्तोर क्षेत्र के

परियोजना अधिकारी, प्रत्यर्थी सं॰ 4 के समक्ष आवेदन दिया। वयस्कता प्राप्त करने के बाद याची ने अपने पिता के स्थान पर अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करते हुए संबंधित कोलियरी के प्रबंधक के समक्ष अप्रिल, 2001 में आवेदन दिया। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने दिनांक 24/26 फरवरी, 2003 के मेमो सं॰ बी॰ सी॰ सी॰ एल॰/कुस्तोर कोलियरी/2003/369 में अंतर्विष्ट पत्र के तहत विलंब के आधार पर याची द्वारा अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाला उक्त दावा अस्वीकार कर दिया। याची की ओर से बहुजन मजदूर यूनियन द्वारा याची को अनुकंपा नियुक्ति प्रदान करने में बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन द्वारा इनकार के विरूद्ध औद्योगिक विवाद उठाया गया था। किंतु प्रबंधन एवं यूनियन के बीच सुलह विफल रहा और समुचित सरकार अर्थात भारत सरकार को श्रम एवं नियोजन मंत्रालय, नयी दिल्ली के माध्यम से विफलता रिपोर्ट भेजी गयी थी। किंतु, अनुभाग अधिकारी, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित पत्र के तहत समुचित सरकार ने विवाद न्यायनिर्णय करने के लिए निर्दिष्ट करने से इनकार कर दिया।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश का विरोध करते हुए निवेदन करते हैं कि समुचित सरकार मामला न्यायनिर्णयन के लिए निर्दिष्ट करने से इनकार करके स्वयं विवाद न्यायनिर्णीत नहीं कर सकती है। समुचित सरकार कर्मकार की ओर से किए गए दावा का गुणागण देखने के लिए प्राधिकृत नहीं है बल्कि यदि सुलह विफल रहता है और प्रथम दृष्टया विवाद विद्यमान है, समुचित सरकार औद्योगिक विवाद के न्यायनिर्णय के लिए मामला समुचित न्यायालय के समक्ष निर्दिष्ट करने के लिए कर्तव्यबद्ध है। उक्त विधिक अवस्था पहले ही अनेक निर्णयों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुस्थापित की गयी है। ऐसा एक निर्णय **सर्व श्रमिक संघ बनाम भारतीय तेल निगम लि॰ एवं अन्य, (2009)11 SCC 609** में दिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि समुचित सरकार मामला के गुणागुण पर विचार नहीं कर सकती है और तद्द्वारा औद्योगिक न्यायनिर्णायन के समक्ष न्यायनिर्णयण के लिए इसे निर्दिष्ट करने से इनकार नहीं कर सकती है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता प्रत्यर्थी सं॰ 2 से 4 की ओर से दाखिल प्रतिशपथपत्र को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन करते हैं कि स्व॰ अकलू भूइया, भूतपूर्व स्टोर टिन्डल, को मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के कुस्तोर कोलियरी के स्थापन में नियोजित किया गया था। उसकी मृत्यु 22 जून 1993 को हो गयी जब वह सेवा में था अपने पिता की मृत्यु के समय पर याची मात्र दस वर्ष का था। आगे यह निवेदन किया गया है कि राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के प्रावधानों के मुताबिक, जीवित रोस्टर में उसका नाम रखने के लिए अवयस्क की न्यूनतम आयु 12 वर्ष थी और 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर प्रबंधन को उसे नियोजन प्रदान करने की आवश्यकता थी। यह निवेदन भी किया गया है कि स्वयं याची के अपने विवरण के मुताबिक, उसने वर्ष 2001 में 18 वर्ष की आयु प्राप्त किया? जिसके बाद उसने उसको अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए अप्रिल 2001 में प्रबंधन के समक्ष आवेदन दिया। किंतु, प्रबंधन ने दिनांक 26 फरवरी, 2003 के आदेश के तहत अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया। याची द्वारा दाखिल अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन के अस्वीकरण के दस वर्ष से भी अधिक बीतने के बाद बहुजन मजदूर यूनियन के संयुक्त महासचिव ने याची को अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए औद्योगिक विवाद उठाया। सहायक श्रम आयुक्त (केंद्रीय) द्वारा सुलह का प्रयास किया गया था और अनेक तिथियों पर चर्चा की गयी थी और अंततः 15 अप्रिल, 2014 को सुलह अधिकारी ने सुलह विफलता रिपोर्ट दर्ज किया जिसे मत के निर्माण के लिए समुचित

सरकार को अग्रसारित किया गया था कि क्या निर्देश आदेश द्वारा अनुसरित औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है। किंतु दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश के तहत समुचित सरकार ने न्यायनिर्णयन के लिए विवाद निर्दिष्ट करने से इनकार कर दिया।

5. प्रत्यर्थी प्रबंधन के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि समुचित सरकार (वर्तमान मामला में भारत सरकार) ने विवाद निर्दिष्ट करने का अनुरोध अस्वीकार करते हुए मामला के गुणागुण पर विचार नहीं किया किया है बल्कि इसने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर औद्योगिक विवाद के अस्तित्व/गैर–अस्तित्व अथवा औद्योगिक विवाद की आशंका के बारे में मत निर्मित किया है और तद्द्वारा आक्षेपित आदेश जारी करके निर्देश इनकार किया गया है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। भारत सरकार ने श्रम मंत्रालय के माध्यम से दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित पत्र (रिट याचिका का परिशिष्ट–7) के तहत निम्नलिखित कारणों से विवाद न्यायनिर्णयन के लिए निर्दिष्ट करने से इनकार कर दिया:–

> *''श्री शंकर भूइया, स्व० अकलू भूइया (22.6.1993 को देहांत) का आश्रित पुत्र, अपने पिता जो बी० सी० सी० एल० के कुस्तोर कोलियरी में कार्यरत था, की मृत्यु के बाद अनुकंपा नियोजन पाने का हकदार नहीं है। उसका नाम जीवित रोस्टर रजिस्टर में नहीं रखा गया था क्योंकि वह अपने पिता की मृत्यु के समय पर मात्र 10 वर्ष का था। एन० सी० डब्लू० ए० के प्रावधान के अधीन, जब वह 18 वर्ष की आयु प्राप्त करता है, उसके कौशल एवं अहर्ता के अनुरूप नियोजन पाने के लिए जीवित रजिस्टर रोस्टर में आश्रित का नाम रखने के लिए अवयस्क की न्यूनतम आयु 12 वर्ष होनी चाहिए। यूनियन भी उसके पिता की मृत्यु के समय पर शंकर भूइया की सटीक आयु के समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य देने में विफल रहा।''*

7. दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश में दिए गए कारणों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने इस तथ्य पर विचार किया है कि स्व॰ अकलू भूइया (याची के पिता) की मृत्यु 22 जून, 1993 को मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के कुस्तोर क्षेत्र कोलियरी में काम करते हुए हो गयी और याची का नाम जीवित रोस्टर रजिस्टर में नहीं रखा गया था, क्योंकि वह अपने पिता की मृत्यु के समय पर मात्र दस वर्ष का था। प्रचलित एन॰ सी॰ डब्लू॰ ए॰ के अधीन, जब वह बाद में 18 वर्ष की आयु प्राप्त करता है, उसके कौशल एवं अर्हता के अनुरूप नियोजन पाने के लिए जीवित रोस्टर में उसका नाम रखने के लिए मृतक कर्मचारी के अवयस्क आश्रित पुत्र की न्यूनतम आयु 12 वर्ष होनी चाहिए थी। दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश में आगे संप्रेक्षित किया गया था कि अपने पिता की मृत्यु के समय याची की वास्तविक आयु के समर्थन में कोई दस्तावेजी साक्ष्य देने में यूनियन विफल रहा।

8. रिट याचिका में किए गए प्रकथनों तथा प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की ओर से दाखिल प्रति शपथपत्र में किए गए प्रकथनों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि याची ने अपनी जन्म तिथि का उल्लेख नहीं किया है। याची का मामला यह नहीं है कि वह अपने पिता की मृत्यु के समय 12 वर्ष से अधिक आयु का था ताकि 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद नियोजन पाने के लिए उसको हकदार बनाने के लिए जीवित रोस्टर रजिस्टर में अपना नाम रखवाने के लिए मृतक कर्मचारी को आश्रित पुत्र होने के नाते उसे अर्हित कर सके।

9. वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से याची द्वारा किया गया मुख्य प्रतिवाद यह है कि भारत सरकार ने मामला न्यायनिर्णयन के लिए निर्दिष्ट करने से इनकार करते हुए विवाद के गुणागुण पर विचार किया

है जो विधि के विपरीत है। मैं याची की ओर से किए गए उक्त प्रतिवाद में बल नहीं पाता हूँ। दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश के परिशीलन पर, यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि समुचित सरकार (भारत सरकार) ने विवाद के गुणागुण पर विचार किया, बल्कि इसने यह पता लगाने के लिए मत निर्मित किया है कि क्या औद्योगिक न्यायनिर्णयण के लिए इसे निर्दिष्ट करने के लिए प्रथम दृष्टया विवाद विद्यमान है। यदि सुलह कार्यवाही के दौरान याची ने स्थापित किया था कि वह अपने पिता की मृत्यु के समय 12 वर्ष से अधिक आयु का था, विवाद विद्यमान होता। प्रचलित एन॰ सी॰ डब्लू॰ ए॰ के प्रासंगिक प्रावधानों के मुताबिक दावा का आधार याची द्वारा प्रथम दृष्टया स्थापित नहीं किया जा सकता था। इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि कोई विवाद विद्यमान था भी।

10. मैंने **सर्व श्रमिक संघ बनाम भारतीय तेल निगम लि॰ (ऊपर)** में दिए गए याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय का भी परिशीलन किया। उक्त निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निर्देश करने से इनकार पर पुनर्विचार करने के लिए समुचित सरकार को परमादेश रिट जारी किया जाएगा जहाँ (i) इनकार अप्रासंगिक, अतार्किक एवं विषयेतर आधार पर है, (ii) इनकार समुचित सरकार द्वारा विवाद के गुणागुण का परीक्षण तथा विवाद पूर्वनिर्णीत/न्यायनिर्णीत/विनिश्चित करने का परिणाम हैं, (iii) इनकार असद्भावपूर्ण या बेइमान या द्वेषप्रेरित है; (iv) इनकार सुलह अधिकारी की विफलता रिपोर्ट में उपलब्ध सामग्री अनदेखा करता है अथवा किसी कारण से समर्थित नहीं है। किंतु, वर्तमान मामला में उक्त उल्लिखित शर्तों में से कोई भी मौजूद नहीं है:–

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सचिव, भारतीय चाय संघ बनाम अजित कुमार बराट, (2000)3 SCC 93** में अभिनिर्धारित किया है:–

> *''4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री दीपंकर गुप्ता ने मद्रास राज्य बनाम सी॰ पी॰ सारथी में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए आग्रह किया है कि अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन अपने कार्य का निर्वहन करते हुए सरकार प्रशासनिक कृत्य कर रही थी, अतः, न्यायालय इस निष्कर्ष पर नहीं आ सकता था कि मामला निर्दिष्ट करने से इनकार दोषपूर्ण था। हम निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ को नीचे उद्धृत करते हैं:*
>
> *''किंतु, इसका अर्थ यह कहना नहीं है कि सरकार स्वयं को अपने ध्यान में लाए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों पर संतुष्ट किए बिना कि स्थापना अथवा उद्योग विशेष में काम में लगे स्थापनों के निश्चित समूह के संबंध में औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है, धारा 10(1) के अधीन निर्देश करने में न्यायोचित होगी। यह भी वांछनीय है कि सरकार को जहाँ कहीं भी संभव हो निर्देश आदेश में विवाद की प्रकृति उपदर्शित करना चाहिए। किंतु, यह याद रखना होगा कि धारा 10(1) के अधीन निर्देश करने में सरकार प्रशासनिक कृत्य कर रही है और यह तथ्य कि इसने अपने कार्य का निर्वहन करने के लिए आरंभिक कदम के रूप में औद्योगिक विवाद के ताथ्यिक अस्तित्व के प्रति मत निर्मित किया है, इसे किसी भी तरीके से कम प्रशासनिक चरित्र वाला नहीं बनाता है। अतः, न्यायालय निकट रूप से यह देखने के लिए कि क्या अपने निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए सरकार के समक्ष कोई सामग्री थी, मानों यह न्यायिक अथवा न्यायिक कल्प विनिश्चयकरण हो, निर्देश आदेश प्रचारित नहीं कर सकता है। निस्संदेह, पारिणामिक अधिनिर्णय को आक्षेपित करने वाले पक्ष को यह दर्शाने की छूट होगी कि जो सरकार द्वारा निर्दिष्ट किया गया था, अधिनियम के अर्थ के अंतर्गत औद्योगिक विवाद*

नहीं था और कि इसलिए अधिकरण को अधिनिर्णय पारित करने की अधिकारिता नहीं थी। किंतु, यदि विवाद अधिनियम में यथा परिभाषित औद्योगिक विवाद था, इसका ताथ्यिक अस्तित्व और मामला विशेष की परिस्थितियों में निर्देश करने की समीचीनता सरकार द्वारा विनिश्चित किए जाने वाले मामले हैं और न्यायालय के लिए निर्देश दोषपूर्ण अभिनिर्धारित करना और अधिकारिता की कमी के कारण कार्यवाही अभिखंडित करना मात्र इसलिए सक्षम नहीं होगा क्योंकि इसके मत में सरकार के समक्ष ऐसी कोई सामग्री नहीं थी जिन पर यह उन मामलों पर सकारात्मक निष्कर्ष पर आ सकता था।''

5. हम प्रेम ककर बनाम हरियाणा राज्य में इस न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट कर सकते हैं, उस मामला में प्रश्न उद्भूत हुआ कि क्या कर्मचारी कर्मकार था। सरकार ने कर्मकार को सूचित किया कि उसका मामला अधिनियम के अधीन शब्द ''कर्मकार'' की परिभाषा द्वारा आच्छादित नहीं था, अतः, इसने निर्देश करने से इनकार किया। कर्मकार परमादेश रिट के लिए उच्च न्यायालय के पास आया जिसे खारिज किया गया था। इस न्यायालय के पास आया गया था और अपील खारिज की गयी थी। अपील में इस न्यायालय के समक्ष प्रतिवाद किया गया था कि यह प्रश्न कि क्या कर्मचारी कर्मकार था, तथ्य एवं विधि का विवादित प्रश्न है, अतः केवल निर्देश पर श्रम न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जा सकता था और न कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 12 (5) के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, जिसे अस्वीकार किया गया था। इस न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि व्यक्तिपरक संतुष्टि के बाद पारित धारा 10(1) सहपठित धारा 12(5) के अधीन कृत्य करते हुए सरकार का आदेश प्रशासनिक आदेश था और न कि न्यायिक अथवा न्यायिककल्प आदेश। यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसे आदेश के विरूद्ध परमादेश रिट ग्रहण करने में न्यायालय अपील नहीं सुनता है और कारणों की औचित्यता अथवा संतोषजनक चरित्र पर विचार करने का हकदार नहीं है। किंतु, यदि आदेश में दिए गए कारणों से यह प्रतीत होता है कि समुचित सरकार ने किसी विचार जो अप्रासंगिक अथवा विदेशी है को विचार में लिया है, तब न्यायालय दिए गए मामला में परमादेश रिट के मामला पर विचार कर सकता है।

6. मुलतान सिंह बनाम हरियाणा राज्य में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 10 के अधीन जारी आदेश प्रशासनिक आदेश है और सरकार इस प्रश्न पर विचार करने की हकदार है कि क्या औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है और यह केवल अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि होगी और प्रशासनिक आदेश होने के नाते वाद अंतर्ग्रस्त नहीं है।

7. इस बिन्दु पर विधि निम्नलिखित रूप में संक्षिप्त की जा सकती है:

1. समुचित सरकार स्वयं को अपने ध्यान में लाए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों पर संतुष्ट किए बिना कि औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है, अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश करने में न्यायोचित नहीं होगा और यदि ऐसा निर्देश किया जाता है, निर्देश आदेश में विवाद की प्रकृति उपदर्शित करना, जहाँ कहीं भी संभव हो, सरकार के लिए वांछनीय है।

2. अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश करने वाला समुचित सरकार का आदेश प्रशासनिक आदेश है और न कि न्यायिक अथवा न्यायिककल्प आदेश और इसलिए न्यायालय निकट रूप से यह देखने के लिए कि क्या अपने निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए सरकार के समक्ष कोई सामग्री थी, मानो यह न्यायिक अथवा न्यायिक कल्प आदेश था, निर्देश आदेश प्रचारित नहीं कर सकता है।

3. अधिनियम की धारा 10 के अधीन समुचित सरकार द्वारा पारित आदेश प्रशासनिक आदेश होने के नाते वाद अंतर्ग्रस्त नहीं है क्योंकि ऐसा आदेश सरकार की व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि पर पारित किया गया है।

4. यदि दिए गए कारणों से यह प्रतीत होता है कि समुचित सरकार ने किसी अप्रासंगिक अथवा विदेशी विचार को विचार में लिया है, न्यायालय दिए गए मामला में परमादेश रिट के लिए मामला पर विचार कर सकता है।

5. किंतु पक्ष को यह दर्शाने की छूट होगी कि जिसे सरकार द्वारा निर्दिष्ट किया गया था, वह अधिनियम के अर्थ के अंतर्गत औद्योगिक विवाद नहीं था।''

12. औद्योगिक न्यायनिर्णयण के लिए इसे निर्दिष्ट करने के लिए विवाद के अस्तित्व के संबंध में मत निर्मित करते हुए, समुचित सरकार को अपने व्यक्तिनिष्ठ मत के लिए अपने ध्यान में लाए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों पर स्वयं को संतुष्ट करना होगा कि औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है। यदि याची की ओर से किया गया प्रतिवाद स्वीकार किया जाता है, तब औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10(1) (d) के अधीन समुचित सरकार को प्राधिकृत करने के समस्त प्रयोजन की कोई भी प्रयोज्यता नहीं होगी। अत:, समुचित सरकार को प्रथम दृष्टया औद्योगिक विवाद के अस्तित्व/गैर-अस्तित्व के संबंध में प्रस्तुत सामग्री के आधार पर मत निर्मित करने के लिए अधिनियम, 1947 के उक्त प्रावधान के अधीन प्राधिकृत है।

13. यद्यपि आक्षेपित पत्र याची की प्रेरणा पर औद्योगिक विवाद उठाने में किए गए विलंब के बिन्दु पर कोई कारण परिलक्षित नहीं करता है, फिर भी यह स्वीकृत तथ्य है कि वाद हेतुक उद्भूत हुआ ज्योंही प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने दिनांक 24/26 फरवरी, 2003 के पत्र (रिट याचिका का परिशिष्ट 4) के तहत याची का दावा अस्वीकार किया। किंतु, औद्योगिक विवाद याची की प्रेरणा पर एक दशक से अधिक बाद 4 जुलाई, 2013 को संबंधित यूनियन द्वारा उठाया गया था।

14. मामला के पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह न्यायालय अनुभाग अधिकारी, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली के हस्ताक्षर के अधीन जारी मेमो सं॰ L-20012/76/2014-IR(CM-1) में यथा अंतर्विष्ट दिनांक 22 अगस्त, 2014 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं। तद्नुसार, रिट याचिका गुणागुणरहित होने के कारण खारिज की जाती है।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

पार्वती देवी एवं अन्य

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.4794 of 2012. Decided on 18th April, 2018.

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949—धारा 20—भूमि की बंदोबस्ती—आवेदन का अस्वीकरण—आयुक्त द्वारा अपील अस्वीकार की गयी—आक्षेपित आदेश गैर-सकारण आदेश है और प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार नहीं किया है—आयुक्त द्वारा पारित आदेश अपास्त किया गया

और मामला पक्षों को सुनने के बाद नया सकारण आदेश पारित करने के लिए उक्त प्राधिकारी को वापस भेजा गया। (पैराएँ 7 एवं 10)

निर्णयज विधि.–(2010) 4 SCC 785—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Ayush Aditya, For the Petitioners; Mr. Ashutosh Kumar Singh, For Resp. Nos.1 to 5; M/s Rajeeva Sharma, Anjana Rana, For Resp. Nos.6 to 17.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री आयुष आदित्य सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 6 से 17 की ओर से उपस्थित अधिवक्ता सुश्री अंजना राना द्वारा सहायित वरीय अधिवक्ता श्री राजीव शर्मा सुने गए।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 की ओर से उपस्थित स्थायी अधिवक्ता (खान) के सहायक अधिवक्ता श्री आशुतोष कुमार सिंह सुने गए।

4. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:–

''आर॰ एम॰ ए॰ सं॰ 520/1985-86 में आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका (प्रत्यर्थी सं॰ 2) द्वारा पारित दिनांक 25.5.2012 के आदेश (परिशिष्ट 5) और पुनरीक्षण विविध अपील सं॰ 179/1982-83 में उपायुक्त, दुमका (प्रत्यर्थी सं॰ 3) द्वारा पारित दिनांक 13/27.1.1986 के आदेश के अभिखंडन के लिए जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 ने एस॰ आर॰ केस सं॰ 120 वर्ष 1980-81 में सबडिविजनल अधिकारी, दुमका (प्रत्यर्थी सं॰ 4) द्वारा पारित दिनांक 5.8.1982 का विस्तारपूर्ण एवं तार्किक आदेश (परिशिष्ट 3) जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन विद्वान सबडिविजनल अधिकारी, दुमका ने प्राइवेट प्रत्यर्थियों का भूखंड सं॰ 19 का भाग छोड़ते हुए ग्राम बैजनडीह, पी॰ एस॰ जरमुन्डी के भूखंड सं॰ सं॰ 19, 48 एवं 130 की बंदोबस्ती के लिए प्रार्थना करते हुए आवेदन अस्वीकार कर दिया और प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा की गयी बंदोबस्ती की प्रार्थना के प्रति अपनी आपत्तियों में याचीगण द्वारा उठाया गया मामला अंचलाधिकारी द्वारा प्रस्तुत दिनांक 25.3.1981 की जाँच रिपोर्टों (परिशिष्ट 1) तथा भूसुधार उप समाहर्ता के रिपोर्ट (परिशिष्ट 2) जिन्होंने स्थल निरीक्षण एवं सत्यापन पर ग्राम प्रधान द्वारा 5.6.1942 को याचीगण की बंदोबस्ती का मामला सही पाया था और आगे रिपोर्ट किया था कि याचीगण पूरे समय काबिज थे, पर विश्वास करके अन्य बातों के साथ इस आधार पर स्वीकार किया था कि उक्त भूमि पहले ही ग्राम प्रधान द्वारा याचीगण के पक्ष में बंदोबस्त की गयी है और इस दशा में मूल प्राइवेट प्रत्यर्थियों 5 से 11 द्वारा दाखिल बंदोबस्ती का आवेदन अस्वीकार किया गया था, को अपास्त करते हुए अत्यन्त गूढ़ एवं अतार्किक आदेश पारित किया है और ऐसा अन्य आदेश, रिट अथवा निर्देश जारी करने के लिए जो याचीगण के साथ साम्यापूर्ण न्याय करने के लिए न्योयाचित एवं समुचित प्रतीत हो सकती है।''

5. याचीगण के अधिवक्ता आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा आर॰ एम॰ ए॰ सं॰ 520 वर्ष 1985-86 में पारित दिनांक 25.5.2012 के आदेश (परिशिष्ट 5) को निर्दिष्ट एवं निवेदन करते हैं कि उक्त आदेश गैर–सकारण आदेश है।

6. याचीगण के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि उक्त आदेश के प्रथम पृष्ठ पर याचीगण का मामला दर्ज किया गया है और प्रत्यर्थियों का मामला आदेश के द्वितीय पृष्ठ से शुरू होता है और आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका के निष्कर्षों का पठन निम्नलिखित है:–

''अभिलेख के परिशीलन के बाद दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनकर और अवर न्यायालय के अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं विद्वान अवर न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता हूँ, किंतु समस्त जाँच एवं तथ्य संतोषजनक नहीं हैं। मैं विद्वान एस० डी० ओ०, दुमका को अंचलाधिकारी एवं अंचल अमीन के साथ भूखंडों का निरीक्षण करने तथा जाँच के बाद इन भूमि को वास्तविक दखलकार के साथ बंदोबस्त करने का निर्देश देता हूँ और एस० डी० ओ० द्वारा बंदोबस्त किए जाने के बाद सर्वे प्राधिकारियों को एस० डी० ओ० द्वारा पारित बंदोबस्ती आदेश के अनुसार प्रविष्टियों को सही करने का निर्देश देता हूँ इन संप्रेक्षणों के साथ मामला निपटाया जाता है।''

7. याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 25.5.2012 के आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि आदेश गैर-सकारण आदेश है और प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार नहीं किया है।

8. याचीगण के अधिवक्ता ने अपना तर्क आगे बढ़ाने के लिए **(2010) 4 SCC 785** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर विश्वास किया है। उन्होंने उक्त निर्णय के निम्नलिखित पैराग्राफों पर विश्वास किया है:–

''24. विवेक विधि का प्राण है। जब विधि का विवेक एकबार समाप्त हो जाता है, सामान्यतः विधि स्वयं समाप्त हो जाती है। (Wharton's Law Lexicon) विधि के किसी सिद्धांत में विवेक का ऐसा महत्व है। कारणों को देना न्याय का हेतु अग्रसर करता है और अनिश्चितता से बचाता है। वस्तुतः यह पूर्वनिर्णय की विधि के पालन में मदद करता है। इसके विपरीत कारणों की अनुपस्थिति आवश्यकतः अनिश्चितता, असंतोष का तत्व पुरः स्थापित करती है और उच्चतर/अपीलीय न्यायालयों के समक्ष उठाए गए विधि के प्रश्नों को संपूर्णतः भिन्न आयाम देती है। हमारे दृष्टिकोण में, न्यायालय को पक्ष का दावा/प्रार्थना अस्वीकार करने के लिए, चाहे आरंभिक चरण पर अर्थात ग्रहण के चरण पर हो अथवा नियमित सुनवाई के बाद, स्वयं अपना कारण एवं आधार देना चाहिए भले ही वे कितने भी संक्षिप्त क्यों न हो।

25. हम यह सिद्धांत दोहराएँगे कि जब कारणों को उद्घोषित किया जाता है और तौला जा सकता है, लोग आश्वस्त हो सकते हैं कि परिशुद्धि की प्रक्रिया विद्यमान एवं कार्यशील है। यह विधि की आवश्यकता है कि निर्णयों की परिशुद्धि प्रक्रिया न केवल क्रियान्वित की गयी प्रतीत होनी चाहिए बल्कि समुचित रूप से क्रियान्वित की गयी प्रतीत होनी चाहिए। आदेश का कारण लोक विश्वास सुनिश्चित एवं वर्द्धित करेगा और हमारी न्याय प्रदान प्रणाली के अधीन न्याय के उपभोक्ता को सम्यक संतुष्टि प्रदान करेगा। विधि में यह कहना ज्यादा सही नहीं हो सकता है कि कारण दर्ज करने के लिए न्यायालयों पर सापेक्ष कर्तव्य अधिरोपित किया गया है।

26. वस्तुतः हमारी प्रक्रियात्मक विधि एवं स्थापित प्रथा न्यायालयों पर कारण दर्ज करने की अविशिष्टीकृत बाध्यता अधिरोपित करती है। निर्णयों में कारणों को दर्ज करना आवश्यक बनाने वाला स्वयं संविधान के अधीन अथवा आयकर अधिनियम के अधीन कोई 'सांविधिक प्रावधान नहीं है किंतु अब यह अनिर्णीत विषय नहीं है और यह अभिनिर्धारित करते हुए कि न्यायालयों एवं अधिकरणों को तार्किक निर्णय/आदेश पारित करने की आवश्यकता है, इसे इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों द्वारा स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया है। वस्तुतः सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 14 नियम 2 सहपठित आदेश 20 नियम 1 आवश्यक बनाता है कि न्यायालय को प्रत्येक विवाद्यक पर निष्कर्ष दर्ज करना चाहिए और ऐसा निष्कर्ष जो स्पष्टतः तार्किक होने चाहिए निर्णय का भाग निर्मित करेंगे जो आगे न्यायालय की डिक्री लिखने का आधार होगा।

27. समस्त न्यायालयों में अपनायी गयी प्रथा द्वारा और न्यायाधीश-निर्मित विधि के फलस्वरूप तार्किक निर्णय की धारणा विधि के मूल सिद्धांत का अनिवार्य भाग है और वस्तुतः, प्रक्रियात्मक विधि की आज्ञापक आवश्यकता है। विचारों की स्पष्टता अंतर्दृष्टि की स्पष्टता की ओर ले जाती है और समुचित तर्क न्यायोचित एवं निष्पक्ष निर्णय की नींव है। अलेक्सेंडर मशीनरी (डडले) लि० में इस संबंध में उपयुक्त संप्रेक्षण हैं कि ''कारण देने में विफलता न्याय से इनकार के तुल्य है।'' कारण न्याय प्रशासन की वास्तविक जीवित कड़ी है। सम्मानपूर्वक हम इस दृष्टिकोण में योगदान करेंगे। तार्किक निर्णय के पीछे तर्काधार, तर्क एवं प्रयोजन है। तार्किक निर्णय मुख्यतः स्वयं अपने विचारों को स्पष्ट करने संबंधित व्यक्ति को निर्णय का कारण संसूचित करने के लिए लिखा जाता है और यह प्रावधान तथा सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसे कारणों पर अपीलीय/उच्चतर न्यायालय द्वारा समुचित रूप से विचार किया जा सकता है। इस प्रकार, कारणों की अनुपस्थिति यहाँ उपर कथित उद्धेश्य को विफल करने की ओर ले जाएगी।''

9. प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश द्वारा एस॰ डी॰ ओ॰, दुमका को अंचलाधिकारी एवं अंचल अमीन के साथ भूखंडों का निरीक्षण करने तथा समुचित आदेश पारित करने का निर्देश जारी किया गया है, अत: यह न्यायालय आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। किंतु, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता यह तथ्य विवादित नहीं कर सकते हैं कि आक्षेपित आदेश गैर-सकारण आदेश है।

10. इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि दिनांक 25.5.2012 का आक्षेपित आदेश गैर-सकारण आदेश है, यह न्यायालय आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा आर॰ एम॰ ए॰ सं॰ 520 वर्ष 1985-86 में पारित दिनांक 25.5.2012 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करने का इच्छुक है और मामला पक्षों को सुनने के बाद नया सकारण आदेश पारित करने के लिए उक्त प्राधिकारी को प्रतिप्रेषित किया जाता है।

11. इसपर, पक्षगण के अधिवक्ता, 15.5.2018 को उक्त प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित होने के लिए सहमत हैं। यदि 15.5.2018 को पक्षों में से कोई उपस्थित होता है। आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका को मामला में अग्रसर होने तथा इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के बाद विधि के अनुरूप सकारण आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

12. तद्नुसार, यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

रामेश्वर मोदी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No.42 of 2004. Decided on 17th April, 2018.

एस॰ टी॰ सं॰ 434 वर्ष 1995 (जयनगर पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 73 वर्ष 1994, जी॰ आर॰ सं॰ 798 वर्ष 1994 के तत्सम से उद्भूत) में विद्वान प्रथम अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 6.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 323—घोर उपहति—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 379, 325, 341 एवं 307/34 के अधीन अपराधों से दोषमुक्ति—विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करते हुए स्वीकार किया है कि साक्ष्य की कमी है, किंतु केवल सूचक के बयान के आधार पर कि उस पर अपीलार्थियों द्वारा लाठी, लोहे की छड़ से प्रहार किया गया है, अपीलार्थियों की दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है—विगत 20 वर्षों से पक्षों के बीच भूमि विवाद है—इस दशा में, किसी उपहति के औपचारिक प्रमाण के बिना सूचक के बयान के आधार पर मामला सच्चे मामला के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है जहाँ गवाह ने मामला का समर्थन नहीं किया है और अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है—अपीलार्थी को आरोप से दोषमुक्त किया गया।

(पैराएँ 11 से 14)

अधिवक्तागण.—Mr. Deepak Kumar, For the Appellants; Mr. Rakesh Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. समस्त पूर्वोक्त चारों अपीलाथियों को एस॰ टी॰ सं॰ 434 वर्ष 1995 (जय नगर पी॰ एस॰ केस सं॰ 73 वर्ष 1994, जी॰ आर॰ सं॰ 798 वर्ष 1994 के तत्सम, से उद्भूत) में विद्वान प्रथम अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 6.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के तहत दोषसिद्धि किया गया है जिसके द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि किया गया है और प्रत्येक को 5000/- रुपयों का जमानत बंधपत्र प्रस्तुत करने तथा सूचक एवं उसके परिवार के सदस्यों के साथ शांति एवं अच्छा व्यवहार रखने का निर्देश दिया है और उसी निर्णय द्वारा विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379, 325, 341 एवं 307/34 के अधीन दोषमुक्त किया है।

बंधपत्र प्रस्तुत करने के पूर्वोक्त निर्णय एवं आदेश के विरूद्ध इस न्यायालय के समक्ष अपील दाखिल की गयी है। अपील 2.4.2004 को ग्रहण की गयी है और इस माननीय न्यायालय द्वारा जमानत बंधपत्र का आगे निष्पादन स्थगित किया गया है।

3. अभियोजन मामला सूचक जगदीश मोदी की 16.12.2004 को लिखित रिपोर्ट पर आधारित है जिसमें अभिकथित किया गया है कि 15.12.1994 (वृहस्पतिवार) को जब सूचक डोमचाच में अपनी दुकान से अपनी जेब में 1560/- रुपया नगद के साथ साइकिल पर अपने घर लौट रहा था और ज्योंही वह अपराह्न लगभग 6 बजे ग्राम रघुनिया टांड के सिंदवार झाड़ी के निकट पहुँचा, उसका सगा चाचा रामेश्वर मोदी अपने पुत्रों अशोक मोदी एवं बिनोद मोदी तथा भतीजा विजय मोदी पुत्र महादेव मोदी के साथ लाठी, लोहे की छड़ आदि से लैस होकर वहाँ आया और सूचक पर प्रहार किया ताकि वह भूमि छोड़ दे। सूचक ने कथन किया है कि उसने साइकिल छोड़ दिया और गिर गया। तत्पश्चात विनोद मोदी ने उसकी जेब से 1560/- रुपयो लिया है। सूचक ने कथन किया है कि समस्त अभियुक्तगण गोत्रज हैं और उनका काफी पहले से भूमि विवाद है क्योंकि ये व्यक्ति भूमि में हिस्सा नहीं दे रहे हैं जिसके लिए घटना हुई है। सूचक ने घायल दशा में कथन किया है कि वह गाँव वालों की मदद से पुलिस थाना आया और मामला रिपोर्ट किया।

सूचक जगदीश मोदी के पूर्वोक्त 'फर्दबयान' के आधार पर पुलिस ने प्राथमिकी जयनगर पी॰ एस॰ केस सं॰ 73 वर्ष 1994 (दिनांकित 16.12.1994), जी॰ आर॰ सं॰ 798 वर्ष 1994 के तत्सम, दर्ज किया।

4. अन्वेषण के बाद पुलिस ने चार अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 379, 325, 307/34 के अधीन दिनांक 29.1.1995 का आरोप पत्र सं॰ 7 वर्ष 1995 दाखिल किया।

5. अपराध का संज्ञान लिया गया है और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया है जहाँ समस्त अपीलार्थियों के विरूद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 325/34, 307/34 एवं 341/34 के अधीन आरोप विरचित किया गया है और अपीलार्थी विनोद मोदी को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा 17.4.1999 को पृथक रूप से भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 379 के अधीन आरोपित किया गया है। अपीलार्थियों ने निर्दोषिता का अभिवचन किया, अत: उनका विचारण किया गया है।

6. अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल 9 गवाहों का परीक्षण किया है। रफीक का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने यह कहकर कि उसे घटना के बारे में जानकारी नहीं है, अभियोजन मामला का समर्थन नहीं किया है। द्वारिका प्रसाद साव का परीक्षण अ॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है। वह अनुश्रुत गवाह है। विनोद मोदी का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। उसने यह कहकर कि उसे घटना के बारे में जानकारी नहीं है, अभियोजन मामला का समर्थन नहीं किया है।

द्वारिका प्रसाद साव का परीक्षण अ॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है। वह अनुश्रुत गवाह है।

विनोद मोदी का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। उसने यह कहकर कि उसे घटना के बारे में जानकारी नहीं है, अभियोजन मामला का समर्थन नहीं किया है।

गिरधारी सुन्डी का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया है। उसने भी इसी विवरण का कथन किया है कि उसे घटना के बारे में जानकारी नहीं है।

मामला के सूचक जगदीश मोदी का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने प्राथमिकी में दिया गया बयान दोहराया है और निवेदन किया है कि उसका अभियुक्तों के साथ भूमि विवाद है और दो मामले लंबित हैं। उसने प्रदर्श 1 के रूप में लिखित रिपोर्ट सिद्ध किया है। प्रतिपरीक्षण के पैराओं 16 एवं 27 में इस गवाह ने मामलों को स्वीकार किया है जो उसके विरूद्ध लंबित हैं जिन्हें अभियुक्तों द्वारा दाखिल किया गया है।

श्रीमती कुन्ती देवी का परीक्षण अ॰ सा॰ 6 के रूप में किया गया है। वह सूचक जगदीश मोदी की पत्नी है। उसने कथन किया है कि घटना 15.12.1994 को अपराह्न 8 बजे हुई और आगे स्वीकार किया कि विगत 20 वर्षों से पक्षों के बीच भूमि विवाद है।

अरूण कुमार मोदी का परीक्षण अ॰ सा॰ 7 के रूप में किया गया है। वह सूचक जगदीश मोदी का पुत्र है। इस गवाह ने कथन किया है कि प्रहार के कारण उसके पिता का हाथ टूट गया।

नूनमन मोदी का परीक्षण अ॰ सा॰ 8 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने घटना नहीं देखा है।

प्रसादी यादव का परीक्षण अ॰ सा॰ 9 के रूप में किया गया है। वह अधिवक्ता का लिपिक होने के नाते औपचारिक गवाह है और प्रदर्श 2 के रूप में औपचारिक प्राथमिकी और प्रभारी अधिकारी का पृष्ठांकन सिद्ध किया है।

7. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद, 20.11.2003 को अपीलार्थियों का दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन परीक्षण किया गया है। बचाव गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है।

8. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियोजन मामला पर अविश्वास किया है और इस प्रकार अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379, 325, 341 एवं 307/34 के अधीन दोषमुक्त कर दिया, किंतु अपीलार्थियों को गलत रूप से भारतीय दंड

संहिता की धारा 323 के अधीन ऐसे मामला में दोषसिद्ध किया जहाँ उपहति रिपोर्ट सिद्ध नहीं की गयी है और आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया है। केवल सूचक के बयानों के आधार पर, साक्ष्य का संवीक्षण किए बिना और इस तथ्य कि पक्षों के बीच 20 वर्षों से भूमि विवाद लंबित है और अभियुक्तों द्वारा सूचक के विरूद्ध मामले दाखिल किए गए हैं जैसा स्वयं सूचक द्वारा अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ सं॰ 16 एवं 27 में स्वीकार किया गया है पर विचार किए बिना दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश पारित किया है।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों के बीच भूमि विवाद पर विचार नहीं किया है। कुछ मामले अभी भी लंबित हैं, डॉक्टर एवं अन्वेषण अधिकारी का गैर परीक्षण तथा अभिकथित घटना के किसी चश्मदीद गवाह की अनुपस्थिति में अवर न्यायालय ने गलत रूप से भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है जो विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है। इस माननीय न्यायालय द्वारा अपील ग्रहण की गयी थी और इस न्यायालय द्वारा 2.4.2004 को बंधपत्र के निष्पादन का स्थगन आदेश पारित किया गया है। तब से पक्षों के बीच कुछ नहीं हुआ है और इस दशा में लगभग 14 वर्षों बाद बंध पत्र निष्पादित किया जाना अर्थहीन है।

10. राज्य की ओर से उपस्थित अपर लोक अभियोजक श्री राकेश कुमार तर्क एवं निवेदन करते हैं कि सूचक ने स्पष्टत: कथन किया है कि चार व्यक्तियों द्वारा लाठी, लोहे की छड़ से उस पर प्रहार किया गया था और इस दशा में, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन दोषसिद्ध किया है। चूँकि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 379, 325, 341 एवं 307/34 के अधीन दोषमुक्त किया है और इस माननीय न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि बंधपत्र का निष्पादन जिसे इस माननीय न्यायालय द्वारा स्थगित किया गया है, केवल अपील लंबित रहने के दौरान सीमित प्रयोजन से था और इस दशा में, यह माननीय न्यायालय दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय मान्य ठहरा सकता है और अपीलार्थियों को बंधपत्र निष्पादित करने का निर्देश दे सकता है।

11. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख का परिशीलन किया गया। यह सत्य है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करते हुए स्वीकार किया है कि साक्ष्य की कमी है, किंतु केवल सूचक के बयान कि अपीलार्थियों द्वारा लाठी, लोहे की छड़ से उसपर प्रहार किया गया है के आधार पर अपीलार्थियों की दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है। आक्षेपित निर्णय एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह प्रतीत होता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने किसी तर्कपूर्ण सामग्री के बिना और केवल अ॰ सा॰ 5 जगदीश मोदी के बयानों के आधार पर जो विश्वसनीय नहीं है और किसी परीक्षा के बिना इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है। अपीलार्थियों को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन दोषसिद्ध किया है। यह स्वीकृत तथ्य है कि पक्षों के बीच विगत 20 वर्षों से भूमि विवाद है और अपीलार्थियों द्वारा जगदीश मोदी के विरूद्ध दो मामले दर्ज किए गए हैं और इस दशा में, उपहति के औपचारिक प्रमाण के बिना सूचक के ऐसे बयानों के आधार पर मामला सच्चे मामले के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। जहाँ किसी गवाह ने मामला का समर्थन नहीं किया है और अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है।

12. इसके अतिरिक्त, 2004 से पक्षों के बीच घटना नहीं हुई है। इस माननीय न्यायालय द्वारा बंध पत्र के निष्पादन का स्थगन आदेश है।

13. इस प्रकार, इस न्यायालय का मत है कि उक्त उल्लिखित आधार पर भा० दं० सं० की धारा 323 के अधीन दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है।

14. तद्नुसार, एस० टी० सं० 434 वर्ष 1995 (जय नगर पी० एस० केस सं० 73 वर्ष 1994, जी० आर० सं० 798 वर्ष 1994 के तत्सम, से उद्भूत) में विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 6.12.2003 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश अपीलार्थियों को संदेह का लाभ देते हुए एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

15. परिणामस्वरूप, अपीलार्थीगण को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है और अपीलार्थियों को 5000/- रुपयों का बंधपत्र निष्पादित करने का निर्देश देने वाला आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थियों को उनके बंधपत्रों के दायित्वों से उन्मोचित किया जाता है।

16. संबंधित न्यायालय को संसूचित करने के लिए इस निर्णय की प्रति के साथ एल० सी० आर० संबंधित न्यायालय को तुरन्त भेजा जाए।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

मो० सिदिक कासमी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 512 of 2016. Decided on 29th January, 2018.

बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950–धारा 4(h)–रैयती अधिकार की घोषणा–याचीगण ने रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरूप भूमि एवं तालाब खरीदा था और उक्त भूमि एवं तालाब की जमाबन्दी भी उनके नामों में खोली गयी थी–वर्तमान मामला में, भूमि एवं तालाब की जमाबंदी याचीगण के नाम में अंचलाधिकारी द्वारा खोली गयी थी जो लगभग 30 वर्षों तक जारी रही और अब आक्षेपित आदेश के तहत और वह भी अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन किसी आदेश के बिना अंचलाधिकारी को याचीगण के नाम में चल रही जमाबंदी रद्द करने की अनुशंसा भेजने और भूमि तथा तालाब को सरकार को अंतरित करने के लिए प्रस्ताव भेजने का निर्देश दिया गया है–जहाँ तक सरकार भूमि के अंतरण के लिए प्रस्ताव भेजने का निर्देश अंचलाधिकारी को दिए जाने का संबंध है, आक्षेपित आदेश का प्रवर्तन उपायुक्त द्वारा याचीगण को सुनवाई का सम्यक अवसर देने की अनुमति देने के बाद जमाबन्दी रद्दकरण मामला में अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन आदेश पारित किए जाने तक प्रास्थगित रखने का निर्देश दिया जाता है। (पैराएँ 5, 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–2003 (3) JLJR 793; 2013 (3) PLJR 533—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Sahani, For the Petitioners; Mr. Vineet Prakash, For the State.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका रैयती पुनर्गठन अभिलेख मामला सं० 1 वर्ष 2014-15 (LR 03/2014-15) में उपायुक्त, गिरीडीह प्रत्यर्थी सं०3 द्वारा पारित दिनांक 12.5.2015 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा अपने रैयती अधिकार को मान्यता देने के लिए याचीगण की प्रार्थना प्रत्यर्थी सं० 6, अंचलाधिकारी, डुमरी, गिरीडीह को उक्त भूमि तुरन्त सरकार को अंतरित करने के निर्देश के साथ अस्वीकार कर दी गयी है।

2. रिट याचिका में यथाकथित मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि याची सं०1 से 7 और याची सं०8 के पिता ने खाता सं०17, भूखंड सं० 633, 634, 635 एवं 717 के 12 एकड़ 20 डिसमिल कुल क्षेत्र वाले ग्राम शंकरडीह, थाना डुमरी, पी०एस०सं० 187 अवस्थित भूमि (इसमें इसके बाद ''उक्त भूमि एवं तालाब'' के रूप में निर्दिष्ट) किसी जगेश्वर प्रसाद से दिनांक 30.1.1985 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के माध्यम से खरीदा था। लोक याचिका के अनुसरण में, प्रत्यर्थी सं०5 भूमि सुधार उप समाहर्ता, गिरीडीह ने प्रत्यर्थी सं० 6 अंचलाधिकारी, डुमरी को उक्त भूमि एवं तालाब के संबंध में जाँच रिपोर्ट भेजने का निर्देश देते हुए दिनांक 19.9.1985 के मेमो सं० 2106 के अधीन पत्र जारी किया और प्रत्यर्थी सं० 6 ने याचीगण के विरूद्ध कार्यवाही विविध मामला सं० 12/1985-86 आरंभ किया, किंतु दिनांक 28.12.1985 के आदेश के तहत इसे छोड़ दिया गया था। तत्पश्चात, याचीगण के दिनांक 4.1.1986 के आवेदन के आधार पर उक्त भूमि एवं तालाब की नामान्तरण कार्यवाही नामांतरण मामला सं० 999 वर्ष 1985-86 के तहत आरंभ की गयी थी और दिनांक 30.1.1986 के आदेश के तहत नामांतरण आवेदन अनुज्ञात किया गया था। किंतु, लोक याचिका के आधार पर एक अन्य कार्यवाही केस सं० 1 वर्ष 1986-87 बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन 21.3.1986 को आरंभ की गयी थी किंतु दिनांक 24.5.1986 के आदेश के तहत प्रत्यर्थी सं०5 ने याचीगण द्वारा दाखिल प्रत्युत्तर स्वीकार करके उक्त कार्यवाही छोड़ दिया था। बाद में, किसी कुलदीप प्रसाद द्वारा दाखिल याचिका के आधार पर अंचलाधिकारी, डुमरी (प्रत्यर्थी सं०6) द्वारा 28.7.2011 को विविध केस सं० 5 वर्ष 2011-12 आरंभ किया गया था और अंततः दिनांक 13.10.2011 के आदेश के तहत इसे भी परिवादी का दावा अस्वीकार करते हुए छोड़ दिया गया था। तत्पश्चात याचीगण ने अन्य बातों के साथ उक्त भूमि एवं तालाब पर अपनी रैयती मान्यता के लिए अनुरोध करते हुए आवेदन दिया, जिस पर प्रत्यर्थी सं० 6 ने इसे अनुशंसित किया और सबडिविजनल अधिकारी, डुमरी को अभिलेख भेजा। किंतु, मामला सं०1 वर्ष 2014-15 (LR 03 वर्ष 2014-15) में पारित दिनांक 12.5.2015 के आक्षेपित आदेश के तहत प्रत्यर्थी सं० 3 एवं 4 ने प्रत्यर्थी सं०6 को याचीगण के नाम में चल रही जमाबन्दी को रद्द करने तथा राज्य के पक्ष में उक्त भूमि एवं तालाब अंतरित करने के निर्देश के साथ उक्त भूमि एवं तालाब पर रैयती मान्यता की अनुशंसा अस्वीकार कर दिया।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त भूमि एवं तालाब राजा रण बहादुर सिंह की थी जिसे दिनांक 4.5.1927 के हुकुमनामा के फलस्वरूप श्री दामोदर प्रसाद लाला को बंदोबस्त किया गया था। बाद में, इसे बालेश्वर प्रसाद को बेचा गया था और दिनांक 22.11.1958 के रजिस्टर्ड विभाजन के फलस्वरूप उक्त भूमि एवं तालाब परमेश्वर राम के हिस्सा में आयी। अंचलाधिकारी-सह-प्रखंड विकास अधिकारी, डुमरी ने भूखंड सं० 633 एवं 635 के संबंध में 15.7.1971 को की जाने वाली सैरत बंदोबस्ती का नोटिस जारी किया था किंतु परमेश्वर राम की आपत्ति के बाद इसे यह अभिनिर्धारित करते हुए कि 1.1.1946 के पहले की गयी किसी भी बंदोबस्ती पर पुनर्विचार नहीं किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना लंबे समय से चल रही जमाबन्दी रद्द नहीं की जा सकती है। दिनांक 12.5.2015 का आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में पारित किया गया है और इसे अपास्त किया जा सकता है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि भूखंड सं० 717 की 0.337 एकड़ भूमि सरकार द्वारा अर्जित की गयी है और याचीगण ने इसके लिए मुआवजा का दावा

किया है। यद्यपि, प्रत्यर्थी सं० 5 ने अर्जित भूमि पर याचीगण के रैयती अधिकार को मान्यता देने के लिए प्रत्यर्थी सं०3 को अनुशंसा किया, किंतु, ज्योंही यह प्रत्यर्थी सं०3 के ध्यान में आया कि परमेश्वर राम को भूमि एवं तालाब की अभिकथित बंदोबस्ती संदेहपूर्ण थी और उक्त भूमि एवं तालाब के संबंध में रजिस्टर II में जमाबन्दी किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा सृजित नहीं की गयी है, याचीगण का दावा वास्तविक नहीं पाया गया था और इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं०3 ने दिनांक 12-5-2015 के आक्षेपित आदेश के तहत पूर्वोक्त भूमि एवं तालाब पर याचीगण के रैयती अधिकार को मान्यता देने से इनकार कर दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण के विक्रेता ने दावा किया है कि उसने पारिवारिक विभाजन में भूमि पाया था क्योंकि उसके पूर्वज ने गैर रजिस्टर्ड हुकुमनामा द्वारा इसे प्राप्त किया था, किंतु, याचीगण के विक्रेता ने उक्त भूमि एवं तालाब पर रैयती अधिकार कभी नहीं अर्जित किया और अभिकथित बंदोबस्ती मत्स्यपालन प्रयोजन से थी जो जमीन्दारी की समाप्ति के बाद राज्य में निहित हुई। आगे यह निवेदन किया गया है कि रिट याचीगण द्वारा विश्वास किए गए परिवर्णन से यह स्पष्ट होगा कि याचीगण को मत्स्य पालन अधिकार बेचा गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि अधिनियम 1950 की धारा 4(h) के अधीन कार्यवाही जमाबंदी मामला सं० 1 वर्ष 2017-18 भी भूतपूर्व जमीन्दार द्वारा की गयी बंदोबस्ती की वास्तविकता के संबंध में जाँच करने के लिए आरंभ की गयी है और इस दशा में वर्तमान रिट याचिका पोषणीय नहीं है।

5. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याचीगण ने दिनांक 30.1.1985 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरूप उक्त भूमि एवं तालाब खरीदा था और उक्त भूमि एवं तालाब की जमाबन्दी भी प्रत्यर्थी सं०6 द्वारा पारित दिनांक 30.1.1986 के आदेश के तहत उनके नामों में खोली गयी थी। पहले अधिनियम, 1950 की धारा 4(b) के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी, किंतु, इसे प्रत्यर्थी सं०5 द्वारा याचीगण के प्रत्युत्तर पर विचार करने के बाद छोड़ दी गयी थी। प्रत्यर्थियों ने प्रतिवाद किया है कि उक्त भूमि एवं तालाब गैर मजरूआ खास के रूप में दर्ज की गयी है जिसे हुकुमनामा के फलस्वरूप अर्जित किया गया अभिकथित किया गया है, किंतु जमीन्दार द्वारा उस प्रभाव का रिटर्न दाखिल नहीं किया गया है। प्रत्यर्थियों द्वारा आगे प्रतिवाद किया गया है कि याचीगण के नाम में जमाबंदी सक्षम प्राधिकारी द्वारा सृजित नहीं की गयी है। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं०3 ने दिनांक 12.5.2015 के आक्षेपित आदेश के तहत याचीगण की रैयती मान्यता अस्वीकार कर दिया है और आगे प्रत्यर्थी सं०6 को याचीगण के नाम में चल रही उक्त भूमि एवं तालाब की जमाबन्दी रद्द करने के लिए अनुशंसा भेजने का निर्देश दिया।

6. गुलबसी देवी बनाम बिहार राज्य, 2003(3) JLJR 793, में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:-

> *''6. स्वीकृत रूप से भूमि भूतपूर्व जमीन्दार के नाम में गैरमजरूआ मालिक के रूप में अधिकार सर्वे अभिलेख में दर्ज की गयी थी जिसने भूमि याची राम केवल साहू के विक्रेता के पक्ष में बंदोबस्त किया। भूतपूर्व जमीन्दार ने रामकेवल साहू को settlee के रूप में दर्शाते हुए अपना रिटर्न दाखिल किया और उसके नाम में जमाबन्दी खोली गयी थी। अधिकार अभिलेख की वास्तविकता, राम केवल साहू के पक्ष में की गयी बंदोबस्ती और उसके नाम में खोली गयी जमाबन्दी को बिहार राज्य द्वारा चुनौती कभी नहीं दिया गया था बल्कि बैजनाथ प्रसाद एवं प्रत्यर्थी सं० 7 की प्रेरणा पर आरंभ की गयी समस्त कार्यवाहियों में राज्य प्राधिकारियों ने उन समस्त कार्यवाहियों को याची के पक्ष में विनिश्चित किया।* ***यह सुस्थापित है कि जब व्यक्ति के पक्ष में जमाबन्दी सृजित की जाती है और वह अनेक वर्षों तक जारी रहती है, इसे केवल***

बिहार भूमि सुधार अधिनियम की धारा 4(h) के अधीन समाहर्ता द्वारा कार्यवाही आरंभ करके रद्द किया जा सकता है। हरिहर सिंह बनाम अपर समाहर्ता, 1978 BBCJ 323, में पटना उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ का निर्णय निर्दिष्ट किया जा सकता है।''

7. रामायण यादव एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2013(3) PLJR 533, में पटना उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

''8. जहाँ तक अन्य बिन्दु का संबंध है, यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि जमाबंदी उक्त प्राधिकारी द्वारा रद्द नहीं की जा सकती है बल्कि सिविल वाद एकमात्र उपचार है। इस बिंदु पर, खिरू गोप एवं दो अन्य बनाम भूमि सुधार उप समाहर्ता, जमुई एवं तीन अन्य, AIR 1983 Patna 121, में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय सहित अनेक निर्णय उपलब्ध हैं। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता इस विवाद्यक को खंडित करने में पूर्णतः विफल रहे।''

8. वर्तमान मामला में, स्वीकृत रूप से उक्त भूमि एवं तालाब की जमाबंदी याचीगण के नाम में प्रत्यर्थी सं०6 द्वारा खोली गयी थी जो लगभग 30 वर्ष तक जारी रही और अब आक्षेपित आदेश के तहत और वह भी अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन किसी आदेश के बिना प्रत्यर्थी सं०6 ने याचीगण के नाम में चल रही जमाबंदी रद्द करने के लिए अनुशंसा भेजने और उक्त भूमि एवं तालाब सरकार को अंतरित करने का प्रस्ताव भेजने का निर्देश दिया है। किंतु, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता इस न्यायालय को अवगत कराते हैं कि अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन कार्यवाही जमाबन्दी रद्दकरण मामला सं० 1 वर्ष 2017–18 अभी भी प्रत्यर्थी सं० 3 के समक्ष लंबित है।

9. मामला के पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, जहाँ तक प्रत्यर्थी सं०6 को भूमि सरकार को अंतरित करने के लिए प्रस्ताव भेजने के निर्देश का संबंध है, दिनांक 12.5.2015 के आक्षेपित आदेश का प्रवर्तन प्रत्यर्थी सं०3 उपायुक्त, गिरीडीह द्वारा याचीगण को सुनवाई का सम्यक अवसर दिए जाने के बाद जमाबन्दी रद्दकरण मामला सं० 1 वर्ष 2017–18 में अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन आदेश पारित किए जाने तक प्रास्थगित रखने का निर्देश दिया जाता है। याचीगण प्रत्यर्थी सं०3 के समक्ष उपस्थित होने एवं अपने दावा के समर्थन में समस्त प्रासंगिक दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र हैं। यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने अधिनियम, 1950 की धारा 4(h) के अधीन कार्यवाही की वैधता पर विचार नहीं किया है।

10. पूर्वोक्त निर्देश एवं संप्रेक्षण के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

दिलदार हुसैन एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (S.J.) No. 4 of 2004. Decided on 3rd May, 2018.

सत्र मामला सं॰ 217 वर्ष 86/18 वर्ष 2002 में चतुर्थ अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 12.12.2003 के दोषसिद्धि का निर्णय एवं दिनांक 17.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 307/149 एवं 147—हत्या का प्रयास—विधिविरूद्ध जमाव का सामान्य उद्देश्य—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—धारा 307 के अवयव मामला में गायब हैं क्योंकि घायल को आयी उपहति गम्भीर है जैसा भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन यथा अनुध्यात है और अनामिका उँगली के फ्रैक्चर की उपहति शरीर के महत्वपूर्ण भाग पर नहीं है—साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थियों ने पीड़ितों की हत्या क्यों नहीं की थी यदि उनका ऐसा आशय था—विचारण न्यायालय अपीलार्थियों की दोषसिद्धि करने में न्यायोचित है किंतु धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन यथा परिकल्पित गंभीर उपहति बिलकुल गायब है—दोषसिद्धि एवं दंडादेश भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307/149 से धारा 324/149 में उपांतरित की गयी। (पैराएँ 11, 12 एवं 14)

अधिवक्तागण.—Mr. Lakhan Chandra Roy, For the Appellants; Mr. Niki Sinha, For the State; Mr. Manoj Kumar Sah, For the Informant.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री लखन चंद्र रॉय और राज्य के विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा और सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील चतुर्थ अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1), गोड्डा द्वारा सत्र मामला सं॰ 217/86/18/2002 में पारित दिनांक 12.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 217/86/18/2002 में पारित दिनांक 12.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 17.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा चारों अपीलार्थियों को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और अपीलार्थी सं॰ 2,3 एवं 4 को भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन भी दोषसिद्धि किया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के संबंध में निष्कर्ष नहीं दिया गया है, क्योंकि अपीलार्थियों को पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए एक वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया था और अपीलार्थी सं॰ 1 दिलदार हुसैन को भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन अपराध के लिए दो वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया है। समस्त दंडादेशों को समवर्ती रूप से चलने का निर्देश दिया गया था, अपीलार्थियों द्वारा कारा में पहले ही भुगत ली गयी अवधि उनके परस्पर दंडादेशों से मुजरा की जाएगी।

दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश से व्यथित एवं असंतुष्ट होकर, चारों अपीलार्थियों द्वारा 5.1.2004 को वर्तमान दांडिक अपील दाखिल की गयी है जिसे उनके दंडादेशों को निलंबित करके और उन्हें जमानत पर निर्मुक्त करके 2.4.2004 को ग्रहण किया गया था। तब से मामला इस माननीय न्यायालय के समक्ष लंबित है।

अपील लंबित रहने के दौरान, अपीलार्थी सं॰ 1 दिलदार हुसैन की मृत्यु 17.7.2007 को हो गयी। जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 1 दिलदार हुसैन का संबंध है, वर्तमान दांडिक अपील उपशमनित हो गयी है और केवल अपीलार्थी सं॰ 1 अरशद हुसैन, अपीलार्थी सं॰ 3 अबुल हुसैन एवं अपीलार्थी सं॰ 4 टुन्नु उर्फ मिस्टर मियाँ जिन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन और भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्धि किया गया है की ओर से वर्तमान अपील पर जोर दिया गया है।

3. अभियोजन मामला में यथाकथित संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि पी॰ एस॰ गोड्डा टाउन, जिला गोड्डा के अंतर्गत ग्राम मडुआ बड़ान बहियार में 26.10.1984 को प्रातः लगभग 8.30 बजे अभियुक्तों ने

तलवार, भाला, बर्छा से लैस होकर दंगा करने के लिए और दिलदार हुसैन के आदेश पर सूचक एवं अन्य की हत्या करने के लिए विधि विरूद्ध जमाव निर्मित किया। दिलदार हुसैन ने अपने हाथ में लिए बर्छा से पाँचू मियाँ (सूचक) के बाएँ बाँह पर प्रहार किया जिस कारण पाँचू मियाँ ने खून बहने की उपहति पाया। अरशद हुसैन, अबुल हुसैन एवं टुन्नु उर्फ मिस्टर मियाँ ने पाँचू मियाँ के दाएँ कंधा एवं मस्तक पर प्रहार किया। जब सूचक का भतीजा शमीम मियाँ पाँचू मियाँ को बचाने आया, उस पर भी दिलदार हुसैन द्वारा बर्छा से और राजू मियाँ द्वारा तलवार से और शेष अभियुक्तों (अपीलार्थियों) द्वारा लाठी से प्रहार किया गया। यह अभिकथित किया गया है कि झगड़ा होने पर मो॰ इब्राहिम, अहमद मियाँ, उलफत मियाँ एवं खुटुल तिवारी बचाने आए किंतु इस बीच अभियुक्तगण भाग गए।

अभियोजन द्वारा यह कथन किया गया है कि शमीम एवं पाँचू मियाँ वहाँ अपने धान की फसल देखने आए थे जब इब्राहिम एवं अन्य वहाँ आए। दिलदार ने सूचक (पाँचू मियाँ) की कलाई घड़ी छीन लिया तथा राजू मियाँ ने उसके पॉकेट से पैसा निकाल लिया। सूचक ने आगे कथन किया है कि उन्हें पुलिस थाना लाया गया था जहाँ से उन्हें इलाज के लिए अस्पताल भेजा गया था।

सूचक के भतीजा शमीम मियाँ जिसने बर्छा एवं तलवार से उपहतियाँ पाया को डॉक्टर द्वारा भागलपुर सरकारी अस्पताल निर्दिष्ट किया गया है और पाँचू मियाँ का इलाज गोड्डा अस्पताल में किया गया है। सूचक ने दावा किया है कि अभियुक्तों ने खेत में खड़ी उनकी फसल को ले जाने का प्रयास किया है।

मो॰ पाँचू द्वारा प्रस्तुत लिखित रिपोर्ट के आधार पर, पुलिस ने पाँचों अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 447, 323, 324, 307 एवं 379 के अधीन गोड्डा टाउन पी॰ एस॰ केस सं॰ 205 वर्ष 1984 दर्ज किया और अन्वेषण के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 447, 323, 324, 307/379 के अधीन दिनांक 27.12.1984 का आरोप पत्र सं॰ 138 वर्ष 1984 दाखिल किया।

4. दिनांक 22.1.1995 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया है और दिनांक 8.6.1985 की अधिसूचना के तहत मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया है। समस्त पाँचों अभियुक्तों के विरूद्ध 24.6.1994 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 307/149 एवं 148 के विरूद्ध आरोप विरचित किए गए हैं। दिलदार हुसैन एवं राजू मियाँ (अब दोनों मृतक) के विरूद्ध भी भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के अधीन आरोप विरचित किया गया है और अबुल हुसैन एवं टुन्नु उर्फ मिस्टर मियाँ तथा अरशद हुसैन के विरूद्ध भी भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन आरोप 24.6.1994 को विरचित किए गए हैं। अभियुक्तों/अपीलार्थियों ने अपनी निर्दोषिता का अभिवचन किया है, अत: उनका विचारण किया गया है।

5. अभियोजन ने ग्यारह गवाहों का परीक्षण किया है अर्थात मो॰ उलफत का अ॰ सा॰ 1 के रूप में, अहमद मियाँ का अ॰ सा॰ 2 के रूप में, भगवान प्रसाद तिवारी का अ॰ सा॰ 3 के रूप में, अश्वनी कुमार दूबे का अ॰ सा॰ 4 के रूप में, मो॰ शमीम (मामला का घायल) का अ॰ सा॰ 5 के रूप में, डॉ॰ विजय कुमार भगत जिन्होंने आरंभ में पाँचू और शमीम का गोड्डा सदर अस्पताल में परीक्षण किया है का अ॰ सा॰ 6 के रूप में, मो॰ पाँचू (मामला का सूचक) का अ॰ सा॰ 7 के रूप में, मो॰ इब्राहिम का अ॰ सा॰ 8 के रूप में, सियाराम शर्मा (सब इंस्पेक्टर) जिन्होंने आरोप पत्र दाखिल किया है का अ॰ सा॰ 9 के रूप में, डॉ॰ सुरेश ब्रह्मचारी जिन्होंने शमीम का इलाज भागलपुर अस्पताल में किया का अ॰ सा॰ 10 के रूप में और जगदीश यादव उर्फ मांझी का अ॰ सा॰ 11 के रूप में परीक्षण किया है।

6. अभियोजन ने मो॰ पाँचू की उपहति रिपोर्ट प्रदर्श 1 के रूप में, मो॰ शमीम की उपहति रिपोर्ट प्रदर्श 1/1 के रूप में, फर्दबयान तथा मो॰ पाँचू का हस्ताक्षर प्रदर्श 2 के रूप में, फर्दबयान पर मो॰ इब्राहिम का हस्ताक्षर प्रदर्श 2/1 के रूप में, भागलपुर मेडिकल कॉलेज अस्पताल पुलिस थाना के सब इंस्पेक्टर एस॰ सिंह द्वारा 28.10.1984 को दर्ज किए गए फर्दबयान पर शमीम का हस्ताक्षर प्रदर्श 2/2 के रूप में और उसी फर्दबयान पर मो॰ उलफत का हस्ताक्षर प्रदर्श 2/3 के रूप में और चिकित्सीय अधिकारी, भागलपुर द्वारा जारी मो॰ शमीम की उपहति रिपोर्ट प्रदर्श ½ के रूप में सिद्ध किया है।

अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद, अपीलार्थियों की परीक्षा 30.4.2001 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन किया गया है और बचाव ने भी एक गवाह का परीक्षण किया है और पक्षों के बीच दुश्मनी के कारण और अपीलार्थियों द्वारा दाखिल प्रति मामला के परिणामस्वरूप स्वयं झूठा आलिप्त किया जाना सिद्ध करने के लिए अनेक दस्तावेज प्रदर्श A से D/2 दिया है।

7. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री लखन चंद्र रॉय ने निवेदन किया है कि अन्वेषण अधिकारी के गैर–परीक्षण ने उन पर प्रतिकूलता कारित किया है, क्योंकि अपीलार्थियों को मामला एवं प्रतिमामला, घटना के तारीख एवं घटनास्थल के संबंध में अन्वेषण अधिकारी का प्रतिपरीक्षण करने का उचित अवसर नहीं दिया गया हैं। अपीलार्थियों के विद्धान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि उनके बीच छोटा–मोटा झगड़ा हुआ है और शमीम पर पायी गयी कोई भी उपहति भारतीय दंड संहिता की धारा 320 में यथापरिकल्पित घोर उपहति की परिभाषा के अधीन नहीं आएगी। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि जहाँ तक फ्रैक्चर का संबंध है, यह उंगली पर है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए आपराधिक मन:स्थिति की कमी है और इस दशा में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निष्पक्षत: निवेदन किया है कि गवाहों के अभिसाक्ष्य में लघु विरोधाभास है किंतु यह अभियोजन मामला की जड़ तक नहीं जाएगा और निष्पक्षत: निवेदन किया है कि अपीलार्थियों को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम पर निर्मुक्त किया जा सकता है क्योंकि पक्षगण गोत्रज है और विवाद खेत में फसल के संबंध में है।

8. सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह द्वारा सहायित राज्य की विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा ने निवेदन किया है कि यह ऐसा मामला है जहाँ विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 और भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्धि किया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अधीन तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन क्रमश: पाँच वर्षों का कठोर कारावास और एक वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया है। राज्य की विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा ने आगे निवेदन किया है कि मुख्य अभियुक्त राजू मियाँ ने अपने हाथ में लिए तलवार से पाँचू (सूचक) और उसके भतीजा शमीम पर उपहति कारित करते हुए प्रहार किया था, किंतु उक्त राजू मियाँ की मृत्यु विचारण लंबित रहने के दौरान हो गयी और दिनांक 6.8.2003 के आदेश के तहत उसके विरूद्ध मामला छोड़ दिया गया है। जहाँ तक अपीलार्थी दिलदार हुसैन का संबंध है, उसकी मृत्यु अपील लंबित रहने के दौरान 17.7.2007 को हो गयी, अत: दिलदार हुसैन द्वारा दाखिल अपील उपशमित हो गयी और इस दशा में केवल इन तीन अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 तथा धारा 147 के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा सही प्रकार से दोष सिद्ध किया गया है।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि चूँकि धारा 307 के अवयवों की कमी है क्योंकि सूचक की हत्या करने में अपीलार्थियों की अंतर्ग्रस्तता नहीं थी, यदि उनका पीड़ित की हत्या करने का आशय होता, उन्होंने ऐसा किया होता, इस दशा में धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है।

10. सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह द्वारा सहायित राज्य की विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा ने आक्षेपित निर्णय के समर्थन में जोरदार तर्क किया है किंतु उन्होंने पक्षों के बीच मामला एवं प्रतिमामला विवादित नहीं किया है जिसका परिणाम प्रतिमामला के सूचक दिलदार हुसैन (मूल अपीलार्थी सं॰ 1) द्वारा दाखिल सुलह के आधार पर प्रति मामला के अभियुक्तों की दोषमुक्ति में हुआ। राज्य के विद्वान अधिवक्ता एवं सूचक के विद्वान अधिवक्ता भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन किए गए अपराध को गठित करने वाले अवयवों के संबंध में अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर इस न्यायालय को संतुष्ट नहीं कर सके थे। सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह द्वारा सहायित राज्य की विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा भारतीय दंड संहिता की धारा 307/149 के अवयवों के संबंध में अभिलेख पर लायी गयी सामग्री के आधार पर इस न्यायालय को संतुष्ट करने में सक्षम नहीं हुए हैं क्योंकि शमीम मियाँ के शरीर पर पायी गयी उपहति भारतीय दंड संहिता की धारा 320 में यथा परिकल्पित गंभीर प्रकृति की नहीं है और उंगली का फ्रैक्चर जिसे पाँचू मियां पर पाया गया है, उसके बाएँ हाथ की अनामिका उंगली पर है और न कि शरीर के महत्वपूर्ण भाग पर।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री लखन चंद्र रॉय, राज्य की अपर लोक अभियोजक श्रीमती निकी सिन्हा तथा सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज कुमार साह सुने गए और अभिलेख, प्राथमिकी, दोनों पक्षों के मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य का परिशीलन किया गया। इस न्यायालय का मत है, धारा 307 के अधीन अवयव गायब हैं क्योंकि शमीम मियाँ पर पायी गयी उपहति भारतीय दंड संहिता की धारा 320 के अधीन यथा अनुध्यात गंभीर प्रकृति की है और पाँचू मियां की अनामिका उंगली के फ्रैक्चर की उपहति शरीर के महत्वपूर्ण भाग पर नहीं है। साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थियों ने शमीम अथवा पाँचू मियाँ की हत्या क्यों नहीं की, यदि उनका ऐसा आशय था। विद्वान विचारण न्यायालय अपीलार्थियों को दोष सिद्ध करने में न्यायोचित था किंतु धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 320 के अधीन यथा परिकल्पित घोर उपहति बिल्कुल गायब है। जहाँ तक घायल शमीम मियाँ का संबंध है और पाँचू मियाँ की अनामिका उंगली का फ्रैक्चर मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन विचार के लिए नहीं लाएगा बल्कि अधिकाधिक मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, पक्षों के बीच स्वीकृत भूमि विवाद है और दोनों पक्ष लड़े हैं और मामला तथा प्रतिमामला दाखिल किया गया है। अपीलार्थियों द्वारा दाखिल मामला का परिणाम पक्षों के बीच सुलह के कारण दोषमुक्ति में हुआ है और अपीलार्थियों को वर्तमान अभियोजन पक्ष के विरूद्ध ऐसा मामला लाने के लिए विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्येक को 500/- रुपया जुर्माना का सामना करना पड़ा था। इस प्रकार इस न्यायालय का मत है कि अपीलार्थीगण भारतीय दंड संहिता की धारा 324/149 एवं 147 के अधीन दंडनीय अपराध करने के दोषी है। विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के संबंध में निष्कर्ष नहीं दिया गया है। चूँकि विद्वान विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अधीन आरोप पर चर्चा नहीं किया है चूँकि अपीलार्थियों को धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है किंतु इस न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों को धारा 324/149 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और इस दशा में भारतीय दंड संहिता की धारा

323 के संबंध में चर्चा नहीं की गयी है। अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन भी दोषसिद्धि किया गया है। यह न्यायालय साक्ष्य का परिशीलन करने के बाद भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307/149 के अधीन दोषसिद्धि धारा 324/149 के अधीन दोषसिद्धि में उपांतरित कर रहा है और पाँच वर्षों के कठोर कारावास का दंडादेश पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक उपांतरित कर रहा है किंतु इस शर्त के अध्यधीन कि प्रत्येक अपीलार्थी आज के दिन से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर 15,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करेगा जिसमें विफल होने पर अपीलार्थीगण भारतीय दंड संहिता की धारा 324/149 के अधीन दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतेंगे और जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दंड का संबंध है, इसे पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक उपांतरित किया जाता है क्योंकि अपीलार्थीगण लगभग सात माह की अवधि के लिए अभिरक्षा में रहे हैं और इस दशा में भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया एक वर्ष का कठोर कारावास पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक उपांतरित किया जाता है।

12. भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307/149 से धारा 324/149 में दोषसिद्धि के उपांतरण एवं उक्त कथित दंडादेश में उपांतरण के साथ यह दांडिक अपील उपातंरण के साथ अनुज्ञात की जाती है। धन आठ सप्ताह की अवधि के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष जमा किया जाएगा। विद्वान विचारण न्यायालय को घायलों पाँचू मियाँ एवं शमीम मियाँ को नोटिस जारी करने और पाँचू मियाँ एवं शमीम मियाँ के बीच समान अनुपात में उक्त राशि का 50% वितरित करने का निर्देश दिया जाता है।

13. यह स्पष्ट किया जाए कि यदि अपीलार्थीगण आज के दिन से आठ सप्ताह के भीतर उक्त राशि जमा करने में विफल रहते हैं, विद्वान विचारण न्यायालय को इस माननीय न्यायालय द्वारा यथा उपांतरित दो वर्ष का अपना दंडादेश भुगतने के लिए अपीलार्थियों के विरूद्ध प्रपीड़क कदम उठाने का निर्देश दिया जाता है।

14. परिणामस्वरूप, गोड्डा टाउन पी॰ एस॰ केस सं॰ 205 वर्ष 1984, जी॰ आर॰ सं॰ 692/77 एवं टी॰ आर॰ सं॰ 353/81 के तत्सम, से उद्भूत होने वाले सत्र मामला सं॰ 217/86/18/2002 में चतुर्थ अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1) गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 12.12.2003 का दोषसिद्धि का निर्णय एवं दिनांक 17.12.2003 का दंडादेश उपांतरण के साथ अंशतः अनुज्ञात किया जाता है।

15. आवश्यक कार्रवाई के लिए इस न्यायालय के निर्णय के साथ अवर न्यायालय अभिलेख भेजा जाए।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

मोस्मात धनेश्वरी देवी एवं अन्य

बनाम

धर्मनाथ शर्मा एवं अन्य

W.P. (C) No. 3552 of 2007. Decided on 6th April, 2018.

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 47 एवं आदेश 21 नियम 97, 98, 101 एवं 103—डिक्री के निष्पादन के प्रति आपत्ति/प्रतिरोध—जब अचल संपत्ति जो वाद का विषयवस्तु

है के कब्जा के प्रति आपत्ति अथवा प्रतिरोध व्यक्ति जो वाद का पक्ष नहीं है द्वारा किया जाता है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन प्रावधानों की भूमिका शुरू होती है—जब एक बार याचीगण द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन दाखिल किया जाता है, निष्पादन न्यायालय को संपत्ति जो वाद की विषयवस्तु है में अधिकार, अभिधान अथवा हित से संबंधित समस्त प्रश्नों को न्यायनिर्णीत करने की आवश्यकता है—क्या न्यायालय ने प्रश्नों जिन्हें नियम 101 के अधीन निर्दिष्ट किया गया है को सही रूप से विनिश्चित किया है या नहीं और क्या न्यायालय ने उन प्रश्नों को न्यायनिर्णीत करने से अवैधतापूर्वक इनकार किया है, ऐवे विवाद्यक हैं जिन्हें सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 103 के अधीन दाखिल अपील में उठाया जा सकता है और न कि नया वाद दाखिल करके। (पैराएँ 7 एवं 9)

(ख) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 7 नियम 11—वादपत्र का अस्वीकरण—गलत प्रावधान का उल्लेख अथवा विधि के प्रावधान जो शक्ति का स्रोत अंतर्विष्ट करते हैं के उल्लेख से लोप आदेश अविधिमान्य नहीं करेंगे जहाँ ऐसी शक्ति का स्रोत विद्यमान है—सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 11 के अधीन न्यायालय को वादपत्र अस्वीकार करने की पर्याप्त शक्ति है—चतुर प्रारूपण द्वारा भले ही मायावी वाद हेतुक सृजित किया गया है, फिर भी न्यायालय वाद पत्र अस्वीकार कर सकता है। (पैरा 11)

निर्णयज विधि.—(1985) 3 SCC 398—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Ayush Aditya, For the Petitioners; M/s V. Shivnath, Kundan Kr. Ambastha, For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका को सुनवाई के लिए ग्रहण करने और 12.11.2008 को 'यथास्थिति' आदेश पारित किए जाने के बाद याचीगण द्वारा रिट याचिका की जल्द सुनवाई के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया है।

2. अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 के वादपत्र की प्रति न्यायालय को दी गयी है।

3. अभिलेख पर लिया गया।

4. याचीगण अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 12.3.2007 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा वाद को अपोषणीय अभिनिर्धारित किया गया है।

5. संक्षिप्त रूप से कथित, अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 प्रभावती पाल द्वारा वादी के पक्ष में निष्पादित दिनांक 8.7.1998 के करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए संस्थित किया गया था। वाद दिनांक 19.8.2002 के निर्णय के तहत डिक्री किया गया था और तत्पश्चात डिक्री धारक ने निष्पादन मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 आरंभ किया। निष्पादन मामला में, याचीगण ने सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन आवेदन यह दावा करते हुए दाखिल किया कि ग्राम हिनू, राँची में आर॰ एस॰ खाता सं॰ 70, भूखंड सं॰ 985 में 0.35 एकड़ भूमि में से 10 डिसमिल भूमि के संबंध में अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा के लिए अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1988 के वादी के विरूद्ध दाखिल अभिधान वाद सं॰ 162 वर्ष 1980 उनके पिता/दादा के पक्ष में डिक्री किया गया था। उन्होंने अभिवचन किया है कि दिनांक 8.7.1998 के करार के अधीन अनुसूची संपत्ति उक्त उल्लिखित 10 डिसमिल भूमि सम्मिलित करती है। इन आधारों पर याचीगण ने सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन आवेदन दाखिल करके अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में निर्णय एवं डिक्री के निष्पादन का प्रतिरोध किया। याचीगण ने यह अभिवचन भी किया कि उस समय तक उन्होंने अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में निर्णय एवं डिक्री को चुनौती देते हुए अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 दाखिल किया था। इसी वाद में दिनांक 12.3.2007 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

6. अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 गुलाब चंद चौधरी एवं अन्य द्वारा इस घोषणा की डिक्री के लिए संस्थित किया गया था कि अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में पारित डिक्री शून्य एवं अकृत है और वादीगण पर बाध्यकारी नहीं है। वाद में धर्मनाथ शर्मा को प्रतिवादी सं॰ 1 बनाया गया था। उसने 17.7.2004 को अपना लिखित कथन दाखिल किया है। इस वाद में वादीगण ने अभिवचन किया है कि ग्राम हिनू जिला राँची अवस्थित आर॰ एस॰ खाता सं॰ 70, भूखंड सं॰ 985 के अंतर्गत 0.35 एकड़ भूमि वादी सं॰ 1 से 3 के पिता, वादी सं॰ 4 एवं 5 के दादा तथा प्रोफोर्मा प्रतिवादी सं॰ 2 से 4 के दादा की थी। इस अभिकथन पर कि प्रतिवादी सं॰ 1 धर्मनाथ शर्मा ने भूखंड सं॰ 985 में 10 डिसमिल भूमि का अवैध रूप से अधिभोग लिया था, रंजीत प्रसाद चौधरी जो अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में वादी सं॰ 4 का पिता है और उसके भाईयों ने अभिधान वाद सं॰ 162 वर्ष 1980 संस्थित किया जिसे उनके पक्ष में डिक्री किया गया था किंतु, चूँकि प्रतिवादी सं॰ 1 ने वाद भूमि खाली नहीं किया था, निष्पादन मामला सं॰ 49 वर्ष 1989 दाखिल किया गया था जो अभी भी लंबित है। प्रभावती पाल द्वारा प्रतिवादी सं॰ 1 धर्मनाथ शर्मा के पक्ष में दिनांक 8.7.1998 के करार के निष्पादन पर वादीगण ने अभिवचन किया है कि उक्त प्रभावती पाल को करार निष्पादित करने का अधिकार नहीं था और उक्त करार मनगढंत एवं कपटपूर्ण दस्तावेज है। अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में प्रोफोर्मा प्रतिवादी सं॰ 2 से 4 प्रभावती पाल के पुत्र-पुत्री हैं। इस वाद में वाद पत्र के प्रकथन प्रकट करेंगे कि अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में पारित डिक्री को इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि दिनांक 8.7.1998 के करार के अधीन अनुसूची संपत्ति संयुक्त संपत्ति है।

7. निष्पादन कार्यवाही में वाद के पक्षों द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन निष्पादन के प्रति आपत्ति की जा सकती है। यह प्रावधानित करती है कि वाद जिसमें डिक्री पारित किया गया था, के पक्षों के बीच उद्भूत होने वाले डिक्री के निष्पादन, उन्मोचन अथवा संतुष्टि से संबंधित समस्त प्रश्नों को डिक्री निष्पादित करने वाले न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाएगा और न कि पृथक वाद द्वारा। जब संपत्ति जो वाद की विषयवस्तु है के कब्जा के प्रति प्रतिरोध अथवा अवरोध व्यक्ति जो वाद का पक्ष नहीं है द्वारा किया जाता है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन प्रावधानों की भूमिका शुरू होती है। सी॰ पी॰ सी॰ का नियम 101 सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 या 99 के अधीन आवेदन में विनिश्चित किए जाने वाले प्रश्न को निर्दिष्ट करता है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI का नियम 101 प्रावधानित करता है कि नियम 97 अथवा नियम 99 के अधीन आवेदन पर कार्यवाही के पक्षों के बीच उद्भूत होने वाले और आवेदन के न्यायनिर्णयण के लिए प्रासंगिक समस्त प्रश्न (संपत्ति में अधिकार, अभिधान एवं हित से संबंधित प्रश्नों सहित) आवेदन पर विचार करने वाले न्यायालय द्वारा विनिश्चित किए जाएँगे और न कि पृथक वाद द्वारा और इस प्रयोजन से तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी विपरीत चीज के बावजूद न्यायालय को ऐसे प्रश्नों को विनिश्चित करने की अधिकारिता रखने वाला समझा जाएगा। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI के नियम 101 के अधीन प्रयुक्त वाक्यांश सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के सादृश्य है।

8. यह अभिलेख पर है कि अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश I नियम 10 के अधीन आवेदन याचीगण द्वारा दाखिल किया गया था जिसे दिनांक 23.12.1999 के आदेश द्वारा खारिज किया गया था और इस आदेश ने अंतिमता प्राप्त कर लिया है। यह भी स्वीकार किया गया है कि अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध याचीगण ने अपील दाखिल नहीं किया था। अभिधान अपील सं॰ 25 वर्ष 2002 जिसे प्रभावती पाल द्वारा दाखिल किया गया था, दिनांक 22.7.2003 के आदेश द्वारा उपशमनित के रूप में खारिज कर दिया गया है। उक्त तथ्यों में, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन आवेदन जिसे विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 के रूप में दर्ज किया गया था, 19.3.2004 को खारिज कर दिया गया था।

9. अब, जब एक बार सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 सहपठित नियम 98 के अधीन याचीगण द्वारा आवेदन दाखिल किया गया था, निष्पादन न्यायालय को संपत्ति जो वाद का विषय वस्तु थी में अधिकार, अभिधान अथवा हित से संबंधित समस्त प्रश्नों को न्यायनिर्णीत करने की आवश्यकता है। क्या न्यायालय ने प्रश्नों जिन्हें नियम 101 के अधीन निर्दिष्ट किया गया है को सही रूप से न्यायनिर्णीत किया है या नहीं और क्या न्यायालय ने उन प्रश्नों को न्यायनिर्णीत किया है या नहीं और क्या न्यायालय ने उन प्रश्नों को न्यायनिर्णीत करने से अवैध रूप से इनकार किया है, ऐसे विवाद्याक हैं जिन्हें सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 103 के अधीन दाखिल अपील में उठाया जा सकता है और न कि नया वाद दाखिल करके।

10. यह प्रतिवाद कि विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 के अस्वीकरण के आधार पर अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003, जिसे विभिन्न अनुतोषों के लिए दाखिल किया गया है अपोषणीय अभिर्धारित नहीं किया जा सकता है, भ्रामक है। शायद अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में प्रतिवादियों द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम II के अधीन औपचारिक आवेदन दाखिल नहीं किया गया था, आवेदन शीर्षित करना अथवा विधि के प्रावधान का गलत उल्लेख आदेश असंपोषणीय नहीं बनाएगा यदि न्यायालय जिसने आदेश पारित किया है को विषयवस्तु पर शक्ति एवं अधिकारिता है। विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 में याचीगण ने वाद संपत्ति जो अभिधानवाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में डिक्री धारक के पक्ष में निष्पादित करार के अधीन विषयवस्तु थी के भाग पर अभिधान, अधिकार एवं हित का दावा करते हुए अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में निर्णय एवं डिक्री के निष्पादन का प्रतिरोध किया है और अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में याचीगण ने 35 एकड़ भूमि जो दिनांक 8.7.1998 के करार के अधीन अनुसूची संपत्ति है में से 10 डिसमिल पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा की डिक्री इप्सित किया है। इस प्रकार, याचीगण ने विविध मामला सं॰ 22 वर्ष 2002 तथा अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 में समरूप प्रार्थना किया है।

11. दिनांक 8.7.1998 के विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में, उक्त करार को निष्पादित करने के लिए प्रतिवादी प्रभावती पाल के अधिकार को याचीगण द्वारा चुनौती नहीं दी जा सकती है। समान रूप से सत्य यह तथ्य है कि इस आधार पर कि प्रभावती पाल को संयुक्त संपत्ति के भाग के संबंध में दिनांक 8.7.1998 का विक्रय करार निष्पादित करने का अधिकार नहीं है, इस घोषणा को इप्सित करने का आधार नहीं हो सकता है कि अभिधान वाद सं॰ 181 वर्ष 1998 में निर्णय एवं डिक्री अकृत एवं शून्य है और याचीगण पर बाध्यकारी नहीं है। यह अभिलेख पर मौजूद है कि अभिधान वाद सं॰ 267 वर्ष 2003 को अपोषणीय अभिनिर्धारित करते हुए दिनांक 12.3.2007 का आक्षेपित आदेश पारित किए जाने के पहले दिनांक 19.3.2004 के आदेश द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 एवं 98 के अधीन आवेदन जिसे विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 के रूप में दर्ज किया गया था खारिज किया गया था। दिनांक 12.12.2006 के आवेदन में जिसे वाद की खारिजी इप्सित करते हुए दाखिल किया गया था, प्रतिवादी सं॰ 1 ने अभिवचन किया है कि विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 19.3.2002 के आदेश के विरूद्ध याचीगण ने अपील दाखिल नहीं किया है। शायद इस आवेदन को समुचित रूप से लेबल नहीं किया गया था किंतु तथ्य बना रहता है कि दिनांक 19.3.2004 के आदेश के कारण वाद खारिज किए जाने का दायी था। आवेदन का गलत शीर्षक अथवा विधि के प्रावधान का गलत उल्लेख न्यायालय को इसकी अधिकारिता से विहीन नहीं करता है। **भारत संघ बनाम तुलसी राम पटेल, (1985)3 SCC 398,** में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि विधि के गलत प्रावधान का उल्लेख अथवा विधि के प्रावधान के उल्लेख का लोप, जो शक्ति का स्रोत अंतर्विष्ट करता है, आदेश को अविधिमान्य नहीं करेगा जहाँ ऐसी शक्ति का स्रोत विद्यमान है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 11 के अधीन न्यायालय को वाद पत्र अस्वीकार करने की पर्याप्त शक्ति है। चतुर प्रारूपण द्वारा भले ही मायावी वाद हेतुक सृजित किया जाता है, फिर भी न्यायालय वाद पत्र अस्वीकार कर सकता है।

12. उक्त तथ्यों में दिनांक 12.3.2007 के आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय में आवश्यक नहीं है।

13. दिनांक 19.3.2004 के आदेश जिसके द्वारा विविध मामला सं॰ 12 वर्ष 2002 खारिज किया गया था के विरूद्ध याचीगण के पास सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 103 के अधीन उपचार है। स्वीकृत रूप से, याचीगण ने दिनांक 19.3.2004 के आदेश के विरूद्ध अपील दाखिल नहीं किया है। तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है। किंतु, याचीगण, यदि उन्हें ऐसी सलाह दी जाती है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 103 के अधीन अपील दाखिल कर सकता है जिस पर यदि इसे दाखिल किया जाता है परिसीमा विधि के अध्यधीन विधि के अनुरूप विचार किया जाएगा।

14. किंतु, प्रार्सगिक दस्तावेज प्रस्तुत नहीं करने में याची की ओर से व्यतिक्रम की दृष्टि में 5000/- रुपयों का व्यय उन पर अधिरोपित किया जाता है जिसका भुगतान चार सप्ताह के भीतर अधिवक्ता लिपिक संघ को किया जाएगा।

15. याचीगण को पूर्वोक्त स्वतंत्रता के साथ रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

मंगू कुम्हार के माध्यम से उनके कर्मकार

बनाम

बन्हुरूंगिया परियोजना के प्रबंधन के संबंध में नियोक्तागण

W.P. (L) No. 1904 of 2016. Decided on 15th March, 2018.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 10—औद्योगिक अधिनिर्णय—अवयव—सेवा में नियमितिकरण से संबंधित मामला—पक्षों की ओर से दिए गए साक्ष्य के अधिमूल्यन के बिना पीठासीन अधिकारी इस तथ्य कि कर्मकारों की ओर से दिया गया साक्ष्य उनके नियमितिकरण के लिए पर्याप्त नहीं है के संबंध में संक्षिप्त संप्रेक्षण करते हुए प्रत्यक्षतः मामला के निष्कर्ष पर आया और निर्देश का नकारात्मक उत्तर दिया गया था—यह नहीं कहा जा सकता है कि आक्षेपित अधिनिर्णय सच्चे अर्थ में अधिनिर्णय का कोई लक्षण अंतर्विष्ट नहीं करता है—औद्योगिक न्यायनिर्णयण में इसके द्वारा पहुँचे गए साक्ष्य के अधिमूल्यन के आधार पर निष्कर्ष पर पहुँचने की आवश्यकता अधिकरण को थी और साक्ष्य के अधिमूल्यन के बिना अधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का अर्थ नहीं है—आक्षेपित अधिनिर्णय में इस तथ्य कि इसको किए गए रेफरेंस का नकारात्मक उत्तर के पहले साक्ष्य पर चर्चा बिलकुल नहीं की गयी है, की दृष्टि में अधिनिर्णय के अवयवों की पूर्ण कमी है—आक्षेपित अधिनिर्णय अपास्त किया गया अैर नया अधिनिर्णय पारित करने के लिए मामला अधिकरण को प्रतिप्रेषित किया गया है।(पैराएँ 6, 7, 9 एवं 10)

निर्णयज विधि.—AIR 1959 SC 1238; (2013) 12 SCC 573—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Pratiush Lala, For the Petitioner; Mr. Anoop Kr. Mehta, For the Respondent.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका निर्देश सं॰ 60 वर्ष 1997 में पीठासीन अधिकारी, केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 27 जुलाई, 2015 के अधिनिर्णय को अभिखंडित करने के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा विद्वान अधिकरण ने निर्देश का नकारात्मक उत्तर देते हुए अभिनिर्धारित किया है कि मंगू कुम्हार एवं 30 अन्य के नियमितिकरण के लिए यूनियन का दावा सही नहीं है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची तथा प्रत्यर्थी प्रबंधन ने अपने मामलों के समर्थन में विद्वान अधिकरण के समक्ष अपना–अपना साक्ष्य दिया, फिर भी विद्वान अधिकरण ने साक्ष्य का अधिमूल्यन किए बिना अन्य बातों के साथ यह अभिनिर्धारित करते हुए कि संबंधित कर्मकारों का नियमितिकरण का दावा समुचित नहीं है, दिनांक 27 जुलाई, 2015 के आक्षेपित निर्णय के तहत निर्देश का नकारात्मक उत्तर दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अधिकरण के समक्ष संबंधित कर्मकार का दावा यह था कि उन्होंने भुरूंगिया परियोजना में प्रत्यर्थी प्रबंधन के पर्यवेक्षण के अधीन 3 फरवरी, 1985 से 31 दिसंबर, 1991 तक लगातार काम किया। उक्त कर्मकार पत्थर काटने का काम किया करते थे किंतु अन्य कोलियरियों में बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन के नियमित कर्मकारों द्वारा उक्त काम किया जा रहा था जो कोटि V के लिए मजदूरी एवं भत्ता का भुगतान किया करता था।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता अपने तर्कों के क्रम में आगे निवेदन करते हैं कि याची यूनियन की ओर से अपने दावा के समर्थन में विद्वान अधिकरण के समक्ष साक्ष्य दिया था, किंतु किसी साक्ष्य पर चर्चा किए बिना निर्देश का नकारात्मक उत्तर दिया गया है और इस प्रकार आक्षेपित अधिनिर्णय रहस्यमय प्रकृति का होने के कारण अभिखंडित एवं अपास्त किया जा सकता है।

4. प्रत्यर्थी प्रबंधन की ओर से प्रतिशपथपत्र दाखिल किया है। प्रतिशपथ पत्र के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि कर्मकारों की ओर से निर्देश सं॰ 60 वर्ष 1997 में प्रदर्शित दस्तावेजों के संबंध में बयान दिए गए हैं। इस प्रकार, प्रत्यर्थी प्रबंधन के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विद्वान अधिकरण ने अपने नियमितिकरण के लिए कर्मकारों का दावा संक्षिप्त रूप से अस्वीकार करने एवं निर्देश का नकारात्मक उत्तर देने में कोई गलती नहीं किया है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। दिनांक 21 फरवरी, 2017 के आदेश सं॰ L-20012/444/1994/IR(C-1) के तहत केंद्र सरकार के श्रम मंत्रालय के माध्यम से औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 की उपधारा (2A) की उपधारा (1) के खंड (a) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में निम्नलिखित विवाद न्यायनिर्णयण के लिए केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1, धनबाद को निर्दिष्ट किया:–

> *''क्या यूनियन का दावा कि मंगू कुम्हार एवं तीस अन्य (संलग्न सूची के मुताबिक) भुरूंगिया परियोजना में 1985 से कार्यरत थे, सही है। यदि ऐसा है, क्या ये कर्मकार भुरूंगिया कोलियरी के प्रबंधन द्वारा नियमितिकरण के लिए पात्र हैं? यदि ऐसा है, वे किस अनुतोष के हकदार हैं?''*

6. आक्षेपित अधिनिर्णय के पैराग्राफ सं॰ 2 में विद्वान अधिकरण ने उल्लेख किया है कि दोनों पक्षों ने अपनी ओर से एक–एक गवाह दिया। इसके अतिरिक्त, कर्मकारों की ओर से दस्तावेज प्रदर्श W1 एवं W2 के रूप में चिन्हित किए गए थे। तत्पश्चात, पक्षों की ओर से दिए गए उक्त साक्ष्य के किसी अधिमूल्यन के बिना विद्वान पीठासीन अधिकारी इस तथ्य कि कर्मकारों की ओर से दिए गए साक्ष्य उनको नियमितिकरण का आदेश देने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, के संबंध में संक्षिप्त संप्रेक्षण करते हुए सीधे मामला के निष्कर्ष पर आए और इस प्रकार निर्देश का नकारात्मक उत्तर दिया गया था।

7. संपूर्ण अधिनिर्णय के परिशीलन पर, यह नहीं कहा जा सकता है कि आक्षेपित अधिनिर्णय सच्चे अर्थ में अधिनिर्णय का कोई लक्षण अंतर्विष्ट करती है। औद्योगिक न्यायनिर्णयण में इसके द्वारा पहुँचे गए

साक्ष्य के अधिमूल्यन के आधार पर निष्कर्ष पर आने की आवश्यकता विद्वान अधिकरण को थी और साक्ष्य के अधिमूल्यन के बिना विद्वान अधिकरण का दृष्टिकोण अर्थहीन है।

8. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **ओमर साले मो॰ सैत बनाम सी॰ आई॰ टी॰, AIR 1959 SC 1238,** पैरा 33 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

''33. हम अवगत हैं कि आयकर अपीलीय अधिकरण तथ्य का पता लगाने वाला अधिकरण है और यदि यह अपने समक्ष साक्ष्य पर सम्यक विचार करने के बाद स्वयं अपने निष्कर्ष पर आता है, यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा। किंतु, यह आवश्यक है कि करदाता के पक्ष-विपक्ष में प्रत्येक तथ्य पर सम्यक सावधानी के साथ विचार किया जाना होगा, और अधिकरण को इस तरीके से अपना निष्कर्ष देना होगा जो स्पष्टतः उपदर्शित करेगा कि क्या प्रश्न थे जो विनिश्चयकरण के लिए उद्भूत हुए, उनमें से प्रत्येक के पक्ष-विपक्ष में क्या साक्ष्य थे और अपने समक्ष अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर पहुँचे गए निष्कर्ष क्या थे। अधिकरण द्वारा प्राप्त निष्कर्ष किसी अप्रासंगिक विचार द्वारा अथवा पूर्वाग्रह के कारण आभासी नहीं होना चाहिए और यदि कोई परिस्थिति जिसे निर्धारिती द्वारा स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता थी, निर्धारिती को ऐसा करने का अवसर दिया जाएगा। किसी भी कारण से अधिकरण को अपना निष्कर्ष संदेह, अनुमान या अटकल पर आधारित नहीं करना चाहिए और न ही इसे साक्ष्य के बिना अथवा सामग्री एवं प्रासंगिक साक्ष्य के अनुचित अस्वीकरण पर अथवा अंशतः साक्ष्य पर और अंशतः संदेह, अनुमान एवं अटकल पर कृत्य नहीं करना चाहिए और यदि यह इस प्रकार का कुछ करता है, तथ्य के प्रश्नों पर भी इसका निष्कर्ष इस न्यायालय द्वारा अपास्त किए जाने का दायी होगा।''

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे **एटलस साइकिल बनाम किताब सिंह, (2013)12 SCC 573,** पैरा 15 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

''15. हम संतुष्ट हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने समस्त पहलुओं का पूरी तरह विश्लेषण किया और सही निष्कर्ष पर आया। यह सुस्थापित विधि है कि जब श्रम न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री को अनदेखा करके निष्कर्ष पर आता है, यह विकृतता के तुल्य होगा और रिट न्यायालय उक्त निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने में पूर्णतः न्यायोचित होगा। हम इस तथ्य से अवगत हैं कि उत्प्रेषण अधिकारिता के रिट का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय को अपीलीय न्यायालय की भूमिका निभाने की अनुमति नहीं दी जाएगी, किंतु न्यायालय हस्तक्षेप करने की अपनी शक्ति के सुअंतर्गत है यदि यह दर्शाया जाता है कि उक्त निष्कर्ष दर्ज करने में अधिकरण/श्रम न्यायालय ने ग्राह्य एवं तात्विक साक्ष्य स्वीकार करने से गलत रूप से इनकार किया था अथवा किसी अग्राह्य साक्ष्य को गलत रूप से स्वीकार किया था जिसने आक्षेपित निष्कर्ष को प्रभावित किया है, रिट न्यायालय अपने उपचार का प्रयोग करने में न्यायोचित होगा। दूसरे शब्दों में, यदि तथ्य का निष्कर्ष साक्ष्य पर आधारित नहीं है, इसे विधि की गलती माना जाएगा जिसे उत्प्रेषण रिट द्वारा सुधारा जा सकता है।''

9. यद्यपि प्रत्यर्थी प्रबंधन ने विस्तारपूर्ण प्रतिशपथपत्र दाखिल किया है और अन्य बातों के साथ प्रतिवाद किया है कि यूनियन के माध्यम से प्रतिनिधित्व किए गए कर्मकार किसी नियमितिकरण के हकदार नहीं थे, फिर भी रिट कार्यवाही में प्रतिशपथपत्र की दाखिली के माध्यम से किया गया उक्त प्रतिवाद, विद्वान अधिकरण द्वारा अधिनिर्णय पारित किया जाना न्यायोचित नहीं ठहराएगा जो स्वयं ताथ्यिक अधिमूल्यन से रहित है।

10. जैसी चर्चा यहाँ ऊपर पहले ही की गयी है, आक्षेपित अधिनिर्णय में इस तथ्य कि इसको किए गए निर्देश का नकारात्मक उत्तर देने के पहले साक्ष्य पर चर्चा बिलकुल नहीं की गयी है की दृष्टि में

अधिनिर्णय के अवयवों की पूर्ण कमी है। केवल इस आधार पर, निर्देश सं॰ 60 वर्ष 1997 में केन्द्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1 धनबाद द्वारा पारित दिनांक 27 जुलाई, 2015 का आक्षेपित अधिनिर्णय विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, इसे अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है। इस आदेश की प्रति की प्रस्तुती/प्राप्ति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर दोनों पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के बाद और पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य के सम्यक अधिमूल्यन पर नया अधिनिर्णय पारित करने के लिए मामला विद्वान अधिकरण को प्रतिप्रेषित किया जाता है। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि पक्षों को निर्देश सं॰ 60 वर्ष 1997 में अतिरिक्त साक्ष्य देने की अनुमति नहीं है।

11. तद्नुसार, पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

निर्मल चंद्र मंडल एवं एक अन्य (156 में)

संतोष कुमार मंडल (102 में)

बनाम

झारखण्ड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (S.J.) Nos. 156 of 2004 with Cr. Revision No. 102 of 2004.
Decided on 1st May, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 201 वर्ष 2001 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ V) द्वारा पारित दिनांक 18.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323, 342 एवं 341—घोर उपहति एवं दोषपूर्ण अवरोध—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—अभियोजन की ओर से तेरह गवाहों का परीक्षण किया गया है—उन्होंने अभियोजन मामला का समर्थन किया है और अनेक दस्तावेज दिए गए हैं—दोषसिद्धि पोषित की गयी और एक वर्ष के लिए शांति, अच्छा व्यवहार रखने के लिए और विचारण न्यायालय द्वारा बुलाए जाने पर दंडादेश पाने के लिए 5000/- रुपयों का बंध पत्र निष्पादित करने की लिए अपीलार्थियों के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश में भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। (पैराएँ 9 एवं 10)

अधिवक्तागण.—Mr. Shankar Lal Agarwal, For the Appellant; Mr. Sanjay Kumar Pandey, For the State; Mr. D.K. Karmakar, For the Informant.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल और सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री डी॰ के॰ करमाकर द्वारा सहायित राज्य के विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील सं॰ 156 वर्ष 2004 अपीलार्थियों द्वारा सत्र विचारण सं॰ 201 वर्ष 2001 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ V) जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 18.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है और दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 102/2004 सूचक द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपीलार्थियों की दोषमुक्ति के विरूद्ध दाखिल की गयी है और इसे इस माननीय न्यायालय द्वारा इस एक ही निर्णय से निपटाया जा रहा है।

उक्त आक्षेपित निर्णय द्वारा विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ V, जमशेदपुर ने इन दो अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323/342 एवं 341 के अधीन दोषसिद्ध किया है। किंतु, निर्मल चंद्र मंडल (अपीलार्थी सं॰ 1) को भारतीय दंड संहिता की धारा 324/34 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया है, स्वदेश कुमार मंडल (अपीलार्थी सं॰ 2) को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोष सिद्ध किया गया है। किंतु उसको दंडादेशित करने के बजाए विद्वान विचारण न्यायालय ने एक वर्ष की अवधि के लिए एक प्रतिभूति के साथ 5000/- रुपयों का बंधपत्र निष्पादित करने और उक्त अवधि के दौरान बुलाए जाने पर उपस्थित होने तथा दंडादेश पाने तथा इस बीच अच्छा व्यवहार तथा शांति बनाए रखने का आदेश दिया गया है।

3. दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध अपीलार्थीगण निर्मल चंद्र मंडल तथा स्वदेश कुमार मंडल ने 23.1.2004 को इस माननीय न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील सं॰ 156 वर्ष 2004 दाखिल किया है जिसे 22.4.2004 को ग्रहण किया गया है और तब से यह दांडिक अपील लंबित है। सूचक संतोष कुमार मंडल ने भी दोनों अपीलार्थियों की भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दोषमुक्ति के विरूद्ध दांडिक पुनरीक्षण आवेदन 10.2.2004 दाखिल किया गया था जिसे दांडिक अपील सं॰ 156 वर्ष 2004 के साथ सुने जाने के लिए 20.12.2005 को ग्रहण किया गया है।

4. मामला के संक्षिप्त तथ्य मामला के सूचक संतोष कुमार मंडल द्वारा 23.8.2000 को 11.30 बजे पोटका पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी के समक्ष दर्ज प्राथमिकी पर आधारित है जिसे पोटका पी॰ एस॰ केस सं॰ 41 वर्ष 2000 के रूप में दर्ज किया गया है। सूचक ने अभिकथित किया है कि प्रात: 5 बजे जब वह कुदाल लेकर काम करने अपने धान के खेत जा रहा था, उसके बड़े भाई निर्मल मंडल, पिता ईश्वर चंद्र मंडल और भतीजा स्वदेश कुमार मंडल जो दरवाजा पर बैठे थे ने उसको पकड़ लिया। स्वदेश कुमार मंडल ने उसका कुदाल छीन लिया और कहा ''मार डालो''। इस पर खून बहती उपहति कारित करते हुए उसके मस्तक पर सूचक पर प्रहार किया गया था। वह गिर गया और तत्पश्चात उसके भाई निर्मल मंडल ने कुदाल के मूठ से उसकी पीठ पर उपहति कारित करते हुए प्रहार किया। तत्पश्चात समस्त तीनों व्यक्ति उसको घर के अंदर ले गए और उसको खंभा से रस्सी से बांध दिया। पुलिस आने के बाद रस्सी खोली गयी थी और घर के बाहर ले जाया गया था। सूचक ने अभिकथित किया कि प्रहार के कारण उसने मस्तक, पीठ, गर्दन एवं शरीर के अन्य भागों पर उपहति पाया है। सूचक ने आगे कथन किया है कि घटना इसलिए हुई क्योंकि कुछ वर्ष पहले भाइयों के बीच झगड़ा हुआ था जिसमें गोली भी चली थी। उक्त मामला न्यायालय में लंबित है और इसके लिए घटना हुई है। सूचक ने आगे कथन किया है कि अभियुक्तों ने सुनियोजित तरीके से उसकी हत्या करने का प्रयास किया है।

5. सूचक के फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341/342/323/307/34 के अधीन दिनांक 23.8.2000 का पोटका पी॰ एस॰ केस सं॰ 41 वर्ष 2000 संस्थित किया और अन्वेषण के बाद इन नामित समस्त तीनों अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341/342/323/324/307/34 के अधीन दिनांक 15.11.2000 का आरोप पत्र सं॰ 38 वर्ष 2000 दाखिल किया।

अपराध का संज्ञान 25.11.2000 को लिया गया था और दिनांक 22.5.2001 को अधिसूचना के तहत मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। निर्मल चंद्र मंडल, ईश्वर चंद्र मंडल एवं स्वदेश

कुमार मंडल के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 342 एवं 341 के अधीन, स्वदेश कुमार मंडल के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324 एवं 307 के अधीन और निर्मल चंद्र मंडल तथा ईश्वर मंडल के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34 तथा 307/34 के अधीन आरोप दिनांक 20.8.2002 के आदेश द्वारा विरचित किए गए थे। अपीलार्थियों ने अपनी निर्दोषिता का अभिवचन किया है, अत: उनका विचारण किया गया है।

विचारण लंबित रहने के दौरान, ईश्वर चंद्र मंडल, सूचक का पिता और अपीलार्थी निर्मल चंद्र मंडल के पिता की मृत्यु हो गयी और ईश्वर चंद्र मंडल के विरूद्ध कार्यवाही दिनांक 25.9.2003 के आदेश द्वारा छोड़ दी गयी थी।

6. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल ने निवेदन किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का संवीक्षण किए बिना अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारओं 323, 342 एवं 341 के अधीन दोषसिद्ध किया है और अपीलार्थी सं॰ 1 निर्मलचंद्र मंडल को आगे भारतीय दंड संहिता की धारा 324/34 के अधीन दोषसिद्ध किया है और स्वदेश कुमार मंडल अपीलार्थी सं॰ 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया है और विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 307/34 के अधीन दोषमुक्त किया है।

अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि इस मामला में कुल 13 गवाहों का परीक्षण किया गया है किंतु जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के लिए आशय का संबंध है, इसकी कमी है किंतु विद्वान विचारण न्यायालय ने गलत रूप से इस आधार पर कि इन तीनों अभियुक्तों द्वारा सूचक पर प्रहार किया गया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 323/341 एवं 342 के अधीन इन अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है। विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का न्यायिक ध्यान नहीं लिया है और समुचित रूप से साक्ष्य का संवीक्षण किए बिना अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल ने आगे निवेदन किया है कि यह पुत्र, पिता, भाई, भतीजा के बीच का मामला है जिनका पूर्व वाद न्यायालय में लंबित है और विद्वान विचारण न्यायालय ने गलत रूप से स्वीकार किया है कि सूचक पर कारित उपहति मुख्यत: अपीलार्थियों और सूचक के पिता द्वारा किए गए प्रहार के कारण है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल ने आगे निवेदन किया है कि अपीलार्थियों को संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त किया जा सकता है क्योंकि पहले भी इन व्यक्तियों को मामला में घसीटा गया है किंतु उस मामला में अपीलार्थियों को विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया है और विद्वान विचारण न्यायालय का निर्णय अभिलेख पर लाया गया था जिसे विचारण के दौरान प्रदर्श B चिन्हित किया गया है।

विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल ने आगे निवेदन किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा यथा निर्देशित बंधपत्र अपीलार्थियों द्वारा पहले ही निष्पादित कर दिया गया है और अवधि पहले ही बीत गयी है।

इसके प्रति, सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री डी॰ के॰ करमाकर एवं अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे को विवाद नहीं है।

7. सूचक, जिसने भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपीलार्थियों की दोषमुक्ति अपास्त करने के लिए पुनरीक्षण अधिकारिता में दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 102 वर्ष 2004 दाखिल किया है, के अधिवक्ता श्री डी॰ के॰ करमाकर द्वारा सहायित राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे ने निवेदन किया है एकमात्र शिकायत भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपीलार्थियों की दोषमुक्ति है। सूचक के विद्वान अधिवक्ता ने दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश के समर्थन में जोरदार तर्क किया है।

8. राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे ने निवेदन किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किया है क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 342 के अधीन अपीलार्थियों और भारतीय दंड संहिता की धारा 324/34 के अधीन अपीलार्थी सं॰ 1 निर्मल चंद्र महतो और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन स्वदेश कुमार मंडल की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त सामग्री है, इस दशा में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय में इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक बनाने के लिए सामग्री नहीं है।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री शंकर लाल अग्रवाल, राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री संजय कुमार पांडे, अपर लोक अभियोजक और सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री दिलीप करमाकर को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के परिशीलन से, यह सत्य है कि अभियोजक की ओर से तेरह गवाहों का परीक्षण किया गया है। उन्होंने अभियोजन मामला का समर्थन किया है और अनेक दस्तावेज दिए गए हैं, जिन्हें इस मामला में प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया है। संतोष कुमार मंडल (अ॰ सा॰ 01), सुबोध कुमार (अ॰ सा॰ 9) और डॉ॰ मिथिलेश कुमार (अ॰ सा॰ 10) के साक्ष्य के साथ उपहति रिपोर्ट प्रदर्श–2 के परिशीलन से इस न्यायालय का मत है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341 एवं 342 के अधीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि न्यायोचित है। जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 324/34 के अधीन निर्मल चंद्र मंडल की दोषसिद्धि का संबंध है, यह भी न्यायोचित है और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन अपीलार्थी स्वदेश कुमार मंडल की दोषसिद्धि भी न्यायोचित है और अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के अनुकूल है। इस दशा में यह न्यायालय विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय अभिपुष्ट करता है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश के परिशीलन से अपीलार्थियों को शांति, अच्छा व्यवहार बनाए रखने के लिए और बुलाए जाने पर दंडादेश पाने के लिए और 5000/- रुपयों का बंधपत्र निष्पादित करने के लिए दंडादेश में इस माननीय न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि पक्षगण पिता, पुत्र, भाई, भतीजा हैं।

10. इस दशा में इस न्यायालय का मत है कि अपीलार्थियों द्वारा दाखिल अपील गुणागुण रहित है और हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और किसी उपांतरण के बिना खारिज किए जाने योग्य है। जहाँ तक सूचक द्वारा दाखिल दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 102 वर्ष 2004 का संबंध है, इसे भी खारिज किया जाता है क्योंकि अपीलार्थियों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन मामला नहीं बनता है, इस दशा में, दांडिक अपील सं॰ 156 वर्ष 2004 तथा दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 102 वर्ष 2004 दोनों एतद्द्वारा खारिज किए जाते हैं।

11. आवश्यक कार्रवाई के लिए इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख अवर न्यायालय को तुरन्त भेजे जाएँ।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

मकलू मरान्डी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 7168 of 2012. Decided on 17th April, 2018.

संथाल परगना (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949—धारा 20—भूमि की बंदोबस्ती—एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा आवेदन का अस्वीकरण—आयुक्त द्वारा अपील अस्वीकार की गयी—आक्षेपित आदेश गैर-सकारण आदेश है और प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार नहीं किया है—आयुक्त द्वारा पारित आदेश अपास्त किया गया और नया आदेश पारित करने के लिए मामला आयुक्त को प्रतिप्रेषित किया गया।

(पैराएँ 7, 11 एवं 12)

अधिवक्तागण.—Mr. Mayank Mohit Sinha, For the Petitioners; M/s Rajeeva Sharam, Anjana Rana, For the Resp. Nos. 4 to 6.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मयंक मोहित सिन्हा सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 6 के लिए उपस्थित अधिवक्ता सुश्री अंजना राना द्वारा सहायित वरीय अधिवक्ता श्री राजीव शर्मा सुने गए।

3. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:—

बंदोबस्ती शुद्धि मामला सं॰ 56 वर्ष 1996 में बंदोबस्ती अधिकारी, दुमका द्वारा पारित दिनांक 17.7.1998 के आदेश और आर॰ एम॰ आर॰ सं॰ 43/2000-01 में आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका (प्रत्यर्थी सं॰ 2) द्वारा पारित दिनांक 15.6.12 के अपीलीय आदेश (परिशिष्ट 3) के अभिखंडन के लिए निर्देश के लिए जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने भूमि के पुनर्स्थापन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल याचिका अपोषणीय के रूप में अस्वीकार कर दिया है यद्यपि मैकफर्सन बंदोबस्ती जे॰ बी॰ सं॰ 7 एवं 8 में 23B-9K-16D माप वाला, मैक्फर्सन जे॰ बी॰ सं॰ 30 क्षेत्र 20B-2K-7D, मैक्फर्सन बंदोवस्ती सं॰ 46 में 18B-10K-8D मापवाले कुल क्षेत्र 79B-7K-14D याचीगण के पूर्वजों के नामों में दर्ज की गयी थी और आर॰ एम॰ केस सं॰ III/22 वर्ष 1919-20 का मामला अभिलेख दर्शाता है कि 10B-18K-10D भूमि किसी मुखलाल उपाध्याय द्वारा अवैध रूप से खरीदी गयी दर्शायी गयी है और तद्नुसार भूमि का केवल वह क्षेत्र मौजा कोरडिहा के मैक्फर्सन बंदोबस्ती जे॰ बी॰ सं॰ 48 की भूमि में सम्मिलित किया जाना था जिसे अन्य के साथ मुखलाल उपाध्याय, प्रधान के नाम में दर्ज किया गया था किंतु मैक्फर्सन बंदोबस्ती जे॰ बी॰ सं॰ 48 के लिए तैयार किए गए तत्सम गैन्टजर बंदोबस्ती जे॰ बी॰ सं॰ 41 में भूमि के 10B-18K-10D के बजाए मैक्फर्सन जे॰ बी॰ सं॰ 7, 8, 30, 32, 53 एवं 46 की संपूर्ण 79B-7K-14D किसी प्राधिकारी द्वारा किसी आदेश के बिना उक्त मुखलाल उपाध्याय की पुत्री के नाम में सम्मिलित किया गया था जिसके द्वारा अचल संपत्तियों का विशाल क्षेत्र जो याचीगण जो निरक्षर आदिवासी है की गैर अंतरणीय कृषि भूमि प्रत्यर्थियों के पूर्वजों द्वारा उनके साथ कपट करके हड़प ली गयी है और प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने भूमि के पुनर्स्थापन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल याचिका विनियम वर्ष 1969 द्वारा संथाल परगना अभिधृति अधिनियम, 1949 की धारा 20(5) के प्रावधान के उल्लंघन में अस्वीकार कर दिया है जिसके द्वारा गैर अंतरणीय कृषि भूमि जो आरंभ में याचीगण जो आदिवासी रैयत है की थी, विधितः उन समस्त भूमि के पुनर्स्थापन जो आदिवासी रैयत है की थी, विधितः उन समस्त भूमि के पुनर्स्थापन के हकदार हैं।''

4. याचीगण के अधिवक्ता रिट याचिका के परिशिष्ट 3 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश को निर्दिष्ट करके निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश गैर सकारण रहस्यमय आदेश है और तद्नुसार इस

संक्षिप्त आधार पर आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है और मामला आर॰ एम॰ आर॰ सं॰ 43/ 2000-01 में नया सकारण आदेश पारित करने के लिए आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका के न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया जाए।

5. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश का प्रथम पृष्ठ याचीगण के निवेदन पर विचार करता है। आदेश का दूसरा पृष्ठ प्रत्यर्थीगण के निवेदन पर विचार करता है और आदेश के पृष्ठ 3 में प्रत्यर्थीगण का निवेदन जारी है और तत्पश्चात आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका ने निम्नलिखित आदेश पारित किया है:–

> *''दोनों पक्षों द्वारा दाखिल दस्तावेजों और याचीगण, द्वारा दाखिल याचिका और दोनों पक्षों के लिखित तर्कों के परिशीलन के बाद मैं पाता हूँ कि चर्चा किए गए उक्त आधारों पर याचिका पोषणीय नहीं है और मैं उक्त आधारों पर याचिका अस्वीकार करता हूँ।''*

6. याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा पारित दिनांक 15.6.2012 का पूर्वोक्त आदेश गैरसकारण प्रतीत होता है और तद्नुसार, इसे अपास्त किया जा सकता है।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याचीगण का गुणागुण पर मामला नहीं है और तद्नुसार, आयुक्त संथाल परगना डिविजन, दुमका ने दिनांक 15.6.2012 के तहत सही प्रकार से याचीगण का मामला खारिज किया है।

8. प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि याचीगण के पूर्वजों का नाम न तो मैक्फर्सन बंदोबस्ती में न ही गैन्टजर बंदोबस्ती में दर्ज किया गया था। अत: उनके पास गुणागुण पर मामला नहीं है।

9. किंतु, जहाँ तक आक्षेपित आदेश का गैर सकारण होने का संबंध है, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा आक्षेपित आदेश में दिया गया कोई तर्क दर्शाने की अवस्था में नहीं हैं।

10. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता श्री आशीष कुमार ठाकुर भी आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में तर्क दर्शाने की अवस्था में नहीं हैं और तद्नुसार याची का तर्क कि आक्षेपित आदेश गैर–सकारण आदेश है, का विरोध करने की अवस्था में नहीं हैं।

11. इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन करने के बाद यह न्यायालय पाता है कि आर॰ एम॰ आर॰ सं॰ 43 वर्ष 2000-01 में आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा पारित दिनांक 15.6.2012 का आक्षेपित आदेश गैर सकारण आदेश है और तद्नुसार इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

12. तद्नुसार, आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और मामला इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर चर्चा करने के बाद आर॰ एम॰ आर॰ सं॰ 43 वर्ष 2000-01 में नया आदेश पारित करने के लिए आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका को प्रतिप्रेषित किया जाता है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

धीरेन्द्र प्रसाद

बनाम

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य

W.P. (C) No. 1621 of 2017. Decided on 5th March, 2018.

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्गठन और प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002—धारा 13—प्रतिभूति हित प्रवर्तन नियमावली, 2002—नियम 9(4) एवं 9(5)—प्रतिभूति आस्तियों का नीलामी विक्रय—बोली का रद्दकरण—विक्रय कीमत के शेष 75% को जमा करने में विफलता—यह याची का स्वीकृत मामला है कि अचल संपत्ति के विक्रय की संपुष्टि के पंद्रहवें दिन पर अथवा इसके पहले खरीद कीमत की शेष राशि का भुगतान प्राधिकृत अधिकारी को नहीं किया गया था—यद्यपि समय के विस्तारण का विहित फॉर्म नहीं है, फिर भी इसे आपसी सहमति घोषित करते हुए लिखित में होना होगा—यह याची का मामला नहीं है कि समय के विस्तारण के लिए पक्षों के बीच कोई लिखित करार था—प्रत्यर्थी बैंक द्वारा याची के ई-मेल का प्रत्युत्तर नहीं देने मात्र का अर्थ यह नहीं है कि शेष राशि के भुगतान के लिए समय प्रत्यर्थी बैंक द्वारा बढ़ाया गया है—याची भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन किसी अनुतोष का हकदार नहीं है—बैंक को याची द्वारा विलंब से जमा की गयी संपत्ति के विक्रय कीमत का 75% वापस करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 8, 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.—(2013)10 SCC 83—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. N.K. Pasari, For the Petitioner; Mr. P.S.A. Pati, For the State Bank of India; Mr. A.K. Rashidi, For the Resp. Nos. 2 and 3.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा जारी दिनांक 13.2.2017 के नोटिस के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची को सूचित किया गया है कि चूँकि वह पंद्रह दिनों की अवधि के भीतर शेष विक्रय कीमत का 75% जमा करने में विफल रहा, विक्रय कीमत का 25% समपहृत किया गया है।

2. रिट याचिका में यथा कथित मामला की तात्थिक पृष्ठभूमि यह है कि मेसर्स पाटो बिल्डर्स लिमिटेड, जिसके पास स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, जमशेदपुर शाखा द्वारा बैंक गारंटी थी अपने दायित्व का उन्मोचन करने में विफल रहा, अत: वित्तीय सहायता का लाभ लेने के लिए बैंक के पास बंधक रखी गयी संपत्ति लगभग 10.68 करोड़ रुपयों की राशि की वसूली के लिए सम्यक रूप से कुर्क की गयी थी। तत्पश्चात, बैंक द्वारा उक्त राशि की वसूली के लिए वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (संक्षेप में सारफेसी अधिनियम, 2002") के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी और बैंक ने नीलामी नोटिस दिया था। याची विक्रय कीमत का 25% जमा कर 8.7.2016 को की गयी नीलामी में भाग लिया और राशि का शेष 75% विक्रय के संपुष्टिकरण के पंद्रहवें दिन पर अथवा इसके पहले जमा किया जाना था अर्थात 23.7.2016 तक, किंतु इसे नीलामी नोटिस में अनुबंधित समय के सात दिन बाद अर्थात 30.7.2016 को जमा किया गया था। याची पर 15.2.2017 को दिनांक 13.2.2017 को नोटिस उसको यह सूचित करते हुए तामील किया गया था कि चूँकि संपूर्ण

राशि 23.7.2016 के भीतर जमा नहीं की गयी थी, बोली प्रतिभूति हित प्रवर्तन नियमावली, 2002 (संक्षेप में ''नियमावली, 2002'') के नियमों 9(4) एवं 9(5) के निबंधनानुसार रद्द कर दी गयी और याची द्वारा जमा किया गया विक्रय कीमत (22 लाख रुपया) का 25% समपहृत कर लिया गया और संपत्ति का नया ई–नीलामी आरंभ किया जाना इप्सित किया गया था। अत:, यह रिट याचिका दाखिल की गयी है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि याची कतिपय भुगतान की प्रतीक्षा कर रहा था, उसने प्रत्यर्थी बैंक के प्राधिकृत अधिकारी को 25.7.2016 को यह सूचित करते हुए ई–मेल भेजा कि 15.8.2016 तक पूर्ण भुगतान किया जाएगा, किंतु संपत्ति की कुल विक्रय कीमत अर्थात 88 लाख रुपयों का भुगतान पहले ही 30.7.2016 को अर्थात अनुबंधित समय के केवल सात दिन बाद कर दिया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि नियमावली 2002 का नियम 9(4) प्रावधानित करता है कि प्राधिकृत अधिकारी धम जमा करने के लिए समय का विस्तारण प्रदान कर सकता है। किंतु, वर्तमान मामला में, याची के अनुरोध को न तो अस्वीकार न ही इसका विरोध प्राधिकृत अधिकारी द्वारा किया गया था जिसे समझे गए स्वीकरण के रूप में माना जाना चाहिए। आगे यह निवेदन किया गया है कि नियमावली 2002 के नियम 9(4) की अपव्याख्या की जा रही है और किसी युक्तियुक्त आधार के बिना, किसी तर्कसंगत स्पष्टीकरण के बिना याची का बहुमूल्य अधिकार वापस लिया जा रहा है जो प्रत्यर्थी बैंक के प्राधिकृत अधिकारी में निहित अधिकारिता एवं शक्ति का आभासी प्रयोग दर्शाता है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी बैंक के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि याची द्वारा संपत्ति की विक्रय कीमत के 75% का भुगतान नियमावली, 2002 के नियम 9(5) के प्रावधानों के निबंधनानुसार नियमावली, 2002 के नियम 9(4) के अधीन यथा आदेशित विक्रय की संपुष्टि की तिथि से 15 दिनों के भीतर नहीं किया गया था, नीलामी खरीदार (वर्तमान याची) द्वारा जमा की गयी विक्रय कीमत का 25% समपहरण कर लिया गया।

5. प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 अर्थात उधार लेने वाले और प्रतिभूति देनेवाले द्वारा प्रतिशपथपत्र दाखिल किया गया है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि जब बैंक ने नियमावली, 2002 के नियम 6(1) का अवलंब लिया था और प्रत्यर्थी सं॰ 3 की संपत्ति बेचने के लिए अग्रसर हुआ था, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने आगे कार्रवाई के स्थगन के लिए ऋणी वसूली अधिकरण, राँची के समक्ष आवेदन दाखिल किया। किंतु एस॰ ए॰ सं॰ 44 वर्ष 2016 में पारित दिनांक 5.7.2016 के आदेश के तहत अधिकरण ने कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं किया था। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अपील सं॰ 173 वर्ष 2016 में ऋण वसूली अपीलीय अधिकरण, इलाहाबाद के समक्ष डी॰ आर॰ टी॰, राँची के दिनांक 5.7.2016 के आदेश को चुनौती दिया। किंतु, अपील सं॰ 173 वर्ष 2016 का वर्तमान दर्जा प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 द्वारा कोई अतिरिक्त शपथपत्र दाखिल करके इस न्यायालय के ध्यान में नहीं लाया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची ने नियमावली 2002 के नियम 9(3) एवं 9(4) में यथा विहित अनुबंधित अवधि के भीतर विक्रय कीमत जमा नहीं किया था और इस दशा में प्रत्यर्थी बैंक याची द्वारा जमा किए गए अग्रिम धन सहित विक्रय कीमत समपहृत करने में न्यायोचित था। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने विक्रय की संपुष्टि की तिथि से 15 दिनों के भीतर विक्रय कीमत का 75% न तो जमा किया था न ही प्रकट किया कि नीलामी खरीदार तथा प्रतिभूत क्रेडिटर अर्थात बैंक के बीच नियमावली 2002 के नियम 9(4) के निबंधनानुसार तीन माह तक समय के विस्तारण के लिए कोई लिखित करार था। अत: रिट याचिका खारिज किए जाने की दायी थी।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने अपने विरोधी प्रतिवादों के समर्थन में संयुक्त रूप से **महाप्रबंधक,**

श्री सिद्धेश्वर सहकारी बैंक बनाम श्री इकबाल एवं अन्य (2013)10 SCC 83, मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और नियमावली 2002 के प्रावधानों का परिशीलन किया गया। नियमावली, 2002 का नियम 9 विक्रय के समय, विक्रय प्रमाणपत्र जारी करने एवं कब्जा देने आदि पर विचार करता है। नियम 9 का उपनियम (3) प्रावधानित करता है कि अचल संपत्ति के प्रत्येक विक्रय पर खरीदार तुरन्त विक्रय कीमत की राशि का 25% जमा करेगा और ऐसे जमा के व्यतिक्रम में संपत्ति तुरन्त पुनः बेची जाएगी। आगे, नियम 9 का उपनियम (4) प्रावधानित करता है कि खरीद कीमत की शेष भुगतेय राशि का भुगतान खरीदार द्वारा प्राधिकृत अधिकारी को अचल संपत्ति के विक्रय की संपुष्टि के पंद्रहवें दिन अथवा इसके पहले अथवा ऐसी विस्तारित अवधि जैसी सहमति लिखित में पक्षों के बीच हो सकती है तक किया जाएगा। नियम 9 का उपनियम (5) प्रावधानित करता है कि उपनियम (4) में उल्लिखित अवधि के भीतर भुगतान के व्यतिक्रम में जमा समपहृत किया जाएगा और संपत्ति पुनः बेची जाएगी और व्यतिक्रम करने वाला खरीदार प्रतिभूत क्रेडिटर को संपत्ति अथवा राशि जिसके लिए इसे बाद में बेचा जा सकता हैं किसी भाग के प्रति समस्त दावा समपहृत करेगा।

8. यह याची का स्वीकृत मामला है कि खरीद कीमत की शेष राशि का भुगतान प्राधिकृत अधिकारी को अचल संपत्ति के विक्रय की संपुष्टि के पंद्रहवें दिन अथवा इसके पहले नहीं किया गया था। किंतु, याची दावा करता है कि उसने विलंब के बारे में बैंक को सूचित किया था और इसे बैंक द्वारा अभिव्यक्त रूप से अस्वीकार नहीं किया गया था जिसका अर्थ है कि बैंक ने समय बढ़ाया था और ऐसे विस्तारित समय के भीतर शेष राशि जमा की गयी है।

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **श्री सिद्धेश्वर सहकारी बैंक (ऊपर)** मामला में दिए गए निर्णय में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *''14. नियम 9 के उपनियम (1) का पठन यह स्पष्ट करता है कि प्रावधान आज्ञापक है। नियम 9(1) की सादी भाषा इसे सुझाती है। इसी प्रकार से, नियम 9(3) जो प्रावधानित करता है कि खरीदार अचल संपत्ति के विक्रय पर विक्रय कीमत की राशि के 25% का भुगतान करेगा, यह भी उपदर्शित करता है कि उक्त प्रावधान आज्ञापक प्रकृति का है। खरीद कीमत की शेष राशि के संबंध में उपनियम (4) प्रावधानित करता है कि उक्त राशि का भुगतान अचल संपत्ति के विक्रय की संपुष्टि के पंद्रहवें दिन अथवा इसके पहले अथवा ऐसी विस्तारित अवधि जैसी सहमति लिखित में पक्षों के बीच हो सकती है तक करेगा। नियम 9 में 15 दिन की अवधि उतनी पवित्र नहीं है और यह विस्तारणीय है यदि ऐसे विस्तारण के लिए पक्षों के बीच लिखित में करार है। नियम 9(4) में अभिव्यक्ति ''पक्षों के बीच लिखित करार'' का अर्थ क्या है। नियम ऐसे करार का कोई फॉर्म विशेष विहित नहीं करता है, सिवाए इसके कि इसे लिखित में होना होगा। शब्द ''लिखित करार'' के उपयोग का अर्थ आपसी समझदारी अथवा पक्षों के सापेक्षिक अधिकारों एवं कर्तव्यों के बारे में व्यवस्था है। नियम 9(4) के प्रयोजन से अभिव्यक्ति ''लिखित करार'' का अर्थ लिखित में आपसी सहमति से अधिक कुछ नहीं है। नियम 9(4) के प्रयोजन से शब्द ''पक्षों'' का अर्थ हमारी समझ में प्रतिभूति क्रेडिटर, उधार लेने वाला एवं नीलामी खरीदार होना होगा।''*

10. पूर्वोक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नियमावली 2002 के नियम 9(4) में प्रावधानित अभिव्यक्ति ''लिखित करार'' की व्याख्या किया है और अभिनिर्धारित किया है कि शेष राशि के भुगतान

के लिए नियत 15 दिन की अवधि पवित्र नहीं है और लिखित में करार द्वारा पक्षों द्वारा विस्तारित किया जा सकता है। ऐसे करार का विहित फॉर्म नहीं है सिवाए इसके कि इस लिखित में होना होगा और अभिव्यक्ति'' लिखित करार'' का अर्थ लिखित में आपसी सहमति से अधिक कुछ नहीं है। माननीय न्यायाधीशों ने स्पष्ट शब्दों में अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि समय के विस्तारण के लिए विहित फॉर्म नहीं है, फिर भी इसे आपसी सहमति घोषित करने वाला लिखित में होना होगा। याची का मामला यह नहीं है कि समय के विस्तारण के लिए पक्षों के बीच कोई लिखित करार था। इस प्रकार, प्रत्यर्थी बैंक द्वारा याची के ईमेल का उत्तर नहीं दिए जाने मात्र का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्यर्थी बैंक द्वारा शेष राशि के भुगतान का समय विस्तारित किया गया था।

11. पूर्वोक्त सांविधिक प्रावधानों और **सिद्धेश्वर सहकारी बैंक (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में याची भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन किसी अनुतोष का हकदार नहीं है। किंतु, प्रत्यर्थी बैंक को याची द्वारा प्रत्यर्थी बैंक के पास विर्लंबित रूप से जमा की गयी संपत्ति के विक्रय कीमत का 25% वापस करने का निर्देश दिया जाता है।

12. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

प्रशासक, राँची नगर निगम

बनाम

चंद्रशेखर लाल

W.P. (C) No. 6276 of 2017. Decided on 18th April, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VII नियम 14(3) सहपठित धारा 151—दस्तावेजों की प्रस्तुती—वादी वाद के संस्थापन के समय पर दस्तावेज प्रस्तुत करेगा जिस पर उसका दावा आधारित है और यदि उक्त दस्तावेज उसके कब्जा में नहीं है, वादपत्र में प्रकथन किया जाएगा कि दस्तावेज किसके कब्जा में है (उपनियम 2)—यदि वादी ने वादपत्र में दस्तावेज के लिए नींव नहीं डाला है, जिसे प्रस्तुत करने का वह आशय रखता है, ऐसा दस्तावेज भले ही 30 वर्ष पुराना हो अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता है—साक्ष्य में प्रस्तुत किए जाने के लिए इप्सित दस्तावेज ऐसा होना होगा जो आवश्यक है अथवा जो कम-से-कम वाद में वास्तविक विवाद का समाधान करने में न्यायालय की सहायता करता है। (पैरा 4)

निर्णयज विधि.—(2018) 2 SCC 347; (2015)4 SCC 601; 2007 (1) Mh.L.J 691; AIR 1974 P&H 287—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Shashank Shekhar, For the Petitioner Mr. Shresth Gautam, For the Respondent.

आदेश

याची राँची नगर निगम अभिधान वाद सं॰ 165 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 24.8.2017 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा वादी द्वारा दाखिल सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14(3) सहपठित धारा 151 के अधीन आवेदन अनुज्ञात किया गया है और दिनांक 5.4.1962 का किराया करार तथा दिनांक 10.2.1890-1891 का किराया रसीद अभिलेख पर लिया गया है।

2. अभिधान वाद सं॰ 165 वर्ष 2006 घोषणा की डिक्री के लिए संस्थित किया गया है कि वादी का वाद अनुसूचित संपत्तियों पर अधिकार, अभिधान एवं हित है और वह वाद भूमि पर काबिज है। वादी द्वारा इप्सित वैकल्पिक अनुतोष यह है कि यदि उसे वाद भूमि पर काबिज नहीं पाया जाता है, उसको दिया जा सकता है और इसका खास कब्जा उसको दिया जाए। वादी ने प्राख्यान किया है कि वह मौजा हिन्दपीड़ी, जिला राँची में राँची नगर निगम के वार्ड सं॰ III के अंतर्गत एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 283, 284, 305, 306, 316, 318, 321, 322, 324 एवं 325 के अधीन गठित भूमि पर काबिज है। वाद भूमि उसके परदादा द्वारा दिनांक 18.7.1876 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरूप खरीदी गयी थी, जिसने वाद भूमि पर काबिज होने के बाद वाद संपत्तियों पर समस्त अधिकार एवं कब्जा का प्रयोग किया। वह अपने पीछे तीन पुत्रों अर्थात कन्हाई साव, चंदर नाथ साव एवं कलबल साव छोड़ गया; कन्हाई साव एवं कलबल साव की मृत्यु निःसंतान हो गयी और चंदरनाथ साव अपने पीछे दो पुत्रों अर्थात नन्द किशोर साव (संतानहीन) एवं परमेश्वर साव को छोड़ गया। अंततः, अपने पिता परमेश्वर साव की मृत्यु पर वादी वादभूमि पर काबिज हुआ। वादी ने प्राख्यान किया है कि प्रतिवादी का नगरपालिका का खेसरा अभिलेख के आधार पर वाद भूमि पर अधिकार, अभिधान एवं हित नहीं है। वादी ने प्रतिवादी को दिनांक 8.3.2006 का कानूनी नोटिस भेजा जिसका उत्तर प्रतिवादी द्वारा नहीं दिया गया था। प्रतिवादी राँची नगर निगम ने वाद भूमि पर वादी का अधिकार, अभिधान एवं कब्जा का दावा विवादित करते हुए लिखित कथन दाखिल करके वाद का प्रतिवाद किया। प्रतिवादी ने प्राख्यान किया है कि वर्ष 1929 में तैयार किए गए नगरपालिका सर्वे अधिकार अभिलेख में राँची नगर पालिका को स्वामी के रूप में दर्शाया गया है और वाद भूमि इसमें वर्ष 1979 में निहित की गयी है और तब से निगम समस्त कृत्यों तथा उसके भौतिक कब्जा का प्रयोग करते हुए वाद भूमि का अनन्य स्वामी है। लंबित वाद में जब प्रतिवादी ने अपना तर्क शुरू किया था, वादी द्वारा दिनांक 5.4.1962 का किराया तथा दिनांक 10.2.1890-1891 का किराया रसीद अभिलेख पर लेने के लिए 24.5.2016 को सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14(3) सहपठित धारा 151 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था। दिनांक 24.8.2017 के आक्षेपित आदेश द्वारा यह आवेदन अनुज्ञात किया गया है। व्यथित होकर प्रतिवादी इस न्यायालय के पास आया है।

3. दिनांक 24.8.2017 के आक्षेपित आदेश और पेपर बुक के पृष्ठ 672 पर ''मामला की सुनवाई का इतिहास'' निर्दिष्ट करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता श्री शशांक शेखर निवेदन करते हैं कि सात तिथियों पर प्रतिवादी के अधिवक्ता द्वारा मामला पर तर्क किए जाने के बाद वादी द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14(3) के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था, फिर भी ऐसा आवेदन अनुज्ञात किया गया है और वह भी कोई कारण दिए बिना। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **एन॰ सी॰ बंसल बनाम उत्तर प्रदेश वित्त निगम एवं एक अन्य, 2018(2) SCC 347,** में निर्णय पर विश्वास किया है। उक्त के विरूद्ध, (i) **ओम प्रकाश (मृत) अपने विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से बनाम शांति देवी एवं अन्य, (2015)4 SCC 601;** (ii) **मोहन राज रूपचंद जैन उर्फ छाजेड़ बनाम केवल चंद हस्तीमल जैन एवं अन्य, 2007(1) Mh. LJ 691** और (iii) **सतनाम सिंह शर्मा बनाम तरलोकी नाथ कालिया एवं एक अन्य, AIR 1974 P & H 287** में निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री श्रेष्ठ गौतम निवेदन करते हैं कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 90 के अधीन शक्ति स्वविवेकी है और भले ही दस्तावेज 30 वर्ष पुराना है, इसे अभिलेख पर लिया या नहीं लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जब एक बार दस्तावेज अभिलेख पर ''मात्र'' लिया गया है, अन्य पक्ष को आपत्ति नहीं हो सकती है क्योंकि इस पर विचारण न्यायालय द्वारा विश्वास किया या नहीं किया जा सकता है। प्रत्यर्थी की

ओर से किया गया प्रतिवाद यह है कि दिनांक 24.8.2017 के आक्षेपित आदेश जिसके द्वारा पूर्वोक्त दो दस्तावेजों को अभिलेख पर लिया गया है को चुनौती देने के लिए प्रतिवादी को वाद हेतुक अथवा अधिकार भी नहीं है।

4. सी॰ पी॰ सी॰ का आदेश VII नियम 14(1) आज्ञा देता है कि वादी वाद के संस्थापन के समय पर दस्तावेज प्रस्तुत करेगा जिस पर उसका दावा आधारित है और यदि उक्त दस्तावेज उसके कब्जा में नहीं है, वादपत्र में यह प्रकथन किया जाएगा कि यह किसके कब्जा में है (उप–नियम 2)। निस्संदेह, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII के नियम 14 के उपनियम 3 के अधीन दस्तावेज साक्ष्य में स्वीकार किया जा सकता है किंतु न्यायालय की अनुमति के साथ, किन्तु नियम 14 के उपनियम 3 के अधीन प्रावधानों का पठन अभिवचनों एवं उपनियम 1 के संदर्भ में करना होगा। यदि वादी ने वादपत्र में दस्तावेज के लिए नींव नहीं डाला है जिसे साक्ष्य में प्रस्तुत करने का आशय वह रखता है, ऐसा दस्तावेज भले ही यह 30 वर्ष पुराना हो अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता है। साक्ष्य में प्रस्तुत किए जाने के लिए इप्सित दस्तावेज ऐसा होना होगा जो आवश्यक है अथवा कम से कम वाद में वास्तविक विवाद के समाधान में न्यायालय की सहायता करता है। प्रत्यर्थी की ओर से किया गया प्रतिवाद कि मात्र इसलिए कि किराया करार एवं किराया रसीद अभिलेख पर लिया गया है, प्रतिवादी पर प्रतिकूलता कारित नहीं होती है, अमान्य है। अंतिम तर्क के चरण पर, प्रतिवादी ने पहले ही सात तिथियों पर वाद में तर्क किया था, यदि नया दस्तावेज अभिलेख पर लिया जाता है, यह निश्चय ही प्रतिवादी को आश्चर्य चकित करेगा। वाद में अंतिम सुनवाई तक वादी के चाचा नंद किशोर साव द्वारा अभिकथित रूप से निष्पादित किराया करार की चर्चा भी नहीं है। दिनांक 24.5.2016 के आवेदन में, वादी ने कोरा बयान दिया है कि इन दस्तावेजों को उसके द्वारा 22.5.2016 को पाया गया था। समान रूप से अमान्य यह प्रतिवाद भी है कि विचारण न्यायाधीश द्वारा किराया करार तथा किराया रसीद को साक्ष्य में नहीं लिया जा सकता है। यदि ये दस्तावेज प्रासंगिक नहीं हैं, तब सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14 (3) के अधीन आवेदन अनुज्ञात करते हुए विचारण न्यायाधीश ने शक्ति का प्रयोग किया है जो विधित: इसमें निहित नहीं है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 90 पर आधारित निवेदन इस मामला के तथ्यों के संदर्भ में प्रासंगिक नहीं हैं।

5. उक्त तथ्यों में, दिनांक 24.8.2017 के आक्षेपित आदेश में गंभीर दुर्बलता पाते हुए इसे अपास्त किया जाता है। दिनांक 5.4.1962 का किराया करार और दिनांक 10.2.1890-1891 का किराया रसीद अभिधान वाद सं॰ 165 वर्ष 2006 में विचार से अपवर्जित किया जाएगा।

6. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

7. दिनांक 15.12.2017 का अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है।

8. आई॰ ए॰ सं॰ 9460 वर्ष 2017 निपटाया जाता है।

माननीय प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति

श्रीमती आसिया खातून

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 3942 of 2008. Decided on 19th March, 2018.

सेवा विधि—आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति—उम्मीदवारों के चयन में अभिकथित अनियमितताएँ—याची समुचित रूप से हिन्दी में आवेदन भरने में विफल रही और उसे नियुक्ति

से इनकार किया गया था—अभिलेख पर उपलब्ध अभिवचनों से, मतदाता सूची विशेष में, पिछड़ी जाति प्रश्नगत आंगनबाड़ी में बहुमत समूह है—पिछड़ी जाति से आने वाली प्रत्यर्थी सं॰ 5 का चयन बिलकुल न्यायोचित एवं विधितः संपोषणीय है—रिट याचिका खारिज की गयी।

(पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.—Mr. Bholanath Ojha, For the Petitioners; Mr. Chandrashekhar Singh, For the Resp-State; M/s Ritu Kumar, S.K. Deo, Vikash Kumar, For the Resp No.5.

प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति.—रिट आवेदन में याची ने अन्य बातों के साथ दिनांक 15 मई, 2008 के मेमो जिसके द्वारा महाराजगंज में आंगनबाड़ी सेविका के रूप में प्रत्यर्थी सं॰ 5 की नियुक्ति अभिपुष्ट की गयी है और प्रत्यर्थी सं॰ 5 के चयन के तरीका में जाँच के लिए याची द्वारा दाखिल अभ्यावेदन अस्वीकार किया गया है के अभिखंडन के लिए और आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति में की गयी अनियमितताओं में निजी जाँच करने के लिए और प्रत्यर्थी सं॰ 5 की नियुक्ति अभिखंडित करने के बाद महाराजगंज, देवघर में आंगनबाड़ी सेविका का चयन करने के लिए नयी नियुक्ति प्रक्रिया आरंभ करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 4 को निर्देश देने की प्रार्थना किया है।

2. रिट याचिका में वर्णित तथ्य संक्षेप में ये हैं कि महाराजगंज में आंगनबाड़ी केंद्र में आंगनबाड़ी सेविका की नियुक्ति के लिए 14.6.2007 को ग्रामीणों की बैठक में याची प्रत्यर्थी सं॰ 5 सहित अन्य उम्मीदवारों के साथ उपस्थित हुई और उक्त पद पर चयन के लिए समस्त औपचारिकताओं का पालन करने के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 5 को इस आधार पर चुना गया था कि याची का हिन्दी का ज्ञान अच्छा नहीं है। व्यथित होकर, याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 के समक्ष अभ्यावेदन दिया जिन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 3 को मामला पर विचार करने का निर्देश दिया। इसके बाद प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा जाँच की गयी थी और 27.9.2007 को प्रस्तुत जाँच रिपोर्ट ने कथन किया गया है कि महाराजगंज आंगनबाड़ी केंद्र में लाभार्थियों का बहुमत मुस्लिम समुदाय से आता है और मुस्लिम समुदाय से आंगनबाड़ी सेविका नियुक्त करना समुचित होगा। किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 2 की रिपोर्ट अनदेखा करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने नकली जाँच किया और अभिनिर्धारित किया कि लाभार्थियों का बहुमत पिछड़ी जाति से आता है और इसके अतिरिक्त याची महाराजगंज की निवासी नहीं है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि याची का आवेदन अस्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वह हिन्दी नहीं जानती है किंतु उसका अभ्यावेदन अस्वीकार करते हुए प्रत्यर्थियों ने नया आधार लिया है कि वह महाराजगंज की निवासी नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्टतः कथन किया है कि लाभार्थियों का बहुमत मुस्लिम समुदाय से आता है जबकि प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने महाराजगंज आंगनबाड़ी केंद्र के लाभार्थियों की जनसंख्ययिकी गुणवत्ता पूरी तरह बदल दिया है। ऐसी परिस्थितियों के अधीन, न्याय का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए मामला प्रत्यर्थी सं॰ 4 उपायुक्त द्वारा अन्वेषित किया जाए। आरंभ में, याची को नियुक्ति से एकमात्र इस आधार पर इनकार किया गया था कि वह हिन्दी नहीं जानती है किंतु याची द्वारा प्रस्तुत प्रमाणपत्र से यह स्पष्टतः प्रतीत होता है कि उसने बोर्ड परीक्षा में हिन्दी में 65% अंक पाया है।

4. इसके विरूद्ध, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आंगनबाड़ी सेविका के चयन के लिए 14.6.2007 को की गयी बैठक में प्रत्यर्थी सं॰ 5 को उसकी अर्हता तथा उसके पिछड़ी जाति

जो लाभार्थियों का बहुमत समूह है से आने के आधार पर बैठक में मौजूद ग्रामीणों द्वारा एकमत से चयनित किया गया था। बैठक में, दोनों उम्मीदवारों को हिन्दी में आवेदन भरने के लिए कहा गया था। किंतु याची को हिन्दी में आवेदन भरने में सक्षम नहीं पाया गया था, अत: उसके नाम पर विचार नहीं किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 3 जिला कल्याण अधिकारी ने मामला का जाँच किया और उस संदर्भ में यह कथन करते हुए कि प्रश्नगत पद पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 का चयन विधिक है, उसने उपायुक्त, देवघर को रिपोर्ट दिया। सबडिविजनल अधिकारी, मधुपुर ने भी दिनांक 5.11.2007 के पत्र के तहत रिपोर्ट किया कि आंगनबाड़ी केंद्र में आंगनबाड़ी सेविका के रूप में श्रीमती सुनीता देवी (प्रत्यर्थी सं॰ 5) का चयन विधिक है। प्रतिशपथपत्र के परिशिष्ट E जो उस क्षेत्र की मतदाता सूची है को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मतदाता सूची के सादे पठन पर यह प्रतीत होती है कि लाभार्थियों का बहुमत समूह ओ॰ बी॰ सी॰ का है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि सरथ प्रखंड में महाराजगंज आंगनबाड़ी केंद्र की आंगनबाड़ी सेविका के चयन के लिए 14.6.2007 को की गयी आम बैठक में केवल दो आवेदक वर्तमान याची एवं प्रत्यर्थी सं॰ 5 उपस्थित हुए जहाँ दोनों उम्मीदवारों को हिन्दी में आवेदन फॉर्म भरने के लिए कहा गया था किंतु याची समुचित रूप से हिन्दी में आवेदन भरने में विफल रही, अत: उसे नियुक्ति से इनकार किया गया था और शेष उम्मीदवार प्रत्यर्थी सं॰ 5 को नियुक्त दी गयी है। इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर उपलब्ध अभिवचनों, विशेषत: मतदाता सूची से यह प्रतीत होता है कि प्रश्नगत आंगनबाड़ी में बहुमत समूह पिछड़ी जाति का है, अत: पिछड़ी जाति से आने वाली प्रत्यर्थी सं॰ 5 का चयन बिलकुल न्यायोचित एवं विधित: संपोषणीय है।

7. पूर्वोक्त कारणों से, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि रिट आवेदन में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और इसे तद्नुसार गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

कंचन देवी उर्फ कंचन कुमारी

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 2913 of 2016. Decided on 12th March, 2018.

झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011—धारा 11—किराएदार की जबरन बेदखली—याची ने यह अभिकथित करते हुए कि एस॰ डी॰ ओ॰, चास पूर्वाग्रह के साथ मामला में अग्रसर हुए हैं, किसी अन्य प्राधिकारी को जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ मामला अंतरित करने के लिए प्रार्थना किया है—मात्र इसलिए कि एक अन्य कार्यवाही में याची के विरूद्ध न्यायिककल्प न्यायालय द्वारा कुछ प्रतिकूल आदेश पारित किए गए हैं, यह मानना समुचित नहीं है कि उक्त न्यायिककल्प प्राधिकारी पूर्वाग्रहग्रस्त है और आवेदक का अन्य मामला प्रतिकूल रूप से विनिश्चित करेगा—प्रशासनिक प्राधिकारियों को विभिन्न संविधियों एवं

सरकारी अधिसूचनाओं द्वारा प्रदत्त अनेक न्यायिककल्प कार्य सौंपे गए हैं—यह असाधारण स्थिति नहीं है जहाँ एस॰ डी॰ ओ॰ ने जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ अधिनियम के अधीन किराया नियंत्रक के रूप में और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग किया है—यदि याची के अनुसार, प्रथम मामला में पारित आदेश गलत अथवा अवैध है, उसे सदैव विधि के अनुरूप समुचित न्यायालय के समक्ष इसे चुनौती देने की छूट है—मामला के अंतरण का आदेश पारित करके वादकार को प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए जब तक पूर्वाग्रह/असद्भाव का मजबूत मामला नहीं बनता है—मामला के अंतरण/स्थगन के लिए ऐसे आवेदन पर विचार करते हुए, ऐसे आवेदन को सुनने वाले न्यायालय को पूर्णतः संतुष्ट होना चाहिए कि यह अभिनिर्धारित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री मौजूद है कि पीठासीन अधिकारी की ओर से पूर्वाग्रह की मजबूत संभावना है—केवल याची-किराएदार के विरूद्ध किराया नियंत्रक द्वारा पारित प्रतिकूल आदेशों के कारण पूर्वाग्रह की आशंका मात्र किराया नियंत्रक से किसी अन्य प्राधिकारी को कार्यवाही अंतरित करने का आधार नहीं है—याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.—M/s Pandey Neeraj Rai, Rohit Ranjan Sinha, For the Petitioner; Mr. Lalan Kumar Singh, For the Resp.-State.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 3 सबडिविजनल अधिकारी, चास-सह-किराया नियंत्रक को अपने समक्ष लंबित जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ मामला सं॰ 10/2015 के साथ अग्रसर होने से अवरूद्ध करने के लिए और आगे इसे इस माननीय न्यायालय की पर्यवेक्षणीय अधिकारिता के अधीन आने वाले किसी अन्य समुचित फोरम अथवा न्यायालय को अंतरित करने के लिए दाखिल की गयी है।

2. रिट याचिका में यथाकथित मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि याची किराया परिसर में दवा दुकान चला रहा है जिसका स्वामी कोई डॉ॰ शैलेन्द्र कुमार है जिसने दिनांक 14.11.2014 के विक्रय विलेख के फलस्वरूप अनुराधा नियोगी से संपत्ति खरीदा। याची का दावा यह है कि संपत्ति के अर्जन के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 4 जो डॉ॰ शैलेन्द्र कुमार की माता और मुख्तारनामा धारक है ने याची पर अपने लिए उपयुक्त अनुबंधन के साथ नया पट्टा विलेख निष्पादित करने के लिए जोर डाला और जब याची ने नए पट्टा विलेख पर हस्ताक्षर करने से इनकार किया, प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने अपने साथ अधिभोगियों द्वारा दुर्व्यवहार अभिकथित करते हुए स्थानीय पुलिस को दिनांक 13.10.2015 का पत्र लिखा जब वह दीवाली त्योहार के दौरान साफ सफाई एवं परिसर की मरम्मती के लिए किराया परिसर गयी। याची के अनुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने उसी दिन याची सहित किराएदारों को कुछ दुष्टों की मदद से जबरन बेदखल किया और शटर के एक भाग पर ताला लगा दिया। उसी दिन, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 107 के अधीन कार्रवाई आरंभ करने के लिए पुलिस से रिपोर्ट का प्रबंध भी कर लिया गया था। इस प्रकार, एस॰ डी॰ ओ॰, चास ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन एम॰ पी॰ केस सं॰ 565 वर्ष 2015 और एम॰ पी॰ केस सं॰ 566 वर्ष 2015 के रूप में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 107 के अधीन कार्यवाही आरंभ किया जिसमें यथास्थिति का आदेश पारित किया गया था। इस बीच, 16.11.2015 को प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने अपनी निजी आवश्यकता, नया किराया करार के गैर-निष्पादन, दुर्व्यवहार तथा किराया का भुगतान करने से इनकार के आधार पर जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ केस सं॰ 10/2015 के तहत याची की बेदखली के लिए गृह किराया नियंत्रक-सह-एस॰ डी॰ ओ॰ के न्यायालय में आवेदन दाखिल किया। एस॰ डी॰ ओ॰, चास ने 19.11.2015

को यह निर्देश देते हुए कि कार्यपालक दंडाधिकारी की उपस्थिति में दवा दुकान खाली की जाए, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही में आदेश पारित किया। याची ने भी दुकान खोलने के लिए आवेदन दिया क्योंकि दवाओं का नुकसान हो रहा था। किंतु, एस॰ डी॰ ओ॰ ने कार्यपालक दंडाधिकारी, चास को उनको दुकान खाली करवाने के लिए और समस्त वस्तुओं को याची को सौंपने के लिए कहते हुए पत्र लिखा। आगे 7.12.2015 को एस॰ डी॰ ओ॰ ने किराएदारों के विरूद्ध उनके परिसर खाली करने अथवा पट्टा नवीनीकरण करार निष्पादित करने के लिए अनिच्छुक होने के आधार पर प्रतिषेध संपूर्ण बनाते हुए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन एम॰ पी॰ केस सं॰ 565 वर्ष 2015 में आदेश पारित किया। एस॰ डी॰ ओ॰, चास ने 4.1.2016 को जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ के अधीन किराया नियंत्रक के रूप में कृत्य करते हुए प्रतिवादी किराएदारों के विरूद्ध एकपक्षीय अस्पष्ट आदेश पारित किया और इस तथ्य कि नोटिस की तामील रिपोर्ट अभी तक प्राप्त नहीं की गयी थी, को अनदेखा करते हुए इस आधार पर कि ड्रग लाइसेंस 22.12.2015 को रद्द किया गया था दुकान में पड़ी हुई औषधियों को ठिकाने लगाने का निर्देश दिया।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने अपनी अधिकारिता के परे जाते हुए अनेक अनियमितताएँ किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 जो औषधि प्राधिकारियों से याची के विरूद्ध प्रतिकूलकारी एवं अवैध आदेशों को प्राप्त करने में सक्षम भी हुआ था द्वारा प्रेरित दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 144 एवं 107 के अधीन निषेधात्मक कार्यवाही में जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ के अधीन किराया नियंत्रक के रूप में संविधि द्वारा उसको प्रदत्त न्यायिक कल्पशक्ति का दुरुपयोग किया। याची ने जे॰ बी॰ सी॰ केस सं॰ 10 वर्ष 2015 जो अभी भी लंबित है कि गैर पोषणीयता के संबंध में आरंभिक आपत्ति दाखिल किया है। आगे यह निवेदन किया है कि विद्वान एस॰ डी॰ ओ॰ ने याची के विरूद्ध असद्भावपूर्ण तरीके से कृत्य किया है जो उसके कृत्य से स्पष्ट होगा कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही में एस॰ डी॰ ओ॰ ने याची और उसके परिवार के सदस्यों को किराया परिसर में प्रवेश करने से पूर्णत: अवरूद्ध किया है जबकि याची की बेदखली के लिए साथ की जा रही कार्यवाही भी किराया नियंत्रक की हैसियत में उसके समक्ष लंबित थी। एस॰ डी॰ ओ॰ ने किराया नियंत्रक के रूप में कृत्य करते हुए दिनांक 4.1.2016 के एकपक्षीय आदेश द्वारा इस बहाना पर कि ड्रग लाइसेंस रद्द किया गया था, दुकान में पड़ी दवाओं को ठिकाने लगाने का निर्देश दिया। इस प्रकार, यह शक्ति के घोर एवं स्पष्ट दुरुपयोग का मामला है जो उसकी ओर से निष्पक्षाता एवं उचितता की कमी स्पष्ट करता है। अंत में यह निवेदन किया गया है कि एस॰ डी॰ ओ॰ प्रतिषेध रिट जारी करके जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ मामला सं॰ 10 वर्ष 2015 में किराया नियंत्रक के रूप में आगे कार्यवाही करने से अवरूद्ध किए जाने का दायी है।

4. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 3 के विरूद्ध पूर्वाग्रह का अभिकथन किया गया है, वह उक्त अभिकथन सिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य देने में विफल रहा, अत: यह अस्वीकार किए जाने का दायी है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ केस सं॰ 10 वर्ष 2015 की दाखिली के विरूद्ध आरंभिक आपत्ति करने वाला याची द्वारा दाखिल आवेदन अभी भी किराया नियंत्रक-सह-डिविजनल अधिकारी, चास के न्यायालय में लंबित है, याची की आशंका मात्र कि उसके विरूद्ध प्रतिकूल आदेश पारित किया जाएगा, इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है। यह निवेदन भी किया गया है कि उपनिदेशक (ड्रग)-सह-क्षेत्रीय लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा याची का ड्रग लाइसेंस रद्द किया गया था और दिनांक 22.12.2015 के मेमो सं॰ 1083/हजारीबाग के तहत

याची को संसूचित किया गया था। उक्त तथ्य की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा आदेश की तिथि से एक सप्ताह के भीतर दवाओं को ठिकाने लगाने का आदेश दिया गया था।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याची ने यह अभिकथित करते हुए कि एस॰ डी॰ ओ॰, चास पूर्वाग्रह के साथ मामला के साथ अग्रसर हुआ है, जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ केस सं॰ 10 वर्ष 2015 को किसी अन्य प्राधिकारी को अंतरित करने के लिए प्रार्थना किया है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में याची के विद्वान अधिवक्ता ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन एस॰ डी॰ ओ॰, चास द्वारा पारित कुछ आदेशों को प्रकाशमान किया है। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन पारित आदेश से व्यथित होकर याची ने विधि के अनुरूप कोई पुनरीक्षण आवेदन दाखिल नहीं किया है और इस दशा में उस आदेश की वैधता एवं औचित्यता पर इस चरण पर विचार नहीं किया जा सकता है, खासकर तब जब एस॰ डी॰ ओ॰, चास-सह-किराया नियंत्रक के समक्ष लंबित जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ केस सं॰ 10/2015 को अंतरित करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है। मात्र इसलिए कि एक अन्य कार्यवाही में, याची के विरूद्ध न्यायिककल्प न्यायालय द्वारा कुछ प्रतिकूल आदेश पारित किए गए हैं, यह मानना समुचित नहीं है कि उक्त न्यायिक कल्प प्राधिकारी पूर्वाग्रहग्रस्त है और आवेदक का अन्य मामला प्रतिकूल रूप से विनिश्चित करेगा। सदैव, प्रशासनिक प्राधिकारियों को विभिन्न संविधियों एवं सरकारी अधिसूचनाओं द्वारा प्रदत्त अनेक न्यायिककल्प कृत्य सौंपे गए हैं, यह असाधारण स्थिति नहीं है जहाँ एस॰ डी॰ ओ॰ ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन अपनी अधिकारिता का जे॰ बी॰ सी॰ ए॰ के अधीन किराया नियंत्रक के रूप में प्रयोग किया है। यदि याची के अनुसार, पहले मामला में पारित आदेश गलत या अवैध है, उसे विधि के अनुरूप समुचित न्यायालय के समक्ष इसे चुनौती देने की छूट है। मामला के अंतरण का आदेश पारित करके वादकार को प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए जबतक पूर्वाग्रह/असद्भाव का मजबूत मामला नहीं बनता है। मामला के अंतरण/स्थगन के ऐसे आवेदन पर विचार करते हुए ऐसे आवेदन को सुनने वाले न्यायालय को पूर्णत: संतुष्ट होना चाहिए कि यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि पीठासीन अधिकारी की ओर से पूर्वाग्रह की मजबूत संभावना है, अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री मौजूद है। यदि उक्त आधारों पर मामलों को अंतरित किया जाता है, यह वादकारों के बीच असंतुष्टि पैदा करेगा और घटिया वादकर ऐसे उपाय अपनाकर सुनवाई दीर्घकालिक करने अथवा कार्यवाही निपटाने का आशय रखेंगे यदि वे समानांतर कार्यवाही में अनुकूल आदेश पाने में विफल रहता है। आखिरकार, यदि न्यायालय मामला अनुज्ञात अथवा खारिज करता है, उक्त आदेश से प्रतिकूल रूप से प्रभावित वादकार को समस्त उपलब्ध आधारों पर समुचित न्यायालय के समक्ष इसे चुनौती देने का अधिकार है। याची किराएदार के विरूद्ध किराया नियंत्रक द्वारा पारित प्रतिकूल आदेश के कारण पूर्वाग्रह की आशंका मात्र कार्यवाही को किराया नियंत्रक से किसी अन्य प्राधिकारी को अंतरित करने का आधार नहीं है। असंतुष्ट वादकार द्वारा किए गए पूर्वाग्रह के तुच्छ, अमान्य एवं गैर जिम्मेदार अभिकथनों को अस्वीकार करना न्यायालय का कर्तव्य है, अधिक विशेषत: जब न्यायालय पाता है कि अंतरण आवेदन कार्यवाही नाकाम करने के आशय से दाखिल किया गया है। यदि ऐसे आधारों पर इप्सित अंतरण अनुज्ञात किया जाता है, यह न केवल न्याय का रास्ता अवरूद्ध करेगा बल्कि न्याय प्रशासन को गंभीर क्षति कारित करेगा।

6. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन, मैं रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ। इसे तद्नुसार प्रत्यर्थी सं॰ 3 को विधि के अनुरूप मामला के साथ अग्रसर होने के निर्देश के साथ खारिज किया जाता है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

भगीरथी उर्फ भागीरथी भगत

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 5659 of 2010. Decided on 2nd February, 2018.

खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957—धारा 5(1)—खनन पट्टा का प्रदान—आवेदन का अस्वीकरण—भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया अनुमोदन दिनांक 27.10.1989 का है—यह अनुमोदन शर्तहीन नहीं है बल्कि बॉक्साइट का खनन पट्टा प्रदान करने के लिए अनुमोदन प्रदान करते हुए भारत सरकार द्वारा अनेक शर्तें अधिरोपित की गयी थी—एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम, 1957 की धारा 5(1) के अधीन भारत सरकार द्वारा अनुमोदन प्रदान किए जाने के बीस वर्षों बाद याची अपने पक्ष में खनन पट्टा के प्रदान के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश इप्सित नहीं कर सकता है—रिट याचिका खारिज की गयी। (पैरा 3)

अधिवक्तागण.—Mr. Manish Kumar, For the Petitioner; Mr. Abhijeet Kumar Singh, For the Respondents.

आदेश

रिट याचिका में दिनांक 26.11.2009 के आदेश को चुनौती दी गयी है जिसके द्वारा याची को खनन पट्टा के प्रदान के लिए आवेदन अस्वीकार किया गया है।

2. याची ने बॉक्साइट एवं लेटराइट के खनन पट्टा के प्रदान के लिए 25.11.1986 को आवेदन दिया। यह आवेदन इस्पात एवं खान मंत्रालय द्वारा अनुमोदित किया गया था और इसका अनुमोदन दिनांक 27.10.1989 के पत्र के तहत बिहार सरकार को संसूचित किया गया था, किंतु, अभिधान वाद सं॰ 27 वर्ष 1988 जिसमें 27.3.1992 को व्यादेश का आदेश पारित किया गया था के लंबित रहने की दृष्टि में याची के पक्ष में खनन पट्टा का अंतिमकरण लंबित रखा गया था। याची खनन पट्टा के प्रदान के लिए अपना दावा प्रसंस्कृत करने को निर्देश इप्सित करते हुए रिट याचिका सी॰ डब्लू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 109 वर्ष 1998 (R) दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया। रिट याचिका की खारिजी के विरूद्ध याची ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 393 वर्ष 1999 (R) दाखिल किया जिसे भी 3.8.2000 को खारिज किया गया था। तत्पश्चात, याची ने अभिधान वाद सं॰ 27 वर्ष 1988 में मध्यक्षेप के लिए आवेदन दाखिल किया, किंतु, इसे दिनांक 21.11.2005 के आदेश द्वारा खारिज किया गया था। अंततः, जब अभिधान वाद सं॰ 27 वर्ष 1988, 22.12.2005 को खारिज किया गया था, सहायक खनन अधिकारी प्रत्यर्थी सं॰ 6 ने 6.2.2006 को याची को खनन पट्टा के प्रदान के लिए खान निदेशालय को आवेदन अग्रसारित किया। जब खनन पट्टा के प्रदान के लिए उसके आवेदन पर अंतिम निर्णय नहीं लिया गया था, याची डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1769 वर्ष 2007 में इस न्यायालय के पास आया जिसे दिनांक 14.8.2008 के आदेश द्वारा प्रधान सचिव, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग को तीन माह के भीतर मामला में निर्णय लेने के निर्देश के साथ निपटाया गया था। किंतु, प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा निर्णय नहीं लिया गया था जिसने याची को न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन आवेदन दाखिल करने के लिए मजबूर किया। इस चरण पर, सरकार के प्रत्यर्थी सचिव द्वारा दिनांक 26.11.2009 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

3. रिट याचिका (पैराग्राफ सं॰ 25) में याची द्वारा अभिवचनित विनिर्दिष्ट मामला यह है कि प्रत्यर्थियों को खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 5(1) के अधीन भारत सरकार

द्वारा प्रदान किए गए अनुमोदन के निबंधनानुसार खनन पट्टा के प्रदान के लिए निर्णय लेना चाहिए। इस संदर्भ में, यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया अनुमोदन 27.10.1989 का है। यह अनुमोदन शर्तहीन नहीं है बल्कि बॉक्साइट का खनन पट्टा प्रदान करने के लिए अनुमोदन प्रदान करते हुए भारत सरकार द्वारा अनेक शर्तें अधिरोपित की गयी है। एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम, 1957 की धारा 15(1) के अधीन भारत सरकार द्वारा अनुमोदन प्रदान किए जाने के बीस वर्ष बाद, हमारे मत में याची अपने पक्ष में खनन पट्टा के प्रदान के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश इप्सित नहीं कर सकता है, दिनांक 26.11.2009 के आक्षेपित आदेश में दर्ज कारणों को अतिरिक्त, पूर्वोक्त कारणों से मैं मामला में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ और तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति

बलदेव महतो एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 515 of 2010. Decided on 25th April, 2018.

सेवा विधि—नियुक्ति—लैन्ड लूजर योजना के अधीन नियोजन के लिए दावा का अस्वीकरण—प्रत्यर्थियों राज्य के पास प्रश्नगत गैर मजरूआ भूमि के सत्यापन के लिए अभिलेख उपलब्ध नहीं है—याचीगण को परियोजना अधिकारी के समक्ष दावा के समर्थन में समस्त प्रासंगिक दस्तावेजों को संलग्न करते हुए नया अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता दी गयी जो इसकी प्राप्ति पर प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा आरंभ की गयी योजनाओं/परिपत्रों/प्रासंगिक नियमों के अनुरूप समुचित आदेश पारित करेगा—याचीगण का अभ्यावेदन विनिश्चित करते हुए प्रत्यर्थीगण घटिया हाइपर टेक्निकलिटी का आधार अनदेखा करेंगे। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.—Mr. S.K. Sharma, For the Petitioners; Mr. Hardeo Pd. Singh, For the Res.-CCL Mr. Arup Kr. Dey, For the Res.-State.

प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति.—रिट आवेदन में याची ने अन्य बातों के साथ-साथ दिनांक 6.11.2008 के कार्यालय आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 7 ने ''लैन्ड लूजर योजना' के अधीन नियोजन के लिए याचीगण का दावा अस्वीकार कर दिया है और प्रत्यर्थियों को रिट आवेदन के पैराग्राफ 14 एवं 15 में यथा उल्लिखित 20 एकड़ मापवाली रैयती एवं गैरमजरूआ दोनों भूमि के अर्जन के विरूद्ध याचीगण को नियोजन देने का निर्देश देने की प्रार्थना आगे की गयी है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित तथ्य यह है कि भारत सरकार ने दिनांक 30.6.1981 के एस॰ ओ॰ सं॰ 2081 के तहत ग्राम रहवन एवं पचमो के याचीगण की भूमि सहित लगभग 3070 एकड़ माप वाली भूमि अर्जित किया किंतु इसके बदले उनको जब नियोजन नहीं दिया गया था, उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष डब्लू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2807 वर्ष 2007 दाखिल किया। जिसे याचीगण को प्राधिकारी के समक्ष आवेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए दिनांक 16.6.2008 के आदेश के तहत निपटाया गया था। पूर्वोक्त स्वतंत्रता के साथ याचीगण संबंधित प्राधिकारी के पास आए, जिसने दिनांक 6.11.2008 का

आक्षेपित आदेश इस आधार पर प्राप्त किया कि याचीगण/दावेदारगण नियोजन के लिए लैन्ड लूजर योजना के अधीन आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने में विफल रहे हैं।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ के॰ शर्मा और प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता श्री हरदेव प्रसाद सिंह तथा प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान जी॰ पी॰ I के ए॰ सी॰ श्री अरूप कुमार डे सुने गए।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश पारित किए जाने के बाद याचीगण ने 11.79 एकड़ माप वाली याचीगण की रैयती भूमि के अर्जन के लिए मुआवजा के भुगतान के संबंध में मुआवजा मामला अभिलेख संलग्न करते हुए अभ्यावेदन और ग्राम रहवन की गैरमजरूआ भूमि के रजिस्टर II की प्रति दाखिल किया किंतु आज की तिथि तक उस पर आदेश पारित नहीं किया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे जोरदार कथन किया है कि डब्लू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 515 वर्ष 2010 में दाखिल दिनांक 15 फरवरी, 2011 के प्रति शपथपत्र में प्रत्यर्थियों ने स्वीकर किया है कि मुआवजा के बदले नगद मुआवजा के भुगतान का निर्णय किया गया था, किंतु अब प्रत्यर्थियों ने नया अभिवचन किया है कि याचीगण की भूमि उपयोगिता क्षेत्र में नहीं आती है ताकि याचीगण के वैध दावा से इनकार किया जा सके।

5. इसके विरूद्ध, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण की भूमि दो भिन्न अधिसूचनाओं के अधीन अर्जित की गयी थी, पहली दिनांक 15.5.1996 के एस॰ ओ॰ सं॰ 1754 के तहत जिसमें याचीगण की 0.765 एकड़ मापवाली भूमि अर्जित की गयी थी जो नियोजन के किसी दावा पर विचार करने के लिए अपर्याप्त थी और दूसरा दिनांक 30.6.1981 के एस॰ ओ॰ सं॰ 2082 के तहत जो पाँच वर्षों के उपयोगिता क्षेत्र के परे है; इस दशा में नियोजन नहीं किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि जहाँ तक 10 एकड़ भूमि का संबंध है, स्वयं याचीगण ने कथन किया कि यह गैर मजरूआ भूमि है, अत: राज्य सरकार को इसका दर्जा देना है।

6. प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदन का उत्तर देते हुए याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण दिनांक 15.5.1996 के एस॰ ओ॰ सं॰ 1754 के तहत किए गए अर्जन के लिए नियोजन का दावा नहीं कर रहे हैं बल्कि उन्होंने अपना दावा केवल दिनांक 30.6.1981 के एस॰ ओ॰ सं॰ 2082 तक सीमित किया है।

7. प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रश्नगत गैरमजरूआ भूमि के सत्यापन के लिए प्रत्यर्थी राज्य के पास अभिलेख उपलब्ध नहीं है किंतु आश्वासन देते हैं कि यदि सत्यापन के लिए आवेदन दिया जाएगा, इसे तुरन्त सत्यापित किया जाएगा और प्राधिकारी के पास भेजा जाएगा।

8. परस्पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विस्तारपूर्वक किए गए निवेदनों की दृष्टि में, याचीगण को अपने दावा के समर्थन में समस्त प्रासंगिक दस्तावेजों को संलग्न करते हुए इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी सं॰ 7 के समक्ष नया आवेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता के साथ रिट आवेदन निपटाया जाता है जो इसकी प्राप्ति पर प्रासंगिक नियमों/परिपत्रों/प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा शुरू की गयी योजनाओं के अनुरूप तत्पश्चात आठ सप्ताह की अवधि के भीतर समुचित आदेश पारित करेंगे। यह आशा की जाती है कि याचीगण का अभ्यावेदन विनिश्चित करते हुए प्रत्यर्थीगण घटिया हाइपर टेक्निकलिटी को आधार अनदेखा करेंगे।

9. पूर्वोक्त संप्रेक्षण एवं निर्देश के साथ रिट आवेदन निपटाया जाता है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

धीरज कुमार

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 7086 of 2016. Decided on 13th March, 2018.

झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004—नियम 5, 11 एवं 62—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—खनन पट्टा की समाप्ति—वर्तमान रिट याचिका तथ्यों के विवादित प्रश्नों को अंतर्ग्रस्त करती है क्योंकि एक ओर याचीगण ने प्राख्यान किया है कि ग्राम सभा द्वारा दी गयी सहमति वास्तविक थी और दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों ने प्रतिवाद किया है कि यह कूटरचित थी—ग्रामीणों द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि क्रशर मशीन चलाए जाने के कारण ग्रामीण चिरकालिक बीमारियों से पीड़ित हो रहे हैं—वर्तमान मामला मुख्यतः ताथ्यिक विनिश्चयकरण अंतर्ग्रस्त करता है—चूँकि याची के पास नियमावली 2004 के नियम 62 के अधीन प्रभावकारी वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है, न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करने का इच्छुक नहीं है—रिट याचिका अपोषणीय के रूप में खारिज की गयी। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. Rahul Kumar, For the Petitioner; Mr. Abhay Prakash, For the State.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका सहायक जिला खनन अधिकारी, खूँटी (प्रत्यथी सं॰ 4) द्वारा जारी दिनांक 1.12.2016 के पत्र सं॰ 643 में अंतर्विष्ट आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची का पट्टा समाप्त किया गया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि बिहार राज्य ने मौजा पटरायूर के भूखंड सं॰ 681 (भाग) में 6 एकड़ मापवाले क्षेत्र में पत्थरों के खनन के लिए 10 वर्षों की अवधि के लिए याची के पक्ष में दिनांक 24.4.1999 का खनन पट्टा निष्पादित किया था और इसे समय-समय पर नवीकृत किया गया था। क्षेत्रीय अधिकारी, झारखंड राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, राँची ने दिनांक 14.5.2016 के अपने पत्र सं॰ 913 के तहत दिनांक 14.5.2016 का संयुक्त रिपोर्ट यह कथन करते हुए दाखिल किया कि खनन गतिविधि के कारण उक्त खान के निकट के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को हानि कारित नहीं की जाएगी। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने दिनांक 21.6.2016 के पत्र सं॰ 329 के तहत याची पर कारण बताओ नोटिस तामील किया कि झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 (संक्षेप में जे॰ एम॰ एम॰ सी॰ नियमावली, 2004) के नियम 5 एवं 27 की दृष्टि में शेष अवधि के लिए उसको प्रदान किया गया खनन पट्टा क्यों नहीं समाप्त किया जाए। याची ने 20.9.2016 को अपना उत्तर दाखिल किया। किंतु दिनांक 1.12.2016 के पत्र सं॰ 643 के तहत उसे प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा सूचित किया गया था कि उसका खनन पट्टा प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दिनांक 26.11.2016 के आदेश के तहत समाप्त कर दिया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अनुज्ञप्ति के रद्दकरण का आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में पारित किया गया है क्योंकि याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया है और उसके कारण बताओ के उत्तर पर विचार नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी प्राधिकारी का आदेश पूर्णतः यांत्रिक है और विवेक

के गैर इस्तेमाल से पीड़ित है। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने यंत्रवत तरीके से याची के पट्टा की समाप्ति के लिए अनावश्यक कारणों को उद्धृत किया है, जैसे स्थानीय लोगों की टी॰ बी॰ से मौतें हो रही है।

3. प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान ए॰ सी॰ निवेदन करते हैं कि वर्तमान रिट याचिका पोषणीय नहीं है क्योंकि याची ने जे॰ एम॰ एम॰ सी॰ नियमावली, 2004 के नियम 62 के अधीन उपलब्ध वैकल्पिक उपचार नि:शेष नहीं किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 31 मई, 2014 के गजट अधिसूचना में यथासंशोधित जे॰ एम॰ एम॰ सी॰ नियमावली 2004 के नियमों 5 एवं 11 में यथा अंतर्विष्ट प्रावधान में यह स्पष्टत: प्रतिपादित किया गया है कि खनन पट्टा के प्रदान के पहले पर्यावरण अनापत्ति तथा ऑपरेट करने की सहमति एवं ग्राम सभा की सहमति जैसी शर्तें परिपूर्ण की जाती है। आगे यह निवेदन किया गया है कि ग्राम सभा, पटरायूर खूँटी के सदस्यों से दिनांक 11.2.2016 का परिवाद प्राप्त किया गया था जिसके द्वारा कम से कम 85 ग्रामीणों ने कथन किया है कि याची द्वारा प्राप्त की गयी ग्राम सभा की सहमति कूट रचित है और इसे रद्द किया जाना चाहिए। उपायुक्त, खूँटी ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 के समक्ष लंबित परिवाद पर विचार करने के लिए कमिटी गठित किया था। कमिटी ने 2.6.2016 को यह कथन करते हुए जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किया कि स्थल जाँच में यह सामने आया कि आरंभ में केवल कुछ सदस्यों द्वारा ग्राम सभा की सहमति दी गयी थी। वस्तुत: क्षेत्र के ग्रामीण पत्थर तोड़े जाने की अनुमति नहीं दे रहे हैं और प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने याची को सम्यक अवसर प्रदान करने के बाद दिनांक 1.2.2016 का आक्षेपित पत्र जारी किया है। अत: आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए विरोधी प्रतिवाद उपदर्शित करेंगे कि वर्तमान रिट याचिका तथ्यों के विवादित प्रश्नों को अंतर्ग्रस्त करती है क्योंकि एक ओर, याची ने प्राख्यान किया है कि ग्राम सभा द्वारा दी गयी सहमति वास्तविक थी और दूसरी ओर प्रत्यर्थियों ने प्रतिवाद किया है कि यह कूटरचित थी। ग्रामीणों द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि क्रशर मशीन चलाए जाने के कारण गाँव वाले चिरकालिक बीमारियों से पीड़ित हो रहे हैं जिससे याची ने इनकार किया है। इस प्रकार, वर्तमान मामला मुख्यत: ताथ्यिक विनिश्चयकरण अंतर्ग्रस्त करता हैं चूँकि याची को नियमावली 2004 के नियम 62 के अधीन प्रभावकारी वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है, यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण रिट अधिकारिता का प्रयोग करने का इच्छुक नहीं है।

5. रिट याचिका इस चरण पर अपोषणीय के रूप में खारिज की जाती है। किंतु याची विधि के अधीन यथा प्रावधानित प्रत्यर्थियों के कार्रवाई के विरूद्ध समुचित रास्ता अपनाने के लिए स्वतंत्र है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

बाबूलाल मुर्मू

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No. 427 of 2004. Decided on 17th April, 2018.

सत्र मामला सं॰ 28 वर्ष 1991 (गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 260 वर्ष 1988, जी॰ आर॰ सं॰ 2357 वर्ष 1988 के तत्सम, से उद्भूत होने वाला) में प्रथम अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट-III, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 26.2.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 27.2.2004 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323 एवं 458—घोर उपहति एवं प्रच्छन्न गृह अतिचार—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307 के अधीन अपराध से दोषमुक्ति—एकमात्र सामग्री जो अपीलार्थी के विरूद्ध है, सूचक की पत्नी का बयान है—वह प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय उपस्थित थी किंतु अपीलार्थी का नाम प्राथमिकी में उल्लेख नहीं किया गया है—भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 458 एवं 323 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा सकती है चूँकि सूचक की पत्नी का परिसाक्ष्य सत्य के रूप में स्वीकार योग्य नहीं है और अपीलार्थी के विरूद्ध सामग्री नहीं है—दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश अपास्त किया गया—अपील अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 9, 20 एवं 21)

अधिवक्तागण.—M/s Gautam Kumar, R. C. Sahu, Renuka Trivedi, For the Appellant; Mr. Rakesh Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील (गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 260 वर्ष 1988, जी॰ आर॰ सं॰ 2357 वर्ष 1988 के तत्सम से उद्भूत होनेवाले) सत्र विचारण सं॰ 28 वर्ष 1991 विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 26.2.2004 की दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 27.2.2004 के दंडादेश के विरूद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा एकमात्र अपीलार्थी बाबूलाल मुर्मू को भारतीय दंड संहिता की धारा 458 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और 5 वर्षों का कठोर कारावास और 2000/- रुपयों का जुर्माना अधिनर्णीत किया है और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया है और दोनों दंडादेशों को समवर्ती रूप से चलने का निर्देश दिया गया है। किंतु, अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया गया है।

दोषसिद्धि के पूर्वोक्त निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध इस न्यायालय में वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

3. सूचक यमुना प्रसाद सिंह द्वारा 14.10.1988 को दाखिल प्राथमिकी में यथा अभिकथित अभियोजन मामला यह है कि 13.10.1988 को रात्रि पूर्वाह्न 1.30 बजे दो तीन व्यक्ति दरवाजा पर आए और हल्ला किया जिस पर उसकी पत्नी हित कुमारी (अ॰ सा॰ 1) ने दरवाजा खोला और तत्पश्चात अभियुक्तगण घर में घुस गए। उन्होंने सूचक के मस्तक एवं मुख पर लाठी एवं पत्थर से प्रहार किया जो घायल हो गया और गिर गया। उसकी पत्नी द्वारा हमला करने पर अभियुक्तगण भाग गए। सूचक ने विगत 10-15 दिनों से भूमि विवाद के संबंध में नरेश सिंह के विरूद्ध अभिकथित किया है क्योंकि वह इसे बेचना नहीं चाहता था। सूचक को संदेह है कि नरेश सिंह के व्यक्तियों ने देर रात घर में घुसकर ऐसा अपराध किया है।

सूचक की लिखित रिपोर्ट के आधार पर पुलिस ने दिनांक 13.10.1988 का गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 260 वर्ष 1988 भारतीय दंड संहिता की धाराओं 452/323/307 के अधीन संस्थित किया।

4. अन्वेषण के बाद, पुलिस ने अबुल कलाल अंसारी एवं बाबूलाल मुर्मू के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 458/307/323 के अधीन दिनांक 31.10.1988 का आरोप-पत्र सं॰ 203 वर्ष 1988 दाखिल किया।

5. अपराध का संज्ञान लिया गया है और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया है, जहाँ दोनों अभियुक्तों अबुल कलाल अंसारी एवं बाबूलाल मुर्मू के विरूद्ध 3 जून, 1992 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 307, 458 एवं 323 के अधीन आरोप विरचित किया गया है। किंतु बाद में, अब्दुल कलाल अंसारी ने इस मामला का पैरवी छोड़ दिया, अत: उसका मामला वर्तमान अपीलार्थी से अलग किया गया है।

6. अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल 5 गवाहों का परीक्षण किया है और अनेक दस्तावेजों को भी दिया है जिसे प्रदर्शित किया गया है।

सूचक की पत्नी हित कुमारी का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है। वह घटना की चश्मदीद गवाह है। मुख्य परीक्षण के दौरान उसने कथन किया है कि वह दो व्यक्तियों अब्दुल कलाल अंसारी एवं बाबूलाल मुर्मू के रूप में पहचान सकी थी जो घर में घुसे थे और उसके पति पर पत्थर एवं डंडा से प्रहार किया किंतु पड़ोसियों के आने के बाद अभियुक्तगण भाग गए। उसने मुख्य परीक्षण के पैराग्राफ 2 पर आगे कथन किया कि अभियुक्तों को कमरा में बंद कर दिया गया था, किंतु बाद में उन्होंने दरवाजा तोड़ दिया और भाग गए। उसने अपने मुख्य परीक्षण के पैरा 3 में इस सीमा तक कथन किया है कि जब पुलिस अधिकारी आया और तत्पश्चात वह पुलिस थाना गयी। प्रतिपरीक्षण के दौरान पैरा 6 में यह प्रतीत होता है कि यह गवाह अपने पति के साथ पुलिस थाना गयी जहाँ उसने अभियुक्तों का नाम प्रकट किया। उसको सुझाव दिया गया कि पशु चराने के संबंध में कुछ विवादों के कारण अभियुक्तों को झूठा आलिप्त किया गया है।

7. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि गवाह अ॰ सा॰ 1 हित कुमारी का बयान विश्वसनीय नहीं है। यदि उसने अभियुक्तों को पहचाना है और अभियुक्तों का नाम प्रकट किया है, तब कोई कारण नहीं है कि क्यों प्राथमिकी केवल किसी नरेश सिंह के विरूद्ध संदेह दर्शाते हुए अज्ञात के विरूद्ध दर्ज की गयी है।

8. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 6 के परिशीलन से पुलिस थाना में अपने पति द्वारा हस्ताक्षरित प्राथमिकी दर्ज करने के समय पर उसकी उपस्थिति प्रकट है और इस दशा में उसका बयान पश्चातवर्ती विचार है जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 458 एवं 323 के अधीन अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने के लिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है जिसके प्रति राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस गवाह ने आरंभ में ही नाम प्रकट किया है और इस दशा में उसके बयान पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है।

9. ज्योति शंकर सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है। वह अनुश्रुत गवाह है।

10. यमुना प्रसाद सिंह सूचक और मामला का पीड़ित है जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। उसने प्रदर्श 1 के रूप में अपना फर्दबयान सिद्ध किया है। इस गवाह ने कथन किया है कि वह किसी अभियुक्त को पहचान नहीं सका था क्योंकि अभियुक्तों ने उसकी आँखों पर टॉर्च का रोशनी डाला था। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण, में स्पष्टत: कथन किया है कि उसका न तो नरेश सिंह के साथ विवाद है न ही उसने नरेश सिंह को पहचाना है और फर्दबयान में गलत रूप से उल्लेख किया गया है कि उसका नरेश सिंह के साथ विवाद है। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैरा 6 में आगे कथन किया है कि उसे जानकारी नहीं है कि अबुल कलाल का इस गवाह की दुकान के निकट कोई भूमि है और न ही यह सत्य है कि अबुल के पशुओं ने फसल बर्बाद किया है।

11. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कथन किया है कि अ॰ सा॰ 3 सूचक के संपूर्ण साक्ष्य के परिशीलन पर अपीलार्थी के विरूद्ध कुछ नहीं है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने भी पूर्वोक्त तथ्य विवादित नहीं किया है।

12. मामला के आई॰ ओ॰ बबन सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया है जिसने प्रदर्श 2 के रूप में कॉंसटेबल कन्हैया उपाध्याय द्वारा प्राथमिकी पर पृष्ठांकन सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 3 के रूप में औपचारिक प्राथमिकी सिद्ध किया है। इस गवाह ने कथन किया है कि अभियुक्त को सूचक की पत्नी के बयान जिसमें उसने अभियुक्तों का नाम लिया है पर गिरफ्तार किया गया है। मुख्य परीक्षण के दौरान गवाह का बयान आपत्ति के साथ दर्ज किया गया था। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण में स्पष्टत: कथन किया है कि वह काफी समय बीतने के कारण अभियुक्तों को पहचान नहीं सका था।

13. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सूचक एवं आई॰ ओ॰ का ऐसा बयान स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि आई॰ ओ॰ ने महिला जो प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर उपस्थित थी के बयान का संवीक्षण करके समुचित रूप से मामला का अन्वेषण नहीं किया है। किंतु प्राथमिकी में ऐसे व्यक्तियों के नाम उल्लिखित नहीं किए गए हैं। ऐसी परिस्थितियों के अधीन, अन्वेषण अधिकारी को अन्वेषण के दौरान सतर्क रहना चाहिए था। किंतु आई॰ ओ॰ समुचित संपुष्टिकरण के लिए सामग्री संग्रहित करके अन्वेषण के दौरान अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में पूर्णत: विफल रहा है।

14. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि गवाह द्वारा अभियुक्तों का नाम लिया गया है, इस दशा में अन्वेषण अधिकारी अभियुक्तों के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल करने में न्यायोचित था।

15. तारा पदो कुमार, अधिवक्ता लिपिक, का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है। यह गवाह औपचारिक गवाह है और सूचक का उपहति रिपोर्ट सिद्ध किया है जिसे डॉ॰ वी॰ के॰ वर्मा द्वारा जारी किया गया है और इसे प्रदर्श 4 के रूप में सिद्ध किया गया है।

16. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद अभियुक्त/अपीलार्थी का बयान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था जहाँ उसने अपने विरूद्ध साक्ष्य से इनकार किया है। बचाव द्वारा साक्ष्य नहीं दिया गया है।

17. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम कुमार द्वारा निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी को इस मामला में झूठा आलिप्त किया गया है क्योंकि उसके विरूद्ध तर्कपूर्ण सामग्री नहीं है, अपीलार्थी का नाम भी प्राथमिकी में नहीं आता है और केवल सूचक की पत्नी के पश्चातवर्ती बयान के आधार पर अपीलार्थी को अभियुक्त बनाया गया है। प्राथमिकी के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि किसी नरेश सिंह के विरूद्ध कुछ संदेह है, किंतु सूचक की पत्नी ने अन्वेषण के दौरान अपीलार्थी सहित दो व्यक्तियों का नाम लिया है। यद्यपि प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर, जैसा मुख्य परीक्षण के पैरा 3 और प्रतिपरीक्षण के पैरा 6 से यह प्रतीत होता है कि यह गवाह हित कुमारी, सूचक की पत्नी प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर उपस्थित थी, किंतु प्राथमिकी में ऐसे व्यक्ति का नाम नहीं आता है और इस दशा में किसी सामग्री के बिना ऐसे आधार पर अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 458 एवं 323 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है और इस दशा में, दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश इस माननीय न्यायालय द्वारा अपास्त किए जाने योग्य है।

18. राज्य के विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक राकेश कुमार ने जोरदार तर्क एवं निवेदन किया है कि दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश न्यायोचित है और इस माननीय न्यायालय के

हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 458 एवं 323 के अधीन दोषसिद्ध किया है क्योंकि अ॰ सा॰ 1 ने आई॰ ओ॰ के समक्ष दो अभियुक्तों का नाम लिया है। विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निष्पक्षत: निवेदन किया है कि इन व्यक्तियों का नाम प्राथमिकी में आना चाहिए था क्योंकि अ॰ सा॰ 1 प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर उपस्थित था।

19. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम कुमार और राज्य की ओर से विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ श्री राकेश कुमार सुने गए और अभिलेख के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि एकमात्र सामग्री जो अपीलार्थी के विरूद्ध है अ॰ सा॰ 1 (हित कुमारी) का बयान है जो सूचक की पत्नी है। अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 1 प्राथमिकी दर्ज किए जाने के समय पर उपस्थित थी, किंतु अपीलार्थी का नाम प्राथमिकी में उल्लिखित नहीं किया गया है बल्कि किसी नरेश सिंह की ओर कुछ संदेह दर्शाया गया है जिसे बाद में स्वयं सूचक द्वारा प्रतिपरीक्षण के दौरान किए गए अभिकथन से विमुक्त किया गया है। जब मुख्य परीक्षण के दौरान अ॰ सा॰ 1 द्वारा न्यायालय में अपीलार्थी का नाम लिया गया था, आपत्ति की गयी थी और विद्वान विचारण न्यायालय ने इसे आपत्ति के साथ दर्ज किया है, अभियोजन अपीलार्थी के विरूद्ध समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपना मामला सिद्ध करने के लिए कर्तव्यबद्ध था जिसमें अभियोजन बुरी तरह विफल रहा।

19A. पूर्वोक्त कारणों से, इस न्यायालय का मत है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 458 एवं 323 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा सकती है क्योंकि अ॰ सं॰ 1 का परिसाक्ष्य सत्य के रूप में स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है और अपीलार्थी के विरूद्ध कोई अन्य सामग्री नहीं है और इस दशा में, गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 260 वर्ष 1988, जी॰ आर॰ सं॰ 2357 वर्ष 1988 से उद्भूत होने वाले सत्र मामला सं॰ 28 वर्ष 1991 में विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 26.2.2004 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दिनांक 27.2.2004 का दंडादेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

20. परिणामस्वरूप, अपीलार्थी जो जमानत पर है को जमानत बंधपत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

21. परिणामस्वरूप, अपील अनुज्ञात की जाती है।

22. इस निर्णय की प्रति के साथ एल॰ सी॰ आर॰ संबंधित विचारण न्यायालय को तुरन्त भेजा जाए।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

चंद्रिका प्रसाद एवं अन्य

बनाम

लालजी साव

W.P. (C) No. 4886 of 2015. Decided on 15th February, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 41 नियम 27 एवं आदेश 7 नियम 14 (3)—अतिरिक्त साक्ष्य—सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII के नियम 14 के उपनियम (3) के अधीन पक्षों द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य लेने के लिए आवेदन दिया जा सकता है—किंतु, इस प्रावधान के अधीन

न्यायालय की शक्ति पक्षों के अभिवचनों तक सीमित होनी होगी—दस्तावेज जिसका पक्षों के अभिवचनों में निर्देश नहीं है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14(3) के अधीन शक्ति के प्रयोग में लोक दस्तावेजों के मामलों के सिवाए अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता है और, वह भी, यदि दस्तावेज पक्षों के अभिवचनों के संदर्भ में प्रासंगिक है—अतिरिक्त साक्ष्य लेने के लिए आवेदन के अस्वीकरण में हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है—रिट याचिका खारिज की गयी।

(पैराएँ 4 एवं 5)

निर्णयज विधि.—(2008) 8 SCC 511—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Sanjay Kumar Tiwary, For the Petitioners; Mr. Sanjay Kumar Pandey, For the Respondent.

आदेश

अभिधान अपील सं॰ 9 वर्ष 2012 में सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLI नियम 27(1)(aa) के अधीन आवेदन दाखिल करके स्वयं विचित्र प्रक्रिया अपनाते हुए याचीगण दिनांक 10.9.2015 के आदेश द्वारा उक्त आवेदन के अस्वीकरण से व्यथित है।

2. याचीगण द्वारा ग्राम हरिहरपुर, जिला गढ़वा में भूखंड सं॰ 1228 से गठित विक्रेता मोस्मात बुधनी साहुन के अभिधान पर आधारित अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा की डिक्री के लिए अभिधान वाद सं॰ 29 वर्ष 1999 संस्थित किया गया था। अभिकथित रूप से मोस्मात बुधनी साहुन को प्रतिरूपण करनेवाले व्यक्ति द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख सं॰ 6641 वर्ष 1975 को भी चुनौती दी गयी थी। वाद दिनांक 20.3.3012 के निर्णय द्वारा खारिज किया गया था। व्यथित होकर, याचीगण ने अभिधान अपील सं॰ 9 वर्ष 2012 दाखिल किया। लंबित अपील में, अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में विक्रय विलेख सं॰ 188 वर्ष 1992 लेने के लिए 3.12.2013 को आवेदन दाखिल किया गया था। दिनांक 10.9.2015 के आक्षेपित आदेश द्वारा यह आवेदन अस्वीकार किया गया है।

3. ''उत्तर-पूर्व रेलवे प्रशासन, गोरखपुर बनाम भगवान दास'', (2008)8 SCC 511, में निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मामला में न्यायोचित निर्णय पर आने के लिए विक्रय विलेख सं॰ 188 वर्ष 1992 साक्ष्य का महत्वपूर्ण टुकड़ा है जिसे अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिलेख पर लिया जाना चाहिए था। यह प्रतिवाद किया गया है कि जब एक बार कूट रचना का अभिवचन किया जाता है, वादीगण को अपना मामला सिद्ध करने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

4. सी॰ पी॰ सी॰ का आदेश XLI नियम 27 आज्ञा देता है कि अपीलीय चरण पर अतिरिक्त साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दी जाएगी। किंतु नियम 27 के खंडों (a), (aa) एवं (b) के अधीन अपवाद निकाले गए हैं। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14 के अधीन वादी को वादपत्र की प्रस्तुती के समय पर दस्तावेज प्रस्तुत करने की आवश्यकता है जिस पर दावा आधारित है और यदि ऐसा दस्तावेज वादी के कब्जा में नहीं है, उसे वाद पत्र में प्रकथन करने की आवश्यकता है कि उक्त दस्तावेज किसके कब्जा में है। अभिधान वाद सं॰ 29 वर्ष 1999 में विक्रय विलेख सं॰ 188 वर्ष 1992 की चर्चा भी नहीं है। वाद में वादीगण द्वारा दी गयी चुनौती विक्रय विलेख सं॰ 6641 वर्ष 1975 को है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14 के उपनियम (3) के अधीन पक्षों द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य लेने के लिए आवेदन दिया जा सकता है, किंतु इस प्रावधान के अधीन न्यायालय की शक्ति पक्षों के अभिवचनों तक सीमित होनी होगी। दस्तावेज जिसका पक्षों के अभिवचनों में निर्देश नहीं है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 14(3) के अधीन शक्ति के प्रयोग में लोक दस्तावेज के मामलों के सिवाए अभिलेख पर नहीं लिया जा सकता है और, वह भी, यदि दस्तावेज की पक्षों के अभिवचनों के संबंध में प्रासंगिकता है। नि:संदेह, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLI नियम

27 के अधीन आवेदन को अंतिम सुनवाई के समय पर विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है। स्वीकृत तथ्यों पर, जब यह पाया गया है कि वादीगण द्वारा प्रस्तुत वादपत्र में विक्रय विलेख सं॰ 188 वर्ष 1992 का निर्देश नहीं है, अतिरिक्त साक्ष्य लेने के लिए आवेदन के अस्वीकरण में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

5. रिट याचिका में सार नहीं पाते हुए, यह खारिज की जाती है।

माननीय एच॰ सी॰ मिश्रा एवं बी॰ बी॰ मंगलमूर्ति, न्यायमूर्तिगण

संजय गारी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 564 of 2006. Decided on 8th March, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 567 वर्ष 2005 में न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 7.4.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 12.4.2006 के दंडादेश विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या—सामान्य आशय—आजीवन कारावास—चश्मदीद गवाह द्वारा अभियोजन मामला का समर्थन किया गया—इस गवाह ने उसके द्वारा कोई प्रहार अभिकथित करते हुए अपने मुख्य परीक्षण में एक अभियुक्त का नाम नहीं लिया है—अन्य दो चश्मदीद गवाहों ने यह कथन किए बिना कि किस अभियुक्त ने किस हथियार से शरीर के किस भाग पर मृतक पर प्रहार किया था, समस्त अभियुक्तों के विरूद्ध प्रहार का सामान्य अभिकथन किया है—साक्ष्य कि मृतक पर कम से कम दो अभियुक्तों द्वारा टांगी से प्रहार किया गया था, डॉक्टर के साक्ष्य द्वारा संपुष्ट बिल्कुल नहीं किया गया है—स्वीकृत दुश्मनी के कारण अभियुक्तों को झूठा आलिप्त किए जाने से इनकार नहीं किया जा सकता है—अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अभियुक्त-अपीलार्थियों के विरूद्ध आरोप सिद्ध करने में विफल रहा है—अपीलार्थीगण कम से कम संदेह के लाभ के हकदार हैं—इस दशा में, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश अपास्त किया जाता है।

(पैराएँ 16 एवं 17)

अधिवक्तागण.—Mr. Sanjay Kumar, For the Appellant No.1; Mr. Rajesh Kumar, Amicus Curiae, For the Appellant No.2; Mr. Birendra Burman, For the Appellant No.3; Mr. Kripa Shankar Nanda, For the Appellant No.4; Mr. Sanjay Kumar Pandey No.2, For the Respondent.

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.—अपीलार्थी अकला गारी उर्फ अख्तना के लिए न्यायालय द्वारा नियुक्त विद्वान न्यायमित्र सहित अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ताओं एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. आरंभ में ही यह कथन किया जा सकता है कि अपीलार्थियों में एक हुसना गारी की मृत्यु अपील लंबित रहने के दौरान हो गयी और तद्नुसार आई॰ ए॰ सं॰ 241 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 14.2.2007 के आदेश द्वारा उक्त अपीलार्थी के विरूद्ध अपील उपशमनित हो गयी।

3. जीवित अपीलार्थीगण सत्र विचारण सं॰ 7.4.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं सत्र विचारण संख्या 567 वर्ष 2005 में विद्वान न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 12.4.2006 के दंडादेश से व्यथित हैं, जिसके द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपराध

का दोषी पाया गया है और दोषसिद्ध किया गया है। दंडादेश के बिन्दु पर सुनवाई पर अपीलार्थियों को उक्त अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

4. अभियोजन मामला 26.5.2005 को पूर्वाह्न 11.15 बजे आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची में दर्ज मृतक पटरास तिर्के के पुत्र सूचक दीपक तिर्के के फर्दबयान के आधार पर संस्थित किया गया था जिसमें यह कथन किया गया है कि उसी दिन प्रात: 7.30 बजे सूचक का पिता अर्थात पटरास तिर्के मोटरसाइकिल से अपने फार्म (बगान के रूप में वर्णित) गया था। फार्म में एक तालाब था जिसमें वे मछली पालन कर रहे थे और वह इनकी देखभाल करने गया था। प्रात: लगभग 8 बजे सूचक को सूचित किया गया था कि कुछ व्यक्ति फार्म में उसके पिता पर प्रहार कर रहे थे, जिस पर वह किसी मार्कस टिग्गा के साथ मोटरसाइकिल पर फार्म गया और उन्होंने देखा कि अभियुक्तगण अकला गारी एवं हुससा गारी उसके पिता को पकड़े हुए हैं और संजय गारी एवं कुशल टिग्गा उसपर टांगी से प्रहार कर रहे थे। सूचक को देखने पर अभियुक्तगण भाग गए। उसका पिता खून से लथपथ दर्द से छटपटा रहा था। उसे सूमो कार से आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ इलाज के लिए लाया गया था, किंतु इलाज के क्रम में उसकी मृत्यु हो गयी। फर्दबयान में यह कथन किया गया है कि घटना के लगभग छह माह पहले हुसना गारी, कुशल टिग्गा एवं इलियास टिग्गा ने गाँव के बीच में अवस्थित उसके पुराने घर में नुकसान कारित करते हुए रिष्टि किया था और कुशल टिग्गा उक्त घर हड़पना चाहता था और हुसना गारी सूचक का फार्म हड़पने का आशय रखता था। यह दावा करते हुए कि अभियुक्तगण अकला गारी, हुसना गारी, संजय गारी, कुशल टिग्गा एवं इलियास टिग्गा ने उसके पिता पर टांगी से प्रहार किया था और उसकी मृत्यु कारित किया, सूचक द्वारा फर्दबयान दिया गया था, जिसके आधार पर रातू पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 2005, जी॰ आर॰ सं॰ 1684 वर्ष 2005 के तत्सम, भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए पूर्वोक्त पाँचों अभियुक्तों के विरूद्ध संस्थित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने मामला में आरोप पत्र दाखिल किया।

5. मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किए जाने के बाद पाँचों अभियुक्तों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपराध के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किए गए थे और अभियुक्तों के निर्दोषिता के अभिवचन पर और विचारण किए जाने का दावा करने पर उनका विचारण किया गया था। विचारण के क्रम में, अभियोजन की ओर से नौ गवाहों का अन्वेषण अधिकारी एवं डॉक्टर जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था सहित परीक्षण किया गया है।

6. अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए गवाहों में से अ॰ सा॰ 1 मार्कस टिग्गा, अ॰ सा॰ 8 महादेव एवं अ॰ सा॰ 9 जोहान टिग्गा ने अभियुक्तों के विरूद्ध कुछ भी कथित नहीं किया है, यद्यपि उन्होंने मृतक को घायल दशा में देखने का दावा किया। अ॰ सा॰ 1 मार्कस टिग्गा मृतक के मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट का गवाह भी है और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर उसका हस्ताक्षर उसके पहचानने पर प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया था। इस गवाह को पक्षद्रोही घोषित किया गया था, क्योंकि उसने अपने साक्ष्य में अभियुक्तों को नामित नहीं किया था। अ॰ सा॰ 4 मसीह चरण टिग्गा अनुश्रुत गवाह है जो घटना की तिथि पर गाँव में उपस्थित नहीं था और उसने घटना के बारे में कुछ भी कथित नहीं किया है। यह भी इंगित किया जा सकता है कि अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य में यह आया है कि मामला का सूचक अर्थात दीपक तिर्के की हत्या विचारण लंबित रहने के दौरान हो गयी थी। इस दशा में, सूचक का मामला में परीक्षण नहीं किया गया है।

7. अ॰ सा॰ 2 विलियन तिर्के मृतक का एक अन्य पुत्र है। उसने घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में मामला का समर्थन किया है। उसने कथन किया है कि घटना 26.5.2005 को प्रातः 7.30–8.00 बजे हुई थी। वह अपने घर में था जब कुछ बच्चे आए और सूचित किया कि उसके पिता पर प्रहार किया जा रहा था। यह सुनने पर वह मोटर साइकिल पर अपने फार्म गया और उसने देखा कि अकला एवं हुसना उसके पिता को पकड़े हुए हैं और कुशल टिग्गा एवं संजय गारी टांगी से उसके पिता पर प्रहार कर रहे है। इस गवाह को देखने पर अभियुक्तगण भागने लगे। उसका पिता गिर गया था और दर्द से छटपटा रहा था। तुरन्त कार लायी गयी जिसपर उसके पिता को आर॰ एम॰ सी॰ एच॰ लाया गया था जहाँ इलाज के क्रम में उसकी मृत्यु हो गयी। इस गवाह ने भी कथन किया है कि अभियुक्तों ने उसके पुराने घर में रिष्टि किया था और इसे नुकसान पहुँचाया और वे उसकी भूमि भी हड़पना चाहते थे। उसने अभियुक्तों को न्यायालय में पहचाना है। अपने प्रति परीक्षण में, इस गवाह ने कथन किया है कि प्रातः 7.30 बजे वह अपने बड़े भाई सहित अपने परिवार के सदस्यों के साथ अपने घर में उपस्थित था जो पहले मोटर साइकिल पर घटना स्थल गया। यह गवाह अपने बड़े भाई के पीछे गया था और जब वह फार्म पहुँचा, उसने अपने भाई एवं अनेक व्यक्तियों को वहाँ उपस्थित देखा। उसने कथन किया है कि फार्म पहुँचने में 2-3 मिनट का समय लगा होगा। अपने प्रति परीक्षण में, इस गवाह ने कथन किया है कि घटना उसकी अपनी भूमि पर हुई थी। कुशल टिग्गा, इलियास एवं संजय गारी टांगी से लैस थे, किंतु वह नहीं कह सकता था कि क्या समस्त तीनों अभियुक्तों ने उसके पिता पर प्रहार किया था। उसे जानकारी नहीं थी कि उसका पुराना घर किसके नाम में था और उसे यह जानकारी भी नहीं है कि उस घर के किराया का भुगतान जयमाशी जो कुशल का दादा था के नाम में किया जा रहा था। उसने इस सुझाव से इनकार किया कि उसका पुराना घर जयमाशी द्वारा उसके पिता को रहने के लिए दिया गया था। उसने अपने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि उक्त घर की भूमि कुशल के परिवार की थी। इस गवाह ने कथन किया है कि उसके फार्म में तालाब उसके दादा द्वारा खोदा गया था और तालाब के बगल में महावीर महतो की भूमि थी। उसके पास बस है जिसे वह अपने भाई के साथ चला रहा है और उसके भाई की राशन की दुकान भी है। अभियुक्त इलियास टिग्गा की ओर से अपने प्रतिपरीक्षण में इस गवाह ने यह कथन भी किया है कि उसका पिता उसकी मोटर साइकिल से फार्म गया था और यह गवाह भी दूसरी मोटरसाइकिल से फार्म गया था। उसने अपने पिता को फार्म की ओर जाते नहीं देखा था ओर इस दशा में, वह नहीं कह सकता था कि उसका पिता फार्म कब गया था। उसने यह कथन भी किया है कि उसका फार्म तालाब के पूर्वी भाग में अवस्थित है और पश्चिमी भाग में महावीर महतो की भूमि है। उसने यह कथन भी किया है कि गाँव में दो तालाब हैं और दूसरा तालाब भी उसके तालाब के निकट है। उसने यह कथन भी किया है कि घटना के बाद उसका पिता महावीर महतो की भूमि पर गिर गया था। उसने कथन किया है कि उसके घर एवं तालाब के बीच की दूरी पैदल 10 मिनट में तय की जा सकती थी और मोटरसाइकिल से दो-तीन मिनट में। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि उसने घटना नहीं देखा था और कि अभियुक्तों को झूठा फंसाया गया है।

8. अ॰ सा॰ 3 सनिचरवा ओराँव घटना का एक अन्य चश्मदीद गवाह है। इस गवाह ने कथन किया है कि घटना 26.5.2005 को प्रातः 8 बजे हुई थी। वह कुआँ में काम करने गया था, किंतु उस दिन समस्त व्यक्ति गाँव के कॉमन तालाब में मछली मारने में लगे हुए थे। उसने कथन किया है कि चूँकि मजदूर नहीं आए थे, वह भी उक्त तालाब में मछली मारने गया। उसने देखा कि अकला गारी, संजय गारी, हुसना गारी, कुशल टिग्गा एवं इलियास टिग्गा पटरास के साथ झगड़ा कर रहे थे और झगड़ा के

क्रम में उन्होंने टांगी से पटरास पर प्रहार किया। हल्ला होने पर पटरास तिर्के के परिवार के सदस्य भी वहाँ आए। उसने भी पटरास को उठाने में मदद किया था, जिसे राँची अस्पताल ले जाया गया था। उसने अभियुक्तों को न्यायालय में पहचाना है। अपने प्रतिपरीक्षण में, इस गवाह ने कथन किया है कि उसका घर घटना स्थल से लगभग आधा किलोमीटर पर अवस्थित है। वह पटरास के कुआँ में काम करने गया था, जो निर्माणाधीन था जिसमें पत्थर लगाया जाना था। चूँकि गाँव के कॉमन तालाब में मछली मारी जा रही थी, कुआँ में कोई 'काम नहीं हो रहा था। उसने कथन किया है कि सूचक का फार्म एवं तालाब कॉमन तालाब से दिखाई पड़ता था जो 150 फीट की दूरी पर था। उसने कथन किया है कि वह पटरास को बचाने नहीं जा सका था क्योंकि वह खाली हाथ था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि कॉमन तालाब से मृतक का तालाब दिखाई नहीं पड़ता था और वह घटना नहीं देख सका था। उसने अपने प्रतिपरीक्षण में यह कथन भी किया है कि दीपक तिर्के घटना स्थल पर पहुँचा था और तत्पश्चात उसका भाई विलियम तिर्के भी वहाँ पहुँचा। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि उसने घटना नहीं देखा था अथवा झूठा साक्ष्य दिया है।

9. अ॰ सा॰ 5 लखमा है जिसने कथन किया है कि घटना लगभग चार माह पहले प्रातः 7-8 बजे हुई थी। वह फार्म में पत्तियाँ चुन रही थी जब पटरास तिर्के फार्म में आया। उसने हल्ला सुना और जब वह उस स्थान की ओर जाने लगी, उसे अकला गारी द्वारा वहाँ जाने से रोका गया था। अकला हुसना, संजय, कुशल एवं इलियास के साथ था। अकला पटरास को धक्का दे रहा था और अन्य व्यक्ति उस पर प्रहार कर रहे थे। उन्होंने उस पर टांगी से भी प्रहार किया। वह वहाँ नहीं गयी थी और फार्म में रूकी रही। तत्पश्चात, पटरास का पुत्र दीपक तिर्के वहाँ आया और तत्पश्चात विलियम तिर्के एवं जोहान भी वहाँ आए। पटरास दर्द से छटपटा रहा था और वे कार से पटरास को अस्पताल ले गए जहाँ पटरास की मृत्यु हो गयी। उसने न्यायालय में अभियुक्तों को पहचाना है। अपने प्रति परीक्षण में, उसने कथन किया है कि वह पटरास तिर्के के फार्म में पत्तियाँ चुनने गयी थी और वह किसी तरीके से पटरास से संबंधित नहीं है। उसने कथन किया है कि फार्म के अंत में तालाब है और इसके बाद महावीर महतो की भूमि है। उसने कथन किया है कि महावीर महतो की भूमि फार्म के गेट से दिखाई पड़ता है। वह नहीं देख सकी थी कि किस अभियुक्त ने उस पर किस हथियार से प्रहार किया था किंतु उसने अकला को टांगी से लैस देखा था। वह अन्य अभियुक्तों के हाथ में हथियार नहीं देख सकी थी किंतु वे भी सशस्त्र थे। उसने कथन किया है कि वह फार्म में थी जब पटरास तिर्के वहाँ आया था। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण में कथन किया है कि जब दीपक तिर्के घटना स्थल पर पहुँचा था, प्रहार चल रहा था। गाँव के बड़े तालाब में मछली मारी जा रही थी और वहाँ अनेक लोग जमा थे किंतु वहाँ से कोई नहीं आया। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि पटरास उसका भाई था और उसने दीपक तिर्के एवं विलियम तिर्के के कहने पर झूठा साक्ष्य देने के सुझाव से इनकार किया है। अभियुक्त इलियास की ओर से उसका प्रति–परीक्षण उसके एवं पटरास के बीच संबंध के प्रति किया गया था किंतु उसने उनके साथ किसी संबंध से पूरा इनकार किया है। उसने यह कथन भी किया है कि बड़े तालाब से, पटरास का तालाब दिखाई पड़ता था। उसने कथन किया है कि दीपक तिर्के हाथ में राइफल लिए घटना स्थल पर आया था किंतु उसने गोली नहीं चलाया था। उसने झूठा साक्ष्य देने के सुझाव से इनकार किया है।

10. अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ चंद्रशेखर प्रसाद हैं जिन्होंने 26.5.2005 को अर्थात घटना की तिथि पर दोपहर 1.30 बजे मृतक की मृत शरीर का शव परीक्षण किया था और मृत शरीर पर निम्नलिखित उपहतियाँ पाया था:–

खरोंचः

(i) बाएँ पैर के पार्श्व भाग पर 7x½ cm x2x2 cm

(ii) दाएँ पैर के सामने के भाग पर 2x2 cm एवं 3x1cm

(iii) दायीं कोहनी के पीछे 1x½cm एवं ½x½ cm

(iv) दाएँ गाल पर 4x1 cm

विदीर्ण जख्मः–

(i) दाएँ अग्रमस्तक पर 5x2 cm x अस्थि तक गहरा

(ii) मस्तक के दाएँ आक्सीपीटल क्षेत्र पर 4x1 cm x सिर की खाल तक गहरा

(iii) मस्तक के बांए ऑक्सीपीटल क्षेत्र पर 2 x ½ cm अस्थि तक गहरा।

***आंतरिक.**–दाएँ फ्रंटों पेराटाइटल अस्थि में 5x3 cm माप वाले डिप्रेस्ड फ्रैक्चर के साथ दाएँ फ्रंटो–पेराइटल सिर की खाल का डिफ्यूज्ड कंट्यूजन था। दाएँ ऑक्सीपीटल अस्थि का क्रेक फ्रैक्चर एवं दाएँ लैम्ब्याडल सूचर का पृथक्करण था। ब्रेन का कंट्यूजन हुआ था और ब्रेन के दोनों हिस्सों पर सबड्यूरल रक्त एवं रक्त का धक्का मौजूद था।*

इस गवाह ने कथन किया है कि समस्त उपहतियाँ कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित, शायद टांगी के भोथरे भाग द्वारा, मृत्यु पूर्व प्रकृति की थी और मृत्यु मस्तक उपहतियों के कारण हुई थी। उन्होंने अपने लेखन एवं हस्ताक्षर में शव परीक्षण रिपोर्ट पहचाना है जिसे प्रदर्श 2 चिन्हित किया गया था।

11. अ॰ सा॰ 11 हरिशंकर मामले का अन्वेषण अधिकारी है। उसने कथन किया है कि 26.5.2005 को वह रातू पुलिस थाना में एस॰ आई॰ के रूप में पदस्थापित था। प्रातः लगभग 10.15 बजे, सूचना मिली की ग्राम झिरी में पटरास तिर्के पर प्रहार किया गया था जिसे आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची लाया गया था, जहाँ उसकी मृत्यु हो गयी। उसने इस सूचना के बारे में सनहा प्रविष्टि किया और आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची गया जहाँ उसने दीपक तिर्के, मृतक का पुत्र का फर्दबयान दर्ज किया, जिसे उसे पढ़कर सुनाया गया था और उसने फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर किया था। उसने अपने लेखन एवं हस्ताक्षर में फर्दबयान पहचाना है और इसे प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया था। उसने मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया, जिसे उसने सिद्ध किया और इसे प्रदर्श 4 चिन्हित किया गया था। उसने मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा। तत्पश्चात वह पुलिस थाना लौटा और फर्दबयान के आधार पर औपचारिक प्राथमिकी संस्थित की गयी थी, जिसे भी सिद्ध किया गया था। फर्दबयान पर पृष्ठांकन प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया था और औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 6 चिन्हित की गयी थी। उसने सूचक का पुनर्बयान दर्ज किया और घटना स्थल का निरीक्षण किया जो गाँव से लगभग 500 मीटर की दूरी पर अवस्थित फार्म था। फार्म में तालाब था और तालाब के पश्चिमी भाग में महावीर महतो की भूमि थी जहाँ उसे सूचित किया गया था कि घटना हुई थी और उसने उस स्थान पर काफी खून पाया। उसने घटनास्थल से रक्तरंजित मिट्टी जब्त किया और उसने अभिग्रहण सूची सिद्ध किया है, जिसे प्रदर्श 7 चिन्हित किया गया है। उसने अन्य गवाहों का बयान दर्ज किया और हुसना गारी तथा इलियास टिग्गा को गिरफ्तार किया। अन्य अभियुक्त व्यक्तियों ने न्यायालय में आत्मसमर्पण किया। उसने शव परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त किया और अन्वेषण पूरा करने के बाद आरोप–पत्र दाखिल किया। उसने कथन किया है कि सूचक दीपक तिर्के की हत्या की गयी थी जिसके लिए पुलिस थाना में, एक अन्य मामला संस्थित किया गया था। अपने प्रतिपरीक्षण में, उसने कथन किया है कि आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची में वह पहले दीपक तिर्के से मिला,

जिसने उसे घटना के बारे में सूचित किया, तत्पश्चात्, वह मृतक के निकट गया। उसने स्वीकार किया कि गाँव का एक भी व्यक्ति अभिग्रहण सूची का गवाह नहीं था और रक्तरंजित मिट्टी न्यायालय नहीं लायी गयी थी। यद्यपि इस गवाह का विस्तारपूर्वक प्रति परीक्षण किया गया था, किंतु उसके प्रतिपरीक्षण में अधिक महत्व का कुछ नहीं है। उसने दोषपूर्ण अन्वेषण करने एवं अभियुक्तों को झूठा फँसाने के सुझाव से इनकार किया है।

12. अभियुक्तों का बयान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था, जिसमें अभियुक्तों ने अपने विरूद्ध साक्ष्य से इनकार किया है। बचाव ने भी मामला में छह गवाहों का परीक्षण किया है जो ब॰ सा॰ 1 विश्वनाथ मिर्घा, ब॰ सा॰ 2 सुम्मी कुजुर, ब॰ सा॰ 3 टीनू गारी, ब॰ सा॰ 4 बंसिया महतो, ब॰ सा॰ 5 बलराम मिर्धा एवं ब॰ सा॰ 6 गणेश महतो हैं जिन्होंने कथन किया है कि घटना के बाद वे भी घटना स्थल पर गए थे किंतु मृत शरीर फार्म में नहीं पाया गया था और फार्म में कोई भी मौजूद नहीं था। ब॰ सा॰ 2 सुम्मी कुजुर तथा ब॰ सा॰ 5 बलराम मिर्धा ने कथन किया है कि बाद में लगभग आधा घंटा तलाश करने के बाद महावीर महतो की भूमि में मृत शरीर पाया गया जबकि ब॰ सा॰ 6 गणेश महतो ने कथन किया है कि मृतक का मृत शरीर 10-15 मिनट बाद पाया गया था। इन समस्त बचाव गवाहों ने, ब॰ सा॰ 6 गणेश महतो के सिवाए, कथन किया है कि लखमा मृतक की बहन है। किन्तु ब॰ सा॰ 5 बलराम मिर्धा ने कहा है कि वह कजिन बहन (मौसेरी बहन) है और अन्य ने अभिसाक्ष्य दिया है कि वह उसकी सगी बहन है।

13. अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर, विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषी पाया और पूर्वोक्तानुसार अपराध के लिए दोषसिद्धि एवं दंडादेशित किया गया था।

14. विद्वान अधिवक्ताओं ने और परस्पर अपीलार्थियों के लिए तर्क करने वाले विद्वान न्यायमित्र ने भी निवेदन किया है कि दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपीलार्थियों के विरूद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है। यह निवेदन किया गया है कि घटना स्थल पूर्णत: स्थापित नहीं किया गया है और घटना के समय पर अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के की उपस्थिति स्थापित नहीं की गयी है। घटना स्थल भी सिद्ध नहीं किया गया है क्योंकि यद्यपि गवाहों ने कथन किया है कि घटना मृतक के फार्म में हुई थी, किंतु अ॰ सा॰ 3 सनिचरवा ओराँव के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि घटना गाँव के कॉमन तालाब के स्थान पर हुई थी और आई॰ ओ॰ के अनुसार घटना स्थल महावीर महतो की भूमि है। आगे यह निवेदन किया गया है कि समस्त अभियुक्तों के विरूद्ध केवल सामान्य अभिकथन है और किस अभियुक्त ने शरीर के किस भाग पर प्रहार किया था, इसका कथन गवाहों द्वारा नहीं किया गया है। टांगी द्वारा प्रहार का साक्ष्य भी चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा संपुष्ट बिल्कुल नहीं किया गया है, क्योंकि मृतक के मृत शरीर पर तेज धार वाली उपहति नहीं पायी गयी थी। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ताओं ने यह निवेदन भी किया है, कि यद्यपि अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के ने घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया है किंतु उसने उसके द्वारा प्रहार अभिकथित करते हुए अपने साक्ष्य में अभियुक्त इलियास तिग्गा को नामित नहीं किया है। यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के वस्तुत: घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है क्योंकि गवाहों ने कथन किया है कि वह सूचक के बाद घटना स्थल पर आया और प्राथमिकी के अनुसार सूचक ने कथन किया है कि जब वह घटनास्थल पर पहुँचा था, अभियुक्तगण भाग गए थे। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के मृतक का पुत्र होने के नाते अत्यन्त हितबद्ध

गवाह है और अभियुक्तों को झूठा आलिप्त किए जाने से इस तथ्य की दृष्टि में इनकार नहीं किया जा सकता है कि पक्षों के बीच दुश्मनी स्वीकार की गयी है। अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के ने अपने प्रतिपरीक्षण में यह भी स्वीकार किया है कि भूमि जिस पर उनका पुराना घर अवस्थित है अभियुक्तों का है। विद्वान अधिवक्ताओं ने आगे निवेदन किया है कि अ॰ सा॰ 5 लखमा मृतक की बहन है और वह भी मामला में अत्यन्त हितबद्ध गवाह है तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ताओं ने निवेदन किया है कि यद्यपि गवाहों ने अभियोजन मामला का समर्थन किया है, यह सुयोग्य मामला है जिसमें अपीलार्थियों को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए था।

15. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्तों के विरूद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हुआ है। यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के घटना का चश्मदीद गवाह है जिसने कथन किया है कि जब वह घटना स्थल पहुँचा, उसने अपीलार्थियों अकला एवं हुसना गारी को अपने पिता को पकड़े देखा था और अभियुक्त संजय गारी एवं कुशल तिग्गा उस पर टांगी से प्रहार कर रहे थे। यद्यपि उसने इलियास तिग्गा को अपने मुख्य परीक्षण में नामित नहीं किया, किंतु अपने प्रतिपरीक्षण में उससे पाया गया है कि इलियास तिग्गा भी घटना स्थल पर उपस्थित था और वह टांगी से लैस था। अ॰ सा॰ 3 सनिचरवा ओराँव घटना का स्वतंत्र चश्मदीद गवाह है जिसने गाँव के कॉमन तालाब से घटना देखा था जो घटनास्थल से केवल 150 फीट की दूरी पर अवस्थित था और उसने समस्त अभियुक्तों को मृतक पर प्रहार करते देखा था। समरूप बयान अ॰ सा॰ 5 लखमा का है जो पहले से घटना स्थल पर पत्तियाँ चुन रही थी और उसने भी कथन किया है कि समस्त अभियुक्तगण मृतक पर प्रहार कर रहे थे। घटना उसके फार्म के भीतर अवस्थित मृतक के तालाब के निकट हुई थी और वह महावीर महतो की पार्श्व भूमि में गिरा था, जहाँ मामला के आई॰ ओ॰ द्वारा काफी खून पाया गया था। इन गवाहों का चाक्षुक साक्ष्य अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ चंद्रिका प्रसाद के चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा पूर्णत: संपुष्ट किया गया है जिन्होंने मृतक के मस्तक पर तीन विदीर्ण जख्म पाया था और उसका ब्रेन भी खून से भरा था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्तों के विरूद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हुआ है, और दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश में अवैधता नहीं है।

16. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि अभियोजन मामला चश्मदीद गवाहों अर्थात अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के, अ॰ सा॰ 3 सनिचरवा ओराँव एवं अ॰ सा॰ 5 लखमा द्वारा समर्थित किया गया है जिन्होंने घटना देखने का दावा किया है और कथन किया है कि समस्त पाँचों अभियुक्त मृतक पर प्रहार कर रहे थे। अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के के अनुसार अभियुक्तों अकला गारी एवं हुसना गारी ने उसके पिता को पकड़ रखा था और अभियुक्तगण संजय गारी एवं कुशल तिग्गा टांगी से उस पर प्रहार कर रहे थे। इस गवाह ने उसके द्वारा कोई प्रहार अभिकथित करते हुए अपने मुख्य परीक्षण में अभियुक्त इलियास तिग्गा का नाम नहीं लिया था। अन्य दो चश्मदीद गवाहों ने समस्त अभियुक्तों के विरूद्ध यह कथन किए बिना केवल सामान्य अभिकथन किया है कि किस अभियुक्त ने किस हथियार से शरीर के किस भाग पर मृतक पर प्रहार किया था यद्यपि उन दोनों ने कथन किया है कि मृतक पर टांगी से प्रहार किया गया था। उनमें से किसी ने कथन नहीं किया है कि टांगी के भोथरे भाग से प्रहार किया गया था। स्वीकृत रूप से, अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के सूचक के बाद घटना स्थल पर आया और प्राथमिकी के अनुसार, ज्योंही सूचक घटना स्थल पर आया,

अभियुक्तगण भाग गए। मामला के उस दृष्टिकोण में अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के अभियुक्त अकला गारी एवं हुसना गारी को अपने पिता को पकड़े हुए और अभियुक्त संजय गारी एवं कुशल टिग्गा को टांगी से उस पर प्रहार करते हुए नहीं देख सकता था। उसने अपनी प्रतिपरीक्षण में यह कथन भी किया है कि कुशल टिग्गा, इलियास एवं संजय गारी टांगी से लैस थे, किंतु वह नहीं कह सकता था कि क्या इन समस्त अभियुक्तों ने उसके पिता पर प्रहार किया था। यह स्पष्टत: संदेह डालता है कि क्या वह घटना का चश्मदीद गवाह है। अ॰ सा॰ 2 डॉ॰ चंद्रशेखर प्रसाद का साक्ष्य और प्रदर्श 2 के रूप में उनके द्वारा सिद्ध शव परीक्षण रिपोर्ट दर्शाता है कि मृतक के मृत शरीर पर केवल विदीर्ण जख्म थे और किसी तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित उपहति नहीं पायी गयी थी। इस प्रकार, साक्ष्य कि मृतक पर कम से कम दो अभियुक्तों द्वारा टांगी से प्रहार किया गया था, अ॰ सा॰ 6 डॉक्टर चंद्र शेखर प्रसाद के साक्ष्य द्वारा संपुष्ट बिल्कुल नहीं किया गया है। टांगी द्वारा प्रहार के विनिर्दिष्ट साक्ष्य की दृष्टि में यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि टांगी के भोथरे भाग से प्रहार किया गया था। (देखें: **हल्लू एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (1974)4 SCC 300)** समस्त तीनों चश्मदीद गवाह हितबद्ध गवाह प्रतीत होते हैं, क्योंकि अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के मृतक का पुत्र है, अ॰ सा॰ 3 सनिचरवा ओराँव मृतक के निर्माणाधीन कुआँ पर काम करने आया था और अ॰ सा॰ 5 लखमा के बारे में दावा किया गया है कि वह मृतक की बहन है यद्यपि उसने इस तथ्य से इनकार किया है। पक्षों के बीच दुश्मनी मामला में स्वीकार की गयी है और अ॰ सा॰ 2 विलियम तिर्के द्वारा यह भी स्वीकार किया गया है कि उसके पुराने घर की भूमि जिसे अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से नुकसान पहुँचाया गया था, वस्तुत: अभियुक्त कुशल तिग्गा के परिवार की थी। इस दशा में, स्वीकृत दुश्मनी के कारण अभियुक्तों को झूठा आलिप्त करने से इनकार नहीं किया जा सकता है। हमारा सुविचारित दृष्टिकोण है कि यद्यपि अभियोजन गवाहों ने मामला का समर्थन किया है, किंतु इस तथ्य की दृष्टि में कि टांगी द्वारा प्रहार का उनका चाक्षुक साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा बिल्कुल संपुष्ट नहीं किया गया है, अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्त अपीलार्थियों के विरूद्ध आरोप सिद्ध करने में विफल रहा है और इस मामला के तथ्यों में अपीलार्थीगण कम से कम संदेह के लाभ के हकदार हैं। इस दशा में, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

17. पूर्वोक्त कारणों से, एस॰ टी॰ सं॰ 567 वर्ष 2005 में अपीलार्थियों संजय गारी, अकला गारी उर्फ अख्तना, कुशल टिग्गा एवं इलियास टिग्गा को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन दोषसिद्ध एवं दंडादेशित करने वाला विद्वान न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 7.4.2006 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दिनांक 12.4.2006 का दंडादेश अपास्त किया जाता है। समस्त पूर्वोक्त अपीलार्थियों को संदेह का लाभ दिया जाता है और आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थीगण संजय गारी एवं कुशल टिग्गा दंडादेश भुगतते हुए अभिरक्षा में हैं। उन्हें निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है और तुरन्त स्वतंत्र किया जाता है यदि किसी अन्य मामला में उनका निरोध आवश्यक नहीं है। अपीलार्थीगण अकला गारी उर्फ अख्तना एवं इलियास उर्फ इलियास टिग्गा जमानत पर है और उन्हें उनके अपने-अपने जमानत बंधपत्रों के दायित्वों से उन्मोचित किया जाता है।

18. निर्णय से अलग होने के पहले हम अपीलार्थी अकला गारी उर्फ अख्तना के लिए इस न्यायालय द्वारा नियुक्त विद्वान न्यायमित्र श्री राजेश कुमार द्वारा दी गयी सक्षम सहायता दर्ज करते हैं। हम सचिव, उच्च न्यायालय विधिक सेवा प्राधिकरण को विद्वान न्यायमित्र को विहित पारिश्रमिक का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है। इस निर्णय की प्रति सचिव, उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति को आवश्यक कार्रवाई के लिए भेजी जाए।

19. तद्नुसार, अपील अनुज्ञात की जाती है। इस निर्णय की प्रति के साथ संबंधित न्यायालय को अवर न्यायालय अभिलेख तुरन्त भेजा जाए।

बी॰ बी॰ मंगलमूर्ति, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

देवघर जिला काँग्रेस कमिटी

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 5214 of 2017. Decided on 14th March, 2018.

नगरपालिका विधि—भवन का भंजन—प्रश्नगत भवन भार वहन करने वाली संरचना है जिसका आर्थिक जीवन 55 वर्ष का है—स्वयं याची ने रिट याचिका में कथन किया है कि भवन पुराना है जो 70 वर्षों से अधिक से विद्यमान है—भवन देवघर शहर के घनी जनसंख्या वाले क्षेत्र में अवस्थित है—दो राजनीतिक दलों की अभिकथित प्रतिद्वंदिता के बहाने पर लोक सुरक्षा से संबंधित विवाद्यक अनदेखा नहीं किया जा सकता है—रिट याचिका खारिज की गयी।

(पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Lakhan Chandra Roy, For the Petitioner; Mr. Vijay Shankar Jha, For the Resp. Nos. 3 to 6.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका प्रश्नगत भवन को भंजित नहीं करने के लिए प्रत्यर्थियों पर निर्देश के लिए दाखिल की गयी है जिसमें याची का कार्यालय विगत 70 वर्षों से चल रहा है जो टावर चौक, देवघर सदर अस्पताल, देवघर के निकट ''गांधी वाचनालय'' में अवस्थित है। मेकॉन इंजीनियरिन्ग लि॰ अथवा बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, राँची जैसे अन्य एजेंसियों के माध्यम से भवन का निरीक्षण करवाने के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश जारी करने की प्रार्थना भी की गयी है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रश्नगत भवन स्वतंत्रता सेनानी अर्थात नाथमल सिंघानिया द्वारा देवघर नगर निगम, देवघर से 99 वर्षों का पट्टा पाने के बाद निर्मित की गयी थी और उक्त भवन में स्वर्गीय नाथमल सिंघानिया ने एक पुस्तकालय अर्थात गांधी साहित्य पुस्तकालय, देवघर शुरू किया और देवघर जिला काँग्रेस कमिटी का कार्यालय भी चला रहे थे। उक्त तथ्य पुस्तक (रिट याचिका का परिशिष्ट 1 के उद्धरण से स्पष्ट है)। याची प्रत्यर्थी प्राधिकारियों सहित किसी से भी किसी रूकावट के बिना लगभग 70 वर्षों से अपना कार्यालय चला रहा है। किंतु, हाल में प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने कुछ राजनीतिक प्रभाव के अधीन पूर्वोक्त भवन से याची का कार्यालय हटाने का प्रयास किया। प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की उक्त कार्रवाई के क्रम में दिनांक 28.8.2017 के पत्र सं॰ 2888 में अंतर्विष्ट नोटिस याची को 4.9.2017 तक कार्यालय खाली करने के लिए इस आधार पर जारी किया गया था कि प्रश्नगत भवन जीर्णशीर्ण दशा में है। याची ने उक्त भवन के संबंध में प्रासंगिक तथ्यों का कथन करते हुए 29.8.2017 को प्रत्यर्थी सं॰ 2 उपायुक्त, देवघर के समक्ष आवेदन दाखिल किया। आगे यह निवेदन किया

है कि भवन की दशा पर्याप्त रूप से अच्छी है और इसके भंजन की आवश्यकता नहीं है। राज्य सरकार ने वर्ष 2001-02 में उक्त भवन का पुनरुद्धार किया था, अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि भवन जीर्णशीर्ण दशा में है। यदि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की प्रेरणा पर उक्त भवन भंजित किया जाता है, भवन के भाग में अपना-अपना व्यवसाय कर रहे व्यक्तियों को विपुल वित्तीय नुकसान होगा। इसके अतिरिक्त, याची को भी इसके कार्यालय से वंचित किया जाएगा जिसे लगभग 70 वर्षों से उक्त भवन में चलाया जा रहा है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 3 से 6 का दृष्टिकोण 28.2.2018 को दाखिल पूरक प्रति शपथपत्र में यह है कि दिनांक 28.8.2017 के पत्र सं॰ 2888 (रिट याचिका का परिशिष्ट 3) को जारी करने के पहले प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने विधि की सम्यक प्रक्रिया पूरा किया है क्योंकि नगरपालिका आयुक्त/मुख्य कार्यपालक अधिकारी, देवघर ने दिनांक 21.12.2016 के पत्र सं॰ 3903 के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 6 कार्यपालक अभियन्ता, भवन डिविजन, देवघर को ''गांधी वाचनालय'' नामक उक्त भवन के निरीक्षण के लिए पत्र भेजा/उक्त पत्र के प्रत्युत्तर में, प्रत्यर्थी सं॰ 6 ने भवन (गांधी वाचनालय) का निरीक्षण किया और उनको दिनांक 27.8.2017 के पत्र सं॰ 1510 के तहत अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए उन्हें रिपोर्ट भी भेजा कि चूँकि भवन 60-65 वर्ष पुरानी भवन संरचना है, भवन के कई भाग क्षतिग्रस्त हो गये हैं तथा यह जीर्ण-शीर्ण दशा में है। यह भी रिपोर्ट किया गया था कि गांधी वाचनालय की भवन संरचना किसी भी समय गिर सकती है। दिनांक 28.2.2018 के पूरक प्रतिशपथपत्र में आगे यह कथन किया गया है कि गांधी वाचनालय की भवन संरचना के संबंध में स्थानीय स्तर की औपचारिकताओं को नि:शेष करने के बाद नगरपालिका आयुक्त, देवघर ने दिनांक 25.9.2017 के पत्र सं॰ 3192 में अंतर्विष्ट अपने पत्र के तहत निदेशक, बी॰ आई॰ टी॰, मेसरा से और निदेशक, मेकॉन इंजीनियरिंग लिमिटेड से भी भवन का निरीक्षण करवाने का अनुरोध किया। दिनांक 25.9.2017 के उक्त पत्र की प्रतियाँ विभिन्न प्राधिकारियों को अग्रसारित भी की गयी थी। तत्पश्चात, निदेशक, बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, ऑफ-कैम्पस, देवघर ने किसी श्री कुमार सतीश, परियोजना प्रभारी, बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, ऑफ कैंपस को मेकॉन इंजीनियरिंग लिमिटेड के अन्य नाम निर्देशितियों के साथ गांधी वाचनालय के निरीक्षण के लिए नामनिर्देशित किया। तद्नुसार, श्री कुमार सतीश, परियोजना प्रभारी, बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, ऑफ कैम्पस, देवघर की अध्यक्षता के अधीन दो अन्य सदस्यों अर्थात श्री इंद्रेश कुमार, कार्यपालक अभियन्ता, देवघर नगर निगम, देवघर और श्री अमरेन्द्र कुमार साहा, कार्यपालक अभियन्ता, पथ निर्माण विभाग, देवघर के साथ तीन सदस्यों की कमिटी गठित की गयी थी। श्री अमरेन्द्र कुमार साहा, कार्यपालक अभियन्ता, पथ निर्माण विभाग, देवघर के श्री मदन मुरारी प्रसाद, कार्यपालक अभियन्ता, एन॰ आर॰ ई॰ पी॰, देवघर से प्रति स्थापित करके दिनांक 12.12.2017 के पत्र सं॰ 4022 के तहत कमिटी के गठन में आंशिक उपांतरण किया गया था। झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011 की धाराओं 449 एवं 450 के अधीन प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में नगर पालिका आयुक्त, देवघर ने तीन सदस्यों की कमिटी के गठन के संबंध में याची एवं अन्य व्यक्तियों को नोटिस और दिनांक 28.8.2017 के पत्र सं॰ 2888 में यथा उल्लिखित पूर्व रिपोर्ट की प्रति भेजा। उक्त त्रि-सदस्यीय कमिटी ने 8.1.2018 को उपायुक्त, देवघर को अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया। कमिटी ने भवन संरचना (गांधी वाचनालय) का पूरा निरीक्षण करने के बाद अनुशंसित किया कि भवन भंजित किया जाना चाहिए। उक्त पूरक प्रतिशपथपत्र में आगे यह कथन किया गया है कि नगरपालिका आयुक्त, देवघर ने लोक सुरक्षा के लिए इन कदमों को उठाया है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि श्री कुमार सतीश, परियोजना प्रभारी, बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, ऑफ कैम्पस, देवघर

की अध्यक्षता के अधीन त्रि–सदस्यीय कमिटी ने गांधी वाचनालय की भवन संरचना के सुरक्षा मूल्यांकन के संबंध में रिपोर्ट तैयार किया और इसे उपायुक्त, देवघर के समक्ष 8.1.2018 को प्रस्तुत किया गया था। चूँकि उक्त कमिटी तकनीकी कमिटी प्रतीत होती है, उक्त कमिटी द्वारा किया गया उक्त भवन संरचना के मूल्यांकन पर सम्यक विचार करने की आवश्यकता है। गांधी वाचनालय की संरचनात्मक सुरक्षा मूल्यांकन की उक्त रिपोर्ट निम्नलिखित अनुशंसा करती है जिसे उद्धृत किया जाता है:–

> *''सामान्यतः संरचना की दशा अच्छी नहीं है। भार ढोने वाली किसी संरचना का आर्थिक जीवन सामान्यतः लगभग 55 वर्ष माना जाता है (निदेश सी० पी० डब्लू० डी० निर्देशिका 2014, पृष्ठ 9, परिशिष्ट–1 के रूप में संलग्न)। यह भवन 60 वर्ष पुराना है और काफी पहले अपना जीवन पूरा कर लिया है। यह किसी मरम्मत, मजबूतीकरण और/अथवा भवन को भूतलक्षी प्रभाव से उपयुक्त बनाना महंगा है।*
>
> ***अतः कमिटी अनुशंसा करती है कि भवन भंजित किया जाए।''***

5. उक्त कमिटी द्वारा तैयार की गयी दिनांक 8.1.2018 की उक्त रिपोर्ट प्रकट करती है कि प्रश्नगत भवन भार ढोने वाली संरचना है जिसका आर्थिक जीवन 55 वर्ष है। स्वयं याची ने रिट याचिका में कथन किया है कि भवन पुराना है जो 70 वर्षों से अधिक से विद्यमान है। इसके अतिरिक्त, वर्तमान रिट याचिका में याची द्वारा की गयी एक प्रार्थना यह है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों को मेकॉन इंजीनियरिन्ग लिमिटेड/बी॰ आई॰ टी॰, मेसरा, राँची जैसे अन्य एजेंसियों के माध्यम से भवन (गांधी वाचनालय) का निरीक्षण करवाना चाहिए। नगरपालिका आयुक्त, देवघर द्वारा गठित भवन संरचना के मूल्यांकन के लिए कमिटी की अध्यक्षता परियोजना प्रभारी, बी॰ आई॰ टी॰ मेसरा, ऑफ कैम्पस, देवघर द्वारा की गयी थी जिसके दो अन्य सदस्य अभियन्ता थे। अत:, गांधी वाचनालय की भवन संरचना की वर्तमान दशा के संबंध में उक्त तकनीकी कमिटी द्वारा प्राप्त निष्कर्ष पर संदेह करने का कारण नहीं है। अत:, उक्त कमिटी द्वारा की गयी अनुशंसा विचार किए जाने योग्य है, दो राजनीतिक दलों के बीच अभिकथित प्रतिद्वंदिता के बहाना पर लोक सुरक्षा से संबंधित विवाद्यक अनदेखा नहीं किया जा सकता है जैसा याची द्वारा प्रतिवाद किया गया है। नगरपालिका आयुक्त, देवघर लोक सुरक्षा के मामला को ध्यान में रखते हुए भवन के भंजन के लिए सम्यक कदम उठा रहा है क्योंकि उक्त भवन देवघर टाउनशिप की घनी जनसंख्या वाले क्षेत्र में अवस्थित है।

6. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में, मैं रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे तद्नुसार खारिज किया जाता है। किंतु, प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं 3 को इसके भंजन के लिए कोई कदम उठाने के पहले भवन (गांधी वाचनालय), देवघर के विद्यमान अधिभोगियों से उपयुक्त प्रकार से खाली कराने का निर्देश दिया जाता है। इसी प्रकार से, उक्त भवन के अन्य अधिभोगी/किराएदार जो काफी समय से अपना–अपना व्यवसाय कर रहे हैं भी वैकल्पिक परिसर के प्रदान/आवंटन के लिए उक्त प्राधिकारियों के पास जा सकते हैं जिस पर उक्त प्राधिकारियों द्वारा जिला प्रशासन एवं नगर निगम, देवघर की प्रासंगिक नीति तथा इस तथ्य की याची एवं अन्य किराएदार/दुकानदार अपने परस्पर प्रयोजन से लंबी अवधि से उक्त भवन अर्थात गांधी वाचनालय में व्यवसाय कर रहे हैं, को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाएगा।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

भोला साह एवं अन्य

बनाम

कांता देवी अग्रवाल एवं अन्य

W.P. (C) No. 2658 of 2012. Decided on 5th April, 2018.

झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011—धाराएँ 2(g) एवं 15—बेदखली—प्रतिवादी द्वारा याचिका का प्रतिरोध इस आधार पर किया गया था कि वादी परिसर का स्वामी नहीं है—मकानमालिक की परिभाषा व्यापक है—यह न केवल स्वामी को बल्कि अन्य समस्त व्यक्तियों जो स्वयं अपनी ओर से अथवा स्वामी की ओर से किराया प्राप्त कर सकते हैं को भी सम्मिलित करता है—बेदखली वाद में, किराएदार की बेदखली इप्सित करने वाले व्यक्ति को प्रथम दृष्टया स्थापित करना होगा कि वह मकान मालिक की परिभाषा के अधीन आता है किंतु यह आवश्यक नहीं है कि मकान मालिक संपत्ति का स्वामी होगा—मकान मालिक के रूप में वादी के दर्जा को चुनौती देते हुए प्रतिवादी द्वारा उठाए गए विवाद्यक को खुला छोड़ते हुए रिट याचिका खारिज की जाती है। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.—M/s Afaque Ahmad, Sahdab Bin Haque, For the Petitioners; Mr. Arpan Mishra, For the Respondents.

आदेश

अभिधान (बेदखली) वाद सं॰ 52 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 15.3.2012 के आदेश से व्यथित होकर प्रतिवादी किराएदार इस न्यायालय के पास आया है।

2. संक्षिप्त रूप से कथित, अभिधान (बेदखली) वाद सं॰ 52 वर्ष 2008 में, वादी ने झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011 की धारा 15 के अधीन आवेदन दाखिल किया जिसका प्रतिरोध प्रतिवादी द्वारा इस आधार पर किया गया था कि वादी परिसर की स्वामी नहीं है। बेदखली वाद संस्थित किए जाने के पहले प्रतिवादी ने बेदखली वाद के वादी के विरूद्ध व्यादेश इप्सित करते हुए उसको वाद परिसर भंजित करने से अवरूद्ध करने के लिए अभिधान वाद सं॰ 52 वर्ष 2006 संस्थित किया था और उक्त कार्यवाही में विचारण न्यायालय ने यथास्थिति का आदेश पारित किया है।

3. यह प्रतिवाद करते हुए कि जब एक बार मकानमालिक के रूप में याची का दर्जा चुनौती के अधीन है, किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 15 के अधीन आवेदन पोषणीय नहीं है, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रतिवादी को वादी को 1000/- रुपया प्रति माह मासिक किराया का भुगतान करने का निर्देश विचारण न्यायालय द्वारा गलत रूप से किया गया है।

4. प्रतिवादी ने अभिवचन किया है कि किराया परिसर दिनांक 6.3.2006 के विक्रय विलेख में निर्दिष्ट नहीं किया गया है और न ही इसे मूल स्वामी द्वारा निष्पादित किया गया है।

5. झारखंड भवन (पट्टा, किराया, बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2011 की धारा 2(g) पर एक नजर इसे स्पष्ट करेगा कि मकानमालिक की परिभाषा व्यापक है। यह न केवल स्वामी को बल्कि अन्य समस्त व्यक्तियों जो स्वयं अपनी ओर से अथवा स्वामी की ओर से किराया प्राप्त कर सकते हैं को भी सम्मिलित करती है। अनुसूची A संपत्तियों के संबंध में दिनांक 6.3.2006 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के

फलस्वरूप वादी में प्रथम दृष्टया अधिकार पाते हुए प्रतिवादी को विचारण न्यायाधीश ने वादी को 1000/- रुपयों के मासिक किराया का भुगतान करने का निर्देश दिया है। निस्संदेह, बेदखली वाद में, किराएदार की बेदखली इप्सित करने वाले व्यक्ति को प्रथम दृष्टया स्थापित करना होगा कि वह मकान मालिक की परिभाषा के अधीन आता है, किंतु यह आवश्यक नहीं है कि मकानमालिक को संपत्ति का स्वामी होना होगा।

6. उक्त तथ्यों में, मकान मालिक के रूप में वादी के दर्जा को चुनौती देते हुए प्रतिवादी द्वारा उठाए गए विवाद्यक को खुला छोड़ते हुए रिट याचिका खारिज की जाती है किंतु यह स्पष्ट किया जाता है कि रिट याचिका की खारिजी का अर्थ किराया परिसर के मकानमालिक होने के नाते वादी के दावा पर मत की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं लगाया जाएगा।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

मंटू केशरी एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 5464 of 2003. Decided on 14th February, 2018.

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949—धारा 42 सहपठित धारा 20(2)—अभिधारी की बेदखली—अभिधारी अपना अधिकार केवल उस सीमा तक अंतरित कर सकते हैं जिस सीमा तक अंतरण का अधिकार अधिकार अभिलेख में अभिलखित किया गया है—याचीगण का मामला यह नहीं है कि अभिधारी ने अधिकार अभिलेख में यथा अभिलिखित अंतरण के अपने अधिकार के मुताबिक अधिकार अंतरित किया था—अधिनियम की धारा 42 के अधीन याची की बेदखली संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 64 द्वारा hit नहीं होता है—रिट याचीगण बिल्कुल बाहरी लोग हैं और व्यवसाय प्रयोजन से आए थे और प्रश्नगत संपत्ति पर उनका कब्जा संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20(1) के प्रावधानों के घोर उल्लंघन में है और तद्नुसार उन्हें संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 42 के अधीन संपत्ति से सही प्रकार से बेदखल करने का निर्देश दिया गया है—रिट याचिका खारिज की गयी।

(पैराएँ 10(e), (f), (j), 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.—2000 (1) PLJR 488; 1985 PLJR 1 (Full Bench); Supreme Court, 1998 (2) PLJR 3 (SC); 2018 (1) JLJR 302, 2009 (4) JLJR 1, 2010 (4) JLJR 575—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Rahul Kumar, For the Petitioners; M/s. Rajiv Nandan Prasad S.C. Prakash, For the Resp. nos.6 to 13; Mr. A.K. Thakur, For the Resp. nos. 1 to 5.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राहुल कुमार सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 6 से 13 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री एस॰ सी॰ प्रकाश द्वारा सहायित अधिवक्ता श्री राजीव नंदन प्रसाद सुने गए।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ ठाकुर सुने गए।

4. याचीगण द्वारा यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:—

(a) राजस्व विविध अपील सं० 1989-90 में उपायुक्त, दुमका के दिनांक 20.12.1995 के आदेश के विरूद्ध याचीगण का मामला अस्वीकार करते हुए राजस्व विविध अपील सं० 457/1995-96 में आयुक्त दुमका द्वारा पारित दिनांक 5.9.2003 के आदेश के अभिखंडन के लिए।

(b) राजस्व विविध अपील सं० 4/1989-90 में उपायुक्त, दुमका द्वारा पारित दिनांक 20.12.1995 के आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन ई० ए० केस सं० 84 वर्ष 1987-88 में पारित दिनांक 4.3.1989 के एस० डी० ओ०, दुमका के आदेश के विरूद्ध प्रत्यर्थीगण द्वितीय संवर्ग की अपील अनुज्ञात की गयी है के अभिखंडन के लिए।

(c) ई० ए० केस सं० 84 वर्ष 1987-88 में सबडिविजनल अधिकारी, दुमका द्वारा पारित दिनांक 7.3.1989 के आदेश को पुनर्स्थापित करने के लिए जिन्होंने संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20(5) के अधीन अपनी शक्ति के तात्पर्यित प्रयोग में अपने न्यायालय में प्रत्यर्थीगण द्वितीय संवर्ग को भुगतान के लिए याचीगण द्वारा 11,400/- रुपया जमा करने का निर्देश दिया है।

5. मामला के गुणागुण पर अग्रसर होने के पहले याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आई॰ ए॰ सं॰ 2488/2003 अन्य बातों के साथ मृतक प्रत्यर्थी सं॰ 13 के प्रतिस्थापन के लिए दाखिल की गयी थी किंतु दिनांक 25.1.2018 के आदेश के मुताबिक प्रत्यर्थी सं॰ 13 के विलोपन के लिए आदेश है यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰ 13 को उसके पुत्र अर्थात अरूण ठाकुर द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना है। वह निवेदन करते हैं कि अनवधानता के कारण प्रत्यर्थी सं॰ 13 को विलोपित करने के लिए निवेदन किया गया था।

6. याची के अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदन पर विचार करते हुए और आई॰ ए॰ सं॰ 2488/2003 जिसके प्रति प्रतिशपथपत्र दाखिल नहीं किया गया है के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि मृतक प्रत्यर्थी सं॰ 13 को उसके पुत्र द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना था और तद्नुसार दिनांक 25.1.2018 का आदेश एतद्द्वारा उपांतरित किया जाता है और मृतक प्रत्यर्थी सं॰ 13 को उसके पुत्र अर्थात अरूण ठाकुर द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना है जिसके लिए रिट याची के अधिवक्ता द्वारा पहले ही आवश्यक सुधार किया गया है।

7. याचीगण के अधिवक्ता द्वारा यथा निवेदित मामला के तथ्य निम्नलिखित हैं:–

(a) भूखंड सं॰ 23, जमाबन्दी सं॰ 18 (क्षेत्रफल 3 कठ्ठा 16 धूर) पर मौजा बेलगुमा में अवस्थित अपने घर से याचीगण के पिता एवं याचीगण के बेदखली के लिए और उनको भूमि पुनर्स्थापित करने के लिए विद्वान सब डिविजनल अधिकारी, दुमका के न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थियों (वर्तमान प्रत्यर्थियों का द्वितीय संवर्ग) अथवा उनके पूर्वाधिकारियों द्वारा 23.11.1987 को याचिका ई॰ ए॰ केस सं॰ 84 वर्ष 1987-88 दाखिल किया गया था। याचिका संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धाराओं 20/42/69 के अधीन दाखिल की गयी थी जिसमें उक्त मामला के आवेदकों ने दावा किया कि प्रश्नगत संपत्ति आवेदकों के पूर्वज के नाम दर्ज की गयी थी और वे आज की तिथि तक राज्य सरकार को लगान का भुगतान कर रहे हैं। उक्त मामला के आवेदकों का विनिर्दिष्ट मामला यह था कि वे लगभग पाँच वर्ष पहले तक भूमि पर धान की खेती कर रहे थे और फरवरी 1982 में याचीगण के पिता एवं याचीगण ने निर्माण किया है और तद्नुसार भूमि के पुनर्स्थापन के लिए याचिका दाखिल की गयी थी।

(b) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्वयं आवेदन में यह उल्लेख किया गया था कि विरोधी पक्षकार सं॰ 1 से 3 (अर्थात याचीगण के पिता एवं याचीगण) विगत 10-15 वर्षों से ग्राम बासुकीनाथ में भवन जिसे उन्होंने किराया पर लिया था में व्यवसाय कर रहे हैं।

(c) उक्त याचिका के अनुसरण में नोटिस जारी की गयी थी और निरीक्षण रिपोर्ट तैयार किया गया था जो रिट याचिका के परिशिष्ट 2 में अंतर्विष्ट है।

(d) याचीगण निवेदन करते हैं कि स्वयं निरीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक, वर्तमान याचीगण ने हिंदू कैलेंडर के अधीन वर्ष 1343 का बताया गया एक करार प्रस्तुत किया था और वह दावा करता है कि यह इंगलिश कैलेन्डर के मुताबिक वर्ष 1936 के समतुल्य है। उक्त करार के साथ निरीक्षण के दौरान कतिपय रसीदें भी अंचलाधिकारी को दिखायी गयी थीं और दावा किया कि याचीगण 1936 से संपत्ति पर काबिज हैं। अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अंचलाधिकारी ने तथ्यों पर विचार करने के बाद दर्ज किया था कि याचीगण एवं उनके पिता विगत 20-25 वर्षों से भूमि पर घर का निर्माण करके रह रहे थे और निर्माण एक लाख रुपया पर मूल्यांकित किया गया था। ऐसी परिस्थितियों में, अंचलाधिकारी ने उक्त मामला के आवेदक को मुआवजा देने की अनुशंसा किया।

(e) पूर्वोक्त आवेदन के अनुसरण में, ई॰ ए॰ केस सं॰ 84/1987-88 में सब-डिविजनल अधिकारी द्वारा दिनांक 4.3.1989 का अंतिम आदेश पारित किया गया था जिसमें उक्त अधिकारी ने याचीगण को 11,400/- रुपयों की राशि के मुआवजा का भुगतान करने का निर्देश दिया।

(f) इसके विरूद्ध आवेदकों (वर्तमान प्रत्यर्थीगण का द्वितीय संवर्ग) अथवा उनके पूर्वाधिकारियों द्वारा उपायुक्त, दुमका के समक्ष अपील दाखिल की गयी थी जिसे राजस्व विविध अपील सं॰ 4/1989-90 के रूप में संख्यांकित किया गया था।

(g) उपायुक्त, दुमका ने अपील अनुज्ञात किया और आवेदकों (वर्तमान प्रत्यर्थीगण का द्वितीय संवर्ग) अथवा उनके पूर्वाधिकारियों के पक्ष में संपत्ति का पुनर्स्थापन आदेशित किया।

(h) इसके विरूद्ध वर्तमान याचीगण ने पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका के समक्ष राजस्व विविध अपील सं॰ 457/95-96 के रूप में संख्यांकित किया गया था।

(i) आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका द्वारा दिनांक 16.7.1996 का आदेश पारित किया जिसमें सबडिविजनल अधिकारी को निम्नलिखित बिंदुओं पर स्थानीय जाँच करने एवं रिपोर्ट देने का निर्देश दिया गया था:-

(i) किस प्रकार भूमि अपीलार्थी को अंतरित की गयी थी।

(ii) निर्मित घर का मूल्य एवं प्रकृति और निर्माण का समय (वर्ष)

(j) इस आदेश के अनुसरण में, जाँच की गयी थी और जाँच रिपोर्ट रिट याचिका के परिशिष्ट 6 के रूप में संलग्न की गयी है। जाँच रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि दानपत्र अथवा दान-विलेख द्वारा प्रश्नगत संपत्ति लगभग 50 वर्ष पहले रिट याचीगण को सौंपी गयी थी यद्यपि ऐसा अंतरण संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के अधीन अनुज्ञेय नहीं है। आगे यह भी दर्ज किया गया है कि इस संपत्ति के संबंध में राज्य को लगान का भुगतान अभी तक मूल रैयतों द्वारा किया जा रहा था अर्थात उनके द्वारा जो ई॰ ए॰ केस सं॰ 84/87-88 में आवेदक थे और इस मामला में प्रत्यर्थी हैं। रिपोर्ट

में यह उल्लेख किया गया है कि संपत्ति पर घर का निर्माण रिट याचीगण द्वारा वर्ष 1970-71 में किया गया था।

(k) याचीगण ने यह उल्लेख भी किया है कि आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका के समक्ष उनकी ओर से लिखित तर्क दाखिल किए गए थे जो रिट याचिका के परिशिष्ट–7 में अंतर्विष्ट है जिसमें इस बिंदु कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20(5) इस मामला के तथ्यों के प्रति लागू नहीं होती है क्योंकि यह केवल अनुसूचित जनजाति के प्रति लागू होती है और स्वीकृत रूप से पक्षगण अनुसूचित जनजाति नहीं है, सहित अनेक बिंदुओं को लिया गया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि रिट याचीगण 1949 के काफी पहले से भूमि पर काबिज हैं, इसे भी लिखित निवेदन में विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया था। वह यह निवेदन भी करते हैं कि चूँकि प्रश्नगत संपत्ति अब कृषि भूमि नहीं है, संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 42 इस मामला में प्रयोज्य नहीं हो सकती है। इस रिट याचिका के साथ परिशिष्ट 8 पर अपील के आधार भी दाखिल किए गए हैं और याचीगण के अधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान दो आधारों की ओर आकृष्ट किया है जो उल्लेख करते हैं कि जाँच रिपोर्ट तथा भूमि एवं घर पर अपीलार्थियों का कब्जा दर्शाने वाले दस्तावेज यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थे कि प्रश्नगत भवन अभिलिखित अभिधारियों की सहमति से निर्मित किया गया था और दावा संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम 1949 की धारा 64 के अधीन वर्जित था। वह आगे अपील ज्ञापन के पैरा 4 की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकृष्ट करते हैं जो दर्शाता है कि 1949 के काफी पहले से अपीलार्थियों का कब्जा दर्शाने के लिए 1982 के काफी पहले से घर के विद्युत बिलों के रूप में समस्त प्रासंगिक दस्तावेज दाखिल किए गए थे और समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए सब डिविजनल अधिकारी ने दिनांक 4.3.1989 के आदेश के तहत आवेदकों को प्रश्नगत घर से बेदखल करने से इनकार कर दिया।

(l) किंतु, दिनांक 5.9.2003 के आक्षेपित आदेश के तहत आयुक्त, संथाल परगना डिविजन, दुमका ने पुनरीक्षण राजस्व विविध अपील सं॰ 457/95-96 यह अभिनिर्धारित करते हुए अस्वीकार कर दिया कि प्रश्नगत संपत्ति रैयती भूमि है और इसका अंतरण अधिनियम की धारा 20 के अधीन वर्जित है और कि अपीलार्थीगण मूल रैयत के संतति नहीं थे और वे व्यवसाय के प्रयोजन से बाहर से आए थे। उक्त प्राधिकारी ने अभिनिर्धारित किया कि अंतरण संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रावधानों के पूर्ण उल्लंघन में है, अत: पुनरीक्षण खारिज किया गया था।

(m) याची के अधिवक्ता ने विचारार्थ निम्नलिखित प्रश्नों को उठाया है:–

(i) क्या स्वीकृत अवस्था पर कि भवन प्रश्नगत संपत्ति पर खड़ा था, क्या इसे समुचित रूप से कृषि भूमि कहा जा सकता है ताकि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 42 के प्रावधान आकृष्ट हो सकें?

(ii) अन्यथा भी, इस तथ्य की दृष्टि में कि याचीगण काफी पहले वर्ष 1936 में निष्पादित एक सादा दस्तावेज के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज हुए और मूल रैयत द्वारा याची के पक्ष में जारी कतिपय रसीदों के साथ क्या याची ने अपना अभिधान प्रतिकूल कब्जा के रूप में संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव

में आने के 12 वर्ष पहले से काबिज होने के कारण पुख्ता किया है और तद्नुसार कार्यवाही स्वयं उक्त अधिनियम की धारा 64 के अधीन परिसीमा द्वारा वर्जित था?

(n) याची के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया और निवेदन किया:–

(i) 2000 (1) PLJR 488 पर और यह निवेदन किया है कि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संपत्ति से बेदखली की तिथि महत्वपूर्ण तथ्य है जिसे प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किया जाना होगा जब यह दावा किया जाता है कि बेदखली की तिथि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने के 12 वर्ष पहले है।

(ii) 1985 PLJR 1 (पूर्ण न्यायपीठ) और यह निवेदन किया है कि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिकूल कब्जा द्वारा अभिधान पुख्ता करने के लिए 12 वर्षों की चिर भोग अवधि (मूल अंतरण विनियम 3 वर्ष 1872 की धारा 27 के उल्लंघन में होने के कारण) संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रवर्तन की तिथि 1 नवम्बर, 1949 को समाप्त हो जाएगी।

(iii) 1998(2) PLJR 3 (SC) में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी जिसके द्वारा 1985 PLJR 1 पूर्ण न्यायपीठ में पारित निर्णय का निर्णयाधार 1.11.1949 के 12 वर्ष पहले से गिने जाने के संबंध में मान्य ठहराया गया है।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रश्नगत संपत्ति कृषि भूमि के रूप में दर्ज की गयी थी और वे राज्य सरकार को सीधे लगान का भुगतान कर रहे हैं। वह आगे निवेदन करते हैं कि मात्र इसलिए कि कुछ निर्माण किया गया है, यह स्वत: भूमि की प्रकृति नहीं बदलेगा। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण बिलकुल बाहरी लोग हैं क्योंकि स्वीकृत रूप से वे व्यवसाय करने के लिए संथाल परगना के क्षेत्र के बाहर से आए थे। इस स्थिति की दृष्टि में, अधिनियम की धारा 20(1) के प्रावधानों के अधीन याची को भूमि के अंतरण पर पूर्ण वर्जना है। वह निवेदन करते हैं कि स्वीकृत अवस्था कि पक्षों में से कोई भी अनुसूचित जनजाति कोटि से नहीं आता है, के कारण अधिनियम की धारा 20(5) की भूमिका नहीं होगी और इस स्वीकृत अवस्था की दृष्टि में अधिनियम की धारा 20(5) के अधीन मुआवजा के भुगतान का प्रश्न नहीं है ओर मुआवजा का भुगतान अधिनियम की धारा 20(1) के अधीन अनुध्यात नहीं किया गया है। अधिनियम की धारा 42 को निर्दिष्ट करके वह निवेदन करते हैं कि दस्तावेज सादा (अनरजिस्टर्ड) दस्तावेज थे और प्रत्यर्थियों (जो सबडिविजन अधिकारी के समक्ष आवेदक थे, को याची द्वारा लगान के भुगतान से संबंधित दस्तावेज प्राधिकारियों के समक्ष कभी प्रस्तुत अथवा दाखिल नहीं किया गया था और केवल अंचलाधिकारी की रिपोर्ट में यह उल्लेख है कि इसे निरीक्षण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। वह निवेदन करते हैं कि ये दस्तावेज इस रिट न्यायालय के समक्ष अभिलेख का भाग तक नहीं है।

9. वह यह निवेदन भी करते हैं कि अन्यथा भी सादा दस्तावेज जिसके दान विलेख अथवा हुकुमनामा होने का दावा किया गया है, जैसा दावा रिट याचीगण द्वारा अनिबंधित दस्तावेज होने के नाते विश्वास नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, इसका विधि की दृष्टि में मूल्य नहीं है। याचीगण को सरकार द्वारा मान्यता कभी नहीं दी गयी थी अथवा पहचाना कभी नहीं गया था क्योंकि लगान रसीदें जैसा उनके द्वारा दावा किया गया था, अभिकथित रूप से ई॰ ए॰ केस सं॰ 84/87-88 के आवेदकों द्वारा जारी की गयी थी

और न कि जमीन्दार अथवा राज्य द्वारा। सरकार ने पूरे समय उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी को संपत्ति की रैयत के रूप में पहचाना एवं मान्यता दिया है। उत्तर देनेवाले प्रत्यर्थियों द्वारा 1.11.1949 से 12 वर्ष पहले से रिट याचीगण के कब्जा से स्पष्टत: इनकार किया गया है। प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता ने 1985 PLJR 1 (पूर्ण न्यायपीठ), 2018(1) JLJR 302 : 2009 (4) JLJR 1 : 2010 (4) JLJR 575 में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

10. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और इस मामला के तथ्यों पर विचार करते हुए यह न्यायालय इस मामला में पारित आक्षेपित आदेशों में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं पाता है और वर्तमान रिट याचिका निम्नलिखित कारणों से खारिज की जा रही है:–

a. स्वीकृत रूप से, प्रश्नगत संपत्ति सरकारी अभिलेख में धानी भूमि अर्थात कृषि भूमि के रूप में दर्ज की गयी है और वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थियों को सरकारी अभिलेख में रैयत के रूप में दर्ज किया गया है। स्वीकृत रूप से, प्राइवेट प्रत्यर्थीगण रैयत की हैसियत में सरकार को समय-समय पर कृषि भूमि के लगान का भुगतान कर रहे हैं।

b. रिट याची का प्रतिवाद कि संपत्ति पर कुछ निर्माण हुआ है,अत: यह कृषि भूमि नहीं रही है और इस लिए उक्त अधिनियम की धारा 42 सहपठित धारा 20(1) आकृष्ट नहीं होगी, अस्वीकार किया जाता है। इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि प्रश्नगत संपत्ति सरकार के अधिकार अभिलेख में कृषि भूमि के रूप में दर्ज है और यह ऐसा बनी रहेगी जब तक सरकार द्वारा इसे सम्यक रूप से संशोधित नहीं किया जाता है। मात्र इसलिए कि प्रश्नगत संपत्ति पर कुछ निर्माण किया गया है, भूमि की प्रकृति बदलने के लिए पर्याप्त नहीं है ताकि उक्त अधिनियम की धारा 20 सहपठित धारा 42 के प्रावधानों की प्रयोज्यता अपवर्जित कर सके। भूमि की प्रकृति में परिवर्तन के प्रयोजन से विशेष प्रक्रिया विहित की गयी है और मात्र इसलिए कि भूमि पर निर्माण हुआ है, यह किसी भी तरीके से भूमि की प्रकृति नहीं बदलेगा। यह न्यायालय राजस्व विविध अपील सं॰ 457/95-96 में पारित दिनांक 5.9.2003 के आक्षेपित आदेश में विद्वान आयुक्त द्वारा दर्ज निष्कर्ष कि संपत्ति रैयती संपति है में अवैधता अथवा विकृतता नहीं पाता है और मेरी दृष्टि में उक्त निष्कर्ष सही हैं। तद्नुसार, अधिनियम की धारा 42 इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति के प्रति पूर्णत: प्रयोज्य है।

c. जहाँ तक अधिनियम की धारा 20(5) की प्रयोज्यता का संबंध है, इसे दोनों पक्षों द्वारा स्वीकार किया गया है कि तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में उक्त धारा की प्रयोज्यता नहीं होगी क्योंकि कोई भी पक्ष अनुसूचित जनजाति कोटि से नहीं आता है। स्वीकृत अवस्था की दृष्टि में कि मुआवजा देने का प्रावधान अधिनियम की धारा 20(5) के अधीन केवल अनुसूचित जनजाति के लिए लागू होता है, वर्तमान प्रत्यर्थीगण को मुआवजा कभी नहीं प्रदान किया जा सकता है। अपीलीय प्राधिकारी द्वारा सही प्रकार से यह दृष्टिकोण लिया गया है जिन्होंने वर्तमान प्राइवेट पक्षों को मुआवजा प्रदान करने वाला आदेश अपास्त कर दिया है।

d. दोनों पक्षों ने अधिनियम की धारा 20(1) की प्रयोज्यता के संबंध में अपना तर्क दिया है। पक्षों के बीच विवाद का विषय यह है कि क्या रिट याचीगण 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्ष से संपत्ति पर काबिज थे और क्या याची ने प्राधिकारी के समक्ष यह तथ्य स्थापित किया है। रिट याचिका के परिशिष्ट 2 में यथा अंतर्विष्ट अंचलाधिकारी द्वारा दाखिल रिपोर्ट के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि अभिलिखित

अभिधारी (इस रिट याचिका में प्रत्यर्थीगण) के पूर्वज द्वारा निष्पादित बताए गए वर्ष 1936 के करार सहित कतिपय दस्तावेजों को प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा याचीगण को जारी किए गए बताए गए कतिपय लगान रसीदों के साथ निरीक्षण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। ये दस्तावेज इस रिट न्यायालय के अभिलेख पर नहीं है और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि इन दस्तावेजों को न्याय निर्णयण करने वाले किसी अवर प्राधिकारियों के समक्ष दाखिल किया गया था। अन्यथा भी, वर्ष 1936 में निष्पादित किया गया बताया गया तथाकथित करार, जिसका अब हुकुमनामा होने का दावा किया जा रहा है जैसा रिट याचिका के पैरा 6 में उल्लिखित किया गया है और दान विलेख कहा गया है, का भी अनरजिस्टर्ड दस्तावेज होने के नाते विधि की दृष्टि में पर्याप्त मूल्य नहीं है, विशेषत: अधिकार अभिलेख में किसी तत्सम प्रविष्टि की अनुपस्थिति में इस दस्तावेज को करार होने का दावा किया गया है और बाद में हुकुमनामा और/अथवा दान विलेख होने का दावा किया गया है। याचीगण इन दस्तावेजों की प्रकृति के बारे में निश्चित नहीं हैं और रिट अभिलेख में दाखिल नहीं किया गया है। यह गौर करना प्रासंगिक होगा कि रैयत को हुकुमनामा निष्पादित करने का अधिकार नहीं है।

e. अन्यथा भी, उक्त अधिनियम की धारा 20(1) के मुताबिक अभिधारी केवल उस सीमा तक अपना अधिकार अंतरित कर सकता है जिस सीमा तक अंतरण का अधिकार अधिकार अभिलेख में दर्ज किया गया है। त्वरित निर्देश के लिए पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 20(1) को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *''धारा 20.* ***रैयत के अधिकार का अंतरण.****–(1) रैयत द्वारा विक्रय, दान, बंधक, वसीयत, पट्टा अथवा किसी अन्य संविदा अथवा करार, अभिव्यक्त अथवा विवक्षित, द्वारा धृति अथवा उसके किसी भाग में अपने अधिकार का अंतरण वैध होगा जब तक अंतरण अधिकार अधिकार अभिलेख में दर्ज नहीं किया जाता है और तब केवल इस प्रकार दर्ज ऐसे अधिकार की सीमा तकः*
>
> *परन्तु यह कि .....*
>
> *परन्तु यह कि .....*
>
> *परन्तु यह कि .....''*

f. वर्तमान मामला में याचीगण का मामला यह नहीं है कि अभिधारी ने अधिकार अभिलेख में यथा अभिलिखित अंतरण के अपने अधिकार के मुताबिक अधिकार अंतरित किया था। तद्नुसार, भले ही यह माना जाता है कि अभिलिखित अभिधारी ने काफी पहले वर्ष 1936 में अंतरण का कोई दस्तावेज निष्पादित किया है, यह प्रकटत: पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 20(1) के अधीन उसके अधिकार के उल्लंघन में है क्योंकि समरूप प्रावधान विनियम III वर्ष 1972 की धारा 27 में भी था जो वर्ष 1936 में प्रयोज्य था। इसके अतिरिक्त, अभिलिखित अभिधारी सरकार को लगान का भुगतान कर रहे हैं और याचीगण ने सरकार को लगान का भुगतान कभी नहीं किया था और तद्नुसार काफी पहले वर्ष 1936 में वह भी अनरजिस्टर्ड दस्तावेज द्वारा अंतरण की कथा जैसी याचीगण द्वारा सुनायी गयी है, पर सही प्रकार से आक्षेपित आदेश द्वारा अविश्वास किया गया है।

g. अंचलाधिकारी की रिपोर्ट के मुताबिक निर्माण लगभग 20-25 वर्ष पुराना था यद्यपि स्वयं अंचलाधिकारी की रिपोर्ट में यह कथन कि निर्माण लगभग 7-8 वर्ष पहले किया गया था करने वाला गवाह है। यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि निर्माण लगभग 20-25 वर्ष पुराना है, अंचलाधिकारी की रिपोर्ट में आधार नहीं है। यह रिपोर्ट दिनांक 11.8.1988 की है। दिनांक 8.10.1996 की एक अन्य रिपोर्ट है जिसे पुनरीक्षण कार्यवाही में आयुक्त द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में तैयार किया गया था जिसने स्पष्टत: निष्कर्ष दर्ज किया है कि संपत्ति पर निर्माण वर्ष 1970-71 का है और अभिलिखित अभिधारी संपत्ति पर

लगान का भुगतान कर रहा है। परिस्थितियों की संपूर्णता में याचीगण अवर प्राधिकारियों के समक्ष और इस न्यायालय के समक्ष भी यह सिद्ध करने में विफल रहे हैं कि वे 1.11.1949 के पहले 12 वर्ष से संपत्ति पर काबिज है।

h. 1985 PLJR 1 (पूर्ण न्यायपीठ); 1998 (2) PLJR 3 (SC) एवं 2000(1) PLJR 488 में प्रकाशित निर्णय किसी भी तरीके से याचीगण की मदद इस कारण से नहीं करते हैं कि प्रतिकूल कब्जा का दावा करने के लिए याचीगण को सिद्ध करना था कि वे 1.11.1969 के पहले 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज थे जिसे सिद्ध करने में वे विफल हैं।

i. प्राधिकारियों ने अधिनियम की धारा 42 सहपठित धारा 64 के प्रावधान का अवलंब लिया है जिनका पठन निम्नलिखित है:–

''42. ***कृषि भूमि पर अप्राधिकृत रूप से काबिज व्यक्ति की बेदखली.*** *–उपायुक्त किसी समय पर स्वयं अपने प्रस्ताव पर अथवा उसको दिए गए आवेदन पर किसी व्यक्ति की बेदखली के लिए आदेश पारित कर सकता है जिसने इस अधिनियम अथवा किसी विधि अथवा संथाल परगना में विधि का बल लिए किसी चीज के प्रावधानों के उल्लंघन में कृषि भूमि का अधिक्रमण, अर्जन, दावा किया है अथवा काबिज हुआ है।*

धारा 64. ***परिसीमा का सामान्य नियम.*** *–इस अधिनियम के अधीन दिए गए समस्त आवेदन, जिसके लिए इस अधिनियम में परिसीमा की अवधि अन्यत्र प्रावधानित नहीं की गयी है, वाद हेतुक प्रोद्भूत होने की तिथि से एक वर्ष के भीतर दिया जाएगा परन्तु यह कि धारा 42 के अधीन आवेदन के लिए परिसीमा अवधि नहीं होगी।''*

j. यह न्यायालय आगे पाता है कि अधिनियम की धारा 42 के अधीन याची की बेदखली संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 64 द्वारा hit नहीं होता है। पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 64 के अधीन स्पष्ट प्रावधान है कि उक्त अधिनियम की धारा 42 के अधीन आवेदन के लिए परिसीमा अवधि नहीं होगी। चूँकि उक्त अधिनियम 1.11.1949 से प्रभाव में आया, याचीगण के पास 1.11.1949 के पहले प्रतिकूल कब्जा द्वारा अभिधान पुख्ता करने के बिन्दु पर तर्क करने लायक मामला हो सकता था और इसके लिए प्रतिकूल कब्जा के अन्य अवयवों के अतिरिक्त 1.11.1949 के 12 वर्ष पहले से कब्जा सिद्ध किए जाने की आवश्यकता थी।

k. वर्तमान दोनों पक्षों ने इस बिन्दु पर तर्क किया कि रिट याचीगण संपत्ति अपने पास रखने के हकदार केवल तब होंगे जब वे यह सिद्ध करने में सक्षम होते हैं कि वे 1.11.1949 के पहले की अवधि से 12 वर्ष तक संपत्ति पर काबिज हैं और रिट याचीगण यह सिद्ध करने में विफल रहे हैं जैसा पहले ही उपर अभिनिर्धारित किया गया है।

11. इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन यह न्यायालय रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता है जिसे एतद्द्वारा खारिज किया जाता है। यह न्यायालय पाता है कि विद्वान आयुक्त ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि रिट याचीगण बिल्कुल बाहरी लोग हैं जो व्यवसाय के प्रयोजन से आए थे और प्रश्नगत संपत्ति पर उनका कब्जा संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20(1) के प्रावधान के घोर उल्लंघन में है और तद्नुसार, उन्हें संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 42 के प्रावधान के अधीन संपत्ति से बेदखल करने का निर्देश सही प्रकार से दिया गया है।

12. तद्नुसार,यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

भुनेश्वर महतो

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (S.J.) No. 134 of 2004. Decided on 26th April, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 262 वर्ष 1997 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 23.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 324—घोर उपहति–दोषसिद्धि एवं दंडादेश—प्राथमिकी दर्ज करने में विलंब—घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है—कुआँ जिससे मृत शरीर निकाला गया था का उपयोग गाँववालों द्वारा किया जाता था जिसके बारे में सूचक ने दावा किया है कि उसने इसका उपयोग नहीं किया है—ऐसी परिस्थितियों के अधीन सूचक के बयान पर विश्वास नहीं किया जा सकता है—यह ऐसा मामला है जहाँ मृतक के शरीर पर उपहति नहीं पायी गयी थी और डॉक्टर ने मत दिया है कि मृत्यु डूबने के कारण दम घुटने से हुई है—मृतक स्वयं कुआँ में गिर गया होगा और ऐसे विलंब के साथ झूठा मामला संस्थित किया गया है—संदेह का लाभ देकर अपीलार्थी दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 21 से 26)

अधिवक्तागण.–M/s Prabhat Kumar Sinha, Diwakar Jha, For the Appellant; Mr. Abhay Kumar Tiwari, For the State.

न्यायालय द्वारा.–अधिवक्ता श्री दिवाकर झा द्वारा सहायित अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभात कुमार सिन्हा और राज्य के विद्वान अधिवक्ता, अपर लोक अभियोजक श्री अभय कुमार तिवारी सुने गए।

2. वर्तमान दाण्डिक अपील विद्वान सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा सत्र विचारण सं॰ 262 वर्ष 1997 में पारित दिनांक 23.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा एकमात्र अपीलार्थी भुनेश्वर महतो को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन किए गए अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और 5000/- रुपयों के जुर्माना (जुर्माना राशि का भुगतान सूचक सीता देवी को किया जाएगा) के साथ एक वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया है और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में अपीलार्थी छह माह के कठोर कारावास का दंडादेश आगे भुगतेगा। अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302 एवं 201 के अधीन आरोपित किया गया है किंतु विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया है।

3. दोषसिद्ध के उक्त आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश से व्यथित होकर इस माननीय न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपील दाखिल की गयी है जिसे 6.2.2004 को ग्रहण किया गया है और तब से यह दांडिक अपील इस न्यायालय के समक्ष लंबित है।

4. अभियोजन मामला 6.1.1997 को अपराह्न 3.30 बजे पुलिस सब इंसपेक्टर कृष्ण कुमार द्वारा मुफ्फसिल पुलिस थाना, हजारीबाग में दर्ज भुनेश्वर ठाकुर (मृतक) की पत्नी सीता देवी के फर्दबयान पर आधारित है जहाँ सूचक ने अभिकथित किया है कि वृहस्पतिवार (2.1.1997) को पूर्वाह्न लगभग 11 बजे जब सँपेरा साँप का खेल दिखा रहा था जिसे अपीलार्थी भुनेश्वर महतो के घर के निकट भुनेश्वर

ठाकुर (मृतक) एवं अन्य सहग्रामीण द्वारा देखा जा रहा था। सूचक भी पीछे से इसे देख रही थी। कुछ समय बाद भुनेश्वर महतो (अपीलार्थी) ने उसके पति से पूछा कि वह अपनी दाढ़ी बाल क्यों नहीं बना रहा है जिस पर उसके पति ने प्रकट किया कि उसका पुत्र दिनेश ठाकुर औजार हजारीबाग ले गया है और इस दशा में इसे कल तक काटा जाएगा। सूचक ने अभिकथित किया है कि इस पर भुनेश्वर महतो क्रोधित हो गया और उसके पति को गाली देने लगा। जब उसके पति द्वारा विरोध किया गया था, तब भुनेश्वर महतो जो अपने हाथ में डंडा लिया था उसके पति पर प्रहार करने लगा और सूचक रोने लगी किंतु उस समय तक अभियुक्त उसके पति पर डंडा से अनेक प्रहार कर चुका था। ग्रामीणों ने उसको रोका। तत्पश्चात भुनेश्वर महतो ने सूचक के पति पर प्रहार करना छोड़ दिया किंतु उस समय तक उसका पति पहले ही जमीन पर गिर गया था और तत्पश्चात उसने उसके चेहरा, छाती एवं गर्दन पर मुक्का से प्रहार किया और गाँववालों को वहाँ से जाने के लिए भी कहा। गाँववाले अपने घर चले गए और सूचक ने अपने पुत्र दिनेश के साथ अपने पति को घर लाने का प्रयास किया किंतु वह दर्द में था और बेहोश हो गया। सूचक ने अभियुक्त से अनेक याचना किया किंतु उसने उसे गाली दिया और घर वापस जाने को कहा और कहा कि उसका पति ठीक हो जाएगा। जब अंधेरा हो गया, सूचक अपने पुत्र दिनेश के साथ शरीर ढाँकने के लिए कुछ वस्त्र लाने अपने घर गयी किंतु उस समय तक ठंड हो चुकी थी और जब सूचक दरी के साथ लौटी, उसने अपने पति को वहाँ नहीं पाया। सूचक ने भुनेश्वर महतो और उसके घर वालों से अपने पति के बारे में पूछा जिन्होंने प्रकट किया है कि उन्हें जानकारी नहीं है, वह कहीं चला गया होगा, जाओ और उसकी तलाश करो। तत्पश्चात अगली सुबह वह अपने ससुर गौरी हजाम को सूचित करने गयी जो हजारीबाग स्टेडियम में प्रहरी के रूप में कार्यरत था और उसको घटना के बारे में बताया।

इस बीच उसने समस्त संभव स्थानों पर अपने पति का तलाश किया किंतु अपने पति का अता-पता नहीं लगा सकी थी। देगनी देवी नामक एक ग्रामीण जो उसके घर के सामने रहती है 6.1.1997 को प्रातः लगभग 10 बजे उसके घर आयी और कहा कि उसके घर के निकट कुआँ में एक मृत शरीर पड़ा है। सूचक कुआँ पर गयी और मृत शरीर देखा। तत्पश्चात सूचक ने शरीर पहचाना और रोने लगी। मृतक का मृत शरीर कुआँ से निकाला गया था सूचक पुलिस थाना गयी और अपना बयान दिया।

5. फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302 एवं 201 के अधीन दिनांक 6.1.1997 का सदर मुफ्फसिल पी॰ एस॰ केस सं॰ 5/1997, जी॰ आर॰ सं॰ 28 वर्ष 1997 के तत्सम, दर्ज किया और अन्वेषण के बाद पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 201 एवं 120(B) के अधीन दिनांक 26.4.1997 का आरोप-पत्र दाखिल किया।

6. अपराध का संज्ञान 2.5.1997 को लिया गया था और दिनांक 21.5.1997 की अधिसूचना के तहत मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था।

7. अभियुक्त अपीलार्थी भुनेश्वर महतो के विरूद्ध 28.1.2000 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 201 के अधीन आरोप विरचित किए गए हैं।

8. अभियोजन ने कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया है और दस्तावेजी साक्ष्य भी दिया है। फर्दबयान पर गौरी हजाम का हस्ताक्षर सिद्ध किया गया है। और प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया है। शव परीक्षण रिपोर्ट

प्रदर्श 2, फर्दबयान प्रदर्श 3, फर्दबयान पर पृष्ठांकन प्रदर्श 3/1, औपचारिक प्राथमिकी पर सुनील कुमार सिंह का हस्ताक्षर प्रदर्श 4 और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श 5 है।

9. मामला की सूचक सीता देवी का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि घटना तीस वर्ष पहले वृहस्पतिवार को प्रात: 11 बजे जब वह घटना स्थल के निकट गयी जहाँ सँपेरा साँप का खेल दिखा रहा था, जिसे अपीलार्थी भुनेश्वर महतो एवं उसके पति भुनेश्वर ठाकुर के साथ अनेक व्यक्तियों द्वारा देखा जा रहा था। कुछ समय बाद, भुनेश्वर महतो ने उसके पति से पूछा कि वह दाढ़ी क्यों नहीं बना रहा है जिस पर उसके पति ने उत्तर दिया कि उसका पुत्र दिनेश ठाकुर दाढ़ी बनाने का औजार अपने साथ हजारीबाग ले गया है और इसे उसके लौटने के बाद शुक्रवार को बनाया जाएगा। तत्पश्चात भुनेश्वर महतो ने उसके पति पर डंडा से प्रहार किया और सूचक को भी फटकारा। सूचक ने अभिकथित किया है कि उसका पति प्रहार के बाद गिर गया और जब उसने भुनेश्वर महतो से अपने पति को घर ले जाने में मदद करने के लिए कहा, उसने उसको धमकी दी। उसके पति द्वारा पायी गयी उपहतियों के कारण वह खड़ा नहीं हो पा रहा था और तत्पश्चात सूचक कपड़ा लाने घर गयी जिसका उपयोग बिस्तर की तरह किया जा सके क्योंकि ठंड हो चुकी थी। सूचक अपने पुत्र के साथ लौटी किंतु जब वह लौटी, उसका पति वहाँ नहीं था। सूचक भुनेश्वर महतो के घर गयी और अपने पति के बारे में पूछा किंतु उसने कहा कि उसे जानकारी नहीं है और उसे जाना चाहिए और उसकी तलाश करनी चाहिए। अगली सुबह वह अपने ससुर गौरी हजाम के पास हजारीबाग गयी जिसने भी भुनेश्वर महतो से पूछा किंतु कुछ भी प्रकट नहीं किया गया है। दो दिन बाद सह-ग्रामीण महिला (उसे उसका नाम याद नहीं है) आयी और प्रकट किया कि एक व्यक्ति का मृत शरीर कुआँ में था जिसपर सूचक कुआँ पर गयी और अपने पति का मृत शरीर देखा। सूचक अपने ससुर के साथ पुलिस थाना गयी और घटना के बारे में सूचित किया और इसे दर्ज किया गया था और उसने इस पर अंगूठा का निशान लगाया। उसने आगे कथन किया कि उसका ससुर भी उपस्थित था जिसने भी हस्ताक्षर किया है जिसे प्रदर्श 1 के रूप में पहचाना एवं चिन्हित किया गया है।

सूचक ने प्रतिपरीक्षण के दौरान स्वीकार किया है कि अभियुक्त का घर और सूचक का घर एक-दूसरे के आमने सामने है और सँपेरा उसके घर के सामने खेल दिखा रहा था, जो भुनेश्वर महतो के घर का पिछवाड़ा है, जहाँ उसके पति सहित सारे गाँववाले जमा थे किंतु वह वहाँ उपस्थित व्यक्तियों का नाम नहीं कह सकी थी। उसने आगे कथन किया है कि 2-4 सहग्रामीणों ने भुनेश्वर महतो से उस पर प्रहार नहीं करने को कहा किंतु उसे उन व्यक्तियों का नाम याद नहीं है। उसने आगे कथन किया है कि जब उसके पति पर प्रहार किया गया था, उस समय पर अनेक सहग्रामीण उपस्थित थे किंतु उसे उनका नाम याद नहीं है। प्रतिपरीक्षण के दौरान, पैराग्राफ 9 में उसने स्वीकार किया है कि उसका पति कभी-कभार मदिरा सेवन करता था और पहले भी पानी भरते हुए वह कुआँ में गिरा था और उसे सह ग्रामीणों द्वारा बचाया गया था और भुनेश्वर ठाकुर को फटकार गया था कि उसे मदिरा सेवन के बाद कुआँ के पास नहीं जाना चाहिए और उसका पति पहले भी इसी कुआँ में गिरा है।

10. पीड़िता के पिता एवं सूचक के ससुर गौरी हजाम का परीक्षण अ॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने कथन किया है कि जब घटना हुई, वह हजारीबाग स्टेडियम में कार्यरत था। उसके

पौत्र दिनेश ठाकुर ने उसको सूचित किया कि उसका पिता घर में नहीं है क्योंकि भुनेश्वर महतो द्वारा उसपर प्रहार किया गया था। तीन दिन बाद इस गवाह के पौत्र ने सूचित किया है कि उसके पिता (भुनेश्वर ठाकुर) का मृत शरीर कुआँ में पड़ा था जिसे निकाला गया है और तत्पश्चात यह गवाह वहाँ गया और मृत शरीर देखा और वहाँ उसने सूचना पाया कि भुनेश्वर महतो ने भुनेश्वर ठाकुर पर प्रहार किया है। इस गवाह ने कथन किया है कि उसके पुत्र वधु का फर्दबयान मुफ्फसिल पुलिस थाना में दर्ज किया गया था जहाँ वह भी उपस्थित था और उसने भी हस्ताक्षर किया है जिसे प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया है।

इस गवाह ने प्रतिपरीक्षण के दौरान कथन किया कि उसका पौत्र दिनेश ठाकुर हजारीबाग स्टेडियम आया और अपने पिता के बारे में सूचित किया जिस पर उसने कहा कि वह (भुनेश्वर ठाकुर) किसी संबंधी के पास चला गया होगा। इस गवाह ने यह भी स्वीकार किया है कि उसका पुत्र कभी कभार मदिरा सेवन करता था। इस गवाह ने स्पष्टत: कथन किया है कि उसने अपनी उपस्थिति में कोई घटना नहीं देखा है।

11. पीड़ित एवं सूचक के पुत्र दिनेश ठाकुर का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। उसने कथन किया है कि उसके हजारीबाग से लौटने के बाद उसकी छोटी बहन रिंकी ने प्रकट किया है कि उसके पिता पर उनके घर के सामने भुनेश्वर महतो द्वारा प्रहार किया गया है। इस गवाह ने अपने पिता को घायल दशा में वहाँ पड़े देखा और तत्पश्चात उसकी माता ने प्रकट किया है कि एक सँपेरा आया और जबकि खेल दिखा रहा था, उसका पिता भी उसकी माता के साथ भी वहाँ था। (आपत्ति की गयी थी कि वह अनुश्रुत गवाह है।)

इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 5 में कथन किया है कि अगले दिन सुबह वह गौरी हजाम (दादा) के पास गया जो हजारीबाग स्टेडियम में था और प्रकट किया है कि उसके पिता पर प्रहार किया गया था और यह भी सूचित किया कि उसे अपने पिता का अता-पता नहीं चल रहा है। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 6 में स्वीकार किया है कि हजारीबाग पुलिस थाना हजारीबाग स्टेडियम से लगभग आधा कि॰ मी॰ की दूरी पर अवस्थित है जो मुफ्फसिल पुलिस थाना है और साँप के खेल के समय पर 100 गाँववाले उपस्थित थे। इस गवाह ने अपने प्रति-परीक्षण के पैराग्राफ 8 में स्वीकार किया है कि कुआँ जिससे उसके पिता का मृत शरीर निकाला गया था, उसके घर से 5-6 कदम की दूरी पर है और वह उस कुआँ का उपयोग नहीं कर रहा है बल्कि पड़ोसी उस कुआँ का उपयोग कर रहे हैं। इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 9 में यह भी स्वीकार किया है कि पहले भी उसका पिता अपनी गलती के कारण कुआँ में गिरा है।

12. डॉ॰ बिमल कुमार वर्मा का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया है। वह चिकित्सा अधिकारी है जिन्होंने 7.1.1997 को अपराह्न 10 बजे भुनेश्वर ठाकुर के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और मृत शरीर पर कोई मृत्यु पूर्व उपहति मौजूद नहीं पाया छाती के बाएँ भाग के पीछे पुराना अल्सर मौजूद था। आंतरिक परीक्षण करने पर दोनों फेफड़े स्पंजी, सूजे हुए और कट सेक्शन डिसचार्ज फेन पाया है। डॉक्टर ने मत दिया है कि मृत्यु का कारण डूबने के कारण दम घुटना था। उन्होंने अपने द्वारा तैयार एवं हस्ताक्षरित शव परीक्षण रिपोर्ट की प्रतिलिपि प्रदर्श 2 सिद्ध किया है।

प्रतिपरीक्षण के दौरान गवाह ने स्पष्टत: कथन किया कि उन्होंने हिंसा का उपहति नहीं पाया है।

13. देगनी देवी का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है। उसने कुआँ में भुनेश्वर ठाकुर का मृत शरीर देखा और तत्पश्चात सूचक को सूचित सीता देवी को इसके बारे में सूचित किया।

14. अनूप कुमार शर्मा का परीक्षण अ॰ सा॰ 6 के रूप में किया गया है। वह मृत्यु समीक्षा का गवाह है जिसने किसी टेक लाल ठाकुर के साथ मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर अपना हस्ताक्षर किया है और भुनेश्वर ठाकुर की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है।

15. शंभु मोची का परीक्षण अ॰ सा॰ 7 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने स्पष्टत: कथन किया है कि उसे जानकारी नहीं है कि किस प्रकार भुनेश्वर ठाकुर की मृत्यु हुई थी और न ही उसे मामला की जानकारी है। तब भी अभियोजन ने इस गवाह को पक्षद्रोही घोषित नहीं किया है।

16. प्रीतम ठाकुर का परीक्षण अ॰ सा॰ 8 के रूप में किया गया है। इस गवाह ने स्वीकार किया है कि भुनेश्वर ठाकुर का मृत शरीर कुआँ से निकाला गया था और शव परीक्षण के लिए भेजा गया था। उसने कटघरा में अभियुक्तों को पहचाना है और कहा है कि उसे जानकारी नहीं है कि वह किस मामला में अभिरक्षा में है।

इस गवाह ने अपने प्रतिपरीक्षण के पैरा 3 में कथन किया है कि वह हजारीबाग के सैलून में कार्यरत है और हजारीबाग में भुनेश्वर ठाकुर की मृत्यु के बारे में सूचना पाया। प्रतिपरीक्षण के दौरान उसने स्पष्टत: कथन किया है कि उसे जानकारी नहीं है कि किस प्रकार भुनेश्वर ठाकुर की मृत्यु हुई।

17. कृष्णा कुमार, पुलिस एस॰ आई॰ का परीक्षण अ॰ सा॰ 9 के रूप में किया गया है। वह पुलिस अधिकारी है जिसने फर्दबयान दर्ज किया है जिसे प्रदर्श 3, उसका इस पर हस्ताक्षर प्रदर्श 3/1 और सुनील कुमार सिंह द्वारा हस्ताक्षारित औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 4 चिन्हित की गयी है, इस गवाह ने कथन किया है कि उसने अन्वेषण का प्रभार लिया और मामला का अन्वेषण किया। मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट टेकलाल ठाकुर एवं अनूप कुमार शर्मा की उपस्थिति में तैयार की गयी थी जिसे प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया है और तत्पश्चात शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा गया था और घटना स्थल के निरीक्षण के बाद कुआँ गाँव वालों का कॉमन कुआँ पाया गया था जो गौरी हजाम के बयान के मुताबिक 10 मीटर व्यास का था और पानी से भरा था जिसमें मृतक भुनेश्वर ठाकुर का मृत शरीर पाया गया था। कुआँ की गहराई 40 से 50 फीट है। इस गवाह ने कथन किया है कि मामला के अन्वेषण के बाद अभियुक्त के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था।

इस गवाह ने अपने प्रति परीक्षण के पैराग्राफ 7 में स्वीकार किया है कि उसके व्यक्तियों जिनके घर घटना स्थल के निकट अवस्थित हैं का नाम प्रकट करके अपनी डायरी में घटना स्थल वर्णित नहीं किया है। इस गवाह ने स्वीकार किया है कि उसने केस डायरी में उल्लेख किया है कि डेढ़ माह पहले भी यह भुनेश्वर ठाकुर कुआँ में गिरा है।

18. अभियोजन साक्ष्य दर्ज करने के बाद भुनेश्वर महतो (अपीलार्थी) का बयान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया है।

19. विद्वान विचारण न्यायालय ने अन्वेषण के दौरान संग्रहित साक्ष्य के आधार पर और पक्षों को सुनने के बाद अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया क्योंकि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302/201 के अधीन आरोपित किया को दोषी नहीं पाया है।

20. श्री दिवाकर झा द्वारा सहायित अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभात कुमार सिन्हा और राज्य के विद्वान अधिवक्ता अपर लोक अभियोजक श्री अभय कुमार तिवारी सुने गए। अभिलेख, प्राथमिकी,

प्रदर्शों का परिशीलन किया गया। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सूचक के फर्दबयान (प्रदर्श 3) के मुताबिक प्राथमिकी की दाखिली में अत्यधिक विलंब हुआ है। सूचक का पुत्र (दिनेश ठाकुर) उसके ससुर गौरी हजाम जो हजारीबाग स्टेडियम में प्रहरी के रूप में कार्यरत था के पास घटना के अगले दिन अर्थात 3.1.1997 को गया था किंतु हजारीबाग मुफ्फसिल पुलिस थाना में सूचना नहीं दी गयी थी और न ही 2.1.1997 से भुनेश्वर महतो के गायब होने के बारे में गाँव के चौकीदार को सूचना दी गयी थी और केवल कुआँ में भुनेश्वर ठाकुर का शरीर पाए जाने के बाद प्राथमिकी 6.1.1997 को दर्ज की गयी थी। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभात कुमार सिन्हा ने आगे निवेदन किया है कि डॉ॰ विमल कुमार वर्मा (अ॰ सा॰ 4) ने कोई मृत्यु पूर्व उपहति नहीं पाया है बल्कि डॉक्टर ने मत दिया है कि मृत्यु का कारण पानी में डूबना था। उन्होंने हिंसा का कोई उपहति नहीं पाया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सीता देवी ऐसी गवाह नहीं है जिसके साक्ष्य पर न्यायालय विश्वास कर सकता है क्योंकि सीता देवी ने फर्द बयान में विरोधाभासी बयान दिया है। फर्दबयान के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि उसके पति भुनेश्वर ठाकुर ने भुनेश्वर महतो (अपीलार्थी) से कहा है कि दाढ़ी बनाने का औजार उसके पुत्र द्वारा हजारीबाग ले जाया गया है किंतु फर्दबयान के परिशीलन से सीता देवी ने कथन किया है कि वह अपने पुत्र दिनेश ठाकुर के साथ अपने पति को घटना स्थल से उठा कर अपने घर जाने का प्रयास कर रही थी और जब वे ऐसा नहीं कर सके थे, वे कुछ कपड़ा लाने घर गए। सामान्य मानव आचरण यह है कि यदि माता एवं पुत्र उपस्थित हैं, तब एक व्यक्ति घटना स्थल पर घायल के साथ बना रहेगा और दूसरा व्यक्ति कपड़ा लाने घर जाएगा। इसके अतिरिक्त, उसका घर घटना स्थल के सामने अवस्थित है जो भुनेश्वर महतो के घर का पिछवाड़ा है और इस दशा में फर्दबयान में सूचक का स्पष्टीकरण स्वयं संदेहपूर्ण है।

21. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कथन किया है कि इस मामले में परीक्षण किया गया कोई भी गवाह घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। यद्यपि सूचक ने अपने फर्दबयान में कथन किया है कि जब सँपेरा खेल दिखा रहा था, घटना स्थल पर 100 ग्रामीण उपस्थित थे। घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है और ऐसे साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी के विरूद्ध अपराध का दोष अभिकथित नहीं किया जा सकता है। विचारण न्यायालय ने गलत रूप से अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया है क्योंकि विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302/201 के अधीन अपीलार्थी के दोषसिद्धि के लिए सामग्री नहीं पाया है और इस दशा में दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश द्वारा अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्धि विधि में दोषपूर्ण है और अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

22. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री अभय कुमार तिवारी ने निवेदन किया है कि सूचक घटना की चश्मदीद गवाह है और उसका साक्ष्य अभियोजन मामला के साथ संगत है और विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध किया है और विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं 201 के अधीन दोषमुक्त किया है और इस दशा में इस चरण पर दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडोदश में कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता है।

23. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और फर्दबयान, अभिसाक्ष्य एवं प्रदर्शों सहित अवर न्यायालय अभिलेख का परिशीलन करने के बाद इस न्यायालय का मत है कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदन में बल है। यह सत्य है कि प्राथमिकी दर्ज करने में विलंब हुआ है। इसके अतिरिक्त, विचारण के दौरान अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिया गया साक्ष्य डॉ॰ बिमल कुमार वर्मा (अ॰ सा॰ 4) द्वारा सिद्ध की गयी शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 2) के साथ संगत नहीं है। अभियोजन मामला का समर्थन करने के लिए इस मामला में किसी ग्रामीण का परीक्षण नहीं किया गया है यद्यपि स्वयं सूचक द्वारा 100 लोगों की उपस्थिति स्वीकार की गयी है। इस तथ्य से यह भी प्रकट है कि कुआँ जिससे मृत शरीर बाहर निकाला गया था उसके घर के सामने 5-6 कदम की दूरी पर अवस्थित है और उस कुआँ का उपयोग ग्रामीणों द्वारा किया जाता था किंतु सूचक (अ॰ सा॰1) ने दावा किया कि वे इसका उपयोग नहीं करते थे। ऐसी परिस्थितियों के अधीन, सूचक के बयान पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। यह भी सत्य है कि मृतक भुनेश्वर ठाकुर कभी कभार मदिरा सेवन करता था जैसा स्वयं अ॰ सा॰ 1 द्वारा स्वीकार किया गया है और ढ़ाई माह पहले वह कुआँ में गिरा भी था जैसा उसके पुत्र दिनेश (अ॰ सा॰ 3) ने स्वीकार किया है। गौरी हजाम ने भी स्वीकार किया है कि मृतक मदिरा सेवन करता था। आगे गौरी हजाम ने कभी नहीं कहा है कि उसकी पुत्रवधु सुबह उसके पास आयी बल्कि उसने कहा है कि उसका पौत्र अगली सुबह उसके पास आया था किंतु यह तथ्य प्रकट नहीं किया कि उसके पिता पर भुनेश्वर महतो द्वारा प्रहार किया गया था जिस पर गौरी हजाम ने कहा कि उसका पिता किसी संबंधी के घर चला गया होगा, और इस दशा में एकमात्र चश्मदीद गवाह सीता देवी की विश्वसनीयता संदेहास्पद है और स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

24. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में अपीलार्थी भुनेश्वर महतो के पक्ष में संदेह का लाभ दिया जाता है क्योंकि मृतक के शरीर पर उपहति नहीं पायी गयी है और डॉक्टर ने मत दिया है कि मृत्यु डूबने के कारण दम घुटने से हुई, मृतक शायद स्वयं कुआँ में गिर गया होगा और ऐसे विलंब के साथ झूठा मामला संस्थित किया गया है।

25. परिणामस्वरूप, सदर मुफ्फसिल पी॰ एस॰ केस सं॰ 5/1997, जी॰ आर॰ सं॰ 28 वर्ष 1997 के तत्सम, के संबंध में सत्र विचारण सं॰ 262 वर्ष 1997 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 23.12.2003 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश अपास्त करके अपीलार्थी भुनेश्वर महतो को संदेह का लाभ दिया जाता है। अपीलार्थी भुनेश्वर महतो को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया जाता है और अपीलार्थी जो जमानत पर है को उसके जमानत बंधपत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

26. वर्तमान अपील अनुज्ञात की जाती है।

27. इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को भेजे जाएँ।

माननीय अनिल कुमार चौधरी एवं राजेश कुमार, न्यायमूर्तिगण

बिरमानी टुडु

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 321 of 2014. Decided on 21st April, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 297 वर्ष 2009 में सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 23.2.2012 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या—आजीवन कारावास—घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है और अभियोजन मामला केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है—इस बारे में साक्ष्य में अंतर है कि कब मृतका को उसके छात्रावास से अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा लाया गया था—अभियोजन गवाहों के साक्ष्य में अंतर एवं अतिशयोक्ति है—डॉक्टर ने मत दिया है कि मृतका की मृत्यु उसका गला दबाकर कारित की गयी थी और मृत्यु पूर्व उपहतियाँ कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी थी—इस बारे में अभियोजन द्वारा कोई साक्ष्य बिलकुल नहीं दिया गया है कि किस प्रकार मृतका को ये उपहतियाँ कारित की गयी थी—अभियुक्त-अपीलार्थी के अलावा किसी और की अंतर्ग्रस्तता से इनकार करने के लिए व्यक्तियों जो अभियुक्त अपीलार्थी के आवासीय क्वार्टर पर आते-जाते थे के प्रति अन्वेषण अधिकारी द्वारा अन्वेषण नहीं किया गया है—घटना के पीछे का हेतु दर्शाया नहीं जा सका था—अभियोजन अपना मामला युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में बुरी तरह विफल रहा और परिस्थितियाँ ऐसी प्रकृति की नहीं हैं जो किसी गलती के बिना अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा अपराध किए जाने के दोष की ओर इंगित करती हैं—संदेह का लाभ देकर अपीलार्थी को दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 17 एवं 18)

निर्णयज विधि.—AIR 1982 SC 1157—Relied.

अधिवक्तागण.—Dr. Hasnain Waris, For the Appellant; Mr. Pankaj Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—पक्षों को सुना गया।

2. यह अपील विद्वान सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदुपर द्वारा में पारित दिनांक 23.2.2012 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन उन्होंने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोष सिद्ध किया है और उसको कठोर आजीवन कारावास भुगतने तथा 5000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया है।

3. सूचक द्वारा फर्दबयान में प्रकट किया गया अभियोजन मामला यह है कि सूचक सोना राम मांझी को सोना राम सोरन जो अपीलार्थी का भाई होने का दावा करता है ने सूचित किया कि अपीलार्थी ने उसकी लगभग 11 वर्षीया पुत्री पुतुल की हत्या कर दी है। सूचना पाने पर सूचक सोना राम मांझी स्वर्ण रेखा कॉलोनी में अपीलार्थी अभियुक्त के आवासीय क्वार्टर गया और उस क्वार्टर में पड़ा पुतुल का मृत शरीर देखा। मृत शरीर के मुँह से फेन बाहर आ रहा था और मृत शरीर के निकट रोटी के कुछ टुकड़ों के साथ कीटनाशक पैकेट के फटे टुकड़े पड़े थे। अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा अपनी साड़ी में एक चम्मच एवं कीटनाशक पैकेट का भाग छुपाया गया पाया था। सूचक को प्रतीत हुआ कि अभियुक्त अपीलार्थी ने जहर देकर उसकी पुत्री की हत्या कर दी है। फर्दबयान में यह उल्लेख भी किया गया है कि मृतका पुतुल सिधु कानू विद्यालय में कक्षा IV में अध्ययनरत थी और छात्रावास में रह रही थी किंतु अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा उसको विद्यालय छात्रावास से अपने आवासीय क्वार्टर जबरन लाया गया था और अभियुक्त-अपीलार्थी पुतुल की मृत्यु के बाद अलग-अलग बात कर रही थी।

4. सूचक के फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने मानगो (ओलीडीह) पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 264 वर्ष 2007 दर्ज किया और मामला का अन्वेषण किया। अन्वेषण पूरा करने के बाद पुलिस ने मामला में आरोप पत्र दाखिल किया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किए जाने के बाद मामला विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट-III, जमशेदपुर को अंतरित किया गया था और विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट-III, जमशेदपुर ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप विरचित किया। अभियुक्त के आरोप के प्रति निर्दोषिता का अभिवचन करने एवं विचारण किए जाने का दावा करने पर उसका विचारण किया गया था।

5. अपने मामला के समर्थन में अभियोजन ने कुल आठ गवाहों का परीक्षण किया है। इस मामला में बचाव द्वारा साक्ष्य नहीं दिया गया था। घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है और अभियोजन मामला केवल परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है।

6. अ॰ सा॰ 3 सोनाराम मांझी मामला का सूचक है। उसने कथन किया है कि उसे सोनाराम सोरेन (अ॰ सा॰ 4) द्वारा टेलीफोन से सूचित किया गया था कि अभियुक्त जो स्वर्ण रेखा कॉलोनी में रहती है कह रही है कि उसने उसकी पुत्री की हत्या की है। अ॰ सा॰ 4 से सूचना पाने पर अ॰ सा॰ 3 ने पुलिस थाना को सूचित किया। अ॰ सा॰ 3 एवं पुलिस अपीलार्थी के घर आए। अ॰ सा॰ 4 भी वहाँ था। दरवाजा खोलने पर उन्होंने पुतुल का मृत शरीर वहाँ पड़े पाया और उसके मुँह से फेन बाहर आ रहा था। मृत शरीर के निकट फटा पैकेट, चम्मच पड़ा था जिसे पुलिस द्वारा दर्ज किया गया था। जब पुलिस ने अभियुक्त अपीलार्थी को पकड़ा, उसे अपनी साड़ी में कीटनाशक पैकेट छुपाया हुआ पाया गया था। पुलिस ने अभिग्रहण सूची तैयार किया। अ॰ सा॰ 3 ने अभिग्रहण सूची पर अपना हस्ताक्षर पहचाना जिसे पहले प्रदर्श 1/1 चिन्हित किया गया था। उसने पुलिस अधिकारी का हस्तलेखन भी पहचाना जिसने उसका बयान दर्ज किया और उसका फर्दबयान प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया था। अ॰ सा॰ 3 सिधु कान्हू विद्यालय का सचिव था और मृतका विद्यालय के छात्रावास में रहने वाली छात्रा थी। घटना के दो दिन पहले अपीलार्थी-अभियुक्त मृतका को पूजा संपन्न करने के लिए विद्यालय से लायी थी। अ॰ सा॰ 3 ने अभियुक्त अपीलार्थी जो न्यायालय में उपस्थित थी को पहचाना। अपने प्रतिपरीक्षण में अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि वह मृतका की हत्या का कारण नहीं जानता है। उसने आगे कथन किया है कि वह नहीं जानता है कि अभिग्रहण सूची में क्या लिखा था और वह यह भी नहीं जानता है कि कौन अभियुक्त-अपीलार्थी के घर आते-जाते थे।

7. अ॰ सा॰ 4 सोनाराम सोरेन दावा करता है कि मृतका उसकी भतीजी थी। उसने आगे कथन किया है कि घटना के एक दिन पहले अभियुक्त-अपीलार्थी मृतका को छात्रावास से जबरन लायी और उस रात अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसको जहर देकर उसकी पुत्री की हत्या कर दी। अ॰ सा॰ 4 को इसके बारे में अगले दिन पता चला। जब अ॰ सा॰ 4 अभियुक्त-अपीलार्थी के घर गया, उसने मृतका पुतुल का मृत शरीर वहाँ पड़ा पाया और अभियुक्त-अपीलार्थी की हथेली में जहर था पुलिस आयी और मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया। अ॰ सा॰ 4 ने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर भी हस्ताक्षर किया जिसे अ॰ सा॰ 4 द्वारा पहचाने जाने पर प्रदर्श 1/3 चिन्हित किया गया था। उसने आगे कथन किया कि पूछे जाने पर अभियुक्त अपीलार्थी ने कुछ भी नहीं कहा था। अपने प्रतिपरीक्षण में अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी को ग्राम सलदोहा में अपने चाचा के घर में पाया गया था जो घटना स्थल से 5-6 किलोमीटर की दूरी पर है। वह नहीं जानता है कि क्या लिखा गया था और उसने केवल हस्ताक्षर किया क्योंकि उसे

हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया था। अपने प्रतिपरीक्षण के दौरान पैराग्राफ 10 में उसने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी घटना के पहले उपद्रव में लिप्त होती थी और अन्य पर प्रहार किया करती थी। घटना के 2-3 वर्ष पहले उसकी मानसिक दशा समुचित नहीं थी किंतु किसी अस्पताल में उसका इलाज नहीं किया गया था बल्कि झाड़-फूँक करनेवाले ने उसका इलाज किया गया। अ॰ सा॰ 3 जानता था कि अभियुक्त-अपीलार्थी की मानसिक दशा ठिक नहीं थी। पागलपन के दौरों के दौरान वह प्रहार करने अथवा दाँत काटने के लिए लोगों का पीछा करती थी। अत: अ॰सा॰ 4 ने अभियुक्त अपीलार्थी के घर जाना छोड़ दिया था। अ॰ सा॰ 4 ने आगे कथन किया कि पुलिस द्वारा उसका परीक्षण नहीं किया गया था और उसने घटना नहीं देखा है। अ॰ सा॰ 4 ने यह कथन भी किया कि अपनी मानसिक दशा के कारण अभियुक्त-अपीलार्थी ने अपराध किया। पैराग्राफ 22 में, अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया कि अभियुक्त अपीलार्थी के पड़ोसी उसके व्यवहार से चिढ़े हुए थे और वे अ॰ सा॰ 4 पर अभियुक्त अपीलार्थी को उसके उक्त आवासीय क्वार्टर से कहीं और ले जाने के लिए जोर डाल रहे थे किंतु चूँकि अभियुक्त अपीलार्थी अपने आवासीय क्वार्टर में रह रही थी, अत: अ॰ सा॰ 4 एवं अन्य उसको कहीं और शिफ्ट नहीं कर सके थे। अ॰ सा॰ 4 ने आगे कथन किया कि वह उन लोगों को नहीं जानता है जो अभियुक्त अपीलार्थी के घर आते जाते थे।

8. अ॰ सा॰ 1 नंदू प्रसाद पुलिस द्वारा जब्त की गयी वस्तुओं के अधिग्रहण और मृतका के मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा का गवाह है। उसने अभिग्रहण सूची पर अपना हस्ताक्षर एवं अ॰ सा॰ 3 का हस्ताक्षर पहचाना है जिसे क्रमश: प्रदर्श 1 एवं 1/1 चिन्हित किया गया है और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 3 का हस्ताक्षर क्रमश: प्रदर्श ½ एवं 1/3 चिन्हित किया गया है।

9. अ॰ सा॰ 5 भूषण चंद्र कुमार ने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी ने जहर देकर उसकी पुत्री की हत्या की है। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 6 रंजीत कुमार सहदेव ने भी कथन किया है कि उसे जानकारी हुई कि अभियुक्त ने जहर देकर उसकी पुत्री की हत्या की।

10. अ॰ सा॰ 2 डॉक्टर है जिन्होंने मृतका पुतल के मृत शरीर का शव परीक्षण किया है। उन्होंने निम्नलिखित उपहतियाँ पाया है:-

> *I. परीक्षण पर शरीर पर बाह्य उपहति नहीं पायी गयी थी। विच्छेदन पर गर्दन का सामने का भाग 10 cm x 3 cm कंट्यूज्ड पाया गया था, लैरिक्स एवं ट्रेकियल वाल चारों ओर कंट्यूज्ड था। लैरिंक्स एवं ट्रेचियल मुकोसा कंजस्टेड था और रीगर्गिटेटेड वॉयलेट ग्रेन्यूलरफ्लूइड अंतर्विष्ट करता था। फ्रंटल स्काल्प का दायाँ भाग 2 cm x 1 cm कंट्यूज्ड था। दायाँ पेराइटल प्रोट्यूबेरेंस 2 cm x 2 cm कंट्यूज्ड था। ब्रेन अत्यन्त ही कंजस्टेड था। बायाँ फेफड़ा निस्तेज था, दायाँ फेफड़ा कंजस्टेड था, स्पलीन एनलार्ज्ड था, पेट में दुर्गंध के साथ वॉयलेट रंग का ग्रन्यूलर फ्लूइड था। उन्होंने रासायनिक विश्लेषण के लिए पेट से 100 ml. मुकोसा एवं विसरा संरक्षित किया।*

अ॰ सा॰ 2 के अनुसार, मृत्यु गला दबाए जाने के कारण हुई थी। उन्होंने आगे मत दिया कि सामान्य क्रम में जहर खाना भी मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है। उन्होंने आई॰ ओ॰ से जहर का प्रकार जानने के लिए विसरा रासायनिक विश्लेषण के लिए एफ॰ एस॰ एल॰ भेजने का अनुरोध किया।

अ॰ सा॰ ने यह कथन भी किया कि उक्त समस्त उपहतियाँ मृत्यु पूर्व प्रकृति की थी और कड़े एवं भोथरे वस्तु द्वारा कारित की गयी थी। मृत्यु से बीता समय लगभग 24 से 36 घंटा था।

अ॰ सा॰ 2 ने आगे कथन किया कि शव परीक्षण रिपोर्ट उनके लेखन एवं हस्ताक्षर में है और इसे प्रदर्श 2 चिन्हित किया गया है।

11. अ॰ सा॰ 7 प्रभाष नाथ मिश्रा मामला का मुख्य अन्वेषण अधिकारी है। उसने इस मामला में अपने द्वारा किए गए अन्वेषण के बारे में कथन किया है। उसके द्वारा सिद्ध किए जाने पर मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श 1/4 चिन्हित किया गया है। अभिग्रहण सूची प्रदर्श 1/5 चिन्हित की गयी है फॉरवार्डिंग पृष्ठांकन प्रदर्श 3/1 चिन्हित किया गया है। प्राथमिकी के दर्ज करण के संबंध में पृष्ठांकन प्रदर्श 3/2 चिन्हित की गयी है। औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 4 चिन्हित की गयी है और फटे हुए पॉलिथिन पैकेट के अंतर्वस्तु के संबंध में न्यायालयिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट प्रदर्श 5 चिन्हित की गयी है। रासायनिक एवं इंसट्रूमेंटल विश्लेषण के आधार पर उक्त पैकेट में कार्बोफूरन का पता लगा था। अ॰ सा॰ 7 ने इसकी चौहद्दी के साथ घटना स्थल का वर्णन किया है और कथन किया है कि 2.11.2017 को उसके स्थानांतरण पर उसने मामला का अन्वेषण पुलिस चौकी के प्रभारी को सौंपा। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया है कि इस मामला का कोई भी गवाह घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। उसने व्यक्तियों जो अभियुक्त अपीलार्थी के घर आते जाते थे के संबंध में कोई अन्वेषण नहीं किया था, किंतु अन्वेषण के दौरान उसे जानकारी हुई कि अभियुक्त–अपीलार्थी झगड़ालू महिला है जो अक्सर झगड़ा करती थी। जिसे मृतका द्वारा पसंद नहीं किया जाता था। अत: अभियुक्त अपीलार्थी ने मृतका को छात्रावास में रखा। उसने आगे कथन किया कि उसने अभियुक्त एवं सूचक के बीच संबंध के बारे में कोई अन्वेषण नहीं किया था।

12. अ॰ सा॰ 8 रामचंद्र रजक मामला का आंशिक अन्वेषण अधिकारी है। उसने मामला में आरोप–पत्र दाखिल किया है।

13. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद अभियुक्त अपीलार्थी का बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था जिसमें उसने अपने विरूद्ध साक्ष्य में सामने आनेवाली परिस्थितयों से इनकार किया। विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री एवं साक्ष्य को विचार में लेने के बाद पूर्वोक्तानुसार अपीलार्थी को दोषसिद्ध एवं दंडोदेशित किया।

14. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री हसनैन वारिस निवेदन करते हैं कि फर्दबयान की विषय वस्तु एवं अभियोजन द्वारा दिए गए मौखिक परिसाक्ष्य के बीच मुख्य विरोधाभास है। यद्यपि फर्दबयान जिसे प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया है में यह कथन किया गया है कि अ॰ सा॰ 4 आया और अ॰ सा॰ 3 को घटना के बारे में सूचित किया, अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि अ॰ सा॰ 4 ने उसको टेलीफोन से सूचित किया, अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि अ॰ सा॰ 4 ने उसको टेलीफोन से सूचित किया। आगे यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन का मामला यह है कि मृतका की मृत्यु केवल जहर देने के कारण हुई किंतु शव परीक्षण रिपोर्ट और अ॰ सा॰ 2 का परिसाक्ष्य स्पष्टत: दर्शाता है कि मृत्यु का कारण मृतक का गला दबाया जाना था और मृतक के मृत शरीर पर पायी गयी मृत्यु पूर्व उपहतियाँ कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी थी। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि यद्यपि यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित मामला है, फिर भी अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा अपराध की कारिता के हेतु के संबंध में साक्ष्य अभियोजन द्वारा नहीं दिया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि स्वयं अपनी पुत्री की हत्या करना माता का स्वाभाविक आचरण नहीं है, अभियोजन मामला अत्यधिक अनधिसंभाव्य एवं संदेहपूर्ण है, अत: यह सुयोग्य मामला है जहाँ उसको संदेह का लाभ देकर अभियुक्त अपीलार्थी को दोषमुक्त किया जा सकता है।

15. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अपर पी॰ पी॰ श्री पंकज कुमार ने निवेदन किया कि यद्यपि अ॰ सा॰ 2 ने कथन किया है कि मृतका की मृत्यु गला दबाने से कारित हुई थी, फिर भी उसने कथन किया

है कि सामान्य परिस्थिति के अधीन उनके द्वारा विच्छेदन पर पाया गया जहर भी मृतका की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है और परिस्थिति कि अभियुक्त–अपीलार्थी पूजा संपन्न करने के बहाना पर मृतका को लायी और यह तथ्य कि मृतक का मृत शरीर अभियुक्त अपीलार्थी से भी फटे हुए कीटनाशक पैकेटों की बरामदगी और यह तथ्य कि चिकित्सीय साक्ष्य जो अ॰ सा॰ 2 के माध्यम से आया है भी दर्शाता है कि मृतका को जहर दिया गया था, अपनी पुत्री मृतका पुतुल की हत्या करने का अभियुक्त अपीलार्थी का दोष स्थापित करने के लिए पर्याप्त परिस्थितियाँ हैं और इसलिए, विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से अभियुक्त–अपीलार्थी को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया है, अत: यह अपील गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाए।

16. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन के बाद हम पाते हैं कि स्वीकृत रूप से घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। अभियोजन की ओर से अभिलेख पर लाया गया साक्ष्य केवल निम्नलिखित परिस्थितियों को स्थापित करता है:–

(i) अभियुक्त अपीलार्थी मृतका को उसकी मृत्यु के पहले छात्रावास से अपने आवासीय क्वार्टर लायी।

(ii) मृतका का मृत शरीर अभियुक्त–अपीलार्थी के आवासीय क्वार्टर में पाया गया था।

(iii) घटना स्थल से और अभियुक्त–अपीलार्थी से भी कीटनाशक के फटे पैकट बरामद किए गए थे जिन्हें वह अभिकथित रूप से छुपाए हुए थी।

(iv) डॉक्टर ने मत दिया है कि विच्छेदन करने पर पाया गया जहर सामान्य क्रम में उसकी मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त था।

इनके विरूद्ध निम्नलिखित परिस्थितियाँ हैं जो अभियुक्त–अपीलार्थी के पक्ष में हैं:–

(a) इस बारे में साक्ष्य में अंतर है कि अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा मृतका को कब छात्रावास से लाया गया था। यद्यपि अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया है कि उसे घटना के एक दिन पहले लाया गया था, फिर भी अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि उसे घटना के दो दिन पहले लाया गया था।

(b) अभियोजन गवाहों के साक्ष्य में अंतर एवं अतिशयोक्ति है क्योंकि यद्यपि फर्दबयान में अ॰ सा॰ 3 द्वारा उल्लेख किया गया है कि अभियुक्त–अपीलार्थी मृतका को जबरन छात्रावास से अपने आवासीय क्वार्टर लायी थी, फिर भी अपने अभिसाक्ष्य में अ॰ सा॰ 3 जो विद्यालय जिसके छात्रावास से अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा मृतका को लाया गया था का सचिव है ने अभियुक्त–अपीलार्थी द्वारा मृतका को जबरन अपने क्वार्टर लाने के बारे में कथन नहीं किया है। दूसरी ओर, अ॰ सा॰ 4 जिसके पास वहाँ उपस्थित होने का अवसर नहीं था अथवा कारण या तरीका जिसके लिए अभियुक्त–अपीलार्थी मृतका को अपने क्वार्टर लायी जानने की कोई गुंजाइश नहीं थी ने कथन किया कि मृतका को जबरन उसके छात्रावास से लाया गया था।

(c) कोई भी साक्ष्य नहीं है कि मृतका को कब अंतिम बार अभियुक्त अपीलार्थी के साथ देखा गया था।

(d) डॉक्टर ने मत दिया है कि मृतका की मृत्यु उसका गला दबाए जाने से कारित हुई थी और मृत्यु पूर्व उपहतियाँ कड़े एवं भोथरी वस्तु द्वारा कारित की गयी थी। अभियोजन द्वारा साक्ष्य नहीं दिया गया

है कि किस प्रकार ये उपहतियाँ मृतका को कारित की गयी थी। आगे, यदि यह स्वीकार किया जाता है कि मृतका की मृत्यु उसका गला दबाने से कारित हुई थी, तब अभियुक्त–अपीलार्थी को उसकी हत्या के आरोप में आलिप्त नहीं किया जा सकता है।

(e) अन्वेषण अधिकारी द्वारा उन व्यक्तियों के प्रति अन्वेषण नहीं किया गया है जो अभियुक्त–अपीलार्थी के आवासीय क्वार्टर में आते–जाते थे ताकि अभियुक्त–अपीलार्थी के अलावा किसी अन्य की अंतर्ग्रस्तता से इनकार किया जा सके।

(f) अभिलेख पर साक्ष्य मौजूद है कि घटना के बाद अभियुक्त अपीलार्थी को घटना स्थल से 6-7 कि॰मी॰ की दूरी पर ग्राम सलदोहा में अपने चाचा के घर में पाया गया था। अत: यह आत्यधिक अनधिसंभाव्य है कि अभियुक्त अपीलार्थी सारे समय कीटनाशक का फटा पैकेट रखे रही मानों यह कोई बहुमूल्य चीज हो। आगे अभियुक्त–अपीलार्थी से कीटनाशक पैकेट की बरामदगी के संबंध में साक्ष्य में अंतर है। अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि अभियुक्त–अपीलार्थी ने इसे अपनी साड़ी में छुपाए रखा जबकि अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया है कि उसने इस हथेली में रखा।

(g) इस बात के प्रति तात्विक विरोधाभास है कि सूचक को किस प्रकार पहली बार घटना की जानकारी हुई। यद्यपि फर्दबयान में उसने उल्लेख किया है कि अ॰ सा॰ 4 द्वारा सूचित किए जाने पर अ॰ सा॰ 3 अ॰ सा॰ 4 के साथ घटना स्थल पर आया किंतु अपने अभिसाक्ष्य में अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि उसने पुलिस थाना को सूचित किया और पुलिस घटना स्थल पर आयी और अ॰ सा॰ 3 उस समय तक घटना स्थल पर था।

(h) यद्यपि अ॰ सा॰ 4 ने स्वीकार किया है कि उसने अभियुक्त–अपीलार्थी के घर आना जाना छोड़ दिया था फिर भी वह यह प्रकट करने में विफल रहा कि किस प्रकार उसे जानकारी हुई कि अभियुक्त अपीलार्थी ने अपनी पुत्री की हत्या की।

(i) इसके प्रति साक्ष्य में अंतर है कि अभियुक्त अपीलार्थी कब मृतका को छात्रावास से लायी। अ॰ सा॰ 3 ने कथन किया है कि अभियुक्त अपीलार्थी घटना के दो दिन पहले मृतका को छात्रावास से लायी जबकि अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया कि अभियुक्त अपीलार्थी घटना के एक दिन पहले अपनी मृतका पुत्री को लायी।

(j) यद्यपि यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित मामला है, फिर भी स्वयं अपनी माता जो अभियुक्त अपीलार्थी है द्वारा मृतका की हत्या का हेतु नहीं दिया गया है, दूसरी ओर, इस मामला में अभियुक्त अपीलार्थी को झूठा आलिप्त करने के हेतु के संबंध में साक्ष्य है क्योंकि अ॰ सा॰ 4 ने स्पष्टत: कथन किया है कि यद्यपि वह और अभियुक्त अपीलार्थी के पड़ोसी उसको उक्त आवासीय क्वार्टर से शिफ्ट करने का आशय रखते थे, फिर भी वे ऐसा करने में सफल नहीं हो सके थे।

17. परिस्थितिजन्य साक्ष्य के संबंध में विधि सुस्थापित है। जब मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है, ऐसे साक्ष्य को तीन परीक्षा संतुष्ट करना होगा:–

(i) परिस्थितियों, जिनसे दोष का निष्कर्ष निकाला जाना इप्सित किया गया है, को तर्कपूर्ण रूप से एवं मजबूती से स्थापित करना होगा;

(ii) उन परिस्थितियों को अभियुक्त के दोष की ओर किसी गलती के बिना इंगित करने वाली निश्चित प्रवृति का होना चाहिए;

(iii) परिस्थितियों को समेकित रूप से लिए जाने पर इसे इतनी पूर्ण श्रृंखला निर्मित करना चाहिए कि इस निष्कर्ष से बचा नहीं जा सकता है कि समस्त मानव अधिसंभाव्यता के अंतर्गत अभियुक्त द्वारा

अपराध किया गया था न कि किसी अन्य द्वारा। दोषसिद्धि संपोषित करने के लिए परिस्थितिजन्य साक्ष्य को पूर्ण एवं अभियुक्त के दोष की किसी अन्य प्राक्कल्पना के स्पष्टीकरण के अयोग्य होना होगा। परिस्थितिजन्य साक्ष्य को न केवल अभियुक्त के दोष के साथ संगत होना होगा बल्कि उसकी निर्दोषिता के साथ असंगत भी होना होगा जैसा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **गंभीर बनाम महाराष्ट्र राज्य, AIR 1982 SC 1157** में दोहराया गया है।

18. उपर चर्चा किए गए विधि के सुस्थापित सिद्धांतों की कसौटी पर इस मामला के तथ्यों को परखने पर हमें यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करने में बुरी तरह विफल रहा है और परिस्थितियाँ ऐसी प्रकृति की नहीं है जो किसी गलती के बिना अभियुक्त-अपीलार्थी के दोष की ओर इंगित करती है। अत: हमारा सुविचारित मत है कि यह सुयोग्य मामला है जहाँ अभियुक्त अपीलार्थी बिरमानी टुडु को संदेह का लाभ देकर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के आरोप से दोषमुक्त किया जाए। तद्नुसार विद्वान सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 23.2.2012 के दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश जिसमें विद्वान न्यायाधीश का उल्लेख गलत रूप से ''प्रधान सत्र न्यायाधीश'' के रूप में किया गया है, अपास्त किया जाता है और अभियुक्त अपीलार्थी को संदेह का लाभ देकर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त किया जाता है। अभियुक्त-अपीलार्थी बिरमानी टुडु अभिरक्षा में है। उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामला में उसका निरोध आवश्यक नहीं है।

19. निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को तुरन्त भेजे जाए।

20. परिणामस्वरूप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

विरेन्द्र कुमार पांडे (1059 में)

शालिग्राम पांडे (1138 में)

सोहन साव (1147 में)

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (सभी में)

W.P. (C) Nos. 1059, 1138, 1147 of 2016. Decided on 11th April, 2018.

भूमि अर्जन, पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन में उचित मुआवजा एवं पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम, 2013—धाराएँ 33 एवं 37—भूमि का अर्जन—सांविधिक ब्याज के साथ मुआवजा की शेष राशि का भुगतान—अधिकारियों द्वारा पहले किए गए गलत निर्धारण के आधार पर याचीगण को पूर्ण अधिनिर्णीत राशि का भुगतान नहीं किया गया है जो अधिनियम 2013 के अधीन अनुज्ञेय नहीं है–प्रत्यर्थीगण याचीगण को भुगतेय अधिनिर्णित मुआवजा का भाग रोकने के लिए कोई विधिक औचित्य प्रस्तुत करने में विफल रहे हैं—याचीगण को समर्थनकारी

दस्तावेजों के साथ इस संबंध में नया अभ्यावेदन दाखिल करके जिला भूमि अर्जन अधिकारी-सह-सक्षम अधिकारी के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ रिट याचिकाएँ निपटायी जाती है—जिला भूमि अर्जन अधिकारी-सह-सक्षम अधिकारी याचीगण को अधिनिर्णीत मुआवजा की शेष राशि का भुगतान करने के लिए समुचित कदम उठायेंगे यदि विधिक अवरोध नहीं है। (पैराएँ 11 एवं 12)

अधिवक्तागण.—Mr. Deepak Kumar, For the Petitioners; A.C. to G.A.IV, A.C. to G.A. & A.C. to G.A.III, For the State.

आदेश

चूँकि इन तीनों रिट याचिकाओं में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक एक ही हैं, उन्हें साथ सुना जा रहा है और इस एक ही आदेश से निपटाया जा रहा है।

2. डब्लू॰पी॰ (सी॰) सं॰ 1059 वर्ष 2016 में याची ने एन॰ एच॰-2 को चौड़ाकरण के प्रयोजन से भूमि के अर्जन के बदले 25,28,798/- रुपयों की राशि के लिए अपने पक्ष में तैयार किए गए अधिनिर्णय सं॰ 58 के निबंधनानुसार सांविधिक ब्याज के साथ 16,26,882/- रुपयों की शेष मुआवजा राशि का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने की प्रार्थना किया है।

3. डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1138 वर्ष 2016 में याची ने एन॰ एच॰-2 को चौड़ा करने के प्रयोजन से भूमि अर्जन के बदले में 31,97,116/- रुपयों की राशि के लिए अपने पक्ष में तैयार किए गए अधिनिर्णय सं॰ 57 के निबंधनानुसार सांविधिक ब्याज के साथ 20,79,154/- रुपयों की शेष मुआवजा राशि के भुगतान के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने की प्रार्थना किया है।

4. डब्लू॰पी॰ (सी॰) सं॰ 1147 वर्ष 2016 में याची ने एन॰ एच॰ 2 को चौड़ा करने के प्रयोजन से भूमि अर्जन के बदले 28,20,854/- रुपयों की राशि के लिए अपने पक्ष में तैयार किए गए अधिनिर्णय सं॰ 63 के निबंधनानुसार सांविधिक ब्याज के साथ 9,78,192/- रुपयों की शेष मुआवजा राशि के भुगतान के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने की प्रार्थना किया है।

5. मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि याचीगण के भवन सहित भूमि को भूमि अर्जन, पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन में उचित मुआवजा एवं पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम, 2013 (संक्षेप में, अधिनियम, 2013) के प्रावधानों के अधीन अर्जित की गयी हैं याचीगण के पक्ष में अधिनिर्णय तैयार किया गया था और उनको उपस्थित होने तथा आवश्यक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का निर्देश देते हुए अधिनियम, 2013 की धारा 37(2) के अधीन नोटिस जारी किया गया था। याचीगण के अनुसार, उन्होंने समस्त आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत किया किंतु उन्हें मुआवजा के रूप में क्रमशः 8,91,916/-, 11,17,962/- और 8,42,662/- रुपयों का भुगतान किया गया है। तत्पश्चात, याचीगण ने संपूर्ण मुआवजा राशि के भुगतान के लिए प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के समक्ष अभ्यावेदन दिया किंतु कुछ भी नहीं किया गया है।

6. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अधिनियम, 2013 की धारा 37(1) की दृष्टि में, याचीगण के पक्ष में तैयार किए गए अधिनिर्णय अंतिम एवं निश्चयात्मक हैं क्योंकि भूमि एवं उससे संबद्ध आस्ति के बाजार मूल्य और इस प्रकार विनिश्चित तोषण किसी भी पक्ष द्वारा परिवर्तित, संशोधित अथवा उपांतरित नहीं किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण सांविधिक ब्याज के साथ मुआवजा की शेष राशि का भुगतान करने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं। यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थियों जिन्होंने स्वयं एकपक्षीय रूप से याचीगण का भूमि एवं भवन

अर्जित कर लिया है और अधिनिर्णयों को तैयार किया है, किसी कारण के बिना अधिनिर्णीत राशि का भाग नहीं रोक सकते हैं।

7. डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1059 वर्ष 2016 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से प्रतिशपथपत्र दाखिल किया गया है। किंतु, इस न्यायालय के आदेश के बावजूद डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1138 वर्ष 2016 और 1147 वर्ष 2016 में प्रतिशपथपत्र दाखिल नहीं किया गया है। चूँकि ये तीनों समस्त रिट याचिकाएँ एक ही अर्जन कार्यवाही से उद्भूत होती हैं, डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1059 वर्ष 2016 में दाखिल प्रतिशपथपत्र में प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए दृष्टिकोण पर विचार किया गया है।

8. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता प्रतिशपथ पत्र पर विश्वास करते हुए निवेदन करते हैं कि पहले एन॰ एच॰ ए॰ आई॰ धनबाद ने निरीक्षण के बाद अर्जित भूमि पर खड़ी संरचना के संबंध में मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार किया। उक्त मूल्यांकन रिपोर्ट के अनुसार, एन॰ एच॰ ए॰ आई॰ धनबाद ने डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1138 वर्ष 2016 के संबंध में उक्त अर्जित भूमि पर खड़ी संरचना के मूल्य के रूप में 11,12,399/- रुपया निर्धारित किया। दिनांक 27.11.2013 के उक्त मूल्यांकन रिपोर्ट के आधार पर अधिनिर्णय तैयार किए गए थे। किंतु उक्त अधिनिर्णयों को तैयार करने के पहले एन॰ एच॰ ए॰ आई॰, धनबाद द्वारा पुनरीक्षित सर्वे किया गया था और तत्पश्चात 3.10.2015 को पुनरीक्षित मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया था कि दुर्भाग्यवश उक्त पुनरीक्षित निर्धारण भूमि अर्जन विभाग को भेजा नहीं जा सका था जिसके परिणामस्वरूप अधिनिर्णयों को पुनरीक्षित नहीं किया जा सका था। यह निवेदन भी किया गया है कि अपुनरीक्षित अधिनिर्णयों के आधार पर वस्तुतः नोटिस भेजी गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि पुनरीक्षित निर्धारण के मुताबिक कुल निर्धारण में से 20% सामान्य कटौती और 10% की दर पर आयकर कटौती के बाद मुआवजा के भुगतान के लिए वाउचर्स तैयार किए गए थे और याचीगण को उक्त राशि का भुगतान किया गया था और इस प्रकार याचीगण की ओर कुछ भी बकाया नहीं है।

9. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याचीगण का प्रतिवाद यह है कि उन्हें अधिनिर्णीत मुआवजा की तुलना में कम राशि का भुगतान किया गया है। किंतु, प्रत्यर्थियों ने प्रतिशपथपत्र में कथन किया है कि पूर्वमूल्यांकन रिपोर्ट के आधार पर अधिनिर्णय तैयार किए गए थे और पुनरीक्षित निर्धारण के निबंधनानुसार मुआवजा राशि का भुगतान किया गया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता का मुख्य तर्क है कि जब एक बार अधिनिर्णय तैयार किया गया है, यह निश्चयात्मक एवं अंतिम हो जाता है। इस प्रकार, अधिनियम, 2013 की धारा 37 की दृष्टि में अधिनिर्णीत राशि में परिवर्तन अनुज्ञेय नहीं है। अधिनियम 2013 की धारा 37 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"37.* ***कलक्टर का अधिनिर्णय जब अंतिम होगा.–****(1) अधिनिर्णय कलक्टर के कार्यालय में फाइल किए जाएंगे और इसमें इसके पश्चात् यथा उपबंधित के सिवाय, कलक्टर और हितबद्ध व्यक्तियों के बीच, चाहे वे कलक्टर के समक्ष स्वयं उपस्थित हुए हों या नहीं, इस प्रकार अवधारित किए गए भूमि के वास्तविक क्षेत्रफल तथा उससे संलग्न आस्तियों के बाजार मूल्य का और हितबद्ध व्यक्तियों के बीच प्रतिकर के प्रभाजन का अंतिम और निश्चायक साक्ष्य होगा।*
>
> *(2) कलक्टर अपने अधिनिर्णयों की सूचना ऐसे हितबद्ध व्यक्तियों में से उनको तत्काल देगा, जो अधिनिर्णय किए जाने के समय व्यक्तिगत रूप से या अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से उपस्थित नहीं हुए थे।*

(3) कलक्टर, भूमि के अर्जन की दशा में की गई सम्पूर्ण कार्यवाहियों का सार, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को दिए गए प्रतिकर की रकम भी है, इस अधिनियम के अधीन अंतिम रूप से अर्जित की गई भूमि के ब्यौरों के साथ, जनता के लिए खुला रखेगा और इस प्रयोजन के लिए सृजित वेबसाइट पर संप्रदर्शित करेगा।''

10. अधिनिर्णय की शुद्धि के लिए समाहर्ता की शक्ति से संबंधित प्रावधान अधिनियम, 2013 की धारा 33 के अधीन अधिकथित किया गया है, किंतु, यह केवल लिपिकीय एवं गणितीय गलतियों की शुद्धि के लिए अनुज्ञेय है और वह भी उक्त कार्रवाई द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद। अधिनियम, 2013 की धारा 33 का पठन निम्नलिखित है:–

*"33. **कलक्टर द्वारा अधिनिर्णयों को शुद्ध किया जाना.–**(1) कलक्टर, किसी भी समय, किन्तु अधिनिर्णय की तारीख से छह मास के अपश्चात् या जहाँ उससे इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन धारा 64 के अधीन प्राधिकरण को निर्देश करने की अपेक्षा की गई है वहाँ, ऐसा निर्देश करने के पूर्व, आदेश द्वारा, अधिनिर्णयों में की किन्हीं लिपिकीय या गणित सम्बन्धी भूलों अथवा उसमें होने वाली गलतियों को, स्वप्रेरणा से या हितबद्ध किसी व्यक्ति या स्थानीय प्राधिकारी के आवेदन पर शुद्ध कर सकेगाः*

परंतु ऐसी कोई शुद्धि, जिससे किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना हो, तब तक नहीं की जाएगी, जब तक कि उस व्यक्ति को मामले में अभ्यावेदन करने का युक्तियुक्त अवसर प्रदान न कर दिया गया हो।

(2) कलक्टर इस प्रकार शुद्ध किए गए अधिनिर्णय में की गई किसी शुद्धि की सभी हितबद्ध व्यक्तियों को तुरन्त सूचना देगा।

(3) जहाँ उपधारा (1) के अधीन की गई शुद्धि के परिणामस्वरूप यह साबित हो पाता है कि किसी व्यक्ति को किसी अधिक रकम का संदाय कर दिया गया है, वहाँ इस प्रकार संदत्त आधिक्य रकम प्रतिसंदेय होगी और संदाय करने में कोई व्यतिक्रम या उससे इंकार की दशा में, उसकी वसूली समुचित सरकार द्वारा यथाविहित रूप में, की जा सकेगी।''

11. वर्तमान मामला में प्रत्यर्थियों ने इस न्यायालय के समक्ष कथन नहीं किया है कि उन्होंने याचीगण को सम्यक नोटिस एवं सुनवाई का पर्याप्त अवसर देने के बाद अधिनिर्णय में शुद्धि किया है। वर्तमान मामलों में, याचीगण को अधिकारियों द्वारा पहले किए गए गलत निर्धारण के आधार पर पूर्ण अधिनिर्णीत राशि का भुगतान नहीं किया गया है जो अधिनियम, 2013 के अधीन अनुज्ञेय नहीं है। इस प्रकार, प्रत्यर्थीगण याचीगण को भुगतेय अधिनिर्णीत मुआवजा का भाग रोकने के लिए कोई विधिक औचित्य प्रस्तुत करने में विफल रहे।

12. यहाँ उपर किए गए चर्चा की दृष्टि में याचीगण को समर्थनकारी दस्तावेजों के साथ इस संबंध में नया अभ्यावेदन दाखिल करके प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ ये रिट याचिकाएँ निपटायी जाती है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 अभ्यावेदनों की प्राप्ति की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर याचीगण को अधिनिर्णीत मुआवजा राशि के शेष के भुगतान के लिए समुचित कदम उठाएँगे यदि विधिक अवरोध नहीं है।

13. डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1147 वर्ष 2016 में आई॰ ए॰ सं॰ 1942 वर्ष 2016 भी तद्नुसार निपटाया जाता है।

माननीय आनन्द सेन एवं राजेश शंकर, न्यायमूर्तिगण

पार्वती उर्फ चुनचुनी उर्फ चुन्ची मुंडा उर्फ जेई मुंडा

बनाम

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 660 of 2014. Decided on 3rd February, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 48 वर्ष 2008 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 12 अप्रील, 2010 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा 15 अप्रील, 2010 के दंडादेश के विरूद्ध।

डायन प्रथा निवारण अधिनियम, 1999—धाराएँ 3 एवं 4—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—महिला की हत्या—जादूटोना का संदेह—आजीवन कारावास—न तो अ॰ सा॰ 1 न ही अ॰ सा॰ 2 ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि अपीलार्थी ने मृतका को डायन बताया था—डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन आरोप सिद्ध करने के लिए सामग्री नहीं है—अभियोजन अपीलार्थी के विरूद्ध उक्त आरोप सिद्ध करने में विफल रहा है—जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, किसी ने भी अपीलार्थी को मृतक के घर अथवा कमरा में हथियार के साथ जाते नहीं देखा था—यह स्पष्टतः सुझाता है कि अपीलार्थी की ओर से हत्या करने का आशय नहीं था—ये समस्त कारक अभियोजन कहानी के प्रति संदेह सृजित करता है कि क्या सूचक वस्तुतः चश्मदीद गवाह था और घटना स्थल पर उपस्थित था—बचाव पक्ष अभियोजन मामला में संदेह का तत्व सृजित करने में सक्षम हुआ है—जब बचाव पक्ष घटना में अपीलार्थी की संलिप्तता पर संदेह करने में सफल रहा है—अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने का हकदार है—संदेह का लाभ देकर अपीलार्थी दोषमुक्त किया गया।

(पैरा 13 से 18)

अधिवक्तागण.—Mr. Pradeep Kumar, For the Appellant; Ms. Niki Sinha, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी के अधिवक्ता एवं राज्य के अधिवक्त सुने गए।

2. यह दांडिक अपील विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा सत्र विचारण सं॰ 48 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 12 अप्रिल, 2010 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 15 अप्रिल, 2010 के दंडादेश के विरूद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा एकमात्र अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी पाया गया था और दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कठोर कारावास और 1000/- रुपया के जुर्माना का दंडादेश दिया गया था और डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन तीन माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था।

3. अभियोजन मामला 15.10.2007 को पूर्वाह्न लगभग 11.45 बजे दर्ज किसी रघुनाथ मुंडा के फर्दबयान पर आधारित है जिसमें सूचक ने कथन किया है कि 14.10.2007 को फुटबॉल मैच जो इचाकुची में चल रहा था देखने के बाद जब वह शाम में लगभग 5.30 बजे अपने घर लौटा, उसने देखा कि उसकी पत्नी सुकुरमुंडी मुंडा पर अपीलार्थी द्वारा सबल से प्रहार किया गया था और वह कह

रही थी कि तुमने मेरे पुत्र की हत्या की है। जब सूचक वहाँ पहुँचा, अपीलार्थी अपने हाथ मेंसबल के साथ भाग गयी। अपनी पत्नी के पास पहुँचने पर सूचक ने अपनी पत्नी को खून से लथपथ देखा और वह बेचैन थी। हल्ला करने पर पड़ोसी जमा हुए और उस समय तक उसकी पत्नी की मृत्यु हो गयी थी।

4. पूर्वोक्त फर्दबयान के आधार पर, चक्रधरपुर पुलिस थाना मामला सं॰ 144 वर्ष 2007 भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी के विरूद्ध दर्ज किया। पुलिस ने मामला का अन्वेषण किया और अन्वेषण पूरा करने के बाद इस अपीलार्थी के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया। बाद में, संज्ञान लिया गया था और मामला विचारण के लिए सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। विचारण न्यायालय ने सुपुर्दगी के बाद इस अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप विरचित किया। आरोप अपीलार्थी को पढ़कर सुनाया एवं स्पष्ट किया गया था और अपीलार्थी के निर्दोषिता का अभिवचन करने पर उसका विचारण किया गया था।

5. अभियोजन द्वारा अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल आठ गवाहों का परीक्षण किया गया है जो अ॰ सा॰ 1 रघुनाथ मुंडा (सूचक), अ॰ सा॰ 2 सोनामनि मुंडा, अ॰ सा॰ 3 नरेन्द्र जमुदा, अ॰ सा॰ 4 मान सिंह जमुदा, अ॰ सा॰ 5 रतन जमुदा, अ॰ सा॰ 6 लक्षमण मुंडा, अ॰ सा॰ 7 फणीभूषण मरांडी एवं अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ स्वपन कुमार सिंह हैं।

(a) इन आठ गवाहों में से अ॰ सा॰ 3 पक्षद्रोही गवाह है। उक्त गवाह ने कथन किया था कि उसने सुना है कि किसी ने मृतका की हत्या किया है। उसने पुलिस के समक्ष जो कुछ भी कथन किया, उससे इनकार किया है।

(b) अ॰ सा॰ 4 भी अनुश्रुत गवाह है। उसने कथन किया कि गाँववालों से उसे पता चल सका था कि किसी द्वारा मृतका की हत्या की गयी थी, किंतु उसने कथन किया कि वह नहीं जानता है कि किसने मृतका की हत्या किया है। उसने अभिग्रहण सूची पर अपना हस्ताक्षर स्वीकार किया जिसे तैयार किया गया था जब रक्त रंजित मिट्टी, सबल (हत्या का हथियार) जब्त किए गए थे। अभिग्रहण सूची पर उसका हस्ताक्षर प्रदर्श 1/1 एवं 1/2 चिन्हित किया गया था।

(c) अ॰ सा॰ 5 भी अनुश्रुत गवाह है जिसने कथन किया कि गाँववालों से उसने सुना कि मृतका एवं अपीलार्थी के बीच झगड़ा हुआ था और उस झगड़ा के कारण मृतका की मृत्यु हुई।

(d) अ॰ सा॰ 6 मृतका का पुत्र है जो चश्मदीद गवाह नहीं है और घटना स्थल पर उपस्थित भी नहीं था। उसने कथन किया कि घटना के समय वह पूना में था।

(e) अ॰ सा॰ 7 फणीभूषण मरांडी इस मामला का अन्वेषण अधिकारी है जिसने सूचक का फर्दबयान दर्ज किया था जिसे प्रदर्श 2 चिन्हित किया गया था। उसने कार्बन कॉपी में मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट भी तैयार किया जिसे प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया था। उसने सूचक का पुनर्बयान भी लिया है तथा जब्ती सूची तैयार किया है जिसे प्रदर्श 4 चिन्हित किया गया था। उसने जब्ती सूची पर गवाहों के हस्ताक्षर भी सिद्ध किया है जिसे प्रदर्श 4/1 चिन्हित किया गया था। उसने औपचारिक प्राथमिकी भी सिद्ध किया जिसे प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया था। अन्वेषण के बाद उसने इस मामला में आरोप-पत्र दाखिल किया।

(f) अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ स्वपन कुमार सिंह है जिन्होंने शव परीक्षण किया। उन्होंने कथन किया कि परीक्षण करने पर उन्होंने निम्नलिखित मृत्यु पूर्व उपहतियाँ पाया:-

बाह्य परीक्षण.–

(1) ऑक्सीपीटल अस्थि के फ्रैक्चर के साथ आक्सीपीटल क्षेत्र के बाएँ भाग पर 3"x½"x इन्ट्राक्रेनियल तक गहरा विदीर्ण जख्म

विच्छेदन परः–

मस्तक एवं गर्दन–इन्ट्राक्रेनियल केविटी में खून का थक्का अंतर्विष्ट था। आक्सीपीटल कॉर्टेक्स थोरेक्स–फेंफड़ा–निस्तेज, हृदय खाली।

पेट–पेट में अनपचा खाद्य अंश थे। अन्य विसरा–एन० ए० डी०

मृत्यु से बीता समय–समस्त अंगों में शव की अकड़न की मौजदूगी के कारण 12 से 48 घंटा।

मृत्यु का कारण–लोहे के सबल जैसे कड़े एवं भोथरे वस्तु द्वारा कारित मस्तक उपहति के कारण हेमरेज एवं आघात।

इस गवाह ने स्वीकार किया है कि शव परीक्षण उसके द्वारा तैयार की गयी और उसका हस्ताक्षर धारण करती है और इसे प्रदर्श–6 चिन्हित किया गया था।

प्रतिपरीक्षण में उन्होंने कथन किया कि शरीर पर पायी गयी उपहति की प्रकृति पर्याप्त ऊँचाई से पथरीले सतह पर गिरने से संभव हो सकती है।

इस प्रकार, अभियोजन मामला का मुख्य गवाह अ॰ सा॰ 1 सूचक है जो चश्मीद गवाह होने का दावा करता है और अ॰ सा॰ 2 है जो घटना स्थल पर उपस्थित था।

6. अब हम अ॰ सा॰ 1 के बयान पर चर्चा करना चाहेंगे। वह मृतका का पति है। वह कहता है कि चना बेचने के बाद वह घर लौटा और आग ताप रहा था जब अपीलार्थी ने सबल से उसके माथा के दाएँ भाग पर मृतका पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरूप मृतका गिर गयी और उसकी मृत्यु हो गयी। वह उससे पूछ रही थी कि उसका पुत्र स्वस्थ होगा या नहीं। उसने कथन किया कि पार्वती ने उसका भी पीछा किया था किंतु वह बच निकला और कमरा में आश्रय लिया और दरवाजा बंद कर लिया। उसने कथन किया कि अगले दिन, उसने पुलिस को सूचित किया। पुलिस, ग्रामीण ग्राम मुंडा तथा डकुआ घटना स्थल पर आए। उसका बयान दर्ज किया गया था। फर्दबयान प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया था। उसने अभियुक्त को न्यायालय में पहचाना और कथन किया कि वह उसकी भतीजी है। प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया कि समय के एक बिन्दु पर अपीलार्थी के परिवार एवं उसके परिवार के बीच कुछ भूमि विवाद था। उसने कथन किया कि घटना के समय पर उसके ओर उसकी पत्नी (मृतका) के सिवाए कोई भी उपस्थित नहीं था। उसने कथन किया कि उसकी पुत्रवधु दूसरे कमरा में अपनी संतान को खिला रही थी।

7. अ॰ सा॰ 2 सोनामनि मुंडा है जिसने कथन किया कि वह दुकान गयी और लौटने के बाद चूँकि उसकी संतानें रो रही थी, वह उन्हें खिला रही थी। पार्वती और सुकुरमनि अपने कमरा में बात कर रहे थे जब पार्वती ने सबल से मृतका पर प्रहार किया। उसने कथन किया कि उसने कोई आवाज नहीं सुना था जब प्रहार किया गया था क्योंकि संतानें चिल्ला रही थी। उसने पैरा 2 में स्पष्टत: कथन किया है कि उसने सुकुरमनि एवं पार्वती, मृतका एवं अपीलार्थी को अपने कमरा में बात करते देखा था और उक्त कमरा में कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं था।

8. अभियोजन साक्ष्य बंद होने के बाद अपीलार्थी का परीक्षण दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षण किया गया था। उसने घटना से इनकार किया।

9. तत्पश्चात, अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन दोषसिद्ध किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए 1000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया और डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन अपराध के लिए तीन माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया।

10. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संपूर्ण मामला अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य पर टिका है। वह निवेदन करते हैं कि यदि अभिसाक्ष्यों का सावधानीपूर्वक संवीक्षण किया जाता है, यह स्पष्ट होगा कि अ॰ सा॰ 1 चश्मदीद गवाह नहीं है और वस्तुत: घटनास्थल पर उपस्थित नहीं थी। वह निवेदन करते हैं कि यदि अ॰ सा॰ 1 का साक्ष्य त्यक्त किया जाता है, संपूर्ण मामला में याची के विरूद्ध सामग्री नहीं है। वह आगे निवेदन करते हैं कि अभियोजन की उत्पत्ति अपीलार्थी द्वारा मृतका को डायन बताया जाना है किंतु आश्चर्यजनक रूप से किसी भी गवाह ने इस तथ्य को अपने साक्ष्य में इंगित नहीं किया है। यह निवेदन किया गया है कि इस प्रकार अभियोजन घटना की उत्पत्ति सिद्ध करने में विफल रहा है जो इसके लिए घातक है। इस प्रकार, जब हेतु सिद्ध नहीं किया जाता है, अपीलार्थी दोषमुक्त किए जाने का दायी है। यह निवेदन भी किया गया है कि अभिकथित चाक्षुक साक्ष्य जहाँ तक यह प्रहार से संबंधित है चिकित्सीय साक्ष्य से मेल नहीं खाता है। यह निवेदन भी किया गया है कि यह अभियोजन का मामला है कि अपीलार्थी द्वारा केवल एक वार किया गया था और ऐसा होने के नाते मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन नहीं आ सकता है।

11. इसके विपरीत, विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ तर्क करती हैं कि अ॰ सा॰ 1 चश्मदीद गवाह है जिसने घटना देखा था। वह निवेदन करती हैं कि उसके परिसाक्ष्य यह संदेह नहीं किया जा सकता है। वह आगे निवेदन करती हैं कि जब हत्या की कारिता की चश्मदीद गवाह है, हेतु सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है। वह यह निवेदन भी करती है कि भले ही एकल वार किया गया है यदि यह ऐसी विशालता के साथ घातक है, और यह अपीलार्थी की जानकारी में था कि इसकी परिणति मृत्यु में हो सकती है, तब धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि अत्यन्त न्यायोचित है। अंत में वह निवेदन करती हैं कि अभियोजन मामला दृढ़तापूर्वक सिद्ध किया गया है और इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

12. इस मामला में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है।

13. जहाँ तक डायन प्रथा निवारण अधिनियम के अधीन आरोप का संबंध है हम पाते हैं कि न तो अ॰ सा॰ 1 न ही अ॰ सा॰ 2 ने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि मृतका को इस अपीलार्थी द्वारा डायन कहा जा रहा था। अ॰ सा॰ 1 केवल यह कथन करता है कि पार्वती कह रही थी कि उसका पुत्र स्वस्थ होगा या नहीं। आगे, अ॰ सा॰ 2 ने अपीलार्थी द्वारा मृतका को डायन बताने के बिंदु पर कुछ नहीं कहा और उक्त अधिनियम के अधीन अपराध आकृष्ट करने के लिए साक्ष्य नहीं है। हम पाते हैं कि डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 के अधीन आरोप सिद्ध करने के लिए सामग्री नहीं है। इस प्रकार, अभियोजन अपीलार्थी के विरूद्ध उक्त आरोप सिद्ध करने में विफल रहा है।

14. जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, मुख्य साक्ष्य जिस पर संपूर्ण अभियोजन मामला टिका है अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 2 का साक्ष्य है। अ॰ सा॰1 चश्मदीद गवाह होने का दावा करता है जिसने घटना देखा था। उसने कथन किया कि वह घर में था और आग ताप रहा था जब इस अपीलार्थी ने मृतका के दाएँ कनपटी पर सबल से वार किया था जिस कारण उसकी मृत्यु हो गयी। प्रतिपरीक्षण में वह कहता है कि समय के एक बिंदु पर दोनों परिवारों के बीच विवाद था।

अ॰ सा॰ 2 भी दूसरे कमरे में उपस्थिति थी। उसने कथन किया कि उसने अपीलार्थी एवं मृतका के बीच बातचीत होते सुना था। मुख्य परीक्षण में उसने स्पष्टत: कथन किया कि उक्त कमरा में केवल अपीलार्थी एवं मृतका थी और कोई अन्य व्यक्ति उपस्थिति नहीं था। अ॰ सा॰ 2 के संपूर्ण साक्ष्य में, अ॰ सा॰ 1 अर्थात सूचक की घटना स्थल पर उपस्थित के बारे में चर्चा भी नहीं है। वस्तुत: उसने स्पष्टत: कथन किया कि इन दो व्यक्तियों अर्थात अपीलार्थी एवं मृतका के सिवाए कमरा में कोई नहीं था। आगे, अ॰ सा॰ 1 के मुताबिक, प्रहार दाएँ भाग पर था और एक वार किया गया था, किंतु आश्चर्यजनक रूप से, डॉक्टर ने ऑक्सीपीटल अस्थि के फ्रैक्चर के साथ ऑसीपीटल क्षेत्र के बाएँ भाग पर उपहति पाया। मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट में, जो प्रदर्श 3 है, उल्लेख किया गया है कि उपहति बाएँ भाग पर है।

15. अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य से संदेह होता है कि क्या अ॰ सा॰ 1 वस्तुत: घटना स्थल पर उपस्थित थी अथवा घटना देखा था। आगे, अपीलार्थी को झूठा आलिप्त करने का कारण हो सकता है क्योंकि स्वयं अ॰ सा॰ 1 ने कहा था कि दोनों परिवारों के बीच कुछ विवाद था।

16. आगे, साक्ष्य से मैं यह भी पाता हूँ कि किसी ने अपीलार्थी को मृतका के घर अथवा कमरा में हत्या के हथियार के साथ जाते नहीं देखा था। यह स्पष्टत: सुझाता है कि अपीलार्थी की ओर से हत्या करने का आशय नहीं था। अभियोजन स्थापित करने में विफल रहा है कि अपीलार्थी ने कहाँ से सबल पाया है। इस प्रकार, ये समस्त कारक अभियोजन मामला के प्रति संदेह सृजित करते हैं कि क्या सूचक वस्तुत: चश्मदीद गवाह था और घटना स्थल पर उपस्थित था। यदि घटना स्थल पर अ॰ सा॰ 1 की उपस्थित संदेहपूर्ण है, तब स्वीकृत रूप से शेष तात्विक गवाह अर्थात अ॰ सा॰ 2 ने प्रहार नहीं देखा है।

17. इस प्रकार, बचाव अभियोजन मामला में संदेह का तत्व सृजित करने में सफल हुआ है। जब बचाव घटना में अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता पर संदेह सृजित करने में सफल है, तब अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने की हकदार है। इस प्रकार, अपीलार्थी को संदेह का लाभ देकर हम आक्षेपित निर्णय अपास्त करके अपीलार्थी को दोषमुक्त करने के इच्छुक हैं।

18. इस प्रकार, हम सत्र विचारण सं॰ 48 वर्ष 2008 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, पश्चिम सिंहभूम, चाइबासा द्वारा पारित दिनांक 12 अप्रिल 2010 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 15 अप्रिल, 2010 का दंडादेश अपास्त करते हैं। अपीलार्थी जो अभिरक्षा में है, को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामला में उसकी आवश्यकता नहीं है। तद्नुसार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

19. इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को भेजे जाएँ।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

मधुसूदन सिंह

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 1575 of 2014. Decided on 6th April, 2018.

बिहार (अब झारखंड) भूमि सुधार अधिनियम, 1950—धाराएँ 4 एवं 13—रैयती भूमि का अंतरण—याची अंचलाधिकारी, चास द्वारा जारी पत्र को चुनौती दे रहा है जिसके द्वारा बारा बांध तालाब जिस पर याची द्वारा दावा किया गया है को जिला मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया है—याची जिला मत्स्य उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो द्वारा जारी कार्यालय आदेश को भी चुनौती दे रहा है जिसके द्वारा उक्त तालाब प्राईवेट प्रत्यर्थी के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है—याची के अधिकार, अभिधान एवं हित का विनिश्चित करने के लिए मामला उपायुक्त को प्रतिप्रेषित किया गया था और निर्देश के अनुसरण में उपायुक्त ने याची के पक्ष में विनिश्चय किया और बाद में इस आदेश के विरूद्ध पुनरीक्षण भी खारिज किया गया था—प्रश्नगत तालाब झारखंड राज्य के मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित नहीं किया जा सकता था और तद्नुसार इसे प्राइवेट प्रत्यर्थी को बंदोबस्त नहीं किया जा सकता था—आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 7, 11 एवं 12)

अधिवक्तागण.—Mr. Rajeev Ranjan Tiwary, For the Petitioner; Mr. Atanu Banerjee, For the Respondents (1 to 5); Mr. Arpan Mishra, For the Respondents (6 to 8).

आदेश

याची के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री राजीव रंजन तिवारी सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 के लिए उपस्थित जी॰ ए॰ श्री अतानु बनर्जी सुने गए।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 6 से 8 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री अर्पण मिश्रा सुने गए।

4. प्रत्यर्थी सं॰ 6 से 8 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री अर्पण मिश्रा निवेदन करते हैं कि उन्हें मामला में अनुदेश नहीं है। किंतु, वह न्यायालय की मदद के लिए उपस्थित हैं।

5. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोष के लिए दाखिल की गयी है:—

''(a) प्रासंगिक आदेश रद्द करने के लिए और अभिलेख मंगाने के लिए जिसके द्वारा याची की रैयती भूमि जिस पर तालाब अवस्थित है को अंचल अधिकारी, बोकारो द्वारा मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया है, चूँकि उक्त भूमि मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों में याची की रैयती भूमि है और प्रत्यर्थी प्राधिकारी को इसे मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित करने का अधिकार नहीं है और संपूर्ण कार्यवाही पूर्णतः अवैध, अन्यायोचित एवं विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है।

(b) मत्स्यजीवी सहयोग समिति लिमिटेड, चास को उक्त तालाब की बंदोबस्ती अभिखंडित करने के लिए जो प्रत्यर्थी द्वारा आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के अधीन आपूर्त दिनांक 4.10.2010 की सूचना से स्पष्ट नहीं हो सकता है क्योंकि प्रत्यर्थियों को इसकी बंदोबस्ती करने का प्राधिकार नहीं है क्योंकि यह वर्तमान याची की रैयती भूमि है।''

6. किंतु, रिट याचिका लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थियों ने आगे तालाब की बंदोबस्ती के संबंध में आदेश पारित किया था जिसे संशोधन के लिए याचिका दाखिल करके चुनौती दी गयी थी और संशोधन याचिका अनुज्ञात की गयी थी। इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थियों ने अभिलेख पर वह आदेश लाया था जिसके द्वारा प्रश्नगत तालाब जिला मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया था। अंतरण के उक्त आदेश को चुनौती देते हुए रिट याचिका संशोधित की गयी थी। इस प्रकार, दिनांक 25.1.2017 तथा 5.10.2017 के दो पश्चातवर्ती आदेशों के फलस्वरूप निम्नलिखित दो प्रार्थनाएँ जोड़ी गयी थीं:—

''(a) याची जिला मत्स्य उद्योग अधिकारी सह मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो द्वारा जारी दिनांक 15.7.2016 के पत्र सं० 437 के तहत कार्यालय आदेश के अभिखंडन के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश अथवा उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट जारी करने की प्रार्थना करता है जहाँ तक यह वर्तमान मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों में वर्तमान याची के तालाब में संबंधित है क्योंकि प्रत्यर्थी विभाग को याची के रैयती तालाब को किसी व्यक्ति अथवा निकाय को बंदोबस्त करने की अधिकारिता नहीं है और इसलिए दिनांक 15.7.2016 का कार्यालय आदेश पूर्णतः मनमाना, अन्यायोचित एवं विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है।

(b) याची आगे वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान याची के तालाब की बंदोबस्ती स्थगित करने वाला अथवा प्रत्यर्थी सं० 6 एवं अन्य को वर्तमान याची के शांतिपूर्ण कब्जा को अस्तव्यस्त करने से अवरूद्ध करने वाला समुचित आदेश जारी करने की प्रार्थना करता है।

(c) याची आगे अंचलाधिकारी (प्रत्यर्थी सं० 5) चास द्वारा जारी दिनांक 2.11.1993 के पत्र सं० 854 के अभिखंडन के लिए प्रार्थना करता है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन संपूर्ण बाराबंध तालाब जिला मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया है।''

7. इस प्रकार, याची अंचलाधिकारी, चास द्वारा जारी दिनांक 2.11.1993 के पत्र सं॰ 854 को चुनौती दे रहा है। जिसके द्वारा बाराबंध तालाब जिसपर याची द्वारा दावा किया गया है को जिला मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया है। याची जिला मत्स्य उद्योग अधिकारी—सह मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो द्वारा जारी दिनांक 15.7.2006 के पत्र सं॰ 437 के तहत कार्यालय आदेश को भी चुनौती दिया है जिसके द्वारा उक्त तालाब प्राइवेट प्रत्यर्थी के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है।

8. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस मामला में अंतर्ग्रस्त तालाब याची की निजी संपत्ति है और प्रत्यर्थी राज्य को इसे मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित करने का प्राधिकार नहीं है और मत्स्य उद्योग विभाग को इसे प्राइवेट प्रत्यर्थी अर्थात वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 6 को बंदोबस्त करने का प्राधिकार नहीं है। मामला के तथ्यों को निर्दिष्ट करते हुए याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि:–

(a) तालाब ग्राम सतनपुर के मौजा सं० 35, खाता सं० 87, भूखंड सं० 3158, क्षेत्रफल 36 डिसमिल एवं मौजा सतनपुर, खाता सं० 197, भूखंड सं० 1430, क्षेत्रफल 13 एकड़ 38 डिसमिल में स्थित है तथा दोनों भूखंडों को तालाब के रूप में एक साथ मिलाया गया है जो आम तौर पर बाराबंध तालाब के रूप में ज्ञात है जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि एम० फॉर्म उक्त भूमि को याची की रैयती भूमि के रूप में दर्शाते हुए निर्गत किया गया है।

(b) याची यह निवेदन भी करता है कि याची उक्त संपत्ति के संबंध में लगान का भुगतान कर रहा है और 1957 से ही लगान का भुगतान कर रहा है और सक्षम प्राधिकारी से इसका लगान रसीद पा रहा है।

(c) याची को जानकारी हुई कि मत्स्य उद्योग विभाग ने इसे सैरात संपत्ति के रूप में मानते हुए उक्त तालाब की नीलामी का नोटिस जारी किया था और इसके बारे में जानकारी मिलने पर याची सी० डब्लू० जे० सी० सं० 1112 वर्ष 1987(R) दाखिल करके इस माननीय न्यायालय के समक्ष आया था और याची द्वारा की गयी प्रार्थना पर विचार करते हुए इस माननीय न्यायालय ने उक्त तालाब की बंदोबस्ती स्थगित करने वाला आदेश पारित किया है और आगे उपायुक्त को याची की शिकायत पर विचार करने

को और याची द्वारा दाखिल किए जा रहे अभ्यावेदन पर समुचित सकारण आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था।

(d) इस न्यायालय द्वारा सी० डब्लू० जे० सी० सं० 1112 वर्ष 1987(R) में पारित दिनांक 3.11.1987 के आदेश के अनुसरण में उपायुक्त ने एम० आर० ए० केस सं० 6/1987 में दिनांक 6.4.1988 का आदेश पारित किया जिसमें उक्त प्राधिकारी ने अभिनिर्धारित किया कि याची उक्त तालाब का रैयती स्वामी है और इसके लिए लगान रसीद जारी करने का निर्देश भी जारी किया।

(e) एम० आर० ए० केस सं० 6/1987 में दिनांक 6.4.1988 के इस आदेश के विरूद्ध सैरात पुनरीक्षण मामला सं० 43/1988 कुछ प्राइवेट पक्ष द्वारा दाखिल किया गया था जिन्होंने भी संपत्ति पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित का दावा किया। उक्त पुनरीक्षण मामला दिनांक 19.2.1990/2.4.1990 के आदेश के तहत इस संप्रेक्षण के साथ खारिज किया गया था कि प्राइवेट पक्ष अपना अधिकार, अभिधान एवं हित सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय से विनिश्चित करवा सकता है।

(f) याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि जब एक बार एम० आर० ए० केस सं० 6/1987 में सक्षम प्राधिकारी द्वारा आदेश पारित किया गया है जिसके विरूद्ध पुनरीक्षण भी खारिज किया गया था, प्रत्यर्थी को आक्षेपित आदेश के फलस्वरूप मत्स्य उद्योग विभाग को यह संपत्ति विशेष अंतरित करने की अधिकारिता नहीं है और परिणामस्वरूप मत्स्य उद्योग विभाग प्राइवेट पक्ष के पक्ष में संपत्ति बंदोबस्त नहीं कर सकता है।

9. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आदेश जिसे उपायुक्त द्वारा एम॰ आर॰ ए॰ केस सं॰ 6/1987 में पारित किया गया था, केवल एम॰ फॉर्म पर विचार करते हुए पारित किया गया था और उपायुक्त द्वारा पारित उक्त आदेश विधि के अनुरूप नहीं है। प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता आगे प्रतिशपथ पत्र के पैरा 23 को निर्दिष्ट करते हैं एवं निवेदन करते हैं कि यह तालाब विशेष याची की रैयती संपत्ति नहीं है क्योंकि सरकार द्वारा संधारित खतियान में'' गैर आबाद मालिक'' गैर मजरूआ भूमि के रूप में दर्ज किया गया है। वह यह दर्शाने के लिए कि संपत्ति जिस पर तालाब अवस्थित है गैर आबाद मालिक के रूप में दर्ज की गयी है, प्रतिशपथपत्र में अनेक अभिलेखों को भी निर्दिष्ट करते हैं। अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची का संपत्ति पर अधिकार, अभिधान एवं हित नहीं है और तद्नुसार मत्स्य उद्योग विभाग ने सही प्रकार से इसे प्राइवेट प्रत्यर्थी को नीलामी द्वारा तालाब अंतरित किया है।

10. याची और प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह दर्शाने के लिए कि राज्य को नीलामी के रूप में तालाब बंदोबस्त करने का अधिकार है और तालाब का रैयत हित राज्य में निहित है, बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 की अनेक धाराओं को उक्त अधिनियम की धाराओं 4 एवं 13 सहित निर्दिष्ट किया है।

11. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करते हुए यह न्यायालय पाता है कि प्रत्यर्थीगण सी॰ डब्लू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1112 वर्ष 1987 (R) में पारित दिनांक 3.11.1987 के आदेश को विवादित करने में सक्षम नहीं हुए हैं जिसमें याची के अधिकार, अभिधान एवं हित विनिश्चित करने के लिए मामला उपायुक्त को प्रतिप्रेषित किया गया था और निर्देश के अनुसरण में उपायुक्त ने एम॰ आर॰ ए॰ केस सं॰ 6/1987 में आदेश पारित किया जिसे याची के पक्ष में विनिश्चित किया गया था और बाद में इस आदेश के विरूद्ध पुनरीक्षण भी खारिज किया गया था। तद्नुसार, आदेश परिशिष्ट 4 जिसे उपायुक्त द्वारा एम॰ आर॰ ए॰ केस सं॰ 6/87 में पारित किया गया था प्रत्यर्थियों पर

बाध्यकारी है और प्रत्यर्थियों को यह कहने की छूट नहीं है कि इसे विधि के अनुरूप पारित नहीं किया गया है। किंतु, राज्य विधि के अनुरूप संपत्ति पर अधिकार, अभिधान एवं हित घोषित करवाने के लिए स्वतंत्र है। रिट याचिका के परिशिष्ट 4 पर एम॰ आर॰ ए॰ केस सं॰ 6/1987 में उपायुक्त द्वारा पारित आदेश की दृष्टि में प्रश्नगत तालाब झारखंड राज्य के मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित नहीं किया जा सकता था और तद्नुसार इसे प्राईवेट प्रत्यर्थी को बंदोबस्त नहीं किया जा सकता था।

12. तद्नुसार, अंचलाधिकारी, चास द्वारा जारी दिनांक 2.11.1993 का पत्र सं॰ 854 जिसके द्वारा इस मामला में अंतर्ग्रस्त तालाब मत्स्य उद्योग विभाग को अंतरित किया गया है, अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरूप जिला मत्स्य उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो द्वारा जारी दिनांक 15.7.2007 के पत्र सं॰ 437 के तहत कार्यालय आदेश जिसके द्वारा उक्त तालाब प्राइवेट प्रत्यर्थी के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है, भी इस सीमा तक अपास्त किया जाता है जहाँ तक यह याची द्वारा दावा किए गए तालाब से संबंधित है।

13. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ यह रिट याचिका एतद्द्वारा अनुज्ञात की जाती है।

माननीय आनन्द सेन, न्यायमूर्ति

आधुनिक पावर एण्ड नेचुरल रिसोर्सेज लिमिटेड

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 6909 of 2017. Decided on 16tth May, 2018.

झारखंड औद्योगिक नीति, 2001—खंड 29.11—पूंजी सहायिकी के प्रदान के लिए याची के दावा का अस्वीकरण—याची के मामला पर विचार किया गया था किंतु इसे इस आधार पर अस्वीकार किया गया था कि याची का मामला स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्र की कोटि में आता है और नयी झारखंड औद्योगिक नीति, 2012 के अधीन ऐसी किसी इकाई को सहायिकी प्रदान करने वाला प्रावधान नहीं है—याची औद्योगिक नीति, 2001 सहपठित झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 एवं याची तथा राज्य के बीच हुए एम॰ ओ॰ यू॰ के निंबधनानुसार पूँजी सहायिकी का दावा कर रहा है—याची ने स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्र स्थापित किया है जिसके लिए औद्योगिक नीति, 2012 के मुताबिक कोई सहायिकी प्रदान करने का प्रावधान नहीं है—झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 स्पष्टतः अनुबंधित करता है कि उक्त नियमावली झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 प्रभावी रहने अवधि तक प्रभावी है—पक्षों के बीच हुआ एम॰ ओ॰ यू॰ अपनी ताकत एवं कमजोरी केवल उक्त औद्योगिक नीति, 2001 से पाता है—नियमावली 2005 तथा एम॰ ओ॰ यू॰ का पठन झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के साथ करना होगा और एकाकीपन में इसका पठन नहीं किया जा सकता है—एम॰ ओ॰ यू॰ एवं नियमावली 2005 का अस्तित्व नीति, 2001 से स्वतंत्र नहीं है—चूँकि याची का वाणिज्यिक उत्पादन उस अवधि जब नीति, 2001 प्रभाव में थी के दौरान शुरू नहीं हुआ था, याची औद्योगिक नीति, 2001 के खंड 29.2 के निबंधनानुसार उक्त नीति के अधीन कोई लाभ पाने का हकदार नहीं है—नयी नीति, 2012 में स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्रों को वित्तीय सहायिकी के प्रदान का प्रावधान नहीं है जो प्रचलन में नहीं था जब याची के संयंत्र ने वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया था—रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 3, 7, 8, 11, 12, 15 एवं 16)

निर्णयज विधि.–(2015) 7 SCC 412—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Ajay Kr. Sah, For the Petitioner; M/s Atanu Banerjee, Kaustav Panda, For the Respondents.

आदेश

याची इस रिट आवेदन में निदेशक, उद्योग विभाग, झारखंड सरकार, द्वारा जारी दिनांक 16.6.2017 के पत्र सं॰ 1927 और अवर सचिव, ऊर्जा विभाग, झारखंड सरकार द्वारा जारी दिनांक 11.7.2017 के पत्र सं॰ 2180 के अभिखंडन के लिए प्रार्थना कर रहा है जिसके द्वारा दोनों प्राधिकारियों ने झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के निबंधनानुसार पूंजी सहायिकी के प्रदान के लिए याची का दावा अस्वीकार कर दिया है।

इसके अतिरिक्त, याची प्रत्यर्थियों को पूँजी सहायिकी जिसका याची झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 एवं याची तथा राज्य के बीच हुए समझौता ज्ञापन के निबंधनानुसार हकदार होने का दावा कर रहा है की प्रतिपूर्ति का निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रार्थना किया है।

2. इस मामला के तथ्य अविवादित हैं।

झारखंड राज्य ने राज्य में औद्योगिक विकास गतिशील करने के लिए औद्योगिक नीति निरूपित किया है। उक्त औद्योगिक नीति वर्ष 2001 की है और औद्योगिक नीति, 2001 (इसमें इसके बाद नीति 2001 के रूप में निर्दिष्ट) के रूप में ज्ञात है।

3. उक्त नीति 2001 का खंड 29.0 औद्योगिक इकाईयों को प्रदान किए जाने के लिए वित्तीय प्रोत्साहन प्रावधानित करता है। नौ प्रकार के राजवित्तीय प्रोत्साहन है जिसकी हकदार औद्योगिक इकाई है। ऐसा एक प्रोत्साहन पूंजी निवेश प्रोत्साहन है। उक्त नीति 2001 के मुताबिक, 50 करोड़ रुपयों से अधिक के निवेश वाला इकाई/नयी परियोजना मेगा इकाई कही गयी है। उक्त नीति 2001 के खंड 29.11 के मुताबिक, मेगा इकाइयों के लिए भावी निवेशकों के साथ सीधी बातचीत के माध्यम से प्रत्येक मामला के आधार पर विशेष पैकजों को निरूपित किया जाना था।

अनेक प्रोत्साहनों को प्रदान करने में एकरूपता सुनिश्चित करने के लिए दिनांक 10.6.2003 के मेमो सं॰ 1885 के तहत योजनाएँ अधिसूचित की गयी थी। योजनाएँ मेगा परियोजनाओं के लिए नियमावली का निरूपण प्रावधानित करती है। मेगा परियोजनाओं के लिए विशेष प्रोत्साहन नियमावली (प्रोत्साहन नियमावली के रूप में निर्दिष्ट) निरूपित की गयी थी और इसे 2 अगस्त, 2005 को अधिसूचित किया गया था। उक्त नियमावली तब तक के लिए प्रभावी बनायी गयी थी जब तक झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 प्रभाव में बनी रहती है। नियम 2.9 नियत पूंजी निवेश प्रावधानित करता है। नियम 3 उक्त प्रोत्साहन नियमावली की प्रयोज्यता पर विचार करता है। नियम 3.2 प्रावधानित करता है कि उक्त नियमावली के अधीन लाभ केवल उन इकाइयों को उपलब्ध होंगे जिन्होंने 15 नवंबर, 2000 को अथवा इसके बाद वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया है अथवा इस सम्यक तिथि के बाद विस्तार, विविधताकरण या आधुनिकीकरण किया है।

इस पृष्ठभूमि में याची ने 100 मेगावाट उर्जा परियोजना स्थापित किया जाना सुकर बनाने के लिए झारखंड राज्य के साथ समझौता ज्ञापन (एम॰ ओ॰ यू॰) किया। याची एवं राज्य के बीच 31.10.2005 को एम॰ ओ॰ यू॰ हुआ था। उक्त एम॰ ओ॰ यू॰ का खंड 13 प्रावधानित करता है कि झारखंड सरकार दिनांक 10.6.2003 के अधिसूचना सं॰ 1885 और झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के तहत यथा अधिसूचित मेगा निवेश योजना में यथा परिकल्पित प्रयोज्य प्रोत्साहनों एवं रियायतों को आगे बढ़ाएगी। खंड 14

प्रावधानित करता है कि कोई नयी अथवा सुधार किया गया प्रोत्साहन जिसे झारखंड सरकार द्वारा एम॰ ओ॰ यू॰ हस्ताक्षरित करने के बाद उद्घोषित किया जा सकता है, अतिरिक्त रूप से याची को प्रदान की जाएगी।

याची ने 50 करोड़ रुपयों से अधिक के पूंजी निवेश के साथ 2x270 MW का थर्मल पावर प्लान्ट स्थापित करने का काम शुरू किया। प्रत्येक ऊर्जा संयंत्र के 270 MW की दो इकाइयों ने क्रमशः 21.1.2013 एवं 19.5.2013 को वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया। याची ने एन॰ओ॰यू॰ एवं नीति 2001 के निबंधनानुसार सहायिकी के प्रदान के लिए विशेष सचिव (ऊर्जा), झारखंड सरकार के समक्ष और निदेशक, उद्योग, झारखंड सरकार के समक्ष भी आवेदन दिया। वाणिज्यिक उत्पादन के लिए प्रमाणपत्रों के प्रदान के लिए भी आवेदन दिया गया था।

इस मोड़ पर, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि औद्योगिक नीति, 2001 समय-समय पर 2012 तक बढ़ायी गयी थी जब नयी नीति द्वारा इसे निरसित कर दिया गया था।

याची के मामला पर विचार किया गया था किंतु इसे इस आधार पर अस्वीकार किया गया था कि याची का मामला स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्र की कोटि में आता है और नयी झारखंड औद्योगिक नीति, 2012 के अधीन ऐसी किसी इकाई को कोई सहायिकी प्रदान करने का प्रावधान नहीं है।

4. राज्य सरकार की उक्त कार्रवाई जिसके द्वारा याची को सहायिकी से इनकार किया गया था से व्यथित होकर याची राज्य के अस्वीकरण आदेश को चुनौती देते हुए और उक्त नीति 2001 के अधीन सहायिकी राशि का भुगतान करने के लिए उनको निर्देश देने के लिए इस रिट आवेदन को दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि औद्योगिक नीति 2012 के निरूपण एवं प्रभाव में आने के बाद भी याची का मामला नीति 2001 द्वारा शासित होगा और इस प्रकार याची सहायिकी राशि का हकदार है जिसे देने का वादा राज्य ने इकाईयों को स्थापित किए जाने के समय पर किया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से याची की इकाई मेगा इकाई है जिसके लिए विशेष योजना निरूपित की गयी थी और विशेष योजना के मुताबिक याची सहायिकी का काम लेने का हकदार है जिसे राज्य द्वारा एम॰ ओ॰ यू॰ करने के बाद एकपक्षीय रूप से वापस नहीं लिया जा सकता है। वह तर्क करते हैं कि जब एक बार राज्य एवं याची के बीच एम॰ ओ॰ यू॰ हुआ है, राज्य को यह अभिवचन करने से विर्वाधित किया जाता है कि नयी औद्योगिक नीति 2012 से प्रभाव में आयी है और याची कोई लाभ पाने का हकदार नहीं है। जो पूर्व नीति से आता है। वह कथन करते हैं कि एम॰ ओ॰ यू॰ के प्रावधान बिलकुल स्पष्ट है जो सुझाते हैं कि याची भावी योजनाओं के अधीन अतिरिक्त लाभ पाने का हकदार है जिसका अर्थ है कि पूर्व योजनाओं के अधीन लाभ वापस नहीं लिए जा सकते हैं बल्कि याची पूर्व योजना के लाभों का और भावी योजना के लाभों को पाने का हकदार है यदि ये याची के प्रति प्रयोज्य है। वह आगे निवेदन करते हैं कि एम॰ ओ॰ यू॰ के निबंधनों का आदर समस्त संबंधों में किया जाना चाहिए और याची ने विशाल निवेश नहीं किया होता यदि उसकी जानकारी में यह होता कि बाद के चरण पर सहायिकी प्रदान नहीं किया जाएगी। अंत में विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि राज्य की संपूर्ण कार्रवाई अयुक्तियुक्त है और अपास्त किए जाने की दायी है।

6. राज्य प्रतिशपथपत्र के आधार पर तर्क करता है कि याची का संपूर्ण दावा तुच्छ है। यह निवेदन किया गया है कि स्वीकृत रूप से औद्योगिक नीति, 2001 वर्ष 2011 तक प्रभावी थी जिसे नीति 2012 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था और उक्त नीति 2012 स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्र को कोई सहायिकी प्रावधानित

नहीं करती है। यह निवेदन किया गया है कि स्वीकृत रूप से याची की इकाईयों का वाणिज्यिक उत्पादन 21.1.2013 तथा 19.5.2013 को शुरू हुआ अर्थात नीति 2001 के अवसान के बाद, इस प्रकार याची को नीति 2001 से किसी लाभ का दावा करने का अधिकार नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वचन विवंध का सिद्धांत वर्तमान मामला के तथ्यों में प्रयोज्य नहीं है। अत: में यह निवेदन किया गया है कि राज्य ने सही प्रकार से प्रोत्साहन का दावा अस्वीकार किया है।

7. पक्षों को सुनने के बाद, मैं पाता हूँ कि याची औद्योगिक नीति, 2001 सह पठित दिनांक 2 अगस्त, 2005 की अधिसूचना अर्थात झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 और राज्य एवं याची के बीच हुए एम॰ ओ॰ यू॰ के निबंधनानुसार पूंजी सहायिकी का दावा कर रहा है। इस मामला के लिए दो औद्योगिक नीतियाँ प्रासंगिक हैं। एक वर्ष 2001 की है जो याची के दावा का आधार है और दूसरी 2012 की है जो प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए अस्वीकरण का आधार है।

8. स्वीकृत रूप से, याची ने स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्र स्थापित किया है जिसके लिए औद्योगिक नीति, 2012 के मुताबिक कोई सहायिकी प्रदान करने का प्रावधान नहीं है। इस प्रकार, विचारार्थ आने वाला मुख्य प्रश्न यह है कि क्या इस मामला के तथ्यों पर याची का मामला नीति 2001 और उसके अधीन विरचित नियमावली द्वारा शासित होगा या नहीं?

9. इस विवाद्यक को विनिश्चित करने के लिए नीति 2001 के प्रासंगिक प्रावधान पर विचार करने की आवश्यकता है। नीति 2001, 15.11.2000 से प्रभाव में आयी। खंड 29.0 प्रोत्साहन पर विचार करता है। खंड 29.2 परिकल्पित करता है कि प्रोत्साहन केवल एक बार इकाई को दिया जाएगा, जो नीति के प्रभाव में बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करते हैं। खंड 29.2 को उद्धृत करना आवश्यक है:–

> *''खंड 29.2. प्रोत्साहनों के प्रकार जिन्हें दिया जा रहा है नीचे दिए जाते हैं। ऐसा प्रोत्साहन केवल एक बार ग्राह्य होगा जब इकाई इस नीति के प्रभावकारी बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ करता है:*
>
> *1. पूंजी निवेश प्रोत्साहन,*
>
> *2. कैप्टिव पावर जेनरेटिंग सहायिकी,*
>
> *3. ब्याज सहायिकी,*
>
> *4. स्टाम्प ड्यूटी एवं रजिस्ट्रेशन,*
>
> *5. नियोजन उत्पादन आधारित सहायिकी,*
>
> *6. थ्रस्ट क्षेत्र/ई० ओ० यू० एवं एस० सी०/एस० टी०/स्त्री/भूतपूर्व सैनिक एवं विकलांग व्यक्तियों के लिए विशेष प्रोसाहन,*
>
> *7. व्यवहार्यता अध्ययन-परियोजना रिपोर्ट व्यय प्रतिपूर्ति सहायिकी,*
>
> *8. प्रदूषण नियंत्रण उपकरण सहायिकी और*
>
> *9. गुणवत्ता प्रमाणीकरण के लिए प्रोत्साहन।*

10. खंड 29.11 के मुताबिक, मेगा इकाईयों के लिए विशेष पैकेज निरूपित की जानी है। विशेष पैकेज/नियमावली विरचित किए गए थे जो झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 के रूप में ज्ञात है। उक्त परियोजना दिनांक 2 अगस्त, 2005 की अधिसूचना के तहत अधिसूचित की गयी थी। उक्त अधिसूचना में यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि यह प्रोत्साहन नियमावली 2005 झारखंड

औद्योगिक नीति, 2001 की प्रभावी अवधि तक प्रभावी बनी रहेगी। उक्त नियमावली 2005 का नियम 3 प्रोत्साहन नियमों के संबंध में प्रयोज्यता खंड अधिकथित करता है। नियम 3.1 प्रावधानित करता है कि नियमावली 15 नवंबर, 2000 को प्रभाव में आएगी। नियम 3.2 प्रावधानित करता है कि इन नियमों के अधीन लाभ केवल उन इकाईयों को उपलब्ध होंगे जिन्होंने 15 नवंबर, 2000 को अथवा इसके बाद वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया है। एम॰ ओ॰ यू॰ जिसे याची ने राज्य के साथ किया भी औद्योगिक नीति 2005 के निबंधनानुसार ही है जैसा उक्त एम॰ ओ॰ यू॰ के खंड 13.0 से स्पष्ट होगा।

11. इस प्रकार, पूर्वोक्त पैराग्राफों से यह स्पष्ट है कि अधिकार जिसका याची दावा कर रहा है, औद्योगिक नीति 2001 से निकलते हैं, झारखंड मेगा परियोजना नियमावली 2005 अथवा एम॰ ओ॰ यू॰, जो याची एवं राज्य के बीच हुआ, झारखंड राज्य औद्योगिक नीति 2001 पर निर्भर है। जैसा पहले उल्लेख किया गया है, झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 स्पष्टत: अनुबंधित करती है कि उक्त नियमावली झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 की प्रभावी अवधि तक प्रभावी है। पक्षों के बीच हुआ एम॰ ओ॰ यू॰ केवल उक्त औद्योगिक नीति, 2001 से अपनी ताकत एवं कमजोरी पाता है। इन दोनों (अर्थात नियमावली 2005 एवं एम॰ ओ॰ यू॰) का पठन संयुक्त रूप से झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के साथ करना होगा और इसका पठन एकाकीपन में नहीं किया जा सकता है। इस एम॰ ओ॰ यू॰ एवं नियमावली 2005 का अस्तित्व नीति 2001 से स्वतंत्र नहीं है।

12. जैसा उल्लेख ऊपर किया गया है, खंड 29.2 के मुताबिक औद्योगिक इकाई राजवित्तीय प्रोत्साहन केवल तब पाएगी जब यह नीति 2001 के प्रभावी बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करती है। इसका अर्थ है कि खंड 29.0 के अधीन अथवा उक्त नीति 2001 के अधीन बाद में निरूपित किसी योजना के माध्यम से कोई वित्तीय लाभ पाने के लिए इकाई को नीति, 2001 के प्रभावी बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करना होगा। यह दोनों पक्षों का स्वीकृत मामला है कि याची की दो इकाईयों के संबंध में याची का वाणिज्यिक उत्पादन 21.1.2013 तथा 19.5.2013 से शुरू हुआ। वाणिज्यिक उत्पादन की यह अवधि स्वीकृत रूप से औद्योगिक नीति 2001 की प्रभावी अवधि के परे है। यह भी स्वीकृत मामला है कि जब तक याची ने वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया अर्थात 21.1.2013 एवं 19.5.2013, को नयी औद्योगिक नीति, 2012 प्रभाव में आ गयी थी और नीति 2001 अस्तित्व में नहीं थी। इस प्रकार, चूँकि याची का वाणिज्यिक उत्पादन नीति 2001 के प्रभावी बने रहने की अवधि के दौरान शुरू नहीं हुआ था, याची औद्योगिक नीति, 2001 के खंड 29.2 के निबंधनानुसार उक्त नीति के अधीन कोई लाभ पाने का हकदार नहीं है।

13. याची का तर्क कि वचन विवंध का सिद्धांत इस मामला में प्रयोज्य होगा, इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है। सहायिकी प्रदान करने का राज्य का वादा कुछ शर्तों के साथ था। जब कुछ शर्तों के साथ लाभ दिया जाना है, तब व्यक्ति जो उक्त लाभ लेने का प्रयास कर रहा है को इसके साथ संबद्ध उक्त शर्तों को परिपूर्ण करना होगा। शर्तें उक्त वादा के साथ संबद्ध बनी रहती है जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता है। यदि अधिरोपित शर्त परिपूर्ण नहीं की जाती है तब वादा करने वाला व्यक्ति वादा पूरा करने के लिए बाध्य नहीं है।

14. इस मामला में, वादा राजवित्तीय प्रोत्साहन इस शर्त के साथ प्रदान करने का था कि इकाई को नीति 2001 के प्रभावी बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करना होगा। स्वीकृत रूप से, याची द्वारा यह शर्त परिपूर्ण नहीं किया गया है क्योंकि स्वीकृत रूप से वाणिज्यिक उत्पादन नीति 2001 बीत जाने के बाद शुरू हुआ। इस प्रकार, पूर्वोक्त तथ्य की दृष्टि में याची राज्य का वादा पूरा करने

अर्थात राज वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता है। याची द्वारा उद्धृत **केनरा बैंक एवं एक अन्य बनाम एम॰ महेश कुमार, (2015)7 SCC 412,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की प्रयोज्यता नहीं है जहाँ तक इस मामला के तथ्यों का संबंध है।

15. यह स्वीकृत मामला है कि नयी नीति 2012 में स्वतंत्र ऊर्जा संयंत्रों को राजवित्तीय सहायिकी प्रदान करने का प्रावधान नहीं है जो प्रचलित था जब याची के संयंत्र ने वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किया।

16. इस प्रकार, उपर की गयी चर्चा से मैं पाता हूँ कि याची औद्योगिक नीति, 2001 के निबंधनानुसार राजवित्तीय प्रोत्साहन पाने का हकदार नहीं है क्योंकि वह उक्त नीति ने खंड 29.2 में यथा परिकल्पित शर्तों को पूरा करने में विफल रहा है। आगे, मैं पाता हूँ कि वह एम॰ ओ॰ यू॰ एवं झारखंड मेगा परियोजना प्रोत्साहन नियमावली, 2005 से कोई लाभ नहीं पा सकता है जिसका पठन नीति 2001 से अगल होकर नहीं किया जा सकता है क्योंकि वे दस्तावेज भी स्पष्टत: प्रावधानित करते हैं कि यह नीति 2001 तक वैध है। अत: याची बीत गयी नीति अथवा योजना से कोई लाभ नहीं पा सकता है जिसे स्वीकृत रूप से याची को बढ़ाया नहीं गया है।

इस प्रकार, मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार इसे एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

कलाई टुडु

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.1841 of 2013. Decided on 10th May, 2018.

भूमि विधि—भूमि के बंदोबस्त भूखंड में बीजरोपण के लिए अनुमति—चूँकि बंदोबस्ती याची के पक्ष में है, याची को बंदोबस्ती के निबंधनानुसार संपत्ति का उपभोग करने से रोका नहीं जा सकता है—आक्षेपित पत्र द्वारा उपायुक्त ने संपत्ति जो याची की संपत्ति सम्मिलित करती है में वृक्षारोपण की अनुमति दिया है—यह संपत्ति जिसे याची को बंदोबस्त किया गया है के उपभोग में हस्तक्षेप के तुल्य है—प्रत्यर्थियों को संपत्ति जिसे याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है पर याची के अधिकारों में हस्तक्षेप करने से अवरूद्ध किया जाता है। (पैराएँ 15 एवं 16)

अधिवक्तागण.—M/s Satish Baxi, M.A. Khan, For the Petitioner; Mr. Amit Kumar Verma, For the Respondents.

आदेश

याची के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री एम॰ ए॰ खान द्वारा सहायित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री सतीश बक्शी सुने गए।

2. प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अमित कुमार वर्मा सुने गए।

3. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:—

''(a) दिनांक 4.1.2013 की अधिसूचना के अभिखंडन के लिए जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं० 2 ने भूखंड सं० 1220 के संबंध में बीजरोपण की अनुमति दिया है जबकि इसे याची एवं अन्य रैयतों के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है।

(b) रैयतों के पक्ष में ''बंदोबस्ती'' जारी रखने एवं अद्यतन किराए रसीदों को जारी करने के लिए संबंधित प्रत्यर्थियों को निर्देश देने के लिए।

(c) दिनांक 4.1.2013 की अधिसूचना के अनुसरण में रैयतों की बंदोबस्त भूमि में बीजरोपण के लिए कृत्य नहीं करने के निर्देश के लिए।''

4. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 16.5.1997 के आदेश के तहत याची को जिला देवघर के मौजा बदिया अंचल मधुपुर में खाता सं॰ 41, थाना सं॰ 296 में 2 एकड़ क्षेत्र वाले भूखंड सं॰ 1220/33 वाली भूमि का भाग बंदोबस्त किया गया था। यह बंदोबस्ती सबडिविजनल अधिकारी, मधुपुर द्वारा की गयी थी और बंदोबस्ती के काफी पहले 1969 में वन विभाग से भी रिपोर्ट ली गयी थी जिसमें यह प्रमाणपत्रित किया गया था कि संपत्ति विशेष वन क्षेत्र से बाहर है। वह निवेदन करते हैं कि तत्पश्चात नामांतरण किया गया था और याची विधि के अनुरूप लगान का भुगतान कर रहा है।

5. याची के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि दिनांक 16.5.1997 के बंदोबस्ती आदेश के विरूद्ध आयुक्त के समक्ष अपील भी दाखिल की गयी थी जिसे गैर–अभियोजन के लिए दिनांक 4.1.2011 के आदेश के तहत खारिज किया गया था और तत्पश्चात बंदोबस्ती आदेश ने अंतिमता प्राप्त कर लिया है। वह निवेदन करते हैं कि चूँकि याची पूर्वोक्त बंदोबस्ती के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज है, बंदोबस्ती से उद्भूत होने वाले अधिकार, अभिधान एवं हित को प्रत्यर्थियों द्वारा अस्तव्यस्त नहीं किया जा सकता है।

6. याची के अधिवक्ता, अनुदेश पर, आगे निवेदन करते हैं कि याची मूलत: खेती कर रहा है और संपत्ति में छोटा आवासीय गृह भी है और वह किसी गैर वनीय गतिविधि में अंतर्ग्रस्त नहीं है जिसे वन्य जीवन, वन एवं पर्यावरण के प्रति हानिकारक कहा जा सकता है।

7. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अचानक याची का सामना दिनांक 4.1.2013 के पत्र सं॰ 14 के साथ हुआ जिसे वन विभाग का प्रकाशन बताया जाता है जिसमें भूखंड सं॰ 1220 जो याची के साथ बंदोबस्त भूखंड सं॰ 1220 का भाग सम्मिलित करता है में वृक्षारोपण के प्रयोजन से वन विभाग का अनापत्ति प्रमाणपत्र दिया गया है।

8. याची के अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि प्रत्यर्थियों को उस क्षेत्र में प्रवेश करने की अधिकारिता नहीं है जिसे याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है और विशेषत: इस तथ्य कि संपत्ति जिसे याची के साथ बंदोबस्त किया गया है अभी भी उसके पक्ष में जारी है की दृष्टि में वृक्षारोपण सहित कोई गतिविधि करने की अधिकारिता नहीं है और प्रत्यर्थियों की कार्रवाई संपत्ति जिसे याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है का उपभोग करने के याची के अधिकार में हस्तक्षेप के तुल्य है वह आगे निवेदन करते हैं कि इस मामला में अनेक प्रतिशपथपत्र दाखिल किए गए हैं। किंतु, 6.1.2014 को दाखिल प्रतिशपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि शपथपत्र के पैरा 8 में यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि वृक्षारोपण करते हुए याची के आवास, कृषि भूमि को अस्तव्यस्त नहीं किया गया है।

9. याची के अधिवक्ता दोहराते हैं कि रिट याचिका के परिशिष्ट 8 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित संसूचना संपत्ति जिसे याची के साथ बंदाबेस्त किया गया है का उपभोग करने के याची के विधिक अधिकार में हस्तक्षेप के तुल्य है।

10. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश याची द्वारा संपत्ति के उपभोग में हस्तक्षेप के तुल्य नहीं है और वह निवेदन करते हैं कि **टी एन॰ गोदावरमन थिरूमूलपद आदि बनाम भारत संघ एवं अन्य** मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के मुताबिक निर्देश है कि वन संरक्षण अधिनियम के प्रयोजन से वन को इसको शब्द कोष अर्थ में समझा जाना था और यह वर्णन समस्त सांविधिकत: मान्यता प्राप्त वन, चाहे उन्हें आरक्षित, संरक्षित अथवा अन्यथा के रूप में नामित किया गया हो, आच्छादित करता है और स्वामित्व को ध्यान में लिए बिना सरकारी अभिलेख में वन के रूप में दर्ज किसी क्षेत्र को भी सम्मिलित करता है। वह निवेदन करते हैं कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि वन क्षेत्र में गैर-वनीय गतिविधि नहीं की जाय, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विस्तृत निर्देश जारी किए गए हैं।

11. प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि चूँकि वन संरक्षण के प्रयोजन से विनिर्दिष्ट निर्देश जारी किए गए थे, अत:, संपूर्ण भूखंड सं॰ 1220 जो याची का क्षेत्र भी सम्मिलित करता है में वृक्षारोपण सुनिश्चित करने के लिए आक्षेपित पत्र जारी किया गया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि राजस्व अभिलेख में यह संपत्ति ''जंगल झाड़ी'' के रूप में दर्ज की गयी है।

12. किंतु, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता यह तथ्य विवादित नहीं करते हैं कि सम्पत्ति याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है।

13. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता भी तथ्य विवादित नहीं करते हैं कि याची के पक्ष में बन्दोबस्त संपत्ति अभी तक उसके पक्ष में जारी है।

14. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, यह न्यायालय पाता है कि इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति सब डिविजनल अधिकारी, मधुपुर द्वारा पारित दिनांक 16.5.1997 के आदेश के तहत और वन विभाग से सम्यक अनुमति लेने के बाद याची के पक्ष में बंदोबस्त की गयी थी। तथ्य बना रहता है कि बंदोबस्ती अभी भी याची के पक्ष में जारी है और इस बंदोबस्ती के रद्दकरण के प्रयोजन से कदम नहीं उठाया गया है।

15. यह न्यायालय आगे पाता है कि बंदोबस्ती याची के पक्ष में है, अत: याची को बंदोबस्ती के निबंधनानुसार संपत्ति का उपभोग करने से रोका नहीं जा सकता है। दिनांक 4.1.2013 के आक्षेपित पत्र सं॰ 2014 द्वारा उपायुक्त ने संपत्ति जो याची की संपत्ति भी सम्मिलित करती है पर वृक्षारोपण की अनुमति दिया है और इस न्यायालय का सुविचारित दृष्टिकोण है कि यह संपत्ति, जिसे याची के साथ सबडिविजनल अधिकारी, मधुपुर द्वारा पारित दिनांक 16.5.1997 के आदेश के तहत बंदोबस्त किया गया है, के उपभोग में हस्तक्षेप के तुल्य है।

16. तद्नुसार, दिनांक 4.1.2013 का पत्र सं॰ 14 एतद्द्वारा केवल उस सीमा तक अपास्त किया जाता है जहाँ तक यह दिनांक 16.5.1997 के आदेश, जो सबडिविजनल अधिकारी, मधुपुर द्वारा पारित बंदोबस्ती आदेश, जो सबडिविजनल अधिकारी, मधुपुर द्वारा पारित बंदोबस्ती आदेश है, के क्रमांक सं॰ 26 में निर्दिष्ट याची की संपत्ति से संबंधित है और प्रत्यर्थियों को संपत्ति जिसे याची के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है पर याची के अधिकार में हस्तक्षेप करने से अवरूद्ध किया जाता है।

17. किंतु यह आदेश प्रत्यर्थियों को बंदोबस्ती के संबंध में कोई कार्यवाही आरंभ करने से नहीं रोकेगा, यदि यह पाया जाता है कि बंदोबस्ती किसी दुर्व्यपदेशन के फलस्वरूप अथवा प्रत्यर्थियों द्वारा की गयी किसी ताथ्यिक गलती के कारण की गयी है।

18. यह स्पष्ट किया जाता है कि यह रिट याचिका केवल याची की संपत्ति तक सीमित है।

माननीय आनन्द सेन एवं कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्तिगण

मुकुन्द मुंडा (1138 में)

बुधन मुंडा (1121 में)

सोहराय मुंडा एवं अन्य (1130 में)

बनाम

झारखंड राज्य (सभी में)

Criminal Appeal (D.B.) Nos. 1138, 1121, 1130 of 2016 (With I.A. Nos. 1390, 1310, 1491 of 2018). Decided on 22nd May, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 486 वर्ष 2011/सत्र विचारण सं॰ 517 वर्ष 2011/टी॰ आर॰ सं॰ 11 वर्ष 2015 में विद्वान अपर जिला आयुक्त-XIII, राँची द्वारा पारित दिनांक 26 अगस्त, 2016 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा 29 अगस्त, 2016 के दण्डादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—आयुध अधिनियम, 1959—धारा 27—हत्या—सामान्य आशय—आजीवन कारावास—मृतक की पत्नी एकमात्र चश्मदीद गवाह होने का दावा करती है—उसका साक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है—उसने हमलावरों के रूप में अपीलार्थियों का नाम नहीं लिया है—उसने गवाह के रूप में अभिसाक्ष्य देते हुए कहानी विकसित किया है और इन अपीलार्थियों को हमलावरों के रूप में आलिप्त किया है, जिसे उसने प्राथमिकी में नहीं किया था—यह इस बात के प्रति संदेह सृजित करता है कि क्या इस गवाह ने घटना देखा था अथवा क्या ये अपीलार्थीगण घटना स्थल पर उपस्थित भी थे—उसे विश्वसनीय गवाह नहीं कहा जा सकता है और केवल उसके बयान पर अपीलार्थियों को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था—अन्य गवाह अनुश्रुत गवाह हैं अथवा पक्षद्रोही हो गए हैं—दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 17, 18 एवं 19)

अधिवक्तागण.—M/s A.K. Kashyap, Anurag Kashyap, Vijay Kumar Sinha, Amit Kumar Sinha, For the Appellants; Mr. Sanjay Kumar Pandey, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. ये दांडिक अपीलें सत्र विचारण सं॰ 486 वर्ष 2011/सत्र विचारण सं॰ 517 वर्ष 2011/टी॰ आर॰ सं॰ 11 वर्ष 2015 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त XIII, राँची द्वारा पारित दिनांक 26 अगस्त, 2016 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 29 अगस्त, 2016 के दंडादेश के विरूद्ध निर्देशित हैं जिसके द्वारा अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया है और दोषसिद्ध किया गया है, अपीलार्थी सोहराय मुंडा को आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन

दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया और दोषसिद्ध किया गया है; अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन प्रत्येक को 5000/- रुपया के जुर्माना के साथ कठोर आजीवन कारावास भुगतने एवं ऐसे जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में छह माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था; अपीलार्थी सोहराय मुंडा को आगे आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और 5000/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करने एवं जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में छह माह का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। दोनों दंडादेशों को समवर्ती रूप से चलने का निर्देश दिया गया था।

3. अभियोजन मामला सीता देवी (अ॰ सा॰ 6) के फर्दबयान पर आधारित है जो मृतक की पत्नी है। वह कथन करती है कि वह अपने पति बंधु अहीर (मृतक) के साथ 26.11.2010 को अपराह्न लगभग 1 बजे अपने इलाज के लिए साइकिल पर रामपुर जा रही थी। जब वे बलिकट टुंगड़ी रोड पहुँचे, अचानक पिस्तौल से लैस एक व्यक्ति आया, जिस पर उसने अपने पति को साइकिल छोड़ कर भागने के लिए कहा। जब सूचक का पति भागने का प्रयास कर रहा था, तीन व्यक्ति झाड़ी से आए और पीछा करके उसके पति को पकड़ लिया। चारों व्यक्तियों ने उसके पति को पकड़ लिया और उसको रोड के किनारे ले गए और उस पर गोली चलाया। सूचक ने तीन गोली चलने की आवाज सुनी। तत्पश्चात चारों व्यक्ति दक्षिण दिशा की ओर भाग गए। तत्पश्चात, सूचक जब अपने पति के निकट पहुँची, उसने उसे मृत पाया। सूचक ने अपने फर्दबयान में प्रकट किया है कि व्यक्ति जो पिस्तौल के साथ आया था, अच्छी कद-काठी का लगभग 30 वर्षीय व्यक्ति था जो आदिवासी की तरह दिखता था और अन्य तीनों व्यक्ति लगभग 25-30 वर्ष के थे जो जैकेट एवं फुलपैन्ट पहने हुए थे। उसने आगे कथन किया है कि दो व्यक्ति पिस्तौल से लैस थे। अपने फर्दबयान में उसने कथन किया कि उसे विश्वास है कि भूमि विवाद के कारण पूर्वोल्लिखित अपीलार्थियों ने मृतक को पकड़ा एवं अज्ञात व्यक्तियों की मदद से उसकी हत्या किया।

4. पूर्वोक्त फर्दबयान के आधार पर, नामकुम पुलिस थाना मामला सं॰ 162 वर्ष 2010 अपीलार्थियों एवं चार अज्ञात व्यक्तियों के विरूद्ध दर्ज किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने यह उल्लेख करते हुए कि एक अभियुक्त मनसा मुंडा की मृत्यु अन्वेषण के दौरान हो गयी, अपीलार्थियों के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34, 120B तथा आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराधों के लिए 4.4.2011 को आरोप पत्र सं॰ 85/2011 दाखिल किया। मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने 7.4.2011 को अपराधों का संज्ञान लिया और बाद में 21.7.2011 को मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया। आरोप 13.2.2012 को विरचित किए गए थे। अपीलार्थियों को आरोप पढ़ कर सुनाए एवं स्पष्ट किए गए थे जिससे उन्होंने इनकार किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

5. अभियोजन ने आरोप सिद्ध करने के लिए कुल सात गवाहों-अ॰ सा॰ 01 डॉ॰ समरीना कमल, अ॰ सा॰ 2 रंजीत लकड़ा, अ॰ सा॰ 3 दयानंद राय, अ॰ सा॰ 4 गोपाल अहीर, अ॰ सा॰ 5 बिरसा अहीर, अ॰ सा॰ 6 सीता देवी (सूचक) और अ॰ सा॰ 7 सत्येन्द्र कुमार सिंह (अन्वेषण अधिकारी) का परीक्षण किया। उक्त अभियोजन गवाहों के अतिरिक्त, अभियोजन ने निम्नलिखित दस्तावेजों को भी प्रदर्शित किया:-

(i) प्रदर्श 1—शव परीक्षण रिपोर्ट,

(ii) प्रदर्श 2 फर्दबयान एवं प्राथमिकी का दर्जकरण

(iii) प्रदर्श 3—गिरफ्तारी मेमो।

6. अ॰ सा॰ 2 रंजीत लकड़ा एवं अ॰ सा॰ 3 दयानन्द राय पक्षद्रोही घोषित किए गए थे।

7. अ॰ सा॰ 4 गोपल अहीर है। उसने कथन किया है कि उसकी चाची अपने पति अर्थात मृतक के साथ थी जब उसके चाचा (मृतक) की हत्या की गयी थी। उसने कथन किया है कि सोहराय मुंडा, भादुरा मुंडा, डोंबा मुन्डा, बुदन मुंडा एवं हरदन मुंडा ने आग्नेयास्त्र का उपयोग करके उक्त हत्या किया। उसने कथन किया कि तीन गोली चलायी गयी थी जिसका परिणाम उसकी मृत्यु में हुआ। उसने समस्त अभियुक्तों को न्यायालय में पहचाना। उसने कथन किया कि वह भी फर्दबयान का हस्ताक्षरकर्ता था प्रतिपरीक्षण में, वह स्वीकार करता है कि घटना के समय पर वह बाजार में था और उसने घटना नहीं देखा था। उसने कथन किया कि घटना भूमि विवाद के कारण हुई थी जो 14 वर्षों से लंबित थी।

8. अ॰ सा॰ 5 बिरसा अहीर है जो मृतक का भाई है। उसने कथन किया कि जब वह बाजार से लौट रहा था, उसने सूचना पाया कि बंधु अहीर की हत्या की गयी है। उसने सूचना पाया कि सोहराय मुंडा, भादुर मुंडा, मुकुंद मुंडा, बुदन मुंडा, हरदन मुंडा और डोम्बा मुंडा ने आग्नेयास्त्र का उपयोग करके हत्या किया। उसने कथन किया कि घटना भूमि विवाद के कारण हुई थी। वह स्वीकार करता है कि उसने फर्दबयान पर बायें अंगूठे का निशान लगाया था। उसने कथन किया कि उसने घटना नहीं देखा था। उसने कथन किया कि मृतक की पत्नी ने उसे घटना के बारे में सूचित किया था।

9. अ॰ सा॰ 1 डॉ॰ समरीना कमल ने मृतक का शव परीक्षण किया था। उन्होंने निम्नलिखित उपहतियाँ पायी थी:–

विदीर्ण जख्म 2 cm x 1 cm सॉफ्ट टिशु, मस्तक के दायें आक्सीपीटल क्षेत्र पर आग्नेयास्त्र उपहति।

I. दायें मेन्डीब्यूलर कोण के 2 cm ऊपर दाएँ गाल के निचले भाग पर ½ cm व्यास का प्रवेश जख्म, प्रोजेक्टाइल सॉफ्ट टिशु से गुजरता है और दाएँ उपरी होंठ मीडियल साइड के सामने 1½ x ½ cm का निकासी जख्म बनाता है।

II. मस्तक के दाएँ टेम्पोरल क्षेत्र पर ½ cm व्यास का प्रवेश जख्म, प्रोजेक्टाइल सॉफ्ट टिशु से गुजरता दाएँ टेम्पोरल हड्डी को ग्रेडिंग करता।

III. मस्टॉयड प्रक्रिया के 8 cm दाएँ मस्तक के दाएँ आक्सीपीटल क्षेत्र पर 1/2 cm व्यास का प्रवेश का जख्म/प्रोजेक्टाइल दाएँ आक्सीपीटल अस्थि डूरा मैटर होकर गुजरता है और ब्रेन के बाएँ आक्सीपीटल क्षेत्र में बुलेट पाया गया है।

IV. दाएँ अंगूठा में ½ cm व्यास का प्रवेश जख्म, प्रोजेक्टाइल सॉफ्ट टिशु से होकर गुजरता है और दाएँ हथेली के सामने भाग पर ½ cm का निकास जख्म बनाता है।

***मत**.–पूर्वोल्लिखित उपहतियाँ मृत्युपूर्व की हैं। विर्दीण जख्म कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा और शेष आग्नेयास्त्र द्वारा कारित की गयी हैं। मृत्यु पूर्वोक्त आग्नेयस्त्र उपहति के कारण हुई है। मृत्यु के समय से बीता समय 6-24 घंटा है। विदीर्ण जख्म कड़े सतह पर गिरने से कारित हो सकता है।*

शव परीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया था।

10. अ॰ सा॰ 7 अन्वेषण अधिकारी है। उसके कथन किया कि वह नामकुम पुलिस थाना का प्रभारी अधिकारी था। दिनांक 26.11.2010 को यह सूचना पाने पर कि एक व्यक्ति की हत्या की गयी है, वह घटनास्थल पर गया और घटना स्थल पर सूचक का फर्द बयान दर्ज किया। उसने फर्द बयान प्रदर्शित किया जिसे प्रदर्श 2 चिन्हित किया गया था। उसने कथन किया कि औपचारिक प्राथमिकी मुंशी दीपक तिवारी द्वारा लिखी गयी थी। उसने कथन किया कि उसने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया और तत्पश्चात मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा। तत्पश्चात उसने सोहराय मुंडा को गिरफ्तार किया। गिरफ्तारी मेमो प्रदर्श 3 है। उसने कथन किया कि संपूर्ण घटना स्थल पर रक्त पाया गया था। उसने कथन किया कि उसने

अन्वेषण के बाद नामित अभियुक्तों के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। उसने कथन किया कि अन्वेषण के दौरान उसे जानकारी हुई कि मृतक आक्रामक प्रकार का व्यक्ति था और वह विगत एक वर्ष से खेत जोत रहा था और उसके पहले अभियुक्त खेत जोत रहे थे। उसने कथन किया कि उसने दस्तावेजों का परिशीलन नहीं किया था। वह घटना स्थल का वर्णन करता है और कथन किया कि उसने उस बिंदु पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन बयान दर्ज किया था। उसके द्वारा और कुछ कथन नहीं किया गया था।

11. इस मामला की मुख्य गवाह अ॰ सा॰ 6 सूचक है जो मृतक के साथ थी। उसने कथन किया कि वह बीमार थी और उसका पति उसे इलाज के लिए ले जा रहा था। जब वे घटना स्थल पर पहुँचे, सोहराय मुंडा, भादुरा मुंडा, डोम्बा मुंडा, मुकुन्द मुंडा, बुदन मुंडा ने उनको घेर लिया। उन सबों ने पिस्तौल का उपयोग करके मृतक पर गोली चलाया। उसने तीन गोली चलने की आवाज सुनी। उसने कथन किया कि प्रहार के बाद उसके पति की मृत्यु हो गयी। उसने कथन किया कि उसका देवर एवं भतीजा बाजार से लौट रहे थे और उसने उनको घटना बताया। पुलिस आयी और उसका बयान दर्ज किया। उसने कथन किया कि भूमि विवाद के कारण पूर्वोक्त व्यक्तियों द्वारा उसके पति की हत्या की गयी है। वह स्वीकार करती है कि अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 5 घटना स्थल पर नहीं थे। उसने कथन किया कि अन्य राहगीरों ने उनको नहीं देखा था। उसके कथन किया कि उनके द्वारा छोटे पिस्तौल का उपयोग किया गया था जिसका उपयोग सोहराय ने किया था और किसी अन्य के पास पिस्तौल नहीं था। उसने कथन किया कि वह होश में नहीं थी जिस कारण उसने पहले सोहराय का नाम नहीं लिया था। वह स्वीकार करती है कि उसके पति को एक-दो बार कारा भेजा गया था। उसने कथन किया कि विगत सात वर्ष से भूमि विवाद चल रहा था। उसने कथन किया कि वे अभियुक्तों को देखने पर भागने लगे किंतु उन्हें पकड़ा एवं घसीटा गया था और तत्पश्चात उसके पति की हत्या की गयी थी। उसने कथन किया कि उसके पति पर तीन गोली चलायी गयी थी।

12. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त अपीलार्थियों का परीक्षण किया गया था।

13. अभियोजन साक्ष्य बंद होने के बाद बचाव ने भी एक बचाव गवाह ब॰ सा॰ 1 मनु कुजुर का परीक्षण किया है जिसने स्वीकार किया कि पक्षों के बीच भूमि विवाद था और सोहराय मुंडा भूमि का स्वामी था। उसने कथन किया कि सोहराय मुंडा एवं अन्य पहले खेत जोत रहे थे और वे उक्त भूमि पर काबिज थे। उसने कथन किया कि मृतक डकैती मामलों के कारण कारा गया था। उसने कथन किया कि वह नहीं जानता है कि किसने मृतक की हत्या किया है और उसने घटना नहीं देखा है। उसने कथन किया कि मृतक और उसके भाई के बीच भी कुछ विवाद था। उसने इनकार किया कि अपीलार्थियों ने मृतक की हत्या किया है।

14. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और मामला के अभिलेख का परिशीलन किया है।

15. अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संपूर्ण अभिकथन झूठा है। उन्होंने निवेदन किया कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में मुख्य अंतर एवं विरोधाभास हैं। वे निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 6 चश्मीद गवाह होने का दावा करती है, किंतु यदि उसके फर्दबयान का समुचित रूप से संवीक्षण किया जाता है, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्षित किया जा सकता है कि वह घटना की चश्मदीद गवाह नहीं है, बल्कि उसका बयान संदेह सृजित करता है कि क्या इन अपीलार्थियों ने हत्या

किया है या नहीं। वे निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से भूमि विवाद है और ऐसे भूमि विवाद के कारण अपीलार्थियों को झूठा आलिप्त किया गया है। वे स्वीकार करते हैं कि विचारण में प्रक्रियात्मक अवैधता या अनियमितता नहीं है।

16. राज्य की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 6 ने अभियुक्त व्यक्तियों को पहचान लिया है तथा उसके चश्मदीद गवाह होने के कारण उसका अभिसाक्ष्य खारिज नहीं किया जा सकता है। वह आगे निवेदन करते हैं कि चिकित्सीय साक्ष्य अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य का सम्पोषण करता है तथा ऐसा होने के कारण ऐसा निष्कर्ष निकालने में कोई संदेह नहीं रह जाता है कि इन अपीलार्थियों ने मृतक की हत्या की है।

17. अपीलार्थियों तथा राज्य के अधिवक्ता द्वारा किए गए विरोधी निवेदनों को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि संपूर्ण मामला अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य पर टिका है जो चश्मदीद गवाह होने का दावा करती है। स्वीकृत रूप से, कोई अन्य गवाह चश्मदीद गवाह होने का दावा नहीं करता है। अन्य गवाहों ने कथन किया है कि उन्होंने अ॰ सा॰ 6 से घटना की जानकारी पाया। अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य के संवीक्षण पर, जो प्राथमिकी की लेखिका भी है हम पाते हैं कि फर्दबयान में उसने वर्णन किया है कि किस प्रकार उसके पति की हत्या की गयी थी। उसने कथन किया कि जब वह अपने इलाज के लिए अपने पति के साथ जा रही थी, कुछ व्यक्ति आए और उसके पति को पकड़ा और घसीटा और उसकी हत्या करने के लिए तीन गोली चलाया। प्राथमिकी में उसने घटना का वर्णन यह कहते हुए किया है कि व्यक्ति जो पिस्तौल से लैस था छोटे कद का गोल चेहरा वाला लगभग 30 वर्षीय व्यक्ति था और जैकेट पहने था और आदिवासी जैसा दिख रहा था। उसने कथन किया कि तीन सहयोगी थे जो लगभग 25-30 वर्ष के थे और जैकेट तथा फुलपैन्ट पहने थे। उसने कथन किया कि दो व्यक्ति पिस्तौल लिए थे। यह तथ्य स्पष्टत: सुझाता है कि उसने हमलावरों के रूप में इन अपीलार्थियों का नाम नहीं लिया है। आगे, फर्दबयान के पठन के बाद हम पाते हैं कि उसने इन अपीलार्थियों का नाम यह कथन करते हुए कथित किया है कि चूँकि कुछ भूमि विवाद था, इन अपीलार्थियों ने कुछ अज्ञात व्यक्तियों की मदद से षडयन्त्र करके उसके पति की हत्या करवाया। यह भी स्पष्टत: सुझाता है कि उसने हमलावरों के रूप में इन अपीलार्थियों का नाम नहीं लिया है। आश्चर्यजनक रूप से, अ॰ सा॰ 6 के रूप में न्यायालय के समक्ष अभिसाक्ष्य देते हुए वह कथन करती है कि उसने इन अपीलार्थियों को मृतक की हत्या करते देखा है। उसने कथन किया कि सोहराय मुंडा ने पिस्तौल से गोली चलाया और कोई अन्य आग्नेयास्त्र से लैस नहीं था। अ॰ सा॰ 6 के रूप में उसका बयान सुझाता है कि वह इन अपीलार्थियों को पहले से जानती थी। यदि ऐसा है, तब उसने प्राथमिकी में हमलावरों के रूप में अपीलार्थियों का नाम क्यों दबाया है, ज्ञात नहीं है। यह स्वाभाविक है कि व्यक्ति जो सूचक को ज्ञात थे का नाम स्वाभाविकत: हमलावरों के रूप में प्राथमिकी में स्थान पाता यदि वे हमालवर थे किंतु यहाँ ऐसा मामला नहीं है। इस प्रकार, हम पाते हैं कि उसने गवाह रूप में अभिसाक्ष्य देते हुए कहानी विकसित किया है और इन अपीलार्थियों को हमलावरों के रूप में आलिप्त किया है जिसे उसने प्राथमिकी में नहीं किया था। यह संदेह सृजित करता है कि क्या इस गवाह ने घटना देखा था या नहीं और क्या ये अपीलार्थीगण घटना स्थल पर उपस्थित थे। यह संदेह और भी गहरा होता है जब वह प्राथमिकी में उल्लिखित करती है कि इन अपीलार्थियों ने षडयंत्र करके कुछ अज्ञात व्यक्तियों की मदद से हत्या किया है। संपूर्ण प्राथमिकी में इसका जिक्र नहीं है कि इन अपीलार्थियों ने हत्या किया है। इस प्रकार, हमारे मत में अ॰ सा॰ 6 विश्वसनीय गवाह नहीं है और केवल उसके बयान पर अपीलार्थियों को दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता था। यदि हम अ॰ सा॰ 6 का साक्ष्य त्यक्त करते हैं, इस मामला में कुछ भी शेष नहीं रहता है क्योंकि अन्य गवाहों ने इन अपीलार्थियों का नाम हमलावरों के रूप में नहीं लिया है क्योंकि अन्य गवाह अनुश्रुत गवाह हैं या पक्षद्रोही

हो गए हैं। इस प्रकार, हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 6 जो पूर्णत: अविश्वसनीय है के साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थियों की दोषसिद्धि संपोषित नहीं की जा सकती है।

18. परिणामस्वरूप, हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत इन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि एवं दंडादेश विधि में दोषपूर्ण हैं। हम सत्र विचारण सं॰ 486 वर्ष 2011 सत्र विचारण सं॰ 517 वर्ष 2011/टी॰आर॰ सं॰ 11 वर्ष 2015 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त XIII, राँची द्वारा पारित दिनांक 26.8.2016 का दोषसिद्धि का निर्णय एवं दिनांक 29.8.2016 का दंडादेश अपास्त करते हैं। अपीलार्थीगण जो अभिरक्षा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामला में उनकी अभिरक्षा आवश्यक नहीं हैं।

19. तद्नुसार, ये अपीलें अनुज्ञात की जाती है।

20. अपीलों के निपटान की दृष्टि में, दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1138 वर्ष 2016 में आई॰ ए॰ सं॰ 1390 वर्ष 2018, दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1121 वर्ष 2016 में आई ए॰ सं॰ 1310 वर्ष 2018 एवं दांडिक अपील (डी॰बी॰) सं॰ 1130 वर्ष 2016 में आई॰ ए॰ सं॰ 1491 वर्ष 2018 भी निपटाए जाते हैं।

21. इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख संबंधित न्यायालय को तुरन्त प्रेषित किए जाएं।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

आदित्य कुमार सिंहदेव

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No.2061 of 2016. Decided on 2nd May, 2018.

बिहार (अब) झारखंड भूमि सुधार अधिनियम, 1950—धारा 4(h)—भूमि की बंदोबस्ती—परवाना को चुनौती—जब एक बार उक्त भूमि (तालाब) पर याची का रैयती हित अभिनिर्धारित करने वाला आदेश सक्षम न्यायालय द्वारा पारित किया गया है, मात्र इस तथ्य के कारण कि उक्त तालाब गैर आबाद मालिक के रूप में दर्ज किया गया है, स्वयंमेव प्रत्यर्थी पर रैयती अधिकार का उपभोग करने से याची को वंचित करके किसी अन्य व्यक्ति को इसे बंदोबस्त करने का अधिकार प्रदत्त नहीं करता है—जिला मछली उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो के हस्ताक्षर के अधीन जारी परवाना अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 6, 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.—Mr. Satish Kumar Deo, For the Petitioner; A.C. to G.A.III, For the State.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका जिला मछली उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो के हस्ताक्षर के अधीन दिनांक 4.8.2015 के पत्र सं॰ 481 (रिट याचिका का परिशिष्ट-2) के तहत जारी 'परवाना' अभिखंडित करने के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा ग्राम बाँसगरही में अवस्थित खाता सं॰ 95, भूखंड सं॰ 877 एवं 878, क्षेत्रफल 1.79 एकड़ से संबंधित याची का रैयती तालाब प्रत्यर्थी सं॰ 7 बासुदेव बास्की के पक्ष में बंदोबस्त किया गया है।

2. रिट याचिका में यथा कथित याची के मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि पहले भी राज्य प्राधिकारियों ने मछली उद्योग के प्रयोजन से याची के उक्त तालाब को बंदोबस्त करने का प्रयास किया

था जिसे याची के हितपूर्वाधिकारी द्वारा अभिधान वाद सं॰ 27/1980 में चुनौती दी गयी थी, किंतु इसे खारिज किया गया था। उक्त अभिधान वाद में पारित निर्णय से व्यथित होकर, अभिधान अपील सं॰ 21/1990 दाखिल की गयी थी जिसे उक्त तालाब पर अधिकार, अभिधान एवं हित घोषित करते हुए दिनांक 12.2.1996 के निर्णय के तहत याची के हितपूर्वाधिकारी के पक्ष में डिक्री किया गया था। उक्त अभिधान अपील में पारित निर्णय के विरूद्ध राज्य प्राधिकारियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष कोई द्वितीय अपील दाखिल नहीं किया था और इस प्रकार, इसने अंतिमता प्राप्त कर लिया।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि 2015-16, 2016-17 एवं 2017-18 की अवधि के लिए उक्त तालाब की बन्दोबस्ती के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 7 के पक्ष में 'परवाना' निर्गत किया गया है। उक्त बंदोबस्ती के विरूद्ध याची ने उपायुक्त, बोकारो के समक्ष अभ्यावेदन दिया था, किंतु इस पर ध्यान नहीं दिया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि हलका कर्मचारी की निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा 23.2.2016 को जिला मछली उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, चास को रिपोर्ट भेजा गया था जिसमें यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया था कि उक्त तालाब का किराया रसीद याची के पक्ष में वर्ष 2002-2003 तक जारी किया गया है। अन्य बातों के साथ यह रिपोर्ट भी किया गया था कि विद्वान अपर जिला न्यायाधीश, बोकारो ने अभिधान अपील सं॰ 21 वर्ष 1990 में उक्त तालाब पर उसके रैयती अधिकार के संबंध में याची के पक्ष में निर्णय पारित किया गया है।

3A. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता आगे प्रतिवाद करते हैं कि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की कार्रवाई ने याची को काफी परेशानी एवं मानसिक वेदना और विपुल वित्तीय हानि भी कारित किया है और उसे सिंचाई प्रयोजन से अपने तालाब का उपयोग करने की अनुमति नहीं देकर पीड़ित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि स्वयं प्रत्यर्थी राज्य ने उक्त तालाब पर याची को रैयती अधिकार स्वीकार किया है जो अंचल अधिकारी, चंदन कियारी को रिपोर्ट से स्पष्ट है कि 2002-03 तक याची के हित पूर्वाधिकारी के पक्ष में किराया रसीद जारी किया गया है। किंतु, उक्त तथ्य के बावजूद, उक्त तालाब पर याची का रैयती अधिकार विफल करते हुए मनमाने रूप से प्रत्यर्थी प्राधिकारियों को मौनानुकूलता में इसे भी लाभ किया गया है।

4. प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उक्त तालाब खतियान में गैर आबाद मालिक के रूप में दर्ज किया गया है जिसे बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 के प्रभाव में आने के बाद राज्य में निहित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि उक्त तालाब सैरात पंजी में दर्ज किया गया है और राज्य सरकार के पारिपत्र के मुताबिक अंचल अधिकारी, चंदन कियारी (प्रत्यर्थी सं॰ 6) ने 22.4.1993 को उक्त तालाब जिला मछली उद्योग अधिकारी, बोकारो को अंतरित किया और इसे जिला मछली उद्योग अधिकारी, बोकारो द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 7 सहित विभिन्न व्यक्तियों को मत्स्य पालन के लिए नीलाम किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने यह स्थापित करने के लिए कि भूतपूर्व जमीन्दार ने रिटर्न दाखिल करके बंदोबस्ती सुपष्ट किया, रिटर्न की प्रति दाखिल नहीं किया है। उक्त संपत्ति तालाब होने के नाते बिहार (अब झारखंड) भूमि सुधार अधिनियम की कल्पना द्वारा बिहार राज्य में निहित किया गया है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याची के विद्वान अधिवक्ता का मुख्य तर्क यह है कि उक्त तालाब याची का रैयती तालाब है और उक्त तालाब पर अधिकार, अभिधान एवं हित अभिधान अपील सं॰ 21 वर्ष 1990 में संपुष्ट किया गया है जिसने

अंतिमता प्राप्त कर लिया है क्योंकि इसे किसी उच्चतर न्यायालय में चुनौती नहीं दी गयी है। इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उक्त तालाब गैर आबाद मालिक के रूप में दर्ज भूमि पर स्थित है। किंतु, प्रत्यर्थियों ने उक्त तालाब पर याची के रैयती अधिकार को संपुष्ट करने वाले अभिधान अपील सं॰ 21 वर्ष 1990 में पारित दिनांक 12.2.1996 के निर्णय को चुनौती नहीं दिया है। याची ने अंचलाधिकारी, चंदन कियारी (प्रत्यर्थी सं॰ 6) द्वारा जिला मछली उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो (प्रत्यर्थी सं॰ 3) को प्रस्तुत दिनांक 23.12.2016 का रिपोर्ट अभिलेख पर लाया है जिसमें यह स्वीकार किया गया है कि 2002-03 तक मोहन मंजरी दिव्या एवं विंरची लाल सिंह देव के पक्ष में उक्त तालाब के लिए किराया रसीद जारी की गयी है। प्रत्यर्थी सं॰ 6 द्वारा आगे यह रिपोर्ट किया गया है कि अभिधान अपील सं॰ 21 वर्ष 1990 में याची के पक्ष में निर्णय पारित किया गया है जिसके द्वारा विद्वान अपर जिला न्यायाधीश, बोकारो ने राज्य प्रत्यर्थी का दावा अस्वीकार कर दिया कि उक्त तालाब बिहार भूमि सुधार अधिनियम के प्रभाव में आने के बाद राज्य में निहित किया गया था। प्रत्यर्थियों का मामला यह नहीं है कि उन्होंने अभिधान अपील सं॰ 21 वर्ष 1990 में पारित दिनांक 12.2.1996 के निर्णय के विरूद्ध कोई अपील दाखिल किया था। इस प्रकार, मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ कि उक्त निर्णय ने अपनी अंतिमता प्राप्त कर लिया है।

6. जब एक बार उक्त भूमि (तालाब) पर याची का रैयती हित अभिनिर्धारित करते हुए सक्षम न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया है, मात्र इस तथ्य के कारण कि उक्त तालाब गैर आबाद मालिक के रूप में दर्ज किया गया है, स्वयंमेव प्रत्यर्थी पर रैयती अधिकार का उपभोग करने से याची को वंचित करके किसी अन्य व्यक्ति को इसे बंदोबस्त करने का अधिकार प्रदत्त नहीं करता है।

7. मामला के पूर्वोक्त परिस्थितियों के अधीन जिला मछली उद्योग अधिकारी-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, बोकारो के हस्ताक्षर के अधीन दिनांक 4.8.2015 के पत्र सं॰ 481 (रिट याचिका का परिशिष्ट-2) के तहत जारी 'परवाना' एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

8. तद्नुसार, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

माननीय श्री चंद्रशेखकर, न्यायमूर्ति

पनपति देवी

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

C.W.J.C. No. 10934 of 2000(P). Decided on 4th April, 2018.

सेवा विधि—दंड—अपचारी कर्मचारी पर अधिरोपित दंड की मात्रा का परीक्षण करते हुए, कर्मचारी द्वारा किए गए अवचार को देखा जाना होगा—ऐसे अवचार का दूरगामी परिणाम विनिश्चयकारी कारक नहीं है जो दंड की मात्रा विनिश्चित करेगा—वर्तमान मामला में, दस्तावेजों की गैर-आपूर्ति, उसके बचाव पर विचार नहीं किए जाने एवं इस बीच लगभग 20 वर्ष बीत जाने के कारण अपचारी कर्मचारी को कारित प्रतिकूलता की दृष्टि में, सेवा से बर्खास्तगी का दंड अनिवार्य सेवानिवृत्ति में संपरिवर्तित किया गया। (पैराएँ 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.–(1983)2 SCC 442; (1987)4 SCC 611—Relied.

अधिवक्तागण.–Ms. Khalida Haya Rashmi, For the Petitioner; Mr. Amitabh, For the Resp.-JUVNL; M/s Manoj Tandon, Kumari Rashmi, For the Resp.-BSEB.

आदेश

रिट याची परमेश्वर लोहार की मृत्यु के बाद प्रतिस्थापन के लिए आवेदन दाखिल किया गया था जिसे 12.5.2010 को व्यतिक्रम में खारिज किया गया था। आई॰ ए॰ सं॰ 8927 वर्ष 2017 के तहत प्रतिस्थापन के लिए एक द्वितीय आवेदन दाखिल किया गया था, जिसमें दिनांक 29.11.2007 के आदेश द्वारा रिट याची की पत्नी अर्थात पनपति देवी को उसके स्थान में प्रतिस्थापित किया गया था।

2. याची ने दिनांक 15.3.1999 के दंड आदेश और दिनांक 13.3.2000 के अपीलीय आदेश को चुनौती दिया है। उसने दिनांक 8.3.1996 के आदेश की वैधता को भी चुनौती दिया है जिसके द्वारा उसे निलंबनाधीन किया गया था।

3. संक्षिप्त रूप से कथित, याची के पति को 23.5.1966 को बिहार राज्य विद्युत बोर्ड के अधीन अनुभागीय लिपिक के रूप में नियुक्त किया गया था और 9.3.1991 को प्रधान लिपिक के पद पर प्रोन्नत किया गया था। कर्तव्य की अवहेलना बोर्ड के नियमों के उल्लंघन, षडयन्त्र, कूट रचना आदि के अभिकथन पर उसे 8.3.1996 को निलंबित किया गया था। दिनांक 4.11.1996 के आदेश द्वारा प्रमाणपत्रित स्थायी आदेश के खंड 29B के अधीन अवचार के लिए याची के पति के विरूद्ध विभागीय कार्यवाही शुरू की गयी थी और उस पर दिनांक 2.11.1996 का आरोप-ज्ञापन तामील किया गया था। उसने अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत किया जिसमें उसके द्वारा आरंभिक जाँच रिपोर्ट, धन रसीद की सूची की गैर आपूर्ति और दस्तावेजों का निरीक्षण करने की अनुमति से इनकार से संबंधित शिकायत की गयी थी। जाँच रिपोर्ट 1.9.1998 को प्रस्तुत की गयी थी और अपचारी कर्मचारी को द्वितीय कारण बताओ नोटिस 22.12.1998 को जारी किया गया था जिसके प्रत्युत्तर में उसने 18.1.1999 का उत्तर प्रस्तुत किया है। दिनांक 15.3.1999 के हुए आदेश द्वारा याची के पति को सेवा से बर्खास्त किया गया था। दिनांक 15.3.1999 के बर्खास्तगी आदेश के विरूद्ध अपील दाखिल करने के बाद याची का पति सी॰ डब्लू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 659 वर्ष 1999 में पटना उच्च न्यायालय के पास गया। रिट याचिका अपीलीय प्राधिकारी को तीन माह के भीतर उसकी अपील निपटाने के निर्देश के साथ दिनांक 19.7.1999 के आदेश द्वारा निपटायी गयी थी। दिनांक 13.3.2000 के आदेश द्वारा उसके द्वारा दाखिल अपील खारिज की गयी थी।

4. दिनांक 29.6.2004 के आदेश द्वारा रिट याचिका दंड की आनुपातिकता के प्रश्न तक सीमित कर दी गयी थी।

5. यह प्रतिवाद करते हुए कि याची का पति दस्तावेजों की गैर-आपूर्ति के कारण विभागीय जाँच के दौरान गंभीर प्रतिकूलता से पीड़ित हुआ है, याची की विद्वान अधिवक्ता सुश्री खालिदा हया रश्मि निवेदन करती हैं कि, सेवा से बर्खास्तगी का दंड निश्चय ही याची के पति के विरूद्ध विरचित एवं सिद्ध पाए गए आरोपों के प्रति अननुपातिक है।

6. किंतु, प्रत्यर्थी जे॰ यू॰ वी॰ एन॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दंड की मात्रा अनन्य रूप से विभागीय प्राधिकारियों के क्षेत्र के अधीन है और जब एक बार अपचारी कर्मचारी के विरूद्ध विरचित आरोप सिद्ध पाए गए हैं, रिट कार्यवाही में दंड की मात्रा की वैधता को चुनौती देने की छूट अपचारी कर्मचारी को नहीं है।

7. याची के पति के विरूद्ध आरोप यह है कि विद्युत कार्यपालक अभियन्ता एवं सहायक विद्युत अभियन्ता के अनुमोदन के बिना उसने अ-कुशल खलासी सुरेन्द्र कुमार को 10 धन रसीद जारी किया

है जिसने जूनियर क्लर्क विजय कुमार के साथ 1,05,061.26/- रुपया का गबन किया। अपने द्वितीय कारण बताओ नोटिस के उत्तर में याची के पति ने प्राख्यान किया है कि धन रसीदें जिन्हें सुरेन्द्र कुमार को जारी किया गया था का उपयोग 1,05,061.26/- रुपया के गबन के लिए नहीं किया गया था बल्कि धन रसीद बुक सं॰ 398 जिसे विजय कुमार द्वारा 17.1.1995 को प्राप्त किया गया था का उपयोग उपभोक्ताओं को रसीद जारी करने के लिए किया गया था। अपने उत्तर में अपचारी कर्मचारी ने विद्युत प्रभारों के संग्रहण की प्रक्रिया का विवरण देते हुए प्राख्यान किया है कि सहायक विद्युत अभियन्ता, बिल क्लर्क, सब-डिविजनल कैशियर, विद्युत कार्यपालक अभियन्ता, बिल क्लर्क, बिल अधीक्षक समस्त प्रक्रिया में अंतर्ग्रस्त हैं, किंतु वे सुरेन्द्र कुमार द्वारा गबन का पता लगाने में विफल रहे हैं। अपने द्वारा दाखिल अपील के पैराग्राफ सं॰ 1 (पृष्ठ 3) में अपचारी कर्मचारी का दृष्टिकोण परिलक्षित करेगा कि उसे आरंभिक जाँच रिपोर्ट, धन रसीद पुस्तकों की सूची और डी॰ सी॰ आर॰ की प्रति की आपूर्ति नहीं की गयी थी जिसका उल्लेख आरोप-पत्र में किया गया है। गवाह रामनाथ प्रसाद जो खजाना प्रहारी था को प्रतिपरीक्षण के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया था और सह अभियुक्त अर्थात ए॰ के॰ सिन्हा एवं तारा नन्द देव अरविन्द का परीक्षण याची के विरूद्ध विरचित आरोप सिद्ध करने के लिए विभाग के गवाहों के रूप में किया गया था। इस अपील मेमो में सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों को उद्धृत किया गया है, किंतु अपीलीय आदेश याची के पति द्वारा उठाए गए किसी भी विधिक विवाद्यक को निर्दिष्ट नहीं करता है। दिनांक 15.3.1999 का दंड आदेश मात्र यह दर्ज करता है कि कर्मचारी का द्वितीय कारण बताओ नोटिस के प्रति उत्तर संतोषजनक नहीं पाया गया है और अपीलीय प्राधिकारी ने यह संप्रेक्षित करते हुए कि इन मामलों में नरमी अपेक्षित नहीं है बल्कि अपचारी कर्मचारी कठोर दंड के योग्य हैं, याची के पति द्वारा दाखिल अपील खारिज कर दिया।

8. ''रजीत ठाकुर बनाम भारत संघ एवं अन्य, ''(1987)4 SCC 611, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *''सामान्यतः न्यायिक पुनर्विलोकन निर्णय के विरूद्ध निर्देशित नहीं होते हैं बल्कि ''निर्णय लेने की प्रक्रिया'' के विरूद्ध निर्देशित होते हैं। दंड का चुनाव एवं मात्रा कोर्ट मार्शल की अधिकारिता एवं स्वविवेक के अंतर्गत है। किंतु दंडादेश को अपराध एवं अपराधी के उपयुक्त होना होगा। इसे प्रतिशोधात्मक अथवा अनुचित रूप से कठोर नहीं होना चाहिए। यह अपराध के प्रति इतना अननुपातिक नहीं होना चाहिए ताकि यह अंतरात्मा को आघात पहुँचाने के और स्वयं में पूर्वाग्रह के निश्चयात्मक साक्ष्य के तुल्य हो जाए। न्यायिक पुनर्विलोकन की धारणा के भाग के रूप में आनुपातिकता का सिद्धांत सुनिश्चित करेगा कि वह पहलू भी जो अन्यथा कोर्ट मार्शल के अनन्य क्षेत्र के अंतर्गत है, यदि दंडादेश के प्रति न्यायालय का निर्णय तर्क की घोर अवज्ञा है, तब दंडादेश परिशुद्धि से उन्मुक्त नहीं होगा। अतार्किकता एवं विकृतता न्यायिक पुनर्विलोकन के मान्यता प्राप्त आधार हैं।''*

9. भगत राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (1983)2 SCC 442, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अधिरोपित दंड अवचार की गंभीरता के अनुरूप होना होगा और कि अवचार की गंभीरता के प्रति अननुपातिक कोई दंड संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघनकारी होगा।

10. यद्यपि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के बावजूद जाँच रिपोर्ट और दिनांक 22.12.1998 के द्वितीय कारण बताओ नोटिस की प्रतियाँ प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत नहीं की गयी है, जब एक बार याची के पति के विरूद्ध विरचित आरोपों का पठन सावधानीपूर्वक किया जाता है, यह प्रकट हो जाता है कि उसके

विरूद्ध मुख्य आरोप कर्तव्य के निर्वहन में उपेक्षा है, अधिक विशेषत: बोर्ड के नियमों का भंग है। विभाग का मामला यह है कि धन रसीद पुस्तक जारी करने में अपचारी कर्मचारी की उपेक्षा के कारण सुरेन्द्र कुमार एवं विजय कुमार ने 1,05,061.26/- रुपयों का गबन करने में सफल हुए।'' श्री लोहार के उपर्युक्त कृत्य से श्री विजय कुमार, कनीय लेखा लिपिक/श्री सुरेन्द्र कुमार अदक्ष खलासी द्वारा बोर्ड की राशि 1,05,061.26 रुपयों का गबन करने का मार्ग प्रशस्त हुआ और बोर्ड को उक्त राशि की वित्तीय क्षति हुई।''

11. न तो दंड आदेश न ही अपीलीय आदेश दर्ज करता है कि अपचारी कर्मचारी उक्त सुरेन्द्र कुमार एवं विजय कुमार के साथ दुरभिसंधि में था। अपचारी कर्मचारी के विरूद्ध विरचित आरोप यह नहीं है कि वह अपराध में भागीदार था और उसने लूट का माल बाँटा है। उसे धन के गबन/दुर्विनियोग का दोषी नहीं पाया गया है। अपचारी कर्मचारी पर अधिरोपित दंड की मात्रा का परीक्षण करते हुए कर्मचारी द्वारा किया गया अवचार देखा जाना होगा और ऐसे अवचार का दूरगामी परिणाम, इस मामला में उपेक्षा, विनिश्चयकारी कारक नहीं है जो दंड की मात्रा विनिश्चत करेगा। शायद बोर्ड को 1,05,061.26/- रुपयों की हानि हुई है, याची के पति के विरूद्ध विरचित कर्तव्य के निर्वहन के उपेक्षा के मुख्य आरोप की दृष्टि में, सेवा से बर्खास्तगी का दंड निश्चय ही उसके विरूद्ध विरचित एवं सिद्ध पाए गए आरोपों के प्रति अननुपातिक है और तद्नुसार दिनांक 13.3.2000 का अपीलीय आदेश अभिखंडित किया जाता है; परिणामस्वरूप, दिनांक 15.3.1999 का दंड आदेश भी अभिखंडित किया जाता है।

12. अब, दस्तावेजों की गैर आपूर्ति, उसके बचाव पर विचार नहीं करने के कारण अपचारी कर्मचारी को कारित प्रतिकूलता की दृष्टि में मामला अनुशासनिक प्राधिकारी को प्रतिप्रेषित किया जाता है, किंतु लगभग 20 वर्ष बीत जाने के बाद मेरे मत में यह न्याय का हित पूरा करेगा यदि सेवा से बर्खास्तगी का दंड अनिवार्य सेवा निवृत्ति में संपरिवर्तित किया जाता है। तद्नुसार, आदेशित किया गया।

13. कर्मचारी को पेंशन एवं अन्य सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों के साथ सेवा से अनिवार्य सेवा निवृत्ति के दंड के कारण याची को उसके पति को 15.3.1999 को प्रोद्भूत पारिवारिक पेंशन एवं अन्य सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों का भुगतान किया जाएगा। इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान याची को प्रत्यर्थी जे॰ यू॰ वी॰ एन॰ एल॰ द्वारा भविष्य निधि एवं सामूहिक बीमा राशि का भुगतान किया गया है।

14. तद्नुसार, यह आदेश दिया जाता है कि पारिवारिक पेंशन एवं अन्य सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों, यदि हो, का भुगतान याची को प्रत्यर्थी जे॰ यू॰ वी॰ एन॰ एल॰ द्वारा किया जाएगा।

15. उक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

ब्रह्म ऋषि सेवा मंच

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 4768 of 2016. Decided on 2nd May, 2018.

सरकारी संविदा—निविदा—याची निविदा निमंत्रित करने वाले नोटिस (एन॰ आई॰ टी॰) को इस आधार पर चुनौती दे रहा है कि एन॰ आई॰ टी॰ शर्त अंतर्विष्ट करता है कि केवल वे कंपनियाँ

जो कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के अधीन रजिस्टर्ड हैं, निविदा के लिए आवेदन दे सकती हैं—प्रत्यर्थियों का दृष्टिकोण यह है कि न्यास/सोसाइटी अथवा एन॰ जी॰ ओ॰ गैर-लाभदायी संगठन हैं और यह देखा गया है कि पूर्व अवसरों पर गैर-लाभदायी संगठनों ने श्रम समस्या का सामना किया है क्योंकि वे आधुनिक श्रम प्रत्याशाओं के साथ स्पर्धा करने की अवस्था में नहीं हैं—याची ने यद्यपि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की ओर से मनमानापन अधिकथित किया, किंतु आक्षेपित एन॰ आई॰ टी॰ में उक्त शर्त रखने में प्रत्यर्थियों द्वारा दिए गए औचित्य का खंडन करने में सक्षम नहीं हुआ है—एन॰ आई॰ टी॰ न तो संविदा श्रम (विनियमन एवं समापन) अधिनियम, 1970 न ही बिहार (अब झारखंड) संविदा श्रम (विनियमन एवं समापन) नियमावली, 1972 के नियम 21 के विपरीत कहा जा सकता है—यद्यपि याची ने प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के विरूद्ध असद्भाव अभिकथित किया है, किंतु उक्त अभिकथन किसी तर्कपूर्ण सामग्री द्वारा समर्थित नहीं है—आक्षेपित एन॰ आई॰ टी॰ विभिन्न स्वास्थ्य संस्थानों जो आपातकालीन सेवा है में जनशक्ति की आपूर्ति के लिए जारी किया गया था—प्रत्यर्थी प्राधिकारी समुचित शर्त रखने के लिए अपनी अधिकारिता के सुअंतर्गत हैं ताकि अस्पतालों एवं अन्य स्वास्थ्य स्थापनों का सुगम संचालन सुनिश्चित किया जा सके—रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.—(2005) 4 SCC 435—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Vishal Kumar Singh, For the Petitioner; Mr. Abhay Prakash, For the State-Resp.; Mr. Bhaiya V.Kumar, For the Intervenor.

आदेश

वर्तमान याची ने सिविल सर्जन-सह-मुख्य चिकित्सा अधिकारी, बोकारो (प्रत्यर्थी सं॰ 6) के हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 2.8.2016 की निविदा निर्मंत्रित करने वाली नोटिस (एन॰ आई॰ टी॰) को इस आधार पर चुनौती दिया है कि उक्त एन॰ आई॰ टी॰ शर्त अंतर्विष्ट करती है कि केवल वे कंपनियाँ जिन्हें कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के अधीन रजिस्डर्ट किया गया है, निविदा के लिए आवेदन दे सकती हैं।

2. रिट याचिका में यथा कथित मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि पहले भी जिला बोकारो के अंतर्गत सदर अस्पताल, डाग्नॉस्टिक सेंटर, ब्लड बैंक, जिला टी॰ बी॰ केंद्र, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र जैसे विभिन्न स्वास्थ्य संस्थानों में आउट सोर्सिंग के माध्यम से पैरा मेडिकल स्टाफ, सुरक्षा प्रहरी, जमादारों की आपूर्ति के लिए और अन्य संबंधित प्रयोजन से प्रत्यर्थी सं॰ 6 के हस्ताक्षर के अधीन 2.5.2016 की वेबसाइट पर निविदा निर्मंत्रित करने वाला नोटिस प्रकाशित किया गया था जो शर्त अंतर्विष्ट करता है कि बोली लगाने वाले को श्रम विभाग, झारखंड सरकार के साथ रजिस्ट्रेशन दर्शाने वाली अनुज्ञप्ति दाखिल करना होगा। याची ने उक्त निविदा में भाग लिया, किंतु उसकी बोली अनुज्ञप्ति की गैर-प्रस्तुती के कारण रद्द कर दी गयी थी। बाद में, दिनांक 2.5.2016 की पूर्व एन॰ आई॰ टी॰ रद्द कर दी गयी थी और उसी काम के लिए दिनांक 2.8.2016 का नया एन॰ आई॰ टी॰ जारी किया है किंतु इस शर्त के साथ कि केवल वे कंपनियाँ जो कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड हैं, निविदा के लिए आवेदन दे सकते हैं।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 2.8.2016 की एन॰ आई॰ टी॰ में अंतर्विष्ट शर्त मनमाना है क्योंकि याची को सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 के अधीन दर्ज सोसाइटी होने के नाते निविदा में भाग लेने से रोका गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान शर्त कुछ बोली लगाने वालों पर कृपा करने एवं याची जैसे सद्भावपूर्ण संगठनों को वंचित करने के लिए रखी गयी

है। याची ने निविदा निमंत्रित करने के लिए विधिक आवश्यकताओं के बारे में पूछताछ करने के लिए श्रम अधीक्षक, बोकारो को पत्र लिखा क्योंकि यह संविदा श्रम विनियमन एवं समापना अधिनियम, 1970 (संक्षेप में'' अधिनियम 1970'') और बिहार (अब झारखंड) संविदा श्रम (विनियमन एवं समापन) नियमावली, 1972 (संक्षेप में ''नियमावली, 1972'') के प्रावधानों के साथ संगत नहीं था और केवल प्राइवेट कंपनियों को लाभ पहुँचाने की दृष्टि से जारी किया गया था जो अवैध एवं मनमाना है। यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थियों की कार्रवाई आक्षेपित पत्र में अयुक्तियुक्त शर्त रखकर अनुचित एवं भ्रष्ट प्रथा परिलक्षित करती है।

4. ए॰ जी॰ के विद्वान ए॰ सी॰ निवेदन करते हैं कि याची ने दिनांक 2.5.2016 के पूर्व एन॰ आई॰ टी॰ में उल्लिखित शर्त से संबंधित परिवाद श्रम अधीक्षक, बी॰ एस॰ सिटी के समक्ष किया था जिन्होंने दिनांक 9.6.2016 का पत्र सं॰ 494 जारी करके श्रम विभाग, झारखंड सरकार से रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र की प्रस्तुती की शर्त के अंत:स्थापन का कारण पूछा और आगे अधिनियम, 1970 की दृष्टि में प्रधान नियोजक के रूप में रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए प्रत्यर्थियों को कहा। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने 20.7.2016 को रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र प्राप्त किया। इस प्रकार, विधिक सांविधिक मुश्किल हटाने के लिए दिनांक 2.5.2016 की निविदा दर्ज की गयी थी और 2.8.2016 को नयी निविदा जारी की गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि यह सुझाने के लिए अनेक उदाहरण है कि न्यास, सोसाइटी एवं एन॰ जी॰ ओ॰ श्रम समस्या का सामना कर रहे हैं। यह अभिकथित करना गलत है कि कुछ व्यक्तियों को लाभ देने के लिए उक्त शर्त सम्मिलित की गयी है जैसा इससे स्पष्ट होगा कि 13 कंपनियों ने उक्त निविदा में भाग लिया है। यह निवेदन भी किया गया है कि नयी निविदा में रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र/अभियुक्ति प्रस्तुत करने की शर्त सम्मिलित नहीं की गयी है, इस प्रकार, अधिनियम, 1970 के किसी उल्लंघन का प्रश्न नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित शर्त अस्पतालों एवं अन्य स्थापनों को किसी भावी वाद से दूर रखने के लिए सम्मिलित की गयी है क्योंकि उन्हें 24 घंटा मानव जीवन से संबंधित आपातकाल एवं आवश्यक सेवा देना होगा।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने आउट सोर्सिंग के माध्यम से सरकारी अस्पतालों एवं अन्य संस्थापनों में जनशक्ति की आपूर्ति के लिए आक्षेपित एन॰ आई॰ टी॰ प्रकाशित किया है। याची ने सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 के अधीन रजिस्टर्ड सोसाइटी होने के नाते एन॰ आई॰ टी॰ में उल्लिखित शर्त को चुनौती दिया है जिसके द्वारा केवल उन सत्ताओं जो कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड हैं को निविदा में भाग लने की अनुमति दी गयी है।

6. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **ग्लोबल एनर्जी लि॰ एवं एक अन्य बनाम मेसर्स अदानी एक्सपोर्ट लि॰ (2005)4 SCC 435,** मामला में दिए गए निर्णय में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *''9. टाटा सेल्यूलर बनाम भारत संघ, AIR 1996 SC 11, में त्रि–न्यायाधीश न्यायपीठ ने स्पष्ट किया है कि निविदा क्या है और वैध निविदा की पूर्वापेक्षाएँ क्या हैं। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि निविदा शर्तहीन होनी होगी और बाध्यता के निबंधनों के अनुरूप होनी होगी और आगे व्यक्ति जिसने निविदा दिया है को अपनी बाध्यता को पालन करने में सक्षम एवं इच्छुक होना होगा। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि निविदा निमंत्रित करने के निबंधन न्यायिक संवीक्षण के लिए खुले नहीं हैं क्योंकि निविदा के प्रति निमंत्रण संविदा के क्षेत्र में है। एअर इंडिया लि० बनाम कोचीन इंटरनेशनल एअरपोर्ट लि० 2000(2) SCC 617, में यही दृष्टिकोण दोहराया गया था कि राज्य निविदा के निमंत्रण के स्वयं अपने निबंधन को नियत कर सकता है और यह*

न्यायिक संवीक्षण के लिए खुला नहीं है। क्या और किन शर्तों में निविदा निमंत्रित करने वाले नोटिस के निबंधन न्यायिक संवीक्षण के विषयवस्तु हो सकते हैं, का परीक्षण अत्यधिक विस्तार में शिक्षा निदेशालय बनाम एडुकॉम्प डाटा मैटिक्स लि०, 2004(4) SCC 19 में किया गया है। शिक्षा निदेशालय, दिल्ली की राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की सरकार ने एन० सी० टी० क्षेत्र ने समस्त सरकारी विद्यालयों में कंप्यूटर प्रयोगशाला स्थापित करने का निर्णय लिया था और इस प्रयोजन से हार्डवेयर प्रदान करने के लिए निविदाएँ निमंत्रित की गयी थी। वर्ष 2002-03 के अंतिम चरण के लिए 748 विद्यालयों के लिए निविदाएँ मांगी गयी थी और परियोजना का खर्च लगभग 100 करोड़ रुपया था। पूर्व वर्षों में सामना की गयी मुश्किलों की दृष्टि में, जहाँ न्यूनतम निविदादाता संपूर्ण परियोजना क्रियान्वित करने में सक्षम नहीं हुए थे, 31.3.2002 को समाप्त होने वाले अंतिम तीन वित्तीय वर्षों के लिए 20 करोड़ रुपयों अथवा अधिक के टर्न ओवर वाले फर्मों से निविदा निमंत्रित करने का निर्णय लिया गया था क्योंकि यह महसूस किया गया था कि एक कंपनी जो सुव्यस्थित/सुप्रबंधित है के साथ ब्यौहार करना विभाग के लिए आसान होगा और न कि अनेक कंपनियों के साथ। कुछ फर्मों ने एन० आई० टी० में खंड, जिसके द्वारा शर्त रखी गयी थी कि विगत तीन वित्तीय वर्षों के लिए 20 करोड़ रुपयों अथवा अधिक के टर्न ओवर वाले केवल ऐसे फर्म पात्र होंगे, को चुनौती देते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय में रिट याचिकाएँ दाखिल किया। उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवाद किया गया था कि पूर्वोक्त शर्त केवल कंप्यूटर शिक्षा प्रदान करने वाली कंपनियों की विशाल संख्या को बोली लगाने से वंचित करने और कुछ बड़ी कंपनियों के एकाधिकार के आशय से सम्मिलित की गयी थी। रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी और खंड मनमाना एवं अवैध के रूप में विखंडित कर दिया गया था। अपील में, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय का निर्णय मुख्यतः इस आधार पर उलट दिया कि निविदा के निमंत्रण के निबंधन न्यायिक संवीक्षण के लिए खुले नहीं हैं, क्योंकि ये संविदा के क्षेत्र में और सरकार को निविदा के निबंधन नियत करने के लिए मुक्त होना होगा। न्यायालय निविदा निबंधन में हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक इसे मनमाना अथवा भेदभावपूर्ण अथवा द्वेष से भरा नहीं दर्शाया जाता है। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निविदा नोटिस के निबंधन के न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करते हुए न्यायालय उनमें परिवर्तन का आदेश नहीं दे सकता है।

10. अतः सिद्धांत सुस्थापित है कि निविदा के निमंत्रण के निबंधन न्यायिक संवीक्षण के लिए खुले नहीं है और न्यायालय निविदा के निबंधनों को कम/घटा नहीं सकते हैं क्योंकि वे संविदा के क्षेत्र में हैं जब तक वे पूर्णतः मनमाने, भेदभावपूर्ण एवं द्वेष से भरे नहीं हैं।''

7. पूर्वोक्त मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि संवैधानिक न्यायालयों को निविदा नोटिस के निबंधनों एवं शर्तों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक ये मनमाने, भेदभावपूर्ण अथवा द्वेष से भरे प्रतीत नहीं होते हैं।

8. वर्तमान मामला में, प्रत्यर्थियों का दृष्टिकोण है कि न्यास/सोसाइटी अथवा एन॰ जी॰ ओ॰ गैर–लाभदायी संगठनों ने श्रम समस्या का सामना किया है क्योंकि वे आधुनिक श्रम प्रत्याशाओं के साथ स्पर्धा करने की अवस्था में नहीं हैं। याची ने यद्यपि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की ओर से मनमानापन अभिकथित किया किंतु वह आक्षेपित एन॰ आई॰ टी॰ में उक्त शर्त रखने में प्रत्यर्थियों द्वारा दिए गए औचित्य का खंडन करने में सक्षम नहीं हुआ है।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस तर्क पर काफी जोर दिया है कि वर्तमान एन॰ आई॰ टी॰ अधिनियम, 1970 एवं उसके अधीन विरचित नियमावली के उल्लंघन में है किंतु प्रत्यर्थियों ने प्रतिशपथपत्र में विनिर्दिष्टत: कथन किया है कि यद्यपि श्रम विभाग द्वारा जारी प्रमाण पत्र/अनुज्ञप्ति की प्रस्तुत पूर्व एन॰ आई॰ टी॰ में शर्त नहीं है। इस प्रकार, दिनांक 2.8.2016 का एन॰ आई॰ टी॰ अधिनियम, 1970 अथवा नियमावली, 1972 के नियम 21 के विपरीत नहीं कहा जा सकता है। तद्नुसार, मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में कोई बल नहीं पाता हूँ।

10. यद्यपि याची ने प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के विरूद्ध असद्भाव अभिकथित किया है किंतु उक्त अभिकथन किसी तर्कपूर्ण सामग्री द्वारा समर्थित नहीं है, बल्कि प्रत्यर्थियों ने यह कथन करके उक्त अभिकथन खंडित किया है कि कुल 13 कंपनियों ने निविदा में भाग लिया है। इसके अतिरिक्त, दिनांक 2.8.2016 का आक्षेपित एन॰ आई॰ टी॰ विभिन्न स्वास्थ्य संस्थानों जो आपातकालीन सेवा है में जनशक्ति की आपूर्ति के लिए जारी की गयी थी। इस प्रकार, प्रत्यर्थी प्राधिकारी समुचित शर्त रखने की अपनी अधिकारिता के सुअंतर्गत है ताकि अस्पतालों एवं अन्य स्वास्थ्य स्थापनों का सुगम कार्य सुनिश्चित किया जा सके।

11. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन वर्तमान रिट याचिका गुणागुण रहित होने के कारण तद्नुसार खारिज की जाती है।

12. परिणामस्वरूप, आई॰ ए॰ सं॰ 2935 वर्ष 2018 भी खारिज किया जाता है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

मेसर्स शाकम्बरी इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

Civil Review No. 21 of 2018. Decided on 11th May, 2018.

बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914—धारा 60—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 47 नियम 1—पुनर्विलोकन याचिका—निर्णय एवं आदेश, जिसके द्वारा रिट याचिका याची को धारा 60 के निबंधनानुसार अपील दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए उस चरण पर अपोषणीय के रूप में निपटायी गयी थी का पुनर्विलोकन/वापसी इप्सित करने वाली याचिका—पुनर्विलोकन याचिका छद्मवेश में अपील होने की अनुमति नहीं दी जा सकती है—पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग नए एवं महत्वपूर्ण मामला अथवा साक्ष्य की खोज पर किया जा सकता है जो सम्यक तत्परता के प्रयोग के बाद भी पुनर्विलोकन इप्सित करने वाले व्यक्ति की जानकारी में नहीं था अथवा उसके द्वारा प्रस्तुत नहीं किया जा सकता था जब मूल आदेश पारित किया गया था—इसका प्रयोग वहाँ किया जा सकता है जहाँ अभिलेख को देखते ही प्रकट गलती पायी गयी है—इसका प्रयोग ऐसे किसी सदृश आधार पर भी किया जा सकता है—याची ने अभिलेख पर कोई नया तथ्य नहीं लाया है बल्कि रिट याचिका में पहले ही उठाए गए आधारों को दोहराया है—अपील वाद का जारी रहना है और अपीलीय न्यायालय की शक्ति विचारण न्यायालय की शक्ति के साथ सह विस्तारी है—वाद की कार्यवाही में विचारण न्यायालय द्वारा जो कुछ भी किया जा सकता था, अपीलीय न्यायालय द्वारा न्याय के हित में सदैव किया जा सकता है—पुनर्विलोकन याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 11, 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.–(2013) 10 SCC 359—Distinguished; (1979) 4 SCC 389; (1997) 8 SCC 715; (2012) 7 SCC 200—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; A.C. to G.A., For the Respondents.

आदेश

वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1234 वर्ष 2017 में पारित दिनांक 14.3.2018 के निर्णय एवं आदेश के पुनर्विलोकन/वापसी के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा याची को बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 (जैसा झारखंड राज्य द्वारा अपनाया गया है) की धारा 60 के निबंधनानुसार अपील दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए उस चरण पर अपोषणीय के रूप में निपटायी गयी थी।

2. संक्षेप में मामले का तथ्य यह है कि याची तथा झारखंड राज्य खाद्य एवं सिविल आपूर्ति निगम लिमिटेड, साहिबगंज ने एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ से इसे उठाकर धान कूटने तथा कस्टम मिल्ड चावल के उत्पादन के लिए करार किया। याची ने एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰, पाकुड़ से चावल की कुछ मात्रा उठाया और भारत के खाद्य निगम, पाकुड़ को कस्टम मिल्ड चावल की आपूर्ति किया किंतु इसे अस्वीकार किया गया था। तत्पश्चात, याची ने धान की खराब गुणवत्ता का अभिकथन करते हुए एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ से धान नहीं उठाया था। जाँच के बाद, जिला सहकारी अधिकारी, पाकुड़ ने दिनांक 20.9.2016 के पत्र सं॰ 381 के तहत संयुक्त सचिव, खाद्य, जन वितरण एवं उपभोक्ता विभाग, झारखंड सरकार से राज्य सरकार को निधि लौटाने के प्रयोजन से शेष धान को बेचने की अनुमति पाकुड़ एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ को देने का अनुरोध किया। सचिव, खाद्य, जन वितरण विभाग ने दिनांक 20.10.2016 के पत्र सं॰ 4226 के तहत पाकुड़ जिला सहित झारखंड राज्य में समस्त जिलों के उपायुक्त को धान की खरीद के लिए एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ को दी गयी राशि की वसूली के लिए समस्त कदम उठाने का निर्देश दिया। इस प्रकार, जहाँ तक पाकुड़ जिला का संबंध है, प्रमाणपत्र मामला सं॰ 46 वर्ष 2016-17 के तहत प्रमाणपत्र कार्यवाही आरंभ की गयी और एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰, पाकुड़ एवं वर्तमान याची दोनों के विरूद्ध 47,13,630/- रुपयों की राशि की वसूली का आदेश पारित किया था।

3. वर्तमान याची द्वारा प्रमाणपत्र कार्यवाही आरंभ किए जाने को चुनौती देते हुए रिट याचिका डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1234 वर्ष 2017 दाखिल किया था। रिट याचिका लंबित रहने के दौरान प्रमाणपत्र मामला सं॰ 46 वर्ष 2016-17 में अपर समाहर्ता-सह-प्रमाण पत्र अधिकारी, पाकुड़ (प्रत्यर्थी सं॰ 3) द्वारा दिनांक 1.8.2017 का आदेश पारित किया गया था जिसे भी बाद में आई॰ ए॰ सं॰ 6592 वर्ष 2017 दाखिल करके चुनौती दी गयी थी।

4. उक्त रिट याचिका निम्नलिखित संप्रेक्षणों के साथ निपटायी गयी थी:–

''मैं विद्वान जी० ए० के निवेदन में बल पाता हूँ। यह प्रतीत होता है कि पाकुड़ विशाल क्षेत्र बहु-प्रयोजन सोसाइटी (एल० ए० एम० पी० एस०) पाकुड़ द्वारा अपने सदस्य-सचिव-सह-प्रबंधक श्यामल कांत साहा, जो प्रमाणपत्र मामला सं० 46/2016-17 में सह-प्रमाणपत्र ऋणी है, के माध्यम से दाखिल एक अन्य रिट याचिका डब्लू० पी० (सी०) सं० 5773/2016 पहले अधिनियम, 1914 की धारा 60 के अधीन अपील की दाखिली के रूप में शिकायत दूर करवाने के लिए प्रभावकारी उपचार की उपलब्धता की दृष्टि में इस न्यायालय द्वारा दिनांक 17.8.2017 के आदेश के तहत निपटायी गयी है। वर्तमान रिट याचिका जो समरूप संव्यवहार से उद्भूत हो रही है, इस चरण पर गुणागुण पर ग्रहण नहीं की जा सकती है। तद्नुसार, प्रमाणपत्र ऋणियों के दो संवर्गों

के बीच समतुल्यता बनाए रखने के लिए, यद्यपि दोनों के राज्य प्रत्यर्थियों की कार्रवाई के विरूद्ध उनके अपने प्रतिवाद हो सकते हैं, यह समुचित प्रतीत होता है कि याची को अधिनियम, 1914 की धारा 60 के निबंधनानुसार अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील के सांविधिक उपचार का लाभ लेना चाहिए। इस प्रकार, वर्तमान रिट याचिका इस चरण पर पोषणीय नहीं है। किंतु, यह संप्रेक्षित किया जाता है कि यदि याची 30 अप्रिल, 2018 तक अधिनियम, 1914 की धारा 60 के अधीन अपील दाखिल करता है, देयों की वसूली के लिए याची के विरूद्ध प्रपीड़क कार्रवाई नहीं की जाएगी। यदि याची उक्त अपील में स्थगन के लिए आवेदन दाखिल करता है, अपीलीय प्राधिकारी इस पर विचार करेगा और शीघ्रातिशीघ्र विधि के अनुरूप समुचित आदेश पारित करेगा। अपीलीय प्राधिकारी इस तथ्य कि वर्तमान रिट याचिका लगभग एक वर्ष तक इस न्यायालय के समक्ष लंबित बनी रही की दृष्टि में विलंब की माफी के लिए आवेदन पर भी विचार करेगा। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने इस मामला के गुणागुण पर कोई दृष्टिकोण अभिव्यक्त नहीं किया है और अपीलीय प्राधिकारी प्रासंगिक तथ्यों एवं विधि पर विचार करते हुए स्वयं इसके अपने गुणागुण पर याची द्वारा दाखिल अपील विनिश्चित करेगा।''

5. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रमाणपत्र कार्यवाही अर्थात प्रमाणपत्र मामला सं॰ 46 वर्ष 2016-17, जिसे धान की कीमत के बराबर अभिकथित हानि की वसूली के लिए आरंभ किया गया था, पोषणीय नहीं थी क्योंकि उक्त राशि बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम, 1914' के रूप में निर्दिष्ट) के अर्थ के अंतर्गत ''लोक मांग'' नहीं कहा जा सकता है। यदि स्वयं मूल कार्यवाही पोषणीय नहीं है, उपचार अपील दाखिल करना नहीं है क्योंकि अपील भी समान रूप से पोषणीय नहीं होगी। न तो याची के विरूद्ध मांग की गयी थी न ही याची को धान की कीमत अथवा सरकार को कारित किसी हानि के भुगतान का दायी बनाया जा सकता था क्योंकि धान की सुरक्षित अभिरक्षा अथवा इसके भंडारण के संबंध में याची तथा राज्य सरकार के बीच संविदात्मक संबंध नहीं था। याची को केवल एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ से प्राप्त धान को कूटने तथा इसको भारतीय खाद्य निगम को आपूर्ति करने की आवश्यकता थी और स्वीकृत रूप से ऐसा कोई परिवाद नहीं था कि याची ने अपनी संविदात्मक बाध्यताओं को परिपूर्ण नहीं किया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि पाकुड़ एल॰ ए॰ एम॰ पी॰ एस॰ मामला (डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5773 वर्ष 2016 याची के मामला से भिन्न था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता **भारत संघ बनाम नमित शर्मा, (2013)10 SCC 359,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर विश्वास किया है। विद्वान अधिवक्ता ने **केनरा बैंक बनाम एन॰ जी॰ सुब्बारय्या शेट्टी एवं एक अन्य (सिविल अपील सं॰ 4233 वर्ष 2018)** मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भी विश्वास किया है।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन में उठाए गए समस्त आधारों को पहले ही रिट याचिका अर्थात डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1234 वर्ष 2017 की सुनवाई के समय पर उठाया गया था किंतु इस न्यायालय ने उक्त प्रतिवादों को इस तथ्य की दृष्टि में ग्रहण नहीं किया था कि समरूप मामला अर्थात डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5773 वर्ष 2016 में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने उस मामला के याची को अधिनियम 1914 की धारा 60 के अधीन अपील दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए रिट याचिका ग्रहण नहीं किया था।

8. अरिबम तुलेश्वर शर्मा बनाम ऐबम पिशाक शर्मा, (1979)4 SCC 389, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"3. ... जैसा कि शिवदेव सिंह बनाम पंजाब राज्य में इस न्यायालय द्वारा सम्परीक्षित किया गया है, यह सही है कि संविधान के अनुच्छेद 226 में पुनर्विलोकन की शक्ति का इस्तेमाल करने से उच्च न्यायालय को रोकने के लिए कुछ भी नहीं है जो न्याय का हनन रोकने के लिए या उसके द्वारा कारित गंभीर एवं स्पष्ट दोषों को दूर करने के लिए अंतिम अधिकारिता के प्रत्येक न्यायालय में निहित होती है। परन्तु पुनर्विलोकन की शक्ति के इस्तेमाल की निश्चायी सीमाएं हैं। नये तथा महत्वपूर्ण मामले या साक्ष्य के पता चलने पर पुनर्विलोकन की शक्ति का इस्तेमाल किया जा सकता है जो पुनर्विलोकन की ईप्सा करनेवाले व्यक्ति की जानकारी में सम्यक् तत्परता बरतने के बाद भी नहीं था या जिसे उसके द्वारा उस समय पेश नहीं किया जा सका था जब आदेश किया गया था : इसका इस्तेमाल किया जा सकता है जहां अभिलेख के पटल पर कुछ त्रुटि या प्रकट दोष पाया जाता है; इसका इसी सदृश आधार पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। परन्तु, इसका इस आधार पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है कि निर्णय गुणावगुणों पर दोषपूर्ण था। यह किसी अपीलीय न्यायालय का अधिकार क्षेत्र होगा। पुनर्विलोकन की शक्ति को भ्रमवश अपीलीय शक्तियों जैसा नहीं समझा जाना है जो अधीनस्थ न्यायालय द्वारा कारित सभी प्रकार की त्रुटियों को दुरूस्त करने में अपीलीय न्यायालय को सक्षम बना सकती हैं।" (बल प्रदान किया गया)

9. पर्सियों देवी एवं अन्य बनाम सुमित्री देवी एवं अन्य, (1997) 8 SCC 715, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"9. सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 के अधीन कोई निर्णय अन्य के साथ–साथ पुनर्विलोकन के लिए खुला हो सकता है अगर अभिलेख के पटल पर एक त्रुटि या दोष प्रकट है। कोई ऐसा दोष जो स्वस्पष्ट नहीं है तथा जिसका तर्क वितर्क की प्रक्रिया द्वारा पता लगाया जाना होता है, सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 के अधीन पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का इस्तेमाल करने के लिए न्यायालय के लिए औचित्यपूर्ण बनाते हुए अभिलेख के पटल पर एक प्रकट दोष कदाचित ही कहा जा सकता है। सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 के अधीन अधिकारिता के इस्तेमाल में, किसी दोषपूर्ण निर्णय की पुनः सुनवाई किया जाना तथा इसे दुरूस्त किया जाना अनुज्ञेय नहीं है। इसे आवश्यक रूप से स्मरण रखना है कि एक पुनर्विलोकन याचिका का सीमित उद्देश्य होता है तथा इसे प्रच्छन्न रूप से एक अपील होने नहीं दिया जा सकता है।"

10. हरियाणा राज्य औद्योगिक विकास निगम लि॰ बनाम मवासी एवं अन्य, (2012)7 SCC 200 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

*27. पूर्वोक्त प्रावधानों की कई मामलों में व्याख्या की गयी है। हम उनमें से कुछ को ध्यान में लेंगे। **एस० नागराज बनाम कर्नाटक राज्य** में, इस न्यायालय ने राजा पृथ्वी चंद लाल चौधरी बनाम सुखराज राय तथा राजेन्द्र नारायण राय बनाम बिजय गोविन्द सिंह में हुए निर्णयों को निर्दिष्ट किया था तथा सम्परीक्षित किया था:*

"19. पुनर्विलोकन का शाब्दिक रूप से एवं न्यायिक रूप से भी अर्थ पुनर्परीक्षा या पुनर्विचार होता है। मानवीय दुर्बलता का सार्वभौमिक स्वीकरण इसमें अंतर्निहित बुनियादी दर्शन है। फिर भी विधि के क्षेत्र में न्यायालयों तथा संविधियों का भी प्रबल रूप से वैसे निर्णय की अंतिमता के पक्ष में झुकाव है जो वैधानिक तथा उपयुक्त रूप से किये गये हैं। दुर्घटनावश हुई चूकों या न्याय के हनन को दुरूस्त करने के लिए सांविधिक तथा न्यायिक दोनों प्रकार से अपवाद बनाये गये हैं। जहां ऐसा कोई संवैधानिक प्रावधान नहीं भी था तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसे कोई नियम विरचित नहीं किये गये थे उन परिस्थितियों को इंगित करते हुए जिनमें वह अपने आदेश को दुरूस्त कर सकता था, आदेशिका के दुरूपयोग या न्याय के हनन को रोकने के लिए न्यायालयों ने ऐसी शक्ति प्राप्त कर ली थी। राजा पृथ्वी चन्द लाल चौधरी बनाम सुखराज राय में न्यायालय ने सम्परीक्षित किया था कि यद्यपि उच्चतम न्यायालय को अपने आदेश का पुनर्विलोकन करने की अनुमति देते हुए कोई नियम विरचित नहीं किये गये थे फिर भी यह प्रिवी

काउन्सिल तथा हाउस ऑफ लार्ड्स द्वारा तैयार किये गये सीमित एवं संकीर्ण आधार पर उपलब्ध था। न्यायालय ने राजेन्द्र नारायण राय बनाम बिजय गोविन्द सिंह में प्रिवी काउन्सिल द्वारा अधिकथित सिद्धांत को अनुमोदित किया था कि न्यायालय द्वारा किया गया आदेश अंतिम है तथा परिवर्तित नहीं किया जा सकता हैः (राजेन्द्र नारायण राय का मामला, MIA पृष्ठ 216)

''....फिर भी, अगर निर्णयों को समाविष्ट करने में व्यतिक्रम से दोष आ गये हैं, यह न्यायालय सामान्य विधि द्वारा वही शक्ति अपने पास रखते हैं जो उन दोषों, जो आ गये हैं, को दुरूस्त करने में अभिलेख के न्यायालयों तथा संविधियों के पास होती है। .... हाऊस ऑफ लॉर्ड्स अपने ही निर्णयों को तैयार करने में हुई चुकों को दुरूस्त करने की समरूप शक्ति का इस्तेमाल करता है, तथा इस न्यायालय के पास आवश्यक रूप से यही प्राधिकार होना है। तथापि, न्यायाधीशगण डिक्री को प्रवर्तित कराने में सक्षम बनाने के लिए एक कदम और आगे चले गये हैं, तथा निर्णयों के विवरणों में अनवधानता से आ गयी चूकों को दुरूस्त किया है; या प्रकट दोषों को सामने रखा है, या स्पष्टीकरण करने वाले मामले को जोड़ा है, या असंगतताओं को समायोजित किया है।''

इस शक्ति के इस्तेमाल के लिए आधार उसी निर्णय में निम्नवत् कथित किया गया थाः

'इसपर संदेह करना असंभव है कि अंतिम आश्रय के किसी न्यायालय द्वारा किये गये अनुपचारणीय अन्याय को रोकने के लिए विद्यमान स्वाभाविक इच्छा के कारण प्रधानतः ऐसे मामलों में छूट प्रदान की गयी है, जहां किसी दुर्घटनावश किसी दोष के बिना पक्षकार को नहीं सुना गया है तथा एक आदेश अनवधानता से कर दिया गया है जैसे कि पक्षकार को सुना गया था।''

इस प्रकार, किसी आदेश की परिशुद्धि इस मौलिक सिद्धांत से उत्पन्न होती है कि न्याय सर्वोपरि है। दोष को दूर करने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है तथा अंतिमता के साथ छेड़छाड़ करने के लिए नहीं। जब संविधान विरचित किया गया था इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को दुरूस्त करने या वापस लेने की तात्विक शक्ति संविधान के अनुच्छेद 137 द्वारा विनिर्दिष्टतः उपबंधित की गयी थी। हमारे संविधान निर्माताओं ने, जिनके पास ऐसे प्रावधान की प्रभाविता को देखने की व्यवहारिक बुद्धिमत्ता थी, संविधान के अनुच्छेद 137 द्वारा कियी निर्णय या आदेश की पुनर्विलोकन करने की तात्विक शक्ति स्पष्टतः प्रदान किया था। तथा अनुच्छेद 145 के खंड (c) ने इस न्यायालय को नियम विरचित करने की शक्ति दी थी उन शर्त्तों के संबंध में जिनके अध्यधीन किसी निर्णय या आदेश का पुनर्विलोकन किया जा सकता है। इस शक्ति के इस्तेमाल में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 47, नियम 1 के सदृश आधारों पर सिविल कार्यवाहियों में किसी आदेश का पुनर्विलोकन करने में इस न्यायालय को सशक्त बनाते हुए आदेश 40 विरचित किया गया था। खंड में 'किसी अन्य पर्याप्त कारण से' अभिव्यक्ति को एक विस्तारित अर्थ प्रदान किया गया है तथा स्थितियों की वास्तविक अवस्था की दोषपूर्ण समझ के अधीन पारित किसी डिक्री या आदेश को इस शक्ति का इस्तेमाल करने के लिए पर्याप्त आधार निर्णीत किया गया है। उच्चतम न्यायालय की नियमावली के आदेश 40, नियम 1 के अलावा, इस न्यायालय के पास ऐसे आदेशों को करने की अंतर्निहित शक्ति है जो न्याय के हित में या न्यायालय की आदेशिका के दुरूपयोग को रोकने में आवश्यक हो सकते हैं। इस प्रकार, यह न्यायालय अपने ही आदेश को वापस लेने या उसका पुनर्विलोकन करने से बाधित नहीं है अगर इसे समाधान है कि न्याय की खातिर ऐसा करना आवश्यक है।''

28. मोरन मार बैसेलियोस कैथोलिकोज बनाम मोस्ट रिवरेंड मार पुलोज ऐथेनेसियस में, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने त्रावनकोर सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को निर्दिष्ट किया था, जो सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 के समरूप था तथा सम्परीक्षित किया थाः–

*''32. .... **इसपर जोर देना अनावश्यक है कि पुनर्विलोकन के लिए किसी आवेदन का कार्यक्षेत्र किसी अपील के कार्यक्षेत्र की तुलना में काफी अधिक सीमित होता है।** त्रावनकोर सिविल प्रक्रिया संहिता में विद्यमान प्रावधानों के अंतर्गत, जो हमारी सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 47, नियम 1 के निबंधनों में समरूप है, पुनर्विलोकन की न्यायालय के पास उसमें प्रयुक्त भाषा द्वारा निर्धारित निश्चायी सीमाओं द्वारा परिबद्ध एक सीमित अधिकारिता ही होती है।*

यह तीन विनिर्दिष्ट आधारों पर पुनर्विलोकन की अनुमति दे सकता है, अर्थात्, (i) नये तथा महत्वपूर्ण मामले या साक्ष्य का पता चलने पर जो सम्यक् तत्परता बरतने के बाद आवेदक की जानकारी में नहीं था या उसके द्वारा उस समय पेश नहीं किया जा सका था जब डिक्री पारित की गयी थी, (ii) अभिलेख के पटल पर प्रकट चूक या दोष पर, तथा (iii) किसी अन्य पर्याप्त कारण से।

न्यायिक समिति द्वारा यह निर्णीत किया गया है कि 'किसी अन्य पर्याप्त कारण' शब्दों से आवश्यक रूप से अभिप्राय 'आधारों पर पर्याप्त एक कारण से है जो कम से कम नियम में विनिर्दिष्ट प्रावधानों के सदृश हों'। (देखें छज्जू राम बनाम नेकी) विशेश्वर प्रताप शाही बनाम पारथ नाथ में न्यायिक समिति द्वारा इस निष्कर्ष को दोहराया गया था तथा हरि शंकर पाल बनाम अनथ नाथ मित्तर, एफ० सी० पृष्ठ 110–11 में हमारे संघीय न्यायालय द्वारा अपनाया गया था। इस अपील के समर्थन में उपस्थित विद्वान अधिवक्ता पूर्वोक्त परिसीमाओं को स्वीकार करते हैं तथा निवेदन करते हैं कि उनका मामला अभिलेख के पटल पर प्रकट चूक या दोष के आधार या उसके सदृश किसी आधार के भीतर आता है।''

29. तुंगभद्रा इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आंध्र प्रदेश सरकार में, एक अन्य तीन न्यायाधीशों की पीठ ने दोहराया था कि पुनर्विलोकन की शक्ति अपीलीय शक्ति के सदृश नहीं है तथा सम्परीक्षित किया था:

''11. .... कोई पुनर्विलोकन किसी भी प्रकार से छिपे तौर पर एक अपील नहीं होता है जिसके द्वारा एक दोषपूर्ण निर्णय की पुनः सुनवाई की जाती है तथा इसे दुरूस्त किया जाता है, बल्कि केवल प्रकट दोष के लिए होता है। हम यह नहीं समझते हैं कि यह इस अंतर से संपूर्ण रूप से या अधिक विस्तार से निपटने के लिए एक उपयुक्त अवसर उपलब्ध कराता है, परन्तु हमारे लिए यह कहना पर्याप्त होगा कि जहां कोई किसी विषद तर्क के बिना दोष की ओर इशारा कर सकता है तथा कह सकता है कि यहां विधि का एक तात्विक बिन्दु है जो दृष्टिपात करते ही दिखाई पड़ता है तथा इसके बारे में युक्तियुक्त रूप से कोई दो राय नहीं रखी जा सकती है, अभिलेख के पटल पर प्रकट दोष का एक स्पष्ट मामला बनेगा।''

30. अरिबम तुलेश्वर शर्मा बनाम अरिबम पिशाक शर्मा में, इस न्यायालय ने इस प्रश्न का उत्तर हाँ में दिया था कि उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन पारित किसी आदेश का पुनर्विलोकन कर सकता है या नहीं तथा सम्परीक्षित किया था:

''3. ..... परन्तु, पुनर्विलोकन की शक्ति के इस्तेमाल की निश्चायी सीमाएं हैं। नये तथा महत्वपूर्ण मामले या साक्ष्य के पता चलने पर पुनर्विलोकन की शक्ति का इस्तेमाल किया जा सकता है जो पुनर्विलोकन की ईप्सा करनेवाले व्यक्ति की जानकारी में सम्यक् तत्परता बरतने के बाद भी नहीं था या जिसे उसके द्वारा उस समय पेश नहीं किया जा सका था जब आदेश किया गया था : इसका इस्तेमाल वहाँ किया जा सकता है जहां अभिलेख के पटल पर कुछ त्रुटि या प्रकट दोष पाया जाता है; इसका इसी सदृश आधार पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। परन्तु, इसका इस आधार पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है कि निर्णय गुणावगुणों पर दोषपूर्ण था। यह किसी अपीलीय न्यायालय का अधिकार क्षेत्र होगा। पुनर्विलोकन की शक्ति को भ्रमवश अपीलीय शक्तियों जैसा नहीं समझा जाना है जो अधीनस्थ न्यायालय द्वारा कारित सभी प्रकार की त्रुटियों को दुरूस्त करने में अपीलीय न्यायालय को सक्षम बना सकती हैं।''

32. परसियों देवी बनाम सुमीत्री देवी में, न्यायालय ने सम्परीक्षित किया थाः

"9. ..... कोई ऐसा दोष जो स्वस्पष्ट नहीं है तथा जिसका तर्क वितर्क की प्रक्रिया द्वारा पता लगाया जाना होता है, सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 के अधीन पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का इस्तेमाल करना न्यायालय के लिए औचित्यपूर्ण बनाते हुए अभिलेख के पटल पर एक प्रकट दोष कदाचित ही कहा जा सकता है। . ... यह आवश्यक रूप से स्मरण रखा जाना है कि एक पुनर्विलोकन याचिका का सीमित उद्देश्य होता है तथा इसे प्रच्छन्नतः एक अपील होने नहीं दी जा सकती है।''

33. लिली थॉमस बनाम भारत संघ में, न्यायमूर्ति आर० पी० सेठी, जो न्यायमूर्ति एस० सबीर अहमद से सहमत थे, ने निम्नांकित शब्दों में पुनर्विलोकन की शक्ति की गुंजाईश को सारकृत किया थाः

''56. ..... शक्ति के इस्तेमाल से संबंधित संविधि की सीमाओं के भीतर ऐसी शक्तियों का इस्तेमाल किया जा सकता है। पुनर्विलोकन के साथ प्रच्छन्नतः एक अपील के समान व्यवहार नहीं किया जा सकता है। विषय पर दो दृष्टिकोणों की संभावना मात्र पुनर्विलोकन का एक आधार नहीं है। एक बार पुनर्विलोकन याचिका खारिज कर दिये जाने पर, पुनर्विलोकन के लिए कोई और याचिका ग्रहण नहीं की जा सकती है। वृहत्तर पीठों के बाध्यकर स्वरूप की परिपाटी का अनुसरण करने तथा समान सामर्थ्य की सहवर्ती अधिकारिता की पीठों द्वारा प्रस्तुत भिन्न दृष्टिकोणों को न लेने की विधि के नियम का अनुसरण किया जाना है तथा व्यवहार में लाया जाना है।''

34. हरिदास बनाम ऊषा रानी बानिक में न्यायालय ने सम्परीक्षित किया थाः

''13. ..... सि० प्र० सं० के आदेश 47 में मापदण्ड विहित किए गए हैं तथा इस मुकदमें के प्रयोजनार्थ, प्रतिवादी को किसी भूल या अभिलेख के पटल पर प्रकट किसी दोष के कारण या किसी अन्य पर्याप्त कारण से पुनः सुनवाई कराने हेतु जोर देने की अनुमति देते हैं। नियम का प्रथम भाग आवेदक से संबंधित किए जाने योग्य किसी परिस्थिति से संबंधित है, तथा बाद वाला एक न्यायिक कृत्य से जो प्रकटतः दोषपूर्ण है या जिसपर दो निष्कर्ष सम्भव नहीं है। उनमें से कोई भी विवाद की पुनः सुनवाई अभिकल्पित नहीं करता है क्योंकि किसी पक्षकार ने मामले के इन सारे पहलूओं को उजागर नहीं किया था या कदाचित उनपर अधिक प्रबल रूप से जिरह कर सकता था तथा/या न्यायालय के लिए बाध्यकर उदाहरण उद्धृत कर सकता था एवं तद्द्वारा एक अनुकूल निर्णय प्राप्त कर सकता था।''

35. पश्चिम बंगाल राज्य बनाम कमल सेन गुप्ता में, इस न्यायालय ने इस प्रश्न पर विचार किया था कि क्या प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 के अधीन स्थापित कोई अधिकरण अपने निर्णय का पुनर्विलोकन कर सकता है, तथा इस अधिनियम की धारा 22(3), कुछ न्यायिक पुर्वोदाहरणों को निर्दिष्ट किया था एवं सम्परीक्षित किया था।

"21. इस चरण पर ऐसा सम्परीक्षित करना समीचीन है कि जहां नये मामले या साक्ष्य के पता चलने के आधार पर किसी पुनर्विलोकन की ईप्सा की गयी है, ऐसा मामला या साक्ष्य आवश्यक रूप से सुसंगत होना है तथा आवश्यक रूप से ऐसे स्वरूप का होना है कि अगर इसे प्रस्तुत किया गया होता, यह निर्णय को परिवर्तित कर सकता था। अन्य शब्दों में, नये या महत्वपूर्ण मामले या साक्ष्य का पता लगना मात्र न्यायानुसार पुनर्विलोकन के लिए पर्याप्त आधार नहीं है। इतना ही नहीं, पुनर्विलोकन की ईप्सा करनेवाले पक्षकार को यह भी दर्शाना है कि ऐसा अतिरिक्त मामला या साक्ष्य उसकी जानकारी के भीतर नहीं था एवं सम्यक तत्परता बरतने के बाद भी, इसे पहले न्यायालय के समक्ष पेश नहीं किया जा सका था।

22. 'प्रकट चूक या दोष' पद अपने अभिप्राय से ही एक ऐसे दोष को चिन्हित करता है जो मामले के अभिलेख से ही प्रकट है तथा इसमें तथ्यों या वैधानिक स्थिति में से किसी की विस्तृत परीक्षा, संवीक्षा में विषदीकरण की आवश्यकता नहीं है। अगर

कोई दोष स्वप्रकट नहीं है तथा उसका पता लगाने के लिए लंबी बहस एवं तर्क वितर्क की प्रक्रिया की आवश्यकता है, सि० प्र० सं० के आदेश 47, नियम 1 या अधिनियम की धारा 22(3)(f) के प्रयोजनार्थ इसे अभिलेख के पटल पर प्रकट एक त्रुटि नहीं माना जा सकता है। इसे भिन्न रूप से रखते हुए किसी आदेश या निर्णय या फैसले को मात्र इस कारण दुरूस्त नहीं किया जा सकता है कि यह विधि में दोषपूर्ण है या इस आधार पर कि तथ्य या विधि के बिन्दु पर न्यायालय/अधिकरण द्वारा एक भिन्न दृष्टिकोण लिया जा सकता था। किसी भी दशा में, पुनर्विलोकन की शक्ति का इस्तेमाल करते समय, संबद्ध न्यायालय/अधिकरण अपने निर्णय/फैसले पर अपील में नहीं बैठ सकता है।''

11. पूर्वोक्त निर्णयों में यह संगत रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि पुनर्विलोकन याचिका को ''छद्मवेष में अपील'' होने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग नए एवं महत्वपूर्ण मामलों अथवा साक्ष्य की खोज पर किया जा सकता है जो सम्यक तत्परता के प्रयोग के बाद भी पुनर्विलोकन इप्सित करने वाले व्यक्ति की जानकारी के अंतर्गत नहीं था अथवा उस समय दर जब मूल आदेश पारित किया गया था उसके द्वारा प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। इसका प्रयोग किया जा सकता है जहाँ अभिलेख को देखते ही प्रकट गलती पायी गयी है; इसका प्रयोग ऐसे किसी सदृश आधार पर भी किया जा सकता है।

12. मैंने **नामित शर्मा (ऊपर)** के निर्णय का परिशीलन किया है जैसा याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किया गया है। उक्त निर्णय के पैरा 21 का पठन निम्नलिखित है:–

''21. संविधान के अनुच्छेद 137 के अधीन इस न्यायालय के निर्णय अथवा आदेश का पुनर्विलोकन केवल अभिलेख को देखते ही प्रकट गलती तक सीमित है जैसा सर्वोच्च न्यायालय नियमावली, 1966 के आदेश 40 नियम 1 में प्रावधानित किया गया है। इस न्यायालय की त्रि–न्यायाधीश न्यायपीठ ने सी० एस० टी० बनाम पाइन केमिकल्स लि० में अभिनिर्धारित किया है कि यदि पुनर्विलोकन के अधीन निर्णय में तर्क संविधि में स्पष्ट एवं सरल भाषा से भिन्न है, पुनर्विलोकन के अधीन निर्णय विधि की स्पष्ट गलती, अभिलेख को देखते ही प्रकट गलती से पीड़ित होता है और परिशुद्ध किए जाने का दायी है। अतः इन पुनर्विलोकन याचिकाओं में हमें विनिश्चित करना होगा कि क्या पुनर्विलोकन के अधीन निर्णय में तर्क एवं निर्देश अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों में प्रयुक्त स्पष्ट एवं सरल भाषा से भिन्न है और तद्नुसार क्या पुनर्विलोकन के अधीन निर्णय अभिलेख को देखते ही विधि की स्पष्ट गलती से पीड़ित है।''

13. मैंने **एन॰ जी॰ सुब्बारय्या शेट्टी (ऊपर)** के निर्णय का भी परिशीलन किया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिकारिता विवाद्यक पर गलत निर्णय याची के विरूद्ध पूर्व न्याय सृजित करने के लिए बाध्यकारी पूर्वोदाहरण नहीं है। किंतु वर्तमान मामला में, याची ने कोई नया तथ्य अभिलेख पर नहीं लाया है बल्कि रिट याचिका में पहले ही उठाए गए आधारों को दोहराया है। पुनर्विलोकन याची के विद्वान अधिवक्ता का तर्क इस तथ्य की दृष्टि में स्वीकार्य नहीं है कि डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1234 वर्ष 2017 में पारित दिनांक 14.3.2013 के आदेश को देखते ही विधि की स्पष्ट गलती प्रतीत नहीं होती है। इस प्रकार, याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय वर्तमान मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों में प्रयोज्य नहीं हैं। यह ऐसा मामला है जहाँ इस न्यायालय ने प्रमाणपत्र ऋणियों के दो संवर्गों के बीच समतुल्यता बनाए रखने की दृष्टि से उस चरण पर गुणागुण पर रिट याचिका ग्रहण करने से परहेज किया और इस प्रकार, याची को अधिनियम, 1914 की धारा 60 के निबंधनानुसार अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील के सांविधिक उपचार का लाभ लेने का निर्देश दिया गया था। यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि अपील वाद का जारी रहना है और अपीलीय न्यायालय की शक्ति विचारण न्यायालय की शक्ति के साथ सम

विस्तारी है। वाद की कार्यवाही में विचारण न्यायालय द्वारा जो कुछ भी किया जा सकता था, वह सदैव अपीलीय न्यायालय द्वारा न्याय के हित में किया जा सकता है। इस प्रकार, मैं पुनर्विलोकन याची के निवेदन में कोई बल नहीं पाता हूँ कि डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1234 वर्ष 2017 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 14.3.2018 के आदेश में कोई प्रकट गलती है।

14. पूर्वोक्त कारणों से, वर्तमान सिविल पुनर्विलोकन खारिज किया जाता है।

15. परिणामस्वरूप, आई॰ ए॰ सं॰ 4049 वर्ष 2018 भी खारिज किया जाता है।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

मेसर्स टाटा इंजीनियरिन्ग एन्ड लोकोमोटिव कंपनी लिमिटेड

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.2390 of 2003. Decided on 10th April, 2018.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 71A—भूमि का पुनर्स्थापन—उपायुक्त से सम्यक अनुमति ली गयी थी—विक्रय विलेख विधि की दृष्टि में वैध है—अंतरण जिसे याची के पक्ष में किया गया था विधि के अनुरूप था—प्राईवेट प्रत्यर्थियों को न्यायिक कल्प आदेश के फलस्वरूप संपत्ति से बेदखल किया गया था—जहाँ तक प्राइवेट प्रत्यर्थियों का संबंध है, अपनी बेदखली की सटीक तिथि अथवा बेदखली की अंतरिम तिथि देना वर्तमान मामला के लिए परमावश्यक था जिसे स्वीकृत रूप से प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा नहीं किया गया था—दूसरी ओर, याची का विनिर्दिष्ट मामला यह है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को समर्पण के रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरूप काफी पहले 1948 में बेदखल किया गया था—परिसीमा/विलंब का बिंदु मूल बिन्दु था जिस पर आयुक्त द्वारा समुचित रूप से विचार किया जाना था—आयुक्त द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है। (पैराएँ 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.—(2005) 1 JLJR 98; (2002)2 JLJR 534; (1987) PLJR 533—Distinguished; (2004) 8 SCC 340—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s V.P. Singh, Senior, Rashmi Kumar, Amit Kumar Das, For the Petitioner; Mr. Ashish Kumar Thakur, For the Respondents.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री श्रीमती रश्मि कुमार द्वारा सहायित वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ पी॰ सिंह सुने गए।

2. प्राइवेट प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 की ओर से कोई नहीं उपस्थित होता है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 4 की ओर से उपस्थित एस॰ सी॰ (एल॰ एन्ड सी॰) के ए॰ सी॰ श्री आशीष कुमार ठाकुर सुने गए।

4. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:—

''कि वर्तमान रिट आवेदन पुनरीक्षण अपील सं॰ 461 वर्ष 1995 में सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 217 के अधीन पुनरीक्षण के रूप में तात्पर्यित रूप से मानते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 2 आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, सिंहभूम (पूर्व) द्वारा पारित परिशिष्ट 3 में यथा अंतर्विष्ट दिनांक 12.11.2001 के पुनरीक्षण आदेश के अभिखंडन

के लिए उत्प्रेषण प्रकृति का रिट अथवा किसी अन्य समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए दाखिल की गयी है जिसके निबंधनों द्वारा प्रत्यर्थी सं० 2 ने एस० ए० आर० अपील सं० 304 वर्ष 1998-99 (89-90 के लिए गलती), जिसे दिनांक 26.9.1955 के एस० ए० आर० सं० 23/89-90 के लिए गलती), जिसे दिनांक 26.9.1955 के एस० ए० आर० सं० 23/89-90 के साथ सुना गया था में पारित उपायुक्त, सिंहभूम (पूर्व) के आदेश और एस० ए० आर० केस सं० 6/ 83-84 और एस० ए० आर० केस सं० 20/86-87 में उपायुक्त की शक्ति एवं कार्य का प्रयोग करते हुए भूमि सुधार उप समाहर्ता, सिंहभूम (पूर्व), जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 28.1.89 का आदेश अपास्त कर दिया है और तत्पश्चात एस० ए० आर० केस सं० 6 वर्ष 1983-84 और एस० ए० आर० केस सं० 20/86-87 द्वारा आच्छादित भूमि के कब्जा के पुनर्स्थापन के लिए प्रत्यर्थी सं० 5 एवं 7 का उक्त पुनरीक्षण आवेदन एवं प्रार्थना अनुज्ञात किया है और आगे उपायुक्त, पूर्वी सिंहभूम को आदेश की तिथि से 15 दिनों के भीतर प्रश्नगत भूमि का कब्जा प्रत्यर्थी सं० 5 से 7 को देने का निर्देश देने के लिए।''

5. इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति जिला पूर्वी सिंहभूम की मौजा जोजोबेरा, थाना सं॰ 1196 के खाता सं॰ 6 के आर॰ एस॰ भूखंड सं॰ 5563, 5588, 5589, 5590, 5591, 5592, 5598, 5599, 5560 एवं 5569 और मौजा जोजोबेरा, थाना सं॰ 1196 के खाता सं॰ 6 के आर॰ एस॰ भूखंड सं॰ 5561, 5662, 5563, 5664, 5665 है। वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थी ने पूर्वोक्त भूमि के पुनर्स्थापन के लिए छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 71A के अधीन दो पृथक आवेदनों को दाखिल किया था जिन्हें आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 1983-84 और आर॰ पी॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1986-87 के रूप में दर्ज किया गया था। प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने अभिलिखित अभिधारी की संतति होने का दावा किया और दावा किया कि उन्हें संपत्ति से बेदखल किया गया है और इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति वर्तमान में याची के कब्जा में है। भूमि सुधार उप समाहर्ता, दालभूम ने दोनों मामलों को सुना और दिनांक 28.1.1989 के एक ही आदेश द्वारा दोनों मामलों को यह अभिनिर्धारित करते हुए अस्वीकार किया कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों के हित पूर्वाधिकारी 1948 से काबिज नहीं थे और तद्नुसार अभिनिर्धारित किया कि दोनों मामलों में पुनर्स्थापन की प्रार्थना समयवर्जित थी। इसके विरूद्ध प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने दो पृथक अपीलों अर्थात एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 23 वर्ष 89-90 और एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 304 वर्ष 89-90 दाखिल किया जिसे दिनांक 26.9.95 के एक ही आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए अस्वीकार किया कि प्रश्नगत भूमि का तत्कालीन बिहार सरकार और मेसर्स टिस्को के बीच निष्पादित पट्टा दस्तावेजों में जिक्र था और इसके अतिरिक्त उक्त भूमि का उपयोग रिट याची द्वारा 1963-64 में मेसर्स टिस्को के साथ हुए व्यवस्था के अधीन किया गया था। अपीलीय आदेश से व्यथित होकर प्राईवेट प्रत्यर्थियों ने आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची (अब कोल्हन) के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे विविध पुनरीक्षण अपील सं॰ 461 वर्ष 1995 के रूप में दर्ज किया गया था और 30.7.2001 को सुना गया था और यह अभिनिर्धारित करते हुए 12.11.2011 को निर्णय दिया गया था कि आरंभिक अंतरण ही अवैध था, अत: समस्त पश्चातवर्ती संव्यवहार भी अवैध थे।

6. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि भूखंड सं॰ 5563 एवं 5569 याची द्वारा उपायुक्त से सम्यक अनुमति के बाद दिनांक 10.3.1964 के रजिस्टर्ड विलेख द्वारा खरीदा गया था जिसका उल्लेख स्वयं रजिस्टर्ड विलेख में किया गया है और मामला के इस पहलू पर पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा विचार नहीं किया गया है। वह आगे निवेदन करते हैं कि अंचल अधिकारी ने विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है कि दिनांक 10.3.1964 का विक्रय विलेख वैध है किंतु भूमि सुधार उप समाहर्ता का आदेश अपास्त करते हुए प्राधिकारी ने कोई विपरीत निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है जहाँ तक दिनांक 10.3.1964 के विलेख का

संबंध है और तद्नुसार आयुक्त का आदेश उस सीमा तक जहाँ तक यह दिनांक 10.3.1964 के विलेख से संबंधित है विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है यह संपत्ति जिसे याची द्वारा दिनांक 10.3.1964 के विलेख के तहत खरीदा गया था, आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 83-84 का विषयवस्तु है।

7. जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 83-84 में शेष संपत्ति का संबंध है, याची के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि यह टी॰ ए॰ विविध केस सं॰ 13 वर्ष 1943-44 का विषयवस्तु था जो खाता सं॰ 6 सहित अनेक संपत्तियों की भूमि के अर्जन के लिए उच्चतर भूस्वामी मेसर्स टिस्को द्वारा आरंभ की गयी छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 50 के अधीन कार्यवाही थी। उक्त टी॰ ए॰ विविध केस सं॰ 13 वर्ष 1943-44 अनेक अभिधारियों के विरूद्ध आरंभ किया गया था और इसे अंततः दिनांक 28.4.44 के आदेश के तहत अभिलिखित अभिधारी के विरूद्ध विनिश्चित किया गया था और मेसर्स टिस्को को उक्त भूमि का रिक्त कब्जा देने का निर्देश था और तद्नुसार काफी पहले 23.5.44 को मेसर्स टिस्को को संपत्ति का कब्जा दिया गया था। तत्पश्चात यह संपत्ति याची को उप-पट्टा पर दी गयी थी और उप-पट्टा के फलस्वरूप याची संपत्ति पर काबिज हुआ था। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि न्यायिक कल्प आदेश के फलस्वरूप मेसर्स टिस्को को संपत्ति का कब्जा दिया गया था जिसे बाद में उप-पट्टा पर याची को दिया गया था और तद्नुसार इसपर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1944 में संपत्ति से बेदखल किया गया था। भूमि सुधार उप समाहर्ता ने मामला के इस पहलू को विचार में लिया है और टी॰ ए॰ विविध केस सं॰ 13 वर्ष 1943-44 में पारित दिनांक 23.4.1944 के आदेश को भी यह अभिनिर्धारित करते हुए विचार में लिया गया था कि याची के विरूद्ध आरंभ की गयी कार्यवाही समयवर्जित है। यह निवेदन किया गया है कि मामला के इस पहलू पर उपायुक्त द्वारा विचार नहीं किया गया है और इस कारण उपायुक्त द्वारा पारित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है।

8. जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 20 वर्ष 86-87 में अंतर्ग्रस्त संपत्ति का संबंध है, याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मेसर्स टिस्को वर्ष 1948 में निष्पादित समर्पण विलेख के फलस्वरूप उस संपत्ति पर काबिज हुआ जो रजिस्टर्ड विलेख था और तद्नुसार वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1948 में संपत्ति से बेदखल किया गया था। यह संपत्ति याची को मेसर्स टिस्को द्वारा दिनांक 21.8.1969 के उपपट्टा के रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरूप उप-पट्टा पर दी गयी थी। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची रजिस्टर्ड उप-पट्टा के फलस्वरूप केवल 1969 से इस संपत्ति पर काबिज है किंतु तथ्य बना रहता है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों अथवा उनके पूर्वाधिकारियों को इस संपत्ति से काफी पहले वर्ष 1948 में समपर्ण के रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरूप बेदखल किया गया था। इस तथ्य की दृष्टि में, यह निवेदन किया गया है कि भूमि सुधार उप समाहर्ता ने अभिनिर्धारित किया कि याची के विरूद्ध आरंभ की गयी कार्यवाही समय वर्जित है। यह निवेदन किया गया है कि मामला के इस पहलू पर भी आयुक्त द्वारा विचार नहीं किया गया है और इस कारण आयुक्त द्वारा पारित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है।

9. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि 1964 के विक्रय विलेख द्वारा आच्छादित भूखंड सं॰ 5563 एवं 5569 अपवर्जित करते हुए इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपूर्ण संपत्ति मेसर्स टिस्को की पट्टाधृत संपत्ति है और याचीगण संपत्ति के उप-पट्टाधारी हैं। अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि याची सही प्रकार से संपत्ति पर काबिज हुआ और मामला के प्रत्येक पहलू पर भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा परिसीमा के बिन्दु सहित आदेश पारित करते हुए सही प्रकार से विचार किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि

विद्वान आयुक्त ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए किसी भी कारण पर विचार अथवा चर्चा नहीं किया है जिसे भूमि सुधार उप समाहर्ता द्वारा पारित आदेश में दर्ज किया गया है। उन्होंने **(2004)8 SCC 340** में प्रकाशित मामला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि यह मानते हुए किंतु स्वीकार नहीं करते हुए कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को अवैध रूप से बेदखल किया गया था अथवा अंतरण कपटपूर्ण था किंतु प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा अत्यधिक अवधि के काफी बाद और समय की युक्तियुक्त अवधि के परे पुनर्स्थापन के लिए आवेदन दाखिल किया और अब याची ने संपत्ति पर औद्योगिक इकाई स्थापित किया है, अत: माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में, भूमि सुधार उपसमाहर्ता ने सही प्रकार से आदेश पारित किया था कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा दाखिल याचिका समयवर्जित थी। वह निवेदन करते हैं कि मामला के इस पहलू का विद्वान आयुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश में समुचित रूप में अधिमूल्यन नहीं किया गया है और तद्नुसार यह अपास्त किए जाने योग्य है।

10. किंतु, दूसरी ओर, प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि जहाँ तक भूखंड सं॰ 5563 एवं 5569 से संबंधित दिनांक 10.3.1964 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख का संबंध है, वह विक्रय विलेख की विधिकता एवं वैधता को विवादित करने की अवस्था में नहीं हैं, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि उपायुक्त से प्राप्त की गयी अनुमति का उल्लेख स्वयं विक्रय विलेख में किया गया है।

11. वह आगे निवेदन करते हैं कि जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 1983-84 में अन्य संपत्ति, जिसे वर्ष 1944 में पारित आदेश के तहत टी॰ ए॰ विविध केस सं॰ 13 वर्ष 1943-44 में पारित आदेश के फलस्वरूप मेसर्स टिस्को को अंतरित किया गया था, का संबंध है, वह उक्त आदेश की विधिकता एवं वैधता पर टिप्पणी करने की अवस्था में नहीं हैं।

12. किन्तु, जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1986-87 का संबंध है, प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अंतरण वर्ष 1948 के समर्पण विलेख के रूप में है जो छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 46 के संशोधन के बाद का है जिसके द्वारा अंतरण के पहले उपायुक्त की पूर्वानुमति लेने की आवश्यकता थी, समर्पण विलेख के रूप में अंतरण बिलकुल अवैध है और इसलिए ऐसे अंतरण के फलस्वरूप कब्जा को मान्यता नहीं दिया जा सकता है। इस बिंदु पर प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने (2005)1 JLJR 98, (1987) PLJR 533 और (2002)2 JLJR 534 में प्रकाशित इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर विश्वास किया है। अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि समर्पण विलेख को उपायुक्त से समुचित अनुमति की अनुपस्थिति में मान्यता नहीं दिया जा सकता है। भले ही यह रजिस्टर्ड दस्तावेज है। प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि अंचलाधिकारी, जमशेदपुर की रिपोर्ट के मुताबिक याची केवल 18-19 वर्षों की अवधि के लिए संपत्ति पर काबिज था और तद्नुसार सही प्रकार से आवेदन दाखिल किया गया था और यह परिसीमा अवधि के अंतर्गत था क्योंकि इसे युक्तियुक्त समय के भीतर दाखिल किया गया था। वह यह निवेदन भी करते हैं कि जहाँ तक संपत्ति के संबंध में किराया का संबंध है, इसका भुगतान अभिलिखित रैयत द्वारा वर्ष 1982-83 तक किया गया था।

13. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार करने के बाद यह न्यायालय निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से इस रिट याचिका को अनुज्ञात करने का इच्छुक है:–

<u>आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 1983-84 में अंतर्ग्रस्त संपत्ति</u>

(a) जहाँ तक भूखंड सं॰ 5563 एवं 5569 से संबंधित दिनांक 10.3.1964 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख में यथा अंतर्विष्ट संपत्ति का संबंध है, स्वयं विलेख के परिशीलन से यह प्रकट है कि उपायुक्त,

पूर्वी सिंहभूम की सम्यक अनुमति ली गयी थी और छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 49 उपधारा 3 के अधीन अनुमति प्रदान की गयी थी। तद्नुसार, विक्रय विलेख विधि की दृष्टि में वैध है, अत:, यह न्यायालय पाता है कि यह अंतरण जिसे याची के पक्ष में किया गया था, विधि के अनुरूप था। इस पहलू पर आयुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए विचार नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित अधिवक्ता द्वारा भी मामला का यह पहलू विवादित नहीं किया जा सका था।

(b) जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 6 वर्ष 1983-84 में शेष संपत्ति का संबंध है, यह प्रतीत होता है कि इस संपत्ति का कब्जा मेसर्स टिस्को को काफी पहले वर्ष 1944 में वर्ष 1944 में पारित आदेश के तहत टी॰ ए॰ विविध मामला सं॰ 13 वर्ष 1943-44 में पारित पूर्वोक्त आदेश के फलस्वरूप दिया गया था और मेसर्स टिस्को ने दिनांक 21.8.69 के रजिस्टर्ड उप–पट्टा विलेख के फलस्वरूप याची को इस संपत्ति का उपपट्टा दिया गया था। इस दस्तावेज के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को न्यायिक–कल्प आदेश के फलस्वरूप संपत्ति से बेदखल किया गया था और प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा मामला के इस पहलू से इनकार नहीं किया गया है। आयुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है।

<u>आर॰ पी॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1986-87 में अंतर्ग्रस्त संपत्ति</u>

(c) जहाँ तक आर॰ पी॰ केस सं॰ 20 वर्ष 1986-87 में अंतर्ग्रस्त संपत्ति का संबंध है, प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने भूमि के पुनर्स्थापन के लिए अपने आवेदन में बेदखली की तिथि का उल्लेख नहीं किया है और अंचलाधिकारी ने पाया कि याची केवल 18-19 वर्षों की अवधि के लिए इस संपत्ति पर काबिज है किंतु अंचलाधिकारी की रिपोर्ट प्राइवेट प्रत्यर्थियों अथवा उनके पूर्वाधिकारियों की संपत्ति से बेदखली की तिथि नहीं देती है।

(d) प्राइवेट प्रत्यर्थियों अथवा उनके पूर्वाधिकारियों की संपत्ति से बेदखली की तिथि और याची के कब्जा की तिथि वर्तमान मामला में भिन्न होनी होगी क्योंकि याची दावा कर रहा है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों अथवा उनके पूर्वाधिकारियों को काफी पहले वर्ष 1948 में मेसर्स टिस्को के पक्ष में निष्पादित समर्पण के रजिस्टर्ड विलेख के माध्यम से संपत्ति से बेदखल किया गया था और याची रजिस्टर्ड पट्टे द्वारा बाद में संपत्ति पर काबिज हुआ।

(e) यह विशेषता इस तथ्य की दृष्टि में प्रासंगिक बन जाता है कि समर्पण विलेख जो रजिस्टर्ड दस्तावेज था, मेसर्स टिस्को के पक्ष में निष्पादित किया गया था। जहाँ तक प्राइवेट प्रत्यर्थियों का संबंध है, बेदखली की सटीक तिथि अथवा बेदखली की अंतरिम तिथि देना वर्तमान मामला का मूलाधार था जिसे स्वीकृत रूप से प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा नहीं दिया गया था। दूसरी ओर, याची का विनिर्दिष्ट मामला यह है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1948 में मेसर्स टिस्को के पक्ष में वर्ष 1948 में निष्पादित समर्पण के रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरूप बेदखल किया गया था। भूमि सुधार उप समाहर्ता ने इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के बाद पाया कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1948 में बेदखल किया गया था और अभिनिर्धारित किया कि भूमि के पुनर्स्थापन के लिए याचिका समय वर्जित थी।

(f) यह गौर करना भी प्रासंगिक है कि मेसर्स टिस्को पक्ष प्रत्यर्थी कभी नहीं था अथवा प्राधिकारियों द्वारा उसे नोटिस कभी नहीं दिया गया था यद्यपि अभिलिखित अभिधारी द्वारा उसके पक्ष में समर्पण का

रजिस्टर्ड विलेख निष्पादित किया गया था। भूमि सुधार उपसमाहर्ता ने विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है कि प्राईवेट प्रत्यर्थियों अथवा उनके पूर्वाधिकारियों को काफी पहले वर्ष 1948 में संपत्ति से बेदखल किया गया था और आयुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए मामला के इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है।

(g) जहाँ तक प्रत्यर्थी के इस प्रतिवाद का संबंध है कि समर्पण विलेख को कब्जा के प्रयोजन से अथवा अभिधान के प्रयोजन से भी मान्यता नहीं दिया जा सकता है क्योंकि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 46 के उल्लंघन में होने के नाते यह शून्य दस्तावेज है, प्रत्यर्थियों ने (2005)1 JLJR 98 : (1987) PLJR 533 और (2002)2 JLJR 534 में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

(h) माननीय पटना उच्च न्यायालय (1987) PLJR 533 में प्रकाशित निर्णय में निश्चित दृष्टिकोण का था कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 46 के अधीन यथा आवश्यक उपायुक्त की अनुमति के बिना अभिलिखित रैयत द्वारा भूमि का समर्पण विलेख अवैध है। विधि की उक्त प्रतिपादना के बारे में संदेह नहीं है किंतु इसी समय पर परिसीमा का विवाद्यक उक्त मामला में अंतर्ग्रस्त नहीं था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित **(2004)8 SCC 340** में प्रकाशित निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि भले ही अंतरण कपटपूर्ण पद्धति के रूप में है, तब भी पुनर्स्थापन आवेदन युक्तियुक्त समय के भीतर दाखिल किया जाना होगा यद्यपि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 71A के अधीन परिसीमा अवधि विहित नहीं की गयी है। **(2004)8 SCC 340** में प्रकाशित उक्त निर्णय के पैरा 14 एवं 15 को उद्धृत करना लाभदायी होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *''14. अब हम श्री नरसिम्हा के अंतिम तर्क का परीक्षण करेंगे कि अंतरण कपटपूर्ण था। इस पर भी, हमें संदेह है कि अपीलार्थीगण सफल होने के हकदार हैं। हमें संव्यवहार के विवरणों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हम मान भी सकते हैं कि अंतरण कपटपूर्ण था। तब भी, जैसा इब्राहिमपटनम में अभिनिर्धारित किया गया है, धारा 71A के अधीन शक्ति का प्रयोग केवल युक्तियुक्त समय के भीतर किया जा सकता था। वर्तमान अपील के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, हम इस बात से संतुष्ट नहीं हैं कि विशष पदाधिकारी ने युक्तियुक्त समयावधि के भीतर धारा 71-A के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग किया था। निश्चय ही, 40 वर्ष बीत जाना शक्ति के प्रयोग के लिए युक्तियुक्त समय नहीं है भले ही इसे परिसीमा अवधि द्वारा घेरा नहीं गया है। हम जय मंगल ओराँव मामला, जो मामला भी विधि के इसी प्रावधान के अधीन उद्‌भूत हुआ, में इस न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षणों से अपने दृष्टिकोण के लिए समर्थन प्राप्त करते हैं। इस न्यायालय ने दृष्टिकोण लिया कि धारा 46(4)(a), जो उसमें कथित किसी ढंग में अंतरण प्रभावी बनाने के पहले उपायुक्त की पूर्व मंजूरी परिकल्पित करता था, केवल वर्ष 1947 में (5.1.1948 के प्रभाव से) पुरः स्थापित की गयी थी और समय के प्रासंगिक बिंदु के दौरान ऐसा प्रावधान विद्यमान नहीं था जब उस मामला में समर्पण (15.1.1942 को) किया गया था। स्पष्टतः, ऐसा प्रावधान 1938 में विद्यमान नहीं था और यही तर्क लागू होता है।*
>
> *15. अतः, परिणामस्वरूप, हमारा दृष्टिकोण है कि विशेष अधिकारी को प्रकाश में लाए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन समय की ऐसी लंबी अयुक्तियुक्त अवधि के बाद अधिनियम की धारा 71A के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए था।''*

(i) (2002)2 JLJR 534 में प्रकाशित निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उपायुक्त की अनुमति के बिना अंतरण बिल्कुल अवैध और साक्ष्य में अग्राह्य है। इस निर्णय में भी, छोटानागपुर अभिधृति

अधिनियम, 1908 की धारा 71A के अधीन भूमि के पुनर्स्थापन के लिए आवेदन दाखिल करने के संबंध में अयुक्तियुक्त एवं अत्यधिक विलंब के संबंध में विवाद्यक अंतर्ग्रस्त नहीं था। पुनर्स्थापन के लिए आवेदन दाखिल करने में अत्यधिक विलंब के साथ कपटपूर्ण अंतरणों के मामले भी **(2004) 8 SCC 340** में प्रकाशित पूर्वोक्त निर्णय द्वारा पूर्णत: आच्छादित है। इस प्रकार, उन मामलों में भी जहाँ उपायुक्त की अनुमति के बिना समर्पण हुआ है, समर्पण के रूप में अंतरण के मामलों पर विचार करते हुए प्राधिकारी को छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 71A के अधीन भूमि के पुनर्स्थापन के लिए आवेदन दाखिल करने में अयुक्तियुक्त विलंब के बिंदु का परीक्षण करने के प्रयोजन से बेदखली की तिथि पर विचार करना होगा। मामला का परीक्षण **(2004)8 SCC 340** में प्रकाशित पूर्वोक्त निर्णय के आलोक में करना होगा।

(j) (2005)1 JLJR 98 में प्रकाशित निर्णय इस बिन्दु पर प्राधिकार है कि जबरन बेदखली भी छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 71A आकृष्ट करती है। उक्त मामला के अपीलार्थी द्वारा उठाया गया बिन्दु कि पुनर्स्थापन आवेदन विलंबित एवं परिसीमा द्वारा वर्जित था, इस माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर अस्वीकार किया गया था कि उक्त मामला के अपीलार्थी द्वारा अवर प्राधिकारियों के समक्ष ऐसा आधार समुचित रूप से नहीं रखा गया था और ऐसा अभिवचन करने के लिए अपीलार्थी को स्थापित करना था कि अभिलिखित रैयत कब बेदखल किया गया था।

(k) वर्तमान मामला में, यह गौर करना महत्वपूर्ण है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने बेदखली की तिथि नहीं दिया है और जाँच के बाद यह पाया गया था कि याची 18-19 वर्षों की अवधि के लिए संपत्ति पर काबिज था और यह प्रकटत: मेसर्स टिस्को लिमिटेड द्वारा निष्पादित दिनांक 21.8.1969 के रजिस्टर्ड पट्टा विलेख के फलस्वरूप था। याची का विनिर्दिष्ट मामला यह है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को मेसर्स टिस्को लिमिटेड के पक्ष में अभिलिखित अभिधारी द्वारा निष्पादित समर्पण के रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरूप काफी पहले वर्ष 1948 में बेदखल किया गया था। भूमि सुधार उप समाहर्ता ने दर्ज किया है कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को 1948 से बेदखल किया गया था और प्रकटत: प्राइवेट प्रत्यर्थियों को मेसर्स टिस्को लिमिटेड द्वारा बेदखल किया गया था और न कि याची द्वारा और याची संपत्ति पर उप-पट्टाधारी मात्र है। पूरे समय तक याची का विनिर्दिष्ट मामला यह था कि अभिलिखित अभिधारी को मेसर्स टिस्को लिमिटेड के पक्ष में निष्पादित समर्पण के रजिस्टर्ड विलेख द्वारा काफी पहले वर्ष 1948 में बेदखल किया गया था। अत:, संदेह नहीं है कि वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थी को काफी पहले वर्ष 1948 में संपत्ति से बेदखल किया गया था और यह याची का विनिर्दिष्ट मामला है। विद्वान भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा मामला के इस पहलू पर समुचित रूप से विचार किया गया है, किंतु विद्वान आयुक्त ने भूमि सुधार उप-समाहर्ता का आदेश अपास्त करते हुए भूमि सुधार उप समाहर्ता द्वारा दिए गए किसी निष्कर्ष अथवा कारण पर विचार नहीं किया है और मूल प्राधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी का आदेश अपास्त कर दिया था।

(i) वर्तमान मामला में, प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1948 में बेदखल किया गया था और पुनर्स्थापन आवेदन वर्ष 1986-87 में दाखिल किया गया था और पुनर्स्थापन आवेदन के परिशीलन से, जिसे दाखिल किया गया है और जो अभिलेख पर उपलब्ध है जिसे प्रत्यर्थी राज्य द्वारा सुनवाई के दौरान प्रस्तुत किया गया है, इसपर कोई चर्चा नहीं है कि प्राइवेट प्रत्यर्थीगण अथवा उनके पूर्वाधिकारी 39 वर्षों से क्या कर रहे थे और उक्त आवेदन के परिशीलन से प्रत्यर्थी राज्य भी भूमि के पुनर्स्थापन के लिए आवेदन में उल्लिखित बेदखली की किसी तिथि को इंगित नहीं कर सके थे। जहाँ तक प्राइवेट प्रत्यर्थियों के पक्ष

में जारी किराया रसीद का संबंध है, इसे कब्जा दर्शाने वाले दस्तावेज के रूप में इस पर विचार नहीं किया जा सकता है।

(m) इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर तथा इस पर तथ्य पर विचार करते हुए कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को काफी पहले वर्ष 1948 में बेदखल किया गया था, भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा दर्ज इस निष्कर्ष पर भी आयुक्त द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए विचार नहीं किया गया है और तद्नुसार आयुक्त द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है। परिसीमा/विलंब का बिन्दु मूल बिन्दु था जिस पर आयुक्त द्वारा समुचित रूप से विचार किया जाना था और मामला का अभिलेख दर्शाता है कि वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल याचिका अयुक्तियुक्त अवधि के परे ऐसे विलंब के लिए किसी स्पष्टीकरण के बिना थी और तद्नुसार **(2004) 8 SCC 340** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के निर्णयाधार की दृष्टि में समय वर्जित थी।

14. पूर्वोक्त निष्कर्षों की दृष्टि में, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और राजस्व अपील सं० 461 वर्ष 1995 में आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है।

माननीय अनिल कुमार चौधरी, न्यायमूर्ति

पलव मंडल

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No. 20 of 2006. Decided on 19th June, 2018.

सत्र विचारण सं० 234 वर्ष 2005 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 16.12.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 19.12.2005 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860–धाराएँ 363 एवं 366A–अवयस्क लड़की का अपहरण–दोषसिद्धि एवं दंडादेश–अ०सा० 7 के सिवाए इस मामला में परीक्षण किए गए किसी भी गवाह को अंतर्ग्रस्त अपराध में अभियुक्त–अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में कोई निजी जानकारी नहीं है–लिखित रिपोर्ट तथा दं०प्र०सं० की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा दर्ज उसके बयान के मुकाबले अ०सा० 7 के साक्ष्य में अंतर है– मामला की जड़ तक जाने वाले अनेक अंतर है–किसी तर्कसंगत कारण के बिना सूचक जो पीड़िता का पिता है ने महत्वपूर्ण सूचना रोक लिया कि किससे उसे जानकारी हुई कि अपीलार्थी इस मामला में अंतर्ग्रस्त था–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त। (पैरा 17)

अधिवक्तागण.–Mrs. J.K. Mazumdar, For the Appellant; Addl.PP., For the State.

न्यायालय द्वारा.–पक्षकारगण सुने गए।

2. यह अपील सत्र विचारण सं० 234 वर्ष 2005 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 16.12.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 19.12.2005 के दंडादेश से व्यथित अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन अपीलार्थी को भा०दं० सं० की धारा 366 A के अधीन तथा भा०दं०सं० की धारा 363 के अधीन दंडनीय अपराधों का

दोषी अभिनिर्धारित किया गया है और भा०दं०सं० की धारा 366 A के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आठ वर्षों का कठोर कारावास और भा० दं० की धारा 363 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

3. मामला की पीड़िता के पिता की लिखित रिपोर्ट में यथा उल्लिखित इस मामला के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि पीड़िता सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग लेने अपने पड़ोसी के घर गयी थी और चूँकि पीड़िता अपने घर नहीं लौटी थी, सूचक ने उसकी तलाश करना शुरू किया। सूचक को जानकारी हुई कि पीड़ित अपराह्न लगभग 6 बजे पड़ोसी के घर से चली गयी थी। सूचक को यह जानकारी भी हुई कि सहअभियुक्त राकेश कुमार राय ने पीड़िता अवयस्क लड़की के साथ विवाह करने के आशय से उसे फुसला कर ले गया है और घटना सूचक के घर और उसके पड़ोसी दीपक मुखर्जी के घर के बीच हुई जिसके घर पीड़िता सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने गयी थी। लिखित रिपोर्ट में यह अभिकथित किया गया है कि सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय को सूचक के घर के निकट घूमते देखा गया था। अपनी पुत्री को तलाश करने के क्रम में सूचक सह-अभियुक्त राकेश कुमार के घर गया और वहाँ से उसे जानकारी हुई कि राकेश कुमार राय भी गायब था। तलाशी के दौरान सूचक को जानकारी हुई कि अभियुक्त-अपीलार्थी पलव मंडल ने उक्त अपराध करने में सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय की मदद किया है। प्राथमिकी में यह भी उल्लिखित किया गया है कि सूचक अपनी पुत्री की तलाश करने में व्यस्त था, अत: रिपोर्ट दर्ज करने में विलंब हुआ था, जिसके आधार पर पुलिस ने परसूडीह (सुंदरनगर) पी०एस०केस सं० 166 वर्ष 2004 दर्ज किया और अन्वेषण किया। अन्वेषण पूरा करने पर पुलिस ने आरोप पत्र दाखिल किया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ०टी०सी० II, जमशेदपुर द्वारा 12 अगस्त 2005 को अभियुक्त अपीलार्थी के विरूद्ध भा० दं सं० की धाराओं 363/34 एवं 366 A/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप विरचित किया गया था और अभियुक्त के आरोप का दोषी नहीं होने का अभिवचन करने पर उसका विचारण किया गया था।

4. विचारण के क्रम में, अभियोजन ने दस्तावेजों को सिद्ध करने के अतिरिक्त कुल आठ गवाहों का परीक्षण किया किंतु अभियुक्तों की ओर से साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था। अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए आठ गवाहों में से अ०सा० 7 पीड़ित बालिका एकमात्र गवाह है जिसे घटना के बारे में निजी जानकारी है।

5. अ० सा० 7 पीड़िता ने कथन किया है कि 25.12.2005 को वह अपनी छोटी बहन ज्योति गुप्ता के साथ अपने मित्रों के घर गयी थी। कार्यक्रम अपराह्न लगभग 6 बजे समाप्त हुआ था। कार्यक्रम के समापन के बाद अ०सा० 7 अपनी मित्र सीमापाल को छोड़ने गयी जिसका घर उसी कॉलोनी में है। जब अ०सा० 7 घर लौट रही थी, गली में डॉ० चौधरी के घर के निकट सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय तथा अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल खड़े थे। सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय ने अ०सा० 7 को पकड़ लिया और उसको अपने साथ आने के लिए कहा। जब अ०सा० 7 ने शोर किया, सह-अभियुक्त ने उसका मुँह दबा दिया और अ० सा० 7 को धमकी दिया कि यदि वह उसके साथ नहीं आती है, वह उसके माता-पिता की हत्या कर देगा। तत्पश्चात सह अभियुक्त अ०सा० 7 को अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल की मोटरसाइकिल पर मानगो बस अड्डा ले गया और तब अभियुक्त अपीलार्थी उनको बस अड्डा में छोड़कर चला गया। अगले दिन सह-अभियुक्त अ०सा० 7 को डुमराँव ले गया और डुमराँव से राकेश कुमार राय अ०सा०7 को ट्रेन से अपनी बहन के घर भदोई ले गया और राकेश कुमार राय ने अपनी बहन

के घर में जबरन अ०सा०7 के साथ बलात्कार किया और अ०सा०7 को घर में बंद रखा। अगले दिन रात में राकेश कुमार राय का पिता वहाँ पहुँचा और अगली सुबह लगभग 6 बजे राकेश कुमार राय के पिता, उसके बहन–बहनोई अ०सा० 7 को मंदिर ले गए और राकेश कुमार राय ने जबरन अ०सा०7 के साथ विवाह संपन्न किया और जबरन उसके मस्तक पर सिंदूर लगाया। तत्पश्चात, सह अभियुक्त राकेश कुमार राय का पिता अ०सा०7 तथा सह अभियुक्त को जमशेदपुर लाया और पुलिस ने सह अभियुक्त राकेश कुमार राय को उसके घर से गिरफ्तार किया और उसे तथा अ०सा०7 को पुलिस थाना ले गयी। अ०सा०7 ने अपीलार्थी अभियुक्त पालव मंडल को पहचाना जो न्यायालय में उपस्थित था। अपने प्रतिपरीक्षण में अ०सा०7 ने कथन किया है कि सांस्कृतिक कार्यक्रम के समापन के बाद उसने अपनी छोटी बहन को अपने घर जाने और दरवाजा खुला रखने के लिए कहा और वह अपनी मित्र सीमा को उसके घर छोड़ने के बाद आएगी। अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 7 में, अ०सा०7 ने कथन किया है कि वह डॉ० चौधरी के घर के निकट गली में सह अभियुक्त राकेश कुमार राय से मिली और सह अभियुक्त राकेश कुमार राय उसे वहाँ से ले गया। अ०सा०7 घटना के पहले अभियुक्त–अपीलार्थी पलव मंडल का नाम नहीं जानती थी। यद्यपि उसने घटना के पहले अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल को अनेक बार देखा था। अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल मानगो बस अड्डा से लौट गया और बस अड्डा पहुँचने के बाद सह अभियुक्त राकेश कुमार राय ने उसे तुरन्त बस में बैठा दिया। बस में अन्य यात्री भी बैठे हुए थे। अ०सा० 7 ने किसी को प्रकट नहीं किया था कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय उसे फुसलाकर बलपूर्वक ले जा रहा था। बस डुमराँव रेलवे स्टेशन के निकट रूकी थी। रेलवे टिकट खरीदते समय, सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय अ॰ सा॰ 7 को पकड़े हुए था। उस समय भी, उसने किसी को यह नहीं बताया था कि सह–अभियुक्त उसे ले जा रहा था। उसे बेहोश किया गया था और वह समझने में अक्षम थी कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय उसे कहाँ ले जा रहा था। सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय की बहन के घर भदोई में सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय की बहन–बहनोई एवं संतानें रह रहे थे। अ०सा०7 सह अभियुक्त राकेश कुमार राय की बहन के घर दो दिन रही। घटना के बाद, वह पहली बार अपने माता–पिता से एम०जी०एम० अस्पताल, जमशेदपुर में मिली जब 29.12.2005 को अपराह्न लगभग 12.30 बजे उसका चेक अप चल रहा था। पुलिस ने अ०सा० 7 का बयान दर्ज किया किंतु वह दर्ज नहीं किया या जिसका कथन अ०सा० 7 द्वारा किया गया था। अ०सा० 7 ने पुलिस के समक्ष कथन किया कि घटना की तिथि पर अभियुक्त अपीलार्थी और सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय डॉ० चौधरी के घर के निकट गली में खड़े थे और सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय ने उसे उठा लिया और उसको अपने साथ आने को कहा और जब उसने शोर किया, सह–अभियुक्त राकेश कुमार राय ने उसका मुँह दबा दिया और उसको धमकाया कि वह उसके माता–पिता की हत्या कर देगा यदि वह उसके साथ नहीं आती है।

6. अ०सा०1 कन्हाई लाल गांगुली ने कथन किया है कि उसने सुना कि 25.12.2004 को पीड़िता अ०सा०7 अपने घर से गायब थी और 29.12.2004 को उसे उसके अपहर्ता के साथ सुन्दर नगर पुलिस थाना में पाया गया था। बाद में, उसे जानकारी हुई कि अभियुक्त अपीलार्थी अ०सा०7 और उसके अपहर्ता को अपनी मोटरसाइकिल में ले गया था। अपने प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया है कि उसने वही अभिसाक्ष्य दिया है जो उसने सुना है।

7. अ०सा० 2 रीना गुप्ता पीड़िता की माता है। उसने कथन किया है कि 25.12.2004 को पीड़िता पार्टी में भाग लेने गयी थी किंतु लौटी नहीं थी। अ०सा० 2 ने अ०सा० 7 की तलाश किया। सह–अभियुक्त

राकेश कुमार राय भी अपने घर में उपस्थित नहीं था। अ०सा० 7 सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय के साथ भाग गयी थी। अभियुक्त अपीलार्थी ने सहअभियुक्त राकेश कुमार राय को अ०सा० 7 को ले जाने में मदद किया। अ०सा० 2 ने अभियुक्त अपीलार्थी को पहचाना। अपने प्रतिपरीक्षण में अ०सा० 2 ने कथन किया कि उसकी पुत्री ने उसको घटना के बारे में बताया था। अ०सा० 7 को घटना के चार दिन बाद बरामद किया गया था।

8. अ०सा० 3 राना राय ने कथन किया है कि वह घटना के बारे में कुछ नहीं जानता है।

9. अ०सा० 4 सुभाष बहेरा को प्रतिपरीक्षण के लिए पेश किया गया था।

10. अ०सा० 5 चंद्र मोहन प्रसाद ने कथन किया है कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय अ०सा० 7 को ले गया है। अ०सा० 5 संबंध में पीड़िता का दादा है। पलव मंडल ने उक्त घटना में सह अभियुक्त राकेश कुमार राय का मदद किया था। अपने प्रति परीक्षण में अ०सा०5 ने कथन किया है कि उसने केवल सुनी सुनायी बात कहा है।

11. अ०सा० 6, भुनेश्वर प्रसाद मामला का सूचक एवं पीड़िता (अ०सा०7) का पिता है। अ०सा० 6 ने कथन किया है कि घटना 25.12.2004 को अपराह्न 5-6 बजे हुई। लगभग 13 वर्षीया अ०सा०7 सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग लेने अपने मित्र के घर गयी थी, किंतु वहाँ से नहीं लौटी थी। अ०सा० 2 ने सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय को उनके घर के निकट मटरगश्ती करते देखा था। अ०सा० 6 सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय के घर गया और पाया कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय भी अपने घर में उपस्थित नहीं था। पूछताछ करने पर अ०सा० 6 को पता चला कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय अ०सा०7 के साथ विवाह करने के आशय से अ०सा०7 के साथ भाग गया है। अभियुक्त अपीलार्थी ने सह अभियुक्त राकेश कुमार राय की उसको फुसलाने के बाद अ०सा०7 को ले जाने में मदद किया है। घटना दीपू मुखर्जी एवं सूचक के घर के बीच हुई। उसने अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल को न्यायालय में पहचाना। उसके द्वारा सिद्ध किए जाने पर लिखित रिपोर्ट प्रदर्श 2 के रूप में चिन्हित की गयी थी। अपने प्रतिपरीक्षण में, अ०सा०6 ने कथन किया कि 25.12.2004 को ही उसे जानकारी हुई कि राकेश अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल की मदद से उसको फुसलाकर अ०सा०7 को ले गया है। भूना सिंह ने इसके बारे में अ०सा०6 को सूचित किया किंतु अ०सा०6 ने इस पर पूरा विश्वास नहीं किया था और इसलिए उसने उस दिन पुलिस को सूचित नहीं किया था।

12. अ०सा०8 नरेश गहलोथ मामला का अन्वेषण अधिकारी है। उसने कथन किया है कि 28.12.2004 को सूचक की लिखित रिपोर्ट पुलिस थाना में प्राप्त की गयी थी। उसके द्वारा सिद्ध किए जाने पर लिखित रिपोर्ट पर पृष्ठांकन प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया है और औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 5 चिन्हित की गयी है। उसने अपने द्वारा मामला में किए गए अन्वेषण के बारे में भी कथन किया है। उसने घटनास्थल का वर्णन किया है जो सुन्दर नगर के मिल क्षेत्र के पूर्व से 300 गज की दूरी पर है। गुड्डु और डॉ० चौधरी के घर के बीच की गली उत्तर में अवस्थित किंगडम होटल की ओर ले जाती है। उस स्थान पर घटना की तिथि एवं समय पर सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय ने अ०सा०7 को बुलाया और वहाँ से वे टहलते हुए किंगडम होटल के निकट गए और मुन्ना के ग्रिल कारखाना के पीछे वे मोटरसाइकिल पर बैठे। पुलिस ने सहअभियुक्त राकेश कुमार राय को सुन्दर नगर चौक से गिरफ्तार किया और अ०सा०7 भी वहाँ पायी गयी थी। अपने प्रति परीक्षण में पैराग्राफ 8 में उसने कथन किया है कि उसने 28.12.2004 को पूर्वाह्न 11 बजे अन्वेषण शुरू किया किंतु पुनः कहा कि उसने केस डायरी में अन्वेषण शुरू करने के समय का उल्लेख नहीं किया है। अ०सा० 6 ने अ०सा० 8 के समक्ष कथन नहीं

किया था कि भूना सिंह ने उसे कहा कि अभियुक्त अपीलार्थी सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय और अ०सा०7 के साथ जा रहा था। अ०सा० 7 ने अपने बयान में पुलिस के समक्ष पलव मंडल के नाम का उल्लेख नहीं किया है किंतु मंडल के बारे में कथन किया। अ०सा०7 ने अ०सा०8 के समक्ष कथन नहीं किया था कि घटना की तिथि पर अभियुक्त अपीलार्थी सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय के साथ डॉ० चौधरी के घर के निकट था और अ०सा० 8 के समक्ष कथन नहीं किया था कि सह अभियुक्त राकेश गुप्ता ने उसको उठा लिया। अ०सा० 7 ने पुलिस को लिखित आवेदन दिया कि राकेश ने उसे कहा कि यदि वह उसके साथ नहीं जाती है, वह उसके माता-पिता की हत्या कर देगा। उस लिखित आवेदन में अ०सा०7 ने इस अपील के अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल का नाम प्रकट नहीं किया था।

13. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद अभियुक्त अपीलार्थी का बयान दं०प्र०सं० की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था जिसमें उसने अपने विरूद्ध साक्ष्य में सामने आने वाली परिस्थितियों से इनकार किया।

14. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को विचार में लेते हुए विद्वान अवर न्यायालय ने अभियुक्त अपीलार्थी को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया जैसा पहले ही उपदर्शित किया गया है।

15. अपीलार्थी की विद्वान अधिवक्ता श्रीमती जे० मजूमदार ने निवेदन किया कि प्राथमिकी दर्ज करने में तीन दिनों का अत्यधिक विलंब हुआ था, अत: प्राथमिकी ने अपनी स्वत: स्फूर्तता खो दिया है। आगे यह निवेदन किया गया था कि यद्यपि प्राथमिकी विलंब के बाद दर्ज की गयी है किंतु सूचक द्वारा अभिकथित अपराध में अभियुक्त अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में अपनी जानकारी के स्रोत के संबंध में प्राथमिकी में उल्लेख नहीं किया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि यद्यपि अ०सा०7 के साथ बलात्कार किए जाने का अभिकथन है, फिर भी सह अभियुक्त राकेश कुमार राय की बहन अथवा उसके परिवार के किसी सदस्य को अभियुक्त के रूप में दोषारोपित नहीं किया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अभिलेख पर साक्ष्य बिलकुल मौजूद नहीं है कि अभियुक्त अपीलार्थी को जानकारी थी कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय द्वारा उसको फुसलाने के बाद अ०सा०7 को ले जाया गया था आगे निवेदन किया गया था कि अ०सा०7 का परिसाक्ष्य अंतरों से भरा पड़ा है और उसने समय-समय पर अपना परिसाक्ष्य भी बदला है। पुलिस के समक्ष अपने प्रथम बयान में अथवा तुरन्त तत्पश्चात उसने सह अभियुक्त राकेश कुमार राय द्वारा उसको फुसलाकर अपने साथ ले जाने में मदद करने में अभियुक्त अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में प्रकट नहीं किया था और उसने पहली बार विचारण के दौरान अभियुक्त अपीलार्थी को आलिप्त किया। अत:, यह निवेदन किया गया है कि घटना के बारे में निजी जानकारी होने का मामला के एकमात्र गवाह का परिसाक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अभियोजन मामला के मुताबिक सूचक घटना के बाद प्राथमिकी दर्ज करने के पहले अ०सा०7 से नहीं मिला था। भूना सिंह जिससे सूचक को पहली बार अभियुक्त अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में पता चला और जो अ०सा०6 के बयान के मुताबिक घटना का स्वतंत्र चश्मदीद गवाह था और इसलिए, अभियोजन मामला का महत्वपूर्ण गवाह था को न तो गवाह के रूप में आरोप पत्र में उद्धृत किया गया था और न ही मामला में गवाह के रूप में उसका परीक्षण किया गया था, अत: यह निवेदन किया गया है कि यह सुयोग्य मामला है जहाँ अभियुक्त अपीलार्थी को संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त किया जाए।

16. दूसरी ओर, विद्वान अपर पी०पी० ने आक्षेपित निर्णय का बचाव किया और निवेदन किया कि अ०सा०7 ने स्पष्ट रूप से उसको फुसलाकर ले जाने में सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय का सामान्य

आशय अग्रसर करने में अभियुक्त अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में कथन किया है और इसलिए विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से अभियुक्त अपीलार्थी को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया, अत: अपील गुणागुणरहित होने के कारण खारिज किया जाए।

17. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के बाद मैं पाता हूँ कि अ०सा०7 के सिवाए इस मामला में परीक्षण किए गए किसी गवाह को इस मामला में अंतर्ग्रस्त अपराध में अभियुक्त अपीलार्थी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में कोई निजी जानकारी नहीं है। लिखित रिपोर्ट तथा दं०प्र०सं० की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा दर्ज उसके बयान के मुकाबले अ०सा०7 के साक्ष्य में अंतर है। जैसा अ०सा०8 द्वारा अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ 10 में कथन किया गया है, उसने अ०सा०8 को इस मामले के अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल के नाम का उल्लेख नहीं किया था। यद्यपि अपने मुख्य परीक्षण में उसने कथन किया है कि पलव मंडल सह-अभियुक्त राकेश कुमार राय के साथ खड़ा था जब वह अपनी मित्र सीमा को छोड़ने के बाद लौटी और वहाँ सह अभियुक्त राकेश कुमार राय ने उसे पकड़ लिया किंतु अपने प्रतिपरीक्षण में उसने भिन्न कहानी बताया। अपने प्रतिपरीक्षण के पैराग्राफ 7 में उसने कथन किया कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय पहले उसे डॉ० चौधरी के घर के निकट गली में मिला और उसको कुछ दूर ले गया किंतु वह नहीं कह सकती थी कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय उसको कितनी दूर ले गया और बाद में उसने अपने प्रतिपरीक्षण में यह कथन करके अपना बयान सुधारा कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय उसको उठाकर ले गया, अत: यह विवक्षित करता है कि पलव मंडल सह अभियुक्त राकेश कुमार राय के साथ गली में उपस्थित नहीं था जिसने अभिकथित रूप से अ०सा०7 को पकड़ लिया था। यह तथ्य अन्वेषण अधिकारी द्वारा अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ 4 में भी संपुष्ट किया गया है जिसमें उसने कथन किया कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय और अ०सा० 7 कुछ दूर तक टहले और तत्पश्चात वे पलव मंडल की मोटरसाइकिल पर गए। आगे मामला की जड़ तक जाने वाले अनेक अंतर हैं। अ०सा०7 ने पहली बार अभियुक्त अपीलार्थी का नाम न्यायालय में प्रकट किया किंतु अन्वेषण अधिकारी के समक्ष दिए गए अपने बयान में उसका नाम प्रकट नहीं किया था। यद्यपि, प्राथमिकी दर्ज करने में विलंब हुआ था और अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ 5 में अ०सा० 6 सूचक ने स्पष्टत: कथन किया है कि 25.12.2004 को शाम में उसे पता चला कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय पलव मंडल की मदद से उसकी पुत्री को ले गया था जो प्राथमिकी दर्ज करने में विलंब के लिए दिया गया कारण है जो विश्वासोत्पादक प्रतीत नहीं होता है। किसी तर्कसंगत कारण के बिना, सूचक जो पीड़िता का पिता है ने महत्वपूर्ण सूचना रोक लिया है कि किससे उसे जानकारी हुई कि पलव मंडल इस मामला में अंतर्ग्रस्त था और यह अविश्वसनीय है कि वह तीन दिनों के भीतर ऐसी महत्वपूर्ण सूचना भूल गया जब उसके पास समस्त सूचना याद करने का पर्याप्त समय था क्योंकि प्राथमिकी सूचक द्वारा घटना की जानकारी के तुरन्त बाद दर्ज नहीं की गयी थी। स्थान जहाँ से सह अभियुक्त राकेश कुमार राय और अ०सा०7 को पुलिस द्वारा पकड़ा गया था के संबंध में अंतर है क्योंकि अ०सा० 7 ने कथन किया कि गिरफ्तारी सह अभियुक्त राकेश कुमार राय के पिता के घर से की गयी और अ०सा०8 अन्वेषण अधिकारी ने कथन किया कि गिरफ्तारी सुन्दर नगर चौक से की गयी थी। साक्ष्य में पूर्वोक्त अंतरों को ध्यान में रखते हुए और किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति में कि अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल को कोई जानकारी थी कि सह अभियुक्त राकेश कुमार राय अवयस्क बालिका को उसको फुसलाने के बाद ले गया था, मेरे मत में, यह उपयुक्त मामला है जहाँ अभियुक्त अपीलार्थी को भा०दं०सं० की धाराओं 363 एवं 366 A के अधीन उसके विरूद्ध विरचित दोनों आरोपों से दोषमुक्त किया जाए।

अत: सत्र विचारण सं० 234 वर्ष 2005 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 16.12.2005 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दिनांक 19.12.2005 का दंडादेश विधि में असंपोषणीय होने के कारण अपास्त किया जाता है और अभियुक्त अपीलार्थी पलव मंडल को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है।

18. अभिलेख का परिशीलन प्रकट करता है कि अपीलार्थी 8.6.2018 से अभिरक्षा में है। उसकी दोषमुक्ति की दृष्टि में उसे अभिरक्षा से तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामला में उसका निरोध आवश्यक नहीं है।

19. इस निर्णय की प्रति तुरन्त विद्वान अवर न्यायालय को भेजी जाए।

20. परिणामस्वरूप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

मो० अनवर अली

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 324 of 2018. Decided on 4th April, 2018.

झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011–धारा 27–झारखंड नगरपालिका निर्वाचन नियमावली, 2012–नियम 6(1)(ख) एवं नियम 6(1)(ग)–नगरपालिका चुनाव–अनुसूचित जाति के लिए सीट का आरक्षण–अधिनियम, 2011 अथवा नियमावली 2012 में इस प्रभाव का प्रावधान नहीं है कि किसी नगर निगम में उस कोटि की महत्तम जनसंख्या को मात्र विचार में लेकर किसी कोटि को आरक्षण दिया जाएगा–नगर निगम चुनाव के प्रयोजन से किसी चुनाव क्षेत्र को आरक्षित करने के लिए नियत प्रक्रिया/पद्धति प्रावधानित की गयी है–प्रत्येक आम चुनाव में प्रत्येक कोटि के लिए सीटों के नियतकरण के लिए प्रक्रिया नियमावली, 2012 में विनिर्दिष्टत: प्रावधानित की गयी है और नगर निगमों के लिए होने वाले आम चुनाव के लिए उस प्रक्रिया का अनुसरण करके प्रत्यर्थी राज्य निर्वाचन आयोग, झारखंड ने अध्यक्ष, गिरीडीह नगर निगम का पद अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित किया है–यदि चुनाव आसन्न है अथवा चल रहा है, न्यायालय को चुनाव प्रक्रिया रोकने के लिए मध्यक्षेप नहीं करना चाहिए–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 11, 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.–Mr. J.J.Sanga, For the Petitioner; Mr. Sumeet Gadodia, For Resp. Nos. 3 & 4.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका सचिव, राज्य निर्वाचन आयोग, झारखंड द्वारा जारी दिनांक 3.1.2018 की अधिसूचना सं० 175/2012 के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा क्रमांक सं०3 पर गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष का सीट अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित किया गया है। आगे, गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष की सीट पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित करने के लिए निर्वाचन आयोग, झारखंड को निर्देश देने की प्रार्थना की गयी है क्योंकि गिरीडीह नगर निगम में पिछड़ा वर्ग की जनसंख्या अनुसूचित

जाति की तुलना में उच्चतर है। याची ने उस क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग की वास्तविक जनसंख्या के मुताबिक अध्यक्ष के सीट के लिए आरक्षण रोस्टर विनिश्चित किए जाने तक गिरीडीह नगर निगम के चुनाव हेतु अग्रसर होने से प्रत्यर्थियों को अवरूद्ध करने की प्रार्थना भी किया है।

2. याची सचिव, राज्य निर्वाचन आयोग, झारखंड द्वारा जारी दिनांक 3.1.2018 की आक्षेपित अधिसूचना सं० 175/2012 से व्यथित है जिसके द्वारा गिरीडीह नगर निगम के मेयर/अध्यक्ष का सीट आगामी नगरपालिका चुनाव के लिए अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित की गयी है। याची के अनुसार, चूँकि उक्त पद वर्ष 2012 में किए गए पूर्व नगरपालिका चुनाव में पिछड़ा वर्ग उम्मीदवार के लिए आरक्षित किया गया था, उसे पिछड़ा वर्ग उम्मीदवार होने के नाते उक्त पद के लिए होने वाले नगरपालिका चुनाव लड़ने से वंचित इस तथ्य के बावजूद किया गया है कि वर्ष 2011 में हुए अंतिम जनगणना के मुताबिक पिछड़ा वर्ग की जनसंख्या झारखंड राज्य में और गिरीडीह नगर निगम क्षेत्र में भी उच्चतम थी।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री जे०जे० संगा निवेदन करते हैं कि झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम, 2011' के रूप में निर्दिष्ट) 9.2.2012 से प्रभाव में आया। अधिनियम, 2011 की धारा 27 अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, पिछड़ा वर्ग एवं महिला के लिए मेयर/अध्यक्ष की सीट का आरक्षण प्रावधानित करती है। अधिनियम, 2011 की धारा 27 की उपधारा (3) के मुताबिक, राज्य सरकार को प्रत्येक दस वर्ष बाद धारा 27(2) के खंड (a) के अधीन पद के आरक्षण से संबंधित मामला का पुनर्विलोकन करना होगा। गिरीडीह नगर निगम के मेयर/अध्यक्ष की सीट का अंतिम चुनाव वर्ष 2012 में किया गया था जिसमें सीट पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित किया गया था और पाँच वर्ष बाद आरक्षण रोस्टर का पुनर्विलोकन प्राधिकारियों के लिए अनुज्ञेय नहीं है। आम जनगणना प्रत्येक 10 वर्ष में संचालित की जाती है और इसलिए जब तक पश्चातवर्ती आम जनगणना द्वारा जनसांख्यिकी नहीं बदल जाती है। अंतिम जनसंख्या के आधार पर कोटि विशेष के लिए आरक्षित सीट को किसी अन्य कोटि के लिए आरक्षित नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन भी किया गया है कि यदि राज्य निर्वाचन आयोग समस्त नगर निगमों के लिए आरक्षित सीटों के चक्रानुक्रम में एकरूपता बनाए रखना चाहता है, इसे तीन क्रमवार अवधि के लिए अनुसूचित जनजाति उम्मीदवारों के लिए राँची नगर निगम में मेयर का सीट आरक्षित नहीं करके इसे बनाए रखना चाहिए था। इस प्रकार, प्रत्यर्थी झारखंड राज्य निर्वाचन आयोग की कार्रवाई भारत के संविधान के अनुच्छेद 243 T सह-पठित 243 P(g) के प्रावधानों और अधिनियम, 2011 की धारा 27(3) के विपरीत जाता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 243 T नगरपालिकाओं में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं महिलाओं का आरक्षण प्रावधानित करता है किंतु यह निदेशात्मक है और आरक्षण चक्रानुक्रम करते हुए राज्य सरकार के लिए सटीकता के साथ सीटों का चक्रानुक्रम करना आवश्यक है। चूँकि जिला निर्वाचन अधिकारी (नगर निगम)-सह-उपायुक्त, गिरीडीह द्वारा दिए गए विवरण के मुताबिक गिरीडीह नगर निगम में पिछड़ा वर्ग की जनसंख्या किसी अन्य कोटि की जनसंख्या की तुलना में उच्चतम है, उक्त सीट केवल पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित करने की आवश्यकता है।

4. समानांतर स्तंभ में, राज्य निर्वाचन आयोग, झारखंड के विद्वान अधिवक्ता श्री सुमित गडोडिया निवेदन करते हैं कि अधिनियम, 2011 उस संबंध में विरचित नियमों के अध्यधीन राज्य निर्वाचन आयोग के निर्देशन, पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण के अधीन चक्रानुक्रम द्वारा आरक्षित सीट का आवंटन प्रावधानित करता

है। झारखंड सरकार ने झारखंड नगरपालिका चुनाव नियमावली, 2012 (इसमें इसके बाद 'नियमावली, 2012' के रूप में निर्दिष्ट) विरचित किया है और नियमावली, 2012 में दी गयी पद्धति अपनाकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग के संबंध में सीटें आरक्षित की जाती है और राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा फॉर्म 2, भाग-एक में इसे प्रविष्ट किया जाता है। नियमावली, 2012 के नियम 6(1)(ख) के मुताबिक, नगर निगमों को क्रम में लगाया जाना है और फॉर्म 2, भाग दो में प्रविष्ट किया जाना है और तत्पश्चात नियम 6(1)(ग) के मुताबिक चक्रानुक्रम के रूप में आरक्षण का सिद्धांत लागू करने के प्रयोजन से नगर निगमों को उक्त नगर निगम में विद्यमान प्रत्येक कोटि के उच्चतम जनसंख्या को विचार में लेकर व्यवस्थित किया जाना है। यह निवेदन भी किया गया है कि वर्ष 2015 के दौरान द्वितीय नगरपालिका चुनाव के लिए आरक्षण रोस्टर का अनुसरण किया गया था जिसमें केवल तीन नगर निगमों का आंशिक चुनाव किया गया था और उक्त आरक्षण रोस्टर लागू करते हुए नगर निगम की जनसंख्या फॉर्म 2 भाग तीन में प्रत्येक कोटि के लिए घटते क्रम अर्थात उच्चतम से निम्नतम में व्यवस्थित की गयी है। घटते क्रम में प्रत्येक कोटि की जनसंख्या व्यवस्थित करने के बाद प्रत्येक नगर निगम में आयोग द्वारा आरक्षण रोस्टर लागू किया गया है। इसी आरक्षण रोस्टर का शेष पाँच नगर निगमों के प्रयोजन से वर्ष 2018 में होने वाले नगरपालिका चुनाव में किया जा रहा है। आगामी नगर निगम चुनाव के लिए मेयर/अध्यक्ष की कुल आठ सीटें हैं जिनमें से चार सीटें आरक्षित हैं और चार सीटें अनारक्षित हैं, सीटों का वितरण निम्नलिखित है: अनुसूचित जाति-1, अनुसूचित जनजाति-2, पिछड़ा वर्ग-1 और सामान्य (अनारक्षित)-4। आगे यह निवेदन किया गया है कि आठ सीटों में से तीन सीटों अर्थात देवघर नगर निगम, धनबाद नगर निगम एवं चास नगर निगम के लिए चुनाव वर्ष 2013 में किए गए पूर्व चुनाव की निरंतरता में वर्ष 2015 में किया गया था और चक्रानुक्रम द्वारा आरक्षण का सिद्धांत लागू करते हुए धनबाद नगर निगम में पिछड़ा वर्ग के संबंध में मेयर/अध्यक्ष का एक सीट आरक्षित किया गया था। वर्तमान चुनाव केवल शेष पाँच नगर निगमों के लिए किया जाना है। यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थियों ने नियमावली, 2012 के अधीन यथा प्रतिपादित रोस्टर बिंदु चक्रानुक्रम और उसमें उद्धृत उदाहरणों के सिद्धांत का कठोरतापूर्वक अनुसरण किया है। चूँकि गिरीडीह जिला में अनुसूचित जाति की जनसंख्या राज्य में नगर निगमों के बीच तीसरी उच्चतम जनसंख्या है और अनुसूचित जाति की उच्चतम जनसंख्या वाले पूर्विक दो नगर निगमों को पहले ही पिछड़ा वर्गों के पक्ष में आरक्षित किए जाने के लिए पहचाना गया था, इसलिए अनुसूचित जाति आरक्षण रोस्टर गिरीडीह नगर निगम को शिफ्ट कर दिया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि गिरीडीह नगर निगम के संबंध में अनुसूचित जाति कोटि के लिए अध्यक्ष/मेयर की सीटें आरक्षित करने में प्रत्यर्थी राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा अवैधता नहीं की गयी है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अधिनियम, 2011 की धारा 27(3) सीटों के चक्रानुक्रम से संबंधित नहीं है। धारा 27(3) आरक्षण की सीमा के संबंध में प्रत्येक दस वर्ष में पुनर्विलोकन करने के लिए राज्य सरकार की सामर्थ्यकारी शक्ति है जैसा अधिनियम, 2011 की धारा 27(2) के अधीन प्रावधानित किया गया है। जहाँ तक चक्रानुक्रम के प्रावधान का संबंध है, इसे अधिनियम, 2011 की धारा 27(2)(f) के अधीन प्रावधानित किया गया है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याची ने अधिसूचना सं० 175/2012 का अभिखंडन इस सीमा तक इप्सित किया है कि गिरीडीह नगरनिगम के मेयर/अध्यक्ष का सीट अनुसूचित जाति कोटि के लिए आरक्षित किया गया है। याची के विद्वान

अधिवक्ता के तर्क का मुख्य धार यह है कि गिरीडीह नगर निगम में किसी अन्य कोटि की जनसंख्या की तुलना में पिछड़ा वर्ग की जनसंख्या उच्चतम है और उक्त परिस्थितियों के अधीन, अनुसूचित जाति के पक्ष में गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष के पद का आरक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 243(T) सहपठित झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011 की धारा 27 का आज्ञा के मुताबिक नहीं है। इसके विपरीत झारखंड राज्य निर्वाचन आयोग के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि आक्षेपित अधिसूचना प्रकाशित करते हुए नियमावली, 2012 के अधीन यथा प्रतिपादित चक्रानुक्रम के रोस्टर बिंदु का सिद्धांत एवं उसमें उद्धृत उदाहरणों का कठोरतापूर्वक अनुसरण किया गया है।

6. चूँकि वर्तमान मामला में, याची ने अधिनियम, 2011 अथवा नियमावली, 2012 की वैधता अथवा अधिकार को चुनौती नहीं दिया है, इस न्यायालय के समक्ष मामला इस विवाद्यक तक सीमित है कि क्या प्रत्यर्थीगण आरक्षण रोस्टर लागू करते हुए अधिनियम, 2011 अथवा नियमावली, 2012 के प्रावधान से विपथित हुए हैं अथवा इसके परे गए हैं।

7. मामला के गुणागुण पर विचार करते हुए, नगरपालिका चुनावों में आरक्षण के सिद्धांत पर विचार करने वाले प्रासंगिक प्रावधान का परिशीलन करना समुचित होगा। झारखंड राज्य ने झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011 अधिनियमित किया जिसकी धारा 27 मेयर/अध्यक्ष के पद/सीट का आरक्षण प्रावधानित करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*''27. **मेयर एवं अध्यक्ष के पद का आरक्षण.**–(1) नगरपालिकाओं में मेयर एवं अध्यक्ष का पद निम्नलिखित तरीके से आरक्षित किया जाएगाः*

2(a) राज्य में मेयर और अध्यक्ष, यथास्थिति के कुल पदों का लगभग किंतु पचास प्रतिशत से परे नहीं

(i) अनुसूचित जातियों,

(ii) अनुसूचित जनजातियों,

(iii) पिछड़े वर्गों, और

(iv) महिलाओं के लिए आरक्षित किया जाएगा।

(b) राज्य में मेयर एवं अध्यक्ष, यथास्थिति, के पदों के लिए अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए इस प्रकार आरक्षित पदों की संख्या राज्य के भीतर मेयर एवं अध्यक्ष, यथास्थिति, के पदों की कुल संख्या के यथासंभव निकट उसी अनुपात में होगी जितना अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या राज्य की कुल जनसंख्या में है और ऐसे पद राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा इसके द्वारा विहित तरीके से विभिन्न नगरपालिकाओं को चक्रानुक्रम द्वारा आवंटित किए जाएँगे।

(c) अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए पदों के आरक्षण के बाद राज्य के भीतर मेयर एवं अध्यक्ष, यथास्थिति, के पद के लिए पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित किए जाने वाले पदों की संख्या अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन–जातियों एवं पिछड़े वर्गों के लिए पचास प्रतिशत आरक्षण की कुल सीमा के अंतर्गत विहित तरीके में ऐसी संख्या होगी; और ऐसे पद राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा इसके द्वारा विहित तरीके से चक्रानुक्रम द्वारा शेष नगरपालिकाओं को आवंटित किए जाएँगे।

(d) खंड (a) के अधीन आरक्षित पदों की कुल संख्या के यथासंभव निकट किंतु पचास प्रतिशत के परे नहीं अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों, यथास्थिति, की महिलाओं के लिए आरक्षित किए जाएँगे।

(e) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों के लिए अनारक्षित पदों की कुल संख्या के यथासंभव निकट किंतु पचास प्रतिशत के परे नहीं महिलाओं के लिए आरक्षित किए जाएँगे।

(f) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों तथा अनारक्षित कोटि के लिए आरक्षित पदों की ऐसी कुल संख्या राज्य निर्वाचन आयोग के निर्देशन, नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण के अधीन चक्रानुक्रम द्वारा विभिन्न नगरपालिकाओं को इस तरीके से आवंटित किया जा सकता है जैसा इसके द्वारा विहित किया जा सकता है।

***स्पष्टीकरण.**–संदेह हटाने के लिए एतद् द्वारा यह घोषित किया जाता है कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों तथा महिलाओं के लिए पदों के आरक्षण के प्रयोजन से चक्रानुक्रम के सिद्धांत इस अधिनियम के आरंभ के बाद किए गए प्रथम चुनाव से आरंभ होगा।*

(3) राज्य सरकार उपधारा (2) के खंड (a) के अधीन पदों के आरक्षण से संबंधित मामला का प्रत्येक दस वर्ष पर पुनर्विलोकन करेगी।

(4) उपधारा (2) के खंड (a) के अधीन पदों का आरक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 334 में विनिर्दिष्ट अवधि के अवसान पर समाप्त हो जाएगा।''

8. झारखंड सरकार ने नियमावली, 2012 भी विरचित किया है। नियमावली, 2012 का नियम 6 प्रक्रिया प्रावधानित करता है कि किस प्रकार प्रत्येक नगरपालिका के संबंध में सीटों को आरक्षित किया जाना है। अन्य बातों के साथ यह प्रावधानित किया गया है कि पहली बार में, प्रत्येक आरक्षित कोटि की जनसंख्या की तुलना में राज्य की कुल जनसंख्या को विचार में लेते हुए एस०सी० और एस०टी० के पक्ष में सीटों की कुल संख्या आरक्षित की जानी है। एस०सी० एवं एस०टी० कोटियों के पक्ष में आरक्षित किए जाने वाले सीटों को विनिश्चित करने के लिए राज्य में प्रत्येक कोटि की कुल जनसंख्या को विचार में लिया जाता है और सीटों की कुल संख्या द्वारा गुणा किया जाता है और राज्य की कुल जनसंख्या द्वारा भाग दिया जाता है। तत्पश्चात, कुल आरक्षण की 50% सीमा के अध्यधीन पिछड़े वर्गों के लिए सीटें आरक्षित की जाती हैं। आगे यह प्रावधानित किया गया है कि 50% की सीमा के अध्यधीन महिला उम्मीदवार को भी क्षैतीजीय आरक्षण दिया जाना है।

9. वर्तमान में, झारखंड राज्य में कुल आठ नगर निगम हैं। उक्त प्रक्रिया लागू करते हुए, अध्यक्ष के आठ सीटों में से चार सीटें आरक्षित की गयी थी और चार सीटें अनारक्षित है जिनका अनुपात है: एस०टी०–2, एस०सी०–1, बी०सी०–1 तथा सामान्य–4। नियमावली 2012 में आगे प्रावधानित किया गया है कि प्रत्येक कोटि की जनसंख्या घटते क्रम में पृथक रूप से व्यवस्थित की जानी होगी और इसे फॉर्म 2 भाग तीन में प्रविष्ट किया जाना है और तत्पश्चात चक्रानुक्रम आधार पर उच्चतम जनसंख्या को आरक्षण दिया जाना है।

10. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि नगरपालिका के लिए पहला आम चुनाव वर्ष 2013 में किया गया था और नियमावली 2012 के नियम 6 के प्रावधानों को लागू करते हुए उक्त चुनाव में

आरक्षण रोस्टर बिंदुवार अर्थात (i) अनुसूचित जाति, (ii) अनुसूचित जनजाति, (iii) पिछड़ा वर्ग एवं (iv) सामान्य लागू किया गया था।

11. द्वितीय नगरपालिका चुनाव के लिए आरक्षण रोस्टर वर्ष 2015 में ही तैयार किया गया था जब तीन नगर निगमों अर्थात देवघर नगर निगम, धनबाद नगर निगम और चास नगर निगम का चुनाव होना था। नियमावली 2012 के नियम 6 के मुताबिक, द्वितीय आम चुनाव के लिए आरक्षण रोस्टर (i) अनुसूचित जनजाति, (ii) पिछड़ा वर्ग (iii) सामान्य, (iv) अनुसूचित जाति था। उक्त आरक्षण रोस्टर का अनुसरण करके द्वितीय नगरपालिका चुनाव का प्रथम संवर्ग पहले ही 2015 में संचालित किया गया था। शेष पाँच नगर निगमों का चुनाव वर्ष 2018 में होना था जिसके लिए इसी आरक्षण रोस्टर का अनुसरण किया जा रहा है। द्वितीय नगरपालिका चुनाव के लिए आरक्षण रोस्टर के मुताबिक, अनुसूचित जनजाति की महत्तम जनसंख्या पर विचार करते हुए राँची नगर निगम अनुसूचित जनजाति कोटि के लिए आरक्षित किया गया है। चूँकि पिछड़ा वर्ग की उच्चतम जनसंख्या धनबाद नगर निगम में थी और इसका चुनाव पहले ही इसे पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित करके वर्ष 2015 में किया गया था, 2018 चुनाव में पिछड़ा वर्ग के लिए सीट आरक्षित नहीं किया गया है। रोस्टर के मुताबिक, तत्पश्चात सीट सामान्य कोटि के लिए अनारक्षित रखा जाना था और तद्नुसार सामान्य कोटि की उच्चतम जनसंख्या विचार में ली गयी थी और यह पाया गया था कि सामान्य कोटि की उच्चतम जनसंख्या धनबाद नगर निगम में है जिसे पहले ही पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित किया गया था। अगली उच्चतम जनसंख्या विचार में ली गयी थी और यह पाया गया था कि राँची नगर निगम अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित किया गया था। सामान्य कोटि के लिए तीसरी उच्चतम जनसंख्या देवघर नगरपालिका में पायी गयी थी किंतु उक्त निगम का चुनाव वर्ष 2015 में किया गया था और इसे सामान्य कोटि के लिए अनारक्षित रखा गया था। तत्पश्चात, सामान्य/अन्य कोटि की उच्चतम जनसंख्या चास नगर निगम में है किंतु चूँकि चास नगर निगम वर्ष 2015 में रोस्टर बिंदु सं०2 लागू करके सामान्य अन्य कोटि के लिए अनारक्षित रखा गया था, राज्य निर्वाचन आयोग ने पाया कि सामान्य कोटि के लिए द्वितीय उच्चतम जनसंख्या आदित्यपुर नगर निगम में है और आदित्यपुर नगर निगम के मेयर/अध्यक्ष के लिए सीट अनारक्षित अर्थात सामान्य कोटि के लिए रखा गया है। तत्पश्चात, अनुसूचित जाति के लिए पद आरक्षित रखने के लिए आरक्षण रोस्टर बिन्दु 4 लागू किया जाना था। चूँकि अनुसूचित जाति की उच्चतम जनसंख्या धनबाद नगर निगम में थी और इसे रोस्टर बिंदु 2 लागू करके पिछड़ा वर्ग के लिए पहले ही आरक्षित किया गया था, राज्य निर्वाचन आयोग ने नगर निगमों में अनुसूचित जाति की द्वितीय उच्चतम जनसंख्या का परीक्षण किया। नगर निगमों में अनुसूचित जाति की द्वितीय उच्चतम जनसंख्या का परीक्षण करते हुए यह पाया गया था कि अनुसूचित जाति की द्वितीय उच्चतम जनसंख्या राँची नगर निगम में है किंतु रोस्टर बिंदु 1 लागू करके अनुसूचित जनजाति कोटि को पहले ही आवंटित किया गया था उक्त परिस्थितियों के अधीन, राज्य निर्वाचन आयोग आगे गया और पाया कि राज्य में अनुसूचित जाति की तृतीय उच्चतम जनसंख्या गिरीडीह नगर निगम में थी और तद्नुसार रोस्टर आरक्षण लागू किया और गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष का सीट अनुसूचित जाति को आवंटित किया गया था। इस प्रकार, मैं गिरीडीह नगर निगम को अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित घोषित करने में राज्य निर्वाचन आयोग के निर्णय में कोई दुर्बलता नहीं पाता हूँ। अधिनियम, 2011 में अथवा नियमावली 2012

में इस प्रभाव का ऐसा प्रावधान नहीं है कि किसी नगर निगम में उस कोटि की महत्तम जनसंख्या मात्र को विचार में लेकर किसी कोटि को आरक्षण दिया जाएगा। इसके विपरीत, नगरनिगम चुनाव के प्रयोजन से किसी चुनाव क्षेत्र को आरक्षित करने के लिए नियत प्रक्रिया/पद्धति प्रावधानित की गयी है।

12. याची के विद्वान अधिवक्ता का अगला प्रतिवाद यह है कि अधिनियम 2011 की धारा 27 की उपधारा (3) के अधीन प्रावधानित विनिर्दिष्ट प्रावधान की दृष्टि में, किसी आरक्षण का पुनर्विलोकन केवल दस वर्ष बाद किया जाना होगा और चूँकि अधिनियम, 2011 के अधीन पूर्व चुनाव वर्ष 2013 में किया गया था, प्रत्यर्थियों को केवल पाँच वर्ष बाद इसका पुनर्विलोकन करना अनुज्ञेय नहीं है और चूँकि पूर्व चुनाव में गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष का सीट पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षित किया गया था, वर्तमान चुनाव में भी उक्त सीट को पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित करने की आवश्यकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता वस्तुतः यह प्रतिवाद करना चाहते हैं कि किसी आम नगरपालिका चुनाव में कोटि के लिए आरक्षित सीट केवल दस वर्ष बाद बदली जा सकती है। मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के उक्त तर्क में कोई सार नहीं पाता हूँ। धारा 27 की उपधारा (3) पुरःस्थापित करते हुए विधानमंडल का आशय यह है कि प्रत्येक दस वर्ष बाद राज्य सरकार को उस अवधि के दौरान प्रचलित प्रासंगिक परिस्थितियों को विचार में लेना होगा और यह विधि संशोधित कर सकती है यदि इसे आवश्यक पाया जाता है। किंतु, वर्तमान मामला में राज्य सरकार ने आक्षेपित अधिसूचना के तहत आरक्षण पर विचार करने वाली विधि का पुनर्विलोकन नहीं किया है, बल्कि अधिनियम 2011 एवं नियमावली 2012 के अधीन अधिकथित प्रक्रिया का कठोरतापूर्वक अनुसरण करके चक्रानुक्रम का सिद्धांत लागू किया गया है। प्रत्येक आम-चुनाव में प्रत्येक कोटि के लिए सीटों के नियतकरण के लिए प्रक्रिया विनिर्दिष्टतः नियमावली 2012 में प्रावधानित की गयी है और नगर निगमों के होने वाले आम चुनाव के लिए उस प्रक्रिया का अनुसरण करके प्रत्यर्थी राज्य निर्वाचन आयोग, झारखंड ने गिरीडीह नगर निगम के अध्यक्ष का पद अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित किया है। इसके अतिरिक्त, यह सुस्थापित है कि यदि चुनाव आसन्न है अथवा हो रहा है, न्यायालय को चुनाव प्रक्रिया रोकने के लिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यदि ऐसा करने की अनुमति दी जाती है, कोई चुनाव कभी नहीं होगी क्योंकि किसी न किसी के पास चुनाव रोकने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायालय के पास जाने के लिए कोई न कोई बहाना होगा।

13. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, मैं वर्तमान रिट याचिका में सार नहीं पाता हूँ और इसके गुणागुणरहित होने के कारण तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

सुरेश प्रसाद

बनाम

श्री सूरज कुमार भदानी

W.P.(C) No. 6181 of 2009. Decided on 30th April, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–आदेश VI नियम 17–वाद पत्र का संशोधन–करार के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री के लिए वाद–वाद के किसी चरण पर, सुनवाई के अंतिम चरण

पर भी, अभिवचनों में संशोधन की अनुमति दी जा सकती है–सामान्यतः वाद में विचारण आरंभ होने के बाद अभिवचनों में संशोधन की अनुमति नहीं दी जाएगी–यदि अभिवचनों में संशोधन वाद में अंतर्ग्रस्त वास्तविक विवाद के समाधान के लिए आवश्यक है, इसकी अनुमति दी जाएगी किंतु इसे अन्य पक्ष पर प्रतिकूलता कारित नहीं करना चाहिए और वाद की प्रकृति नहीं बदलना चाहिए– विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक यह होगा कि क्या वादी करार के विनिर्दिष्ट पालन का हकदार है या नहीं; केवल करार की वैधता, करार के अधीन अपने भाग के पालन के लिए वादी की तैयारी एवं इच्छा और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 के अधीन परिसीमा का परीक्षण न्यायालय द्वारा किया गया है–विक्रय विलेख जिसे करार के निष्पादन के पहले निष्पादित किया गया था की वैधता की परीक्षा विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में नहीं किया जा सकता है–यदि प्रस्तावित संशोधनों की अनुमति दी जाती है, यह अभिधान वाद संस्थित करने के लिए वादी द्वारा प्रकट किया गया वाद हेतुक परिवर्तित कर देगा–संशोधन के लिए आवेदन प्रकटतः भ्रामक था–रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 7, 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–(2006) 12 SCC 119—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Amit Kumar Das, For the Petitioner; Mr. Indrajit Sinha, For the Respondent.

आदेश

याची, अभिधान वाद सं॰ 112 वर्ष 2007 में वादी, दिनांक 5.11.2009 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा वाद पत्र में संशोधन विचारण न्यायाधीश द्वारा अस्वीकार किया गया है।

2. अभिधान वाद सं॰ 112 वर्ष 2007 याची द्वारा दिनांक 1.6.2007 के करार के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री के लिए और 30,25,000/- रुपयों के शेष प्रतिफल के भुगतान पर वादी के पक्ष में विक्रय विलेख रजिस्टर करने के लिए प्रतिवादी को निर्देश के लिए संस्थित किया गया था। प्रतिवादी द्वारा पक्ष अर्थात रविन्द्र नाथ चक्रवर्ती जिसका दिनांक 1.6.2007 के करार के अधीन अनुसूची संपत्ति में 1/5 अविभाजित हिस्सा था के असंयोजन का अभिवचन करते हुए लिखित कथन दाखिल करके प्रतिवाद किया गया था। प्रतिवादी ने अभिवचन किया है कि अनुसूची संपत्ति में 4/5 हिस्सा के संबंध में उसको अपना नियत एटॉर्नी नियुक्त करते हुए उसके पक्ष में रविन्द्र नाथ चक्रवर्ती, विरेन्द्र नाथ चक्रवर्ती, श्रीमती लीला चक्रवर्ती और अहिन्द्र नाथ चक्रवर्ती द्वारा सामान्य मुख्तारनामा निष्पादित किया गया था। दिनांक 1.6.2007 के करार के निष्पादन से यह प्राख्यान करते हुए इनकार किया गया है कि यह कूटरचित एवं मनगढ़ंत दस्तावेज था। लिखित कथन के पैराग्राफ सं॰ 19 में प्रतिवादी ने अभिवचन किया है कि अनुसूची A संपत्ति का एक भाग, अधिक विशेषतः पूर्वोक्त व्यक्तियों का 4/5 वाँ हिस्सा पहले ही उसके द्वारा अंतरित किया गया है। वादी के अनुसार, लिखित बयान में इस प्रकथन ने वाद पत्र में संशोधन के लिए आवेदन की दाखिली आवश्यक बनाया। दिनांक 8.7.2009 के संशोधन आवेदन के माध्यम से वादी वादपत्र के पैराग्राफ सं॰ 15 के बाद नया पैराग्राफ जोड़ने का आशय रखता है:–

> *''15A कि रविन्द्र नाथ चक्रवर्ती, विरेन्द्र नाथ चक्रवर्ती, श्रीमती लीला चक्रवर्ती एवं अहिन्द्र नाथ चक्रवर्ती द्वारा तात्पर्यित रूप से निष्पादित किया गया और इस वाद के प्रतिवादी सं॰ 1 उनके एटॉर्नी सूरज कुमार भदानी द्वारा हस्ताक्षरित किया गया मेसर्स विनायक होम मेकर्स, इसके भागीदारों कौशल किशोर भदानी, सूरज कुमार भदानी (प्रतिवादी सं॰ 1) एवं सुजीत कुमार भदानी द्वारा प्रतिनिधित्व किए गए भागीदार फर्म*

के पक्ष में विलेख सं० 3843 वाला दिनांक 17.5.2005 का विक्रय विलेख अकृत एवं शून्य है, इस पर कृत्य नहीं किया गया है और इसने प्रतिवादी सं० 2 के पक्ष में कोई अभिधान प्रदत्त नहीं किया है और वादी पर बाध्यकारी नहीं है।''

पूर्वोक्त भागीदार सूरज कुमार भदानी को विक्रय की उक्त करार की पूरी नोटिस एवं जानकारी थी।''

3. वादी ने वाद में एक अन्य प्रार्थना सम्मिलित करना इप्सित किया है:–

''C/1. घोषणा की डिक्री के लिए कि प्रतिवादी सं० 2 के पक्ष में अपने एटॉर्नी के माध्यम से रविन्द्र नाथ चक्रवर्ती एवं अन्य द्वारा तात्पर्यित रूप से निष्पादित दिनांक 17.5.2005 का विलेख सं० 3843 वाला विक्रय विलेख अकृत एवं शून्य है। इस पर कृत्य नहीं किया गया है और प्रतिवादी सं० 2 के पक्ष में कोई अभिधान प्रदत्त नहीं किया है और वादी पर बाध्यकारी नहीं है।''

4. यह संप्रेक्षित करते हुए कि अनुसूची भूमि पहले ही वाद के संस्थापन के पहले बेची गयी है, विचारण न्यायाधीश ने दिनांक 5.11.2009 के आक्षेपित आदेश द्वारा वादपत्र में संशोधन अस्वीकार कर दिया है।

5. यह प्रतिवाद करते हुए कि मेसर्स विनायक होम मेकर्स जिसमें वह भागीदार है के पक्ष में प्रतिवादी द्वारा वाद संपत्ति के अभिकथित अंतरण को प्रभाव कभी नहीं दिया गया था और न ही निष्पादन मामला सं० 6 वर्ष 2008 में अभिवचनित किया गया था, याची के विद्वान अधिवक्ता श्री अमित कुमार दास निवेदन करते हैं कि नए तथ्य के पश्चातवर्ती प्रकटन की दृष्टि में वादपत्र में संशोधन आवश्यक बन गया।

6. उक्त के विरूद्ध प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री इंद्रजीत सिन्हा निवेदन करते हैं कि यदि वाद पत्र में प्रस्तावित संशोधनों को करने की अनुमति दी जाती है, न केवल वाद की प्रकृति बदलेगी, यह वाद के संस्थापन के लिए वादी द्वारा प्रकट किए गए वाद हेतुक को बदलने के तुल्य भी होगा जो विधि में अनुज्ञेय नहीं है।

7. सी०पी०सी० का आदेश VI नियम 17 वाद पत्र में संशोधन की अनुमति देने के लिए न्यायालय को व्यापक शक्ति प्रदत्त करता है और अब यह सुस्थापित है कि वाद के किसी चरण पर, अंतिम सुनवाई के चरण पर भी, अभिवचनों में संशोधन करने की अनुमति दी जा सकती है। किंतु, सी०पी०सी० का आदेश VI नियम 17 का परन्तुक अभिवचनों में संशोधन करने की अनुमति देने की न्यायालय की शक्ति निर्बंधित करता है। यह प्रावधानित करता है कि सामान्यत: वाद में विचारण आरंभ होने के बाद अभिवचनों में संशोधन की अनुमति नहीं दी जाएगी। सी०पी०सी० का आदेश VI नियम 17 का परन्तुक आज्ञापक अभिनिर्धारित किया गया है। किंतु, न्यायिक उद्घोषणाओं के माध्यम से, सी०पी०सी० का आदेश VI नियम 17 के परन्तुक के अधीन अंतर्विष्ट पूर्वोक्त निर्बंधन के प्रति अपवाद काढ़कर निकाले गए हैं। यदि वाद पत्र में संशोधन वाद में अंतर्ग्रस्त वास्तविक विवाद के समाधान के लिए आवश्यक है किंतु इसे अन्य पक्ष के प्रति प्रतिकूलता कारित नहीं करना चाहिए और वाद की प्रकृति नहीं बदलना चाहिए। **आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम पायोनियर बिल्डर्स, ए०पी०, (2006)12 SCC 119,** में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

''21. अभिवचनों का संशोधन शासित करने वाले सिद्धांत सुस्थापित हैं। सी० पी० सी० का आदेश VI नियम 17 अभिवचनों के संशोधन पर विचार करता है और प्रावधानित करता है कि न्यायालय कार्यवाही के किसी चरण पर पक्ष को अभिवचन ऐसे तरीके से तथा ऐसे निबंधनों पर जो न्यायोचित हो सकता है अभिवचनों को परिवर्तित अथवा संशोधित करने की अनुमति दे सकता है और ऐसे समस्त संशोधन किए जाएँगे जैसा पक्षों के बीच विवादित वास्तविक प्रश्नों को विनिश्चित करने के प्रयोजन से आवश्यक हो सकता है। यह पूर्व से प्रचलित है कि यद्यपि समस्त परिस्थितियों के अधीन

अधिकार बतौर संशोधन का दावा नहीं किया जा सकता है। फिर भी संशोधन अनुज्ञात करने की शक्ति व्यापक है, और न्याय के हित में कार्यवाही के किसी चरण पर इसका प्रयोग किया जा सकता है। यह समान रूप से सुस्थापित है कि जब तक अन्य पक्ष के प्रति गंभीर अन्याय अथवा अपूरणीय हानि कारित किए जाने की संभावना नहीं है, न्यायालय को उदारवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और न कि हाइपरटेक्निकल दृष्टिकोण, विशेषतः ऐसे मामला में जहाँ अन्य पक्ष की व्यय के साथ क्षतिपूर्ति की जा सकती है। उदारतापूर्वक अभिवचनों में संशोधन अनुज्ञात करने का मुख्य उद्देश्य कार्यवाहियों की बहुलता से बचना है। (देखें: ले० जे० लीच एण्ड कं० लि० बनाम जार्डिन स्किनर एन्ड कं०, गंगाबाई बनाम विजय कुमार एवं बी० के० नारायण पिल्लई बनाम परमेश्वरन पिल्लई) इसके बावजूद, एक सुभिन्न वाद हेतुक दूसरे के स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है और न ही संशोधन द्वारा वाद का विषयवस्तु बदला जा सकता है। मा से म्या बनाम माँग मो हनंग में प्रिवी काउन्सिल के निर्णय से निम्नलिखित उद्धरण सारगर्भित रूप से सिद्धांत संक्षिप्त करता है जिसे अभिवचनों में संशोधन के लिए प्रार्थना पर विचार करते हुए ध्यान में रखा जा सकता है: (IApp 216-17)

''न्यायालय के समस्त सिद्धांत और कुछ नहीं बल्कि न्याय का समुचित प्रशासन सुरक्षित करने के लिए आशयित प्रावधान हैं और इसलिए यह आवश्यक है कि उन्हें उस प्रयोजन को पूरा करना चाहिए और इसके अध्यधीन होना चाहिए ताकि संशोधन की पूर्ण शक्तियों का उपभोग किया जाना होगा और सदैव उदारतापूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिए किंतु इसके बावजूद एक सुमिन्न वाद हेतुक को दूसरे द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने के लिए अथवा संशोधन द्वारा वाद का विषयवस्तु बदलने के लिए शक्ति नहीं दी गयी है।''

8. विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक यह होगा कि क्या वादी करार के विनिर्दिष्ट पालन का हकदार है या नहीं; केवल करार की वैधता, करार के अधीन अपने भाग का पालन करने के लिए वादी की तैयारी एवं इच्छा और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 के अधीन परिभाषाओं का परीक्षण न्यायालय द्वारा किया गया है। विक्रय विलेख जिसे दिनांक 1.6.2007 के करार के निष्पादन के पहले निष्पादित किया गया था के वैधता की परीक्षा विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में नहीं की जा सकती है। यदि प्रस्तावित संशोधनों की अनुमति दी जाती है, जैसा प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही प्रकार से प्रतिवाद किया गया है, यह अभिधान वाद सं० 112 वर्ष 2007 संस्थित करने के लिए वादी द्वारा प्रकट किया गया वाद हेतुक बदल देगा। वस्तुतः, विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद विक्रय विलेख के रद्दकरण के लिए वाद में संपरिवर्तित हो जाएगा, यदि प्रस्तावित संशोधनों की अनुमति दी जाती है। वादी द्वारा उठाए जाने के लिए इप्सित विवाद को एक अन्य कोण से भी देखा जा सकता है। वादी दिनांक 1.6.2007 के करार का विनिर्दिष्ट पालन इप्सित कर रहा है और उसे आशंका है कि विक्रय विलेख निष्पादित करके, शायद नियत एटॉर्नी की अपनी हैसियत में, प्रतिवादी ने दिनांक 1.6.2007 के करार के फलस्वरूप वादी को प्रवाहित किसी अधिकार को pre-empt करने का प्रयास किया है। किंतु अभिधान वाद सं० 112 वर्ष 2007 में अभिवचन प्रकट करेंगे कि प्रतिवादी ने दिनांक 17.5.2005 के विक्रय विलेख के फलस्वरूप संपत्ति मेसर्स विनायक होम मेकर्स को बेचा है जिसमें वह स्वयं भागीदार है। स्पष्ट रूप से प्रतिवादी ने दिनांक 17.5.2005 के विक्रय विलेख के फलस्वरूप अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित किया है और यदि ऐसा है, दिनांक 17.5.2005 के विक्रय विलेख का निष्पादन आधार नहीं हो सकता है जिस पर वाद विफल हो सकता है। संशोधन के लिए आवेदन प्रकटतः भ्रामक था।

9. उक्त तथ्यों में, मैं दिनांक 5.11.2009 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ और तद्नुसार रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

लिलू हेम्ब्रम

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 4003 of 2006. Decided on 11th April, 2018.

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949–धाराएँ 27 एवं 33–भूमि की बंदोबस्ती का रद्दकरण–संपत्ति जो याची को आवंटित की गयी थी का उपयोग याची द्वारा इसको 'बाड़ी' में संपरिवर्तित करके किया गया था–संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम की धारा 33 की प्रयोज्यता की पुरोभाव्य शर्त यह है कि बंदोबस्ती केवल तब रद्द की जा सकती है यदि इसे परती भूमि की बंदोबस्ती की तिथि से 5 वर्षों की अवधि के भीतर कृषि कार्य में उपयोग नहीं लाया गया है–स्वीकृत रूप से, इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति में 'बाड़ी' पायी गयी थी जिसका अर्थ है कि संपत्ति कृषि कार्य में उपयोग में लायी गयी है–संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन शक्ति के प्रयोग में बंदोबस्ती रद्द करने का अवसर प्रत्यर्थी को नहीं था, वह भी इस अभिकथन पर कि बंदोबस्ती के लिए आवश्यक अनुमति सब डिविजनल अधिकारी के न्यायालय से प्राप्त नहीं की गयी थी–आक्षेपित आदेश में निष्कर्ष निरीक्षण रिपोर्ट के विपरीत हैं–भूमि की बंदोबस्ती के रद्दकरण के लिए आधार, जिसके लिए याची को धारा 33 के अधीन नोटिस जारी किया गया था, निरीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक भी सत्य नहीं पाया गया था–आक्षेपित आदेश पारित करते हुए प्राधिकारी द्वारा निरीक्षण रिपोर्ट पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Durga Charan Mishra, For the Petitioner; Mr. Ashish Kumar Thakur, For the Respondents.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री दुर्गा चरण मिश्रा सुने गए।

2. प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित एस०सी० (एल०एन्ड सी०) के ए०सी० श्री आशीष कुमार ठाकुर सुने गए।

3. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:–

(i) मौजा कटन्की, जिला जामतारा के दाग सं० 369 का भाग होने के नाते खाता सं० 54 के अंतर्गत 2 एकड़ मापवाली भूखंड, जिसे याची के पिता अर्थात स्व० पाँचू हेम्ब्रम के पक्ष में विधि के अनुरूप बंदोबस्त किया गया था, पर सरकारी उपयोग अथवा आवश्यकता, यदि हो, के लिए निर्माण नहीं करने के लिए प्रत्यर्थी सं० 2 को निर्देश जारी करने के लिए;

(ii) आगे प्रत्यर्थी सं० 3 द्वारा आर० एम० केस सं० 3 वर्ष 2002-03 में पारित दिनांक 13.3.2003 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 जो बंजर भूमि, यदि पाँच वर्ष के भीतर इसपर खेती नहीं की जाती है, की बंदोबस्ती अपास्त करने के लिए एकमात्र प्रावधान है के अधीन यथा अधिकथित विधि के प्रासंगिक प्रावधान का समुचित अधिमूल्यन किए बिना बंदोबस्ती के 33 वर्ष बाद पूर्वोक्त बंदोबस्ती रद्द की गयी है।

(iii) इस तथ्य की दृष्टि में कि याची अपने जीवनयापन के लिए प्रश्नगत भूखंड पर निर्भर था, सरकारी कार्यालयों आदि के निर्माण के लिए प्रश्नगत भूमि के उपयोग के लिए अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए संबंधित प्रत्यर्थी को निर्देश जारी करने के लिए;

(iv) याची को उपयुक्त वैकल्पिक भूखंड आवंटित करके अथवा कुछ धनीय मुआवजा का भुगतान करके क्षतिपूर्ति करने के लिए संबंधित प्रत्यर्थी को निर्देश जारी करने के लिए।

4. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि 15.20 एकड़ कुल क्षेत्र में से भूखंड सं० 369 में दो एकड़ भूमि की बंदोबस्ती ग्राम कटंकी, जिला जामतारा के प्रधान द्वारा संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 27 के अधीन रिट याचिका के परिशिष्ट 1 में यथा अंतर्विष्ट दिनांक 5.3.1972 के पट्टा के तहत की गयी थी। वह निवेदन करते हैं कि आर०एम० केस सं० 3/2002-03 में पारित दिनांक 23.2.2003 के आक्षेपित आदेश द्वारा पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 33 के अधीन याची के पक्ष में की गयी बंदोबस्ती रद्द करते हुए अंतिम आदेश पारित किया गया था। याची ने रिट याचिका के पैराग्राफ सं० 19 में विनिर्दिष्ट बयान दिया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

''याची कथन करता है कि आक्षेपित आदेश पारित करने के पहले किसी विशेषज्ञ अथवा कृषिशास्त्री द्वारा यह पता लगाने के लिए कि क्या प्रश्नगत भूमि खेती के अधीन लायी गयी है या नहीं, समुचित सत्यापन/निरीक्षण नहीं किया गया है।''

5. इस बयान के अनुसरण में, इस न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी को विद्वान सबडिविजनल अधिकारी, जामतारा से आर०एम० केस सं० 3/2002-03 का अभिलेख प्रस्तुत करने तथा पूरक शपथ पत्र के रूप में निरीक्षण रिपोर्ट दाखिल करने के लिए कहते हुए दिनांक 16.1.2018 का आदेश पारित किया गया था। तद्नुसार, प्रत्यर्थियों द्वारा पूरक शपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें हलका कर्मचारी की निरीक्षण रिपोर्ट की प्रति के साथ अंचलाधिकारी, जामतारा की निरीक्षण रिपोर्ट की प्रति दाखिल की गयी है।

6. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि निरीक्षण रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि संपत्ति जिसे याची को आवंटित किया गया था का उपयोग याची द्वारा इसको 'बाड़ी' में संपरिवर्तित करके किया गया था। वह यह निवेदन भी करते हैं कि हलका कर्मचारी की निरीक्षण रिपोर्ट से यह प्रतीत होता है कि याची को संपत्ति पर काबिज पाया गया था। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम की धारा 33 की प्रयोज्यता के लिए पुरोभाव्य शर्त यह है कि इसे केवल तब रद्द किया जा सकता है यदि बंदोबस्ती की तिथि से पाँच वर्षों की अवधि के भीतर इसे कृषि कार्य हेतु उपयोग में नहीं लाया जाता है। वह निवेदन करते हैं कि चूँकि इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति में 'बाड़ी' पाया गया था जिसका अर्थ है कि संपत्ति खेती के अधीन लायी गयी है, अत: संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन शक्ति के प्रयोग में बंदोबस्ती रद्द करने का अवसर प्रत्यर्थियों के पास नहीं था।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि रिट याचिका के परिशिष्ट 1 में यथा अंतर्विष्ट बंदोबस्ती पट्टा जिसे याची को जारी किया गया है, संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रावधानों का अनुसरण करते हुए जारी नहीं किया गया है और तद्नुसार, विधि की दृष्टि में इसका मूल्य नहीं है। वह निवेदन करते हैं कि बंदोबस्ती रद्द करने के लिए प्राधिकारी द्वारा सही

प्रकार से संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया गया है। किंतु, तर्क के दौरान और आक्षेपित आदेश से प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता सिद्ध नहीं कर सके थे कि आक्षेपित आदेश पारित करने का कारण यह था कि स्वयं बंदोबस्ती विधि की दृष्टि में अवैध था। प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र के माध्यम से निवेदन किया है कि बंदोबस्ती दस्तावेज जो रिट याचिका के परिशिष्ट 1 पर संलग्न है, संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 27 के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना जारी किया गया था। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि उक्त बंदोबस्ती अवैध है। किंतु यह तथ्य कि प्रश्नगत संपत्ति याची के कब्जा में है और इसे खेती करके 'बाड़ी' में संपरिवर्तित किया गया है, इसे प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा विवादित नहीं किया जा सका था।

8. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार करने के बाद, यह न्यायालय आक्षेपित आदेश को उस सीमा तक जहाँ तक यह याची से संबंधित है अभिखंडित करके रिट याचिका निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से अनुज्ञात करने का इच्छुक है:–

(i) आक्षेपित कार्यवाही के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि दिनांक 23.2.2003 के आदेश के अनुसरण में याची को नोटिस जारी किया गया था जिसमें यह दर्ज किया गया है कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन बंदोबस्ती के रद्दकरण के लिए प्रस्ताव पारित किया गया है और इस आदेश से आगे यह प्रतीत होता है कि यह दर्ज किया गया है कि बंजर भूमि की बंदोबस्ती अन्य बातों के साथ साथ काफी पहले याची को की गयी है किंतु यह अभिकथित किया गया था कि भूमि की प्रकृति बंजर भूमि की प्रकृति से बदली नहीं गयी है।

(ii) दिनांक 23.2.2003 के आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि याची के पक्ष में की गयी बंदोबस्ती की विधिकता एवं वैधता विवादित नहीं थी किंतु कार्यवाही संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन बंदोबस्ती के रद्दकरण के लिए थी।

(iii) संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 27 जो बंजर भूमि की बंदोबस्ती पर विचार करती है का पठन निम्नलिखित है:–

> *''27. विहित फॉर्म में पट्टा द्वारा की जानेवाली बंजर भूमि की बंदोबस्ती– बंजर भूमि की बंदोबस्ती विहित फॉर्म में पट्टा अथवा अमलनामा द्वारा की जाएगी। पट्टा अथवा अमलनामा चार प्रतियों में तैयार की जाएगी, एक प्रति संबंधित रैयत को दी जाएगी, एक प्रति उपायुक्त को भेजी जाएगी, एक प्रति जमीन्दार को भेजी जाएगी और चौथी प्रति ग्राम प्रधान अथवा मूल रैयत, यथास्थिति, द्वारा अपने पास रखी जाएगी।''*

(iv) संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 जो बंदोबस्ती के रद्दकरण पर विचार करती है का पठन निम्नलिखित है:–

> *''33. बंजर भूमि की बंदोबस्ती अपास्त किया जाना यदि पाँच वर्षों के भीतर इस पर खेती नहीं की जाती है–यदि बंदोबस्त की गयी भूमि बंदोबस्ती की तिथि से पाँच वर्ष की अवधि के भीतर खेती के अधीन नहीं लायी गयी है, इस स्थिति में, उपायुक्त को जमाबन्दी रैयत, ग्राम प्रधान, मूल रैयत अथवा जमीन्दार, यथास्थिति, द्वारा दिए गए आवेदन पर उपायुक्त को बंदोबस्ती को अपास्त करने और ऐसी पुनर्बंदोबस्ती करने की छूट है जैसा इस अधिनियम अथवा किसी विधि अथवा संथाल परगना में विधि का बल रखने वाले किसी चीज के अधीन अनुज्ञेय है।''*

(v) इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन बंदोबस्ती रद्द की जा सकती है केवल यदि उक्त अधिनियम की धारा 33 के अवयव संतुष्ट किए जाते हैं।

(vi) दिनांक 23.2.2003 के आदेश के अनुसरण में याची को जारी पूर्वोक्त कारण बताओ नोटिस के अनुसरण में, याची ने अपना उत्तर दाखिल किया है और याची के विरूद्ध लगाए गए अभिकथन से इनकार किया है और निवेदन किया है कि भूमि का उपयोग 'मकई' की खेती सहित खेती के लिए किया जा रहा है।

(vii) तत्पश्चात बंदोबस्ती के रद्दकरण का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

(viii) आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि याची के पक्ष में की गयी बंदोबस्ती को संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन शक्ति के प्रयोग में रद्द करना यह उल्लेख करते हुए इप्सित किया गया था कि याची प्राधिकारी को संतुष्ट नहीं कर सका था कि बंदोबस्ती के लिए आवश्यक अनुमति सबडिविजनल अधिकारी के न्यायालय से प्राप्त की गयी थी यद्यपि दिनांक 23.2.2003 के आदेश में ऐसा अभिकथन नहीं किया गया है जिसके अनुसरण में उक्त अधिनियम की धारा 33 के अधीन याची को नोटिस जारी की गयी थी।

(ix) निरीक्षण रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि संपत्ति जिसे याची को आवंटित किया गया था का उपयोग याची द्वारा इसको 'बाड़ी' में संपरिवर्तित करके किया गया था। आगे हलका कर्मचारी की निरीक्षण रिपोर्ट से यह प्रतीत होता है कि याची को संपत्ति पर काबिज पाया गया था। संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 की प्रयोज्यता के लिए पुरोभाव्य शर्त यह है कि बंदोबस्ती केवल तब रद्द की जा सकती है यदि इसे बंजर भूमि की बंदोबस्ती की तिथि से पाँच वर्षों की अवधि के भीतर कृषि कार्य हेतु उपयोग में नहीं लाया जाता है। स्वीकृत रूप से, इस मामला में अंतर्ग्रस्त संपत्ति में 'बाड़ी' पाया गया था जिसका अर्थ है कि संपत्ति कृषि कार्य हेतु उपयोग में लायी गयी है। अतः संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन शक्ति के प्रयोग में बंदोबस्ती रद्द करने का अवसर प्रत्यर्थियों के पास नहीं था, वह भी इस अभिकथन पर कि सबडिविजनल अधिकारी के न्यायालय से बंदोबस्ती की आवश्यक अनुमति प्राप्त नहीं की गयी थी। दिनांक 23.2.2003 के आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि याची के विरूद्ध ऐसा अभिकथन नहीं किया गया है।

(x) आगे, आक्षेपित आदेश में दर्ज निष्कर्ष कि संपत्ति पर खेती कुछ दिन पहले की गयी थी, निरीक्षण रिपोर्ट से समर्थन नहीं पाता है जिसे प्रत्यर्थियों द्वारा पूरक प्रति शपथ पत्र के साथ दाखिल किया गया है। बल्कि निरीक्षण रिपोर्ट में विनिर्दिष्ट निष्कर्ष है कि संपत्ति जो याची को बंदोबस्त की गयी थी, याची द्वारा बाड़ी में बदली गयी थी किंतु तिथि उल्लिखित नहीं की गयी है जिस पर इसे बाड़ी में बदला गया था।

(xi) पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में, आर०एम० केस सं० 3 वर्ष 2002-03 में पारित दिनांक 13.3.2003 का आक्षेपित आदेश विकृत है। आक्षेपित आदेश में निष्कर्ष निरीक्षण रिपोर्ट के विपरीत हैं और कि आक्षेपित आदेश याची के पक्ष में की गयी बंदोबस्ती को ही चुनौती देते हुए पारित किया गया है जिसके लिए दिनांक 23.2.2003 के आदेश में उल्लेख नहीं है जिसके अनुसरण में कार्यवाही आरंभ करने का नोटिस याची को जारी किया गया था प्रकटतः, संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन बंदोबस्ती के रद्दकरण के लिए कार्यवाही आरंभ की गयी थी जो केवल उसमें

उल्लिखित आधारों पर भूमि की बंदोबस्ती का रद्दकरण प्रावधानित करती है। यह न्यायालय पाता है कि भूमि की बंदोबस्ती के रद्दकरण के लिए आधार, जिसके लिए संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 33 के अधीन याची को नोटिस जारी किया गया था, निरीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक सत्य नहीं पाए गए थे और उक्त निरीक्षण रिपोर्ट पर प्राधिकारी द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करते हुए समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था।

9. मामला के पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और आर०एम० केस सं०3 वर्ष 2002-03 में सबडिविजनल अधिकारी, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 13.3.2003 का आक्षेपित आदेश केवल उस सीमा तक जहाँ तक यह याची से संबंधित है, एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

रौद्र रोहित मल्लिक

बनाम

रोहिणी दास मल्लिक

W.P.(C) No. 3508 of 2016. Decided on 14th May, 2018.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955–धारा 24–वाद कालीन भरण-पोषण के रूप में 20,000/- रुपया प्रति माह भुगतान करने का निर्देश–गणितीय सटीकता के साथ पत्नी को भुगतेय अंतरिम पोषण का निर्धारण न्यायालय द्वारा नहीं किया जा सकता है–परीक्षा यह है कि क्या पत्नी को अधिनिर्णीत अंतरिम भरण-पोषण उसकी आवश्यकताओं एवं पक्षों के दर्जा के अनुरूप है–तथ्य कि प्रत्यर्थी ने अभिवचन किया है कि उसे स्वयं का मर्यादा के साथ भरण-पोषण करने के लिए 56,000-60,000/- रु० प्रतिमाह की आवश्यकता है और विचारण न्यायाधीश ने भरण-पोषण के रूप में 20,000/- रुपया प्रतिमाह प्रदान किया है, इस निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाएगा कि आक्षेपित आदेश मुख्यतः प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल शपथ पत्र पर आधारित है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.–(2017) 15 SCC 801—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; Mr. Rahul Kr. Das, For the Respondent.

आदेश

याची पति वैवाहिक अभिधान वाद सं० 232 वर्ष 2015 में हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन दाखिल आवेदन पर पारित दिनांक 28.5.2016 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा उसे वाद कालीन भरण-पोषण के रूप में प्रति माह 20,000/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है।

2. याची का विवाह प्रत्यर्थी के साथ राँची में 15.5.2014 को संपन्न हुआ था। विवाहोपरांत जोड़ा बंगलुरू चला गया जहाँ याची विप्रो लि०, बंगलुरू में सीनियर सॉफ्टवेयर इंजीनियर के रूप में कार्यरत था। याची ने प्राख्यान किया कि जकार्ता से उसके लौटने के बाद जिस दौरान प्रत्यर्थी एमिटी विश्वविद्यालय नोएडा में अध्ययनरत थी, जोड़ा 25.4.2015 से अलग रहने लगा और 15.5.2015 को वह अमेरिका चला गया जहाँ उसे नियोक्ता विप्रो लि० ने भेजा था किंतु, प्रत्यर्थी ने अभिवचन किया है कि उसे सूचित किए बिना उसका पति और ससुराल वाले बेसहारा छोड़ कर चले गए। प्रत्यर्थी ने 27.5.2015 को मासिक

भरण–पोषण के रूप में 30,000/– रुपया इप्सित करते हुए दं०प्र०सं० की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किया और तत्पश्चात याची द्वारा तलाक की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए डिक्री के लिए वैवाहिक अभिधान वाद सं० 232 वर्ष 2015 संस्थित किया गया था। इस वैवाहिक वाद में प्रत्यर्थी ने वाद लंबित रहने के दौरान अंतरिम भरण–पोषण के रूप में 30,000/– रुपयों के भुगतान के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन आवेदन दाखिल किया। इस आवेदन का प्रत्युत्तर देते हुए याची ने प्रत्यर्थी को अपना मूल वेतन एवं अन्य आय विवरण, अचल संपत्तियों से लाभ, बीमा, शेयर, म्युचुअल फंड आदि प्रकट करने के निर्देश के लिए 16.3.2016 को याचिका दाखिल किया। प्रत्यर्थी पत्नी ने अपनी वेतन आय एवं मर्यादा एवं हैसियत अनुसार स्वयं के भरण–पोषण के लिए अपनी आवश्यकताएँ प्रकट करते हुए दिनांक 25.5.2016 का प्रत्युत्तर दाखिल किया। प्रत्यर्थी पत्नी ने प्राख्यान किया है कि उसे अंतरिम भरण–पोषण के रूप में प्रतिमाह लगभग 56,000–60,000/– रुपयों की आवश्यकता है। विचारण न्यायाधीश ने याची का नियोजन एवं पक्षों द्वारा दाखिल शपथपत्रों को ध्यान में लेने के बाद याची को 31.8.2015 अर्थात हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन आवेदन की दाखिली की तिथि से अंतरिम भरण–पोषण के रूप में 20,000/– रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश दिया है।

3. याची की ओर से किया गया अभिवचन यह है कि जब एक बार प्रत्यर्थी पत्नी ने स्वीकार किया है कि उसका आय का स्वतंत्र स्रोत है, अंतरिम भरण–पोषण के प्रश्न का परीक्षण उसकी आय के स्वतंत्र स्रोत के संदर्भ में करना होगा और क्या उसकी आय स्वयं का भरण–पोषण करने के लिए और न कि अपनी इच्छा पूर्ति के लिए सामान्य क्रम में पर्याप्त है। याची के विद्वान अधिवक्ता श्री इंद्रजीत सिन्हा निवेदन करते हैं कि दिनांक 28.5.2016 का आक्षेपित आदेश प्रत्यर्थी के दिनांक 25.5.2016 के शपथ पत्र के आधार पर अग्रसर होता है जिसमें उसने 56,000-60,000/– रुपया प्रतिमाह अंतरिम भरण–पोषण इप्सित किया है।

4. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री राहुल कुमार दास निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी ने 16.3.2016 को अपने पति द्वारा दाखिल याचिका के प्रत्युत्तर में अपनी आय तथा स्वयं का मर्यादा के साथ भरण–पोषण करने के लिए अपनी आवश्यकता का विवरण दिया है और ऐसा नहीं है कि केवल दिनांक 25.5.2016 के उसके शपथ पत्र के आधार पर विचारण न्यायाधीश ने याची को प्रत्यर्थी को अंतरिम भरण–पोषण के रूप में 20,000/– रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश दिया है।

5. दिनांक 31.8.2015 के अपने आवेदन तथा उक्त आवेदन के प्रति पूरक शपथ पत्र में प्रत्यर्थी ने अपने विवाह, अपने पति एवं ससुराल वालों के विरूद्ध दांडिक मामला के संस्थापन एवं पक्षों की आय का विवरण अभिवचनित किया है। याची जो संक्षिप्त अवधि के लिए मैसाचुसेट्स, संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिनियुक्त था के नियोजन का विवरण एवं प्रत्यर्थी की मासिक आय का विवरण इन शपथपत्रों में दिया गया है। किंतु, इन शपथपत्रों में प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अभिकथनों के प्रति 16.3.2016 को उसके द्वारा दाखिल याचिका में याची द्वारा विनिर्दिष्ट इनकार नहीं है। अपने शपथपत्र के पैराग्राफ सं०4 में उसने साफ इनकार किया है कि प्रत्यर्थी अंतरिम भरण–पोषण की हकदार नहीं है। हिंदू–विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 24 के अधीन आवेदन का प्रतिरोध करने के लिए याची द्वारा किया गया मुख्य अभिवचन यह है कि प्रत्यर्थी ग्रॉफर्स के कार्यालय में कार्यरत थी और स्वयं उसके कथनानुसार 20.7.2015 को वह वेतन पैकेज तीन लाख रुपया पर नियोजित थी। प्रत्यर्थी ने स्वीकार किया है कि मार्च, 2016 के बाद उसका वेतन 3.5 लाख रुपया वार्षिक किया गया था किंतु, उसे उस समय पर जब उसने दिनांक 25.5.2016 का शपथपत्र दाखिल किया उसको बढ़ाए गए वेतन का भुगतान नहीं किया गया था।

6. अब, यह स्वीकृत अवस्था है कि याची अभी भी विप्रो॰ लि॰ में कार्यरत है और प्रत्यर्थी अब कहीं नियोजित नहीं है। दिनांक 28.11.2017 के अपने पूरक शपथपत्र में याची ने अभिवचन किया है कि उसकी कुल वेतन आय 63000/- रुपया प्रतिमाह है। यह तथ्य कि प्रत्यर्थी ने अभिवचन किया है कि उसे मर्यादा के साथ स्वयं के भरण-पोषण के लिए 56,000-60,000/- रुपया प्रतिमाह की आवश्यकता है और विचारण न्यायाधीश ने अंतरिम भरण-पोषण के रूप में 20,000/- रुपया प्रतिमाह प्रदान किया है, इस निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाएगा कि दिनांक 28.5.2016 का आक्षेपित आदेश मुख्यतः प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल दिनांक 25.5.2016 के शपथपत्र पर आधारित है। न्यायालय द्वारा गणितीय सटीकता के साथ पत्नी को भुगतेय अंतरिम भरण-पोषण निर्धारित नहीं किया जा सकता है। परीक्षा यह है कि क्या पत्नी को अधिनिर्णीत अंतरिम भरण-पोषण उसकी आवश्यकताओं एवं पक्षों के दर्जा के अनुकूल है। **मनीष जैन बनाम आकांक्षा जैन, (2017)15 SCC 801,** में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है;-

> *16. ''..... न्यायालय को पक्षों का दर्जा एवं भरण-पोषण का भुगतान करने की पति/पत्नी की हैसियत और क्या अपने सहारा के लिए आवेदक का कोई स्वतंत्र पर्याप्त आय है को विचार में लेना होगा। भरण-पोषण सदैव ताथ्यिक स्थिति पर निर्भर है; अतः न्यायालय को अपने समक्ष लाए गए अनेक कारकों के आधार पर मात्रा विनिश्चित करते हुए भरण-पोषण का दावा अनुज्ञात करना होगा।''*

7. पक्षों द्वारा अभिवचनित तथ्यों की दृष्टि में, मैं मामला में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ और तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है।

8. याची तीन माह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी को अंतरिम भरण-पोषण के बकाया का भुगतान करेगा।

माननीय अनिल कुमार चौधरी, न्यायमूर्ति

भूषण मुंडा एवं अन्य

बनाम

निरंजन माहली एवं अन्य

S.A. No.45 of 2011. Decided on 19th April, 2018.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908–धारा 258–सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–धारा 100–वादीगण ने वाद भूमि पर कब्जा की संपुष्टि के साथ अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा की डिक्री के लिए सिविल न्यायालय में वाद दाखिल किया–अवर अपीलीय न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री एवं साक्ष्य पर समुचित परिप्रेक्ष्य में विचार किया है कि चूँकि वादीगण के पूर्वजों ने वाद भूमि अंतरित किया है, अतः वादीगण वाद भूमि पर अभिधान का दावा नहीं कर सकते हैं क्योंकि अपने पूर्वजों द्वारा उक्त भूमि के अंतरण के बाद वाद भूमि के संबंध में अभिधान वादीगण–अपीलार्थीगण के साथ बना नहीं रहता है–वादीगण ने किसी कपट अथवा अधिकारिता की कमी का अभिवचन नहीं किया है, अतः स्पष्टतः छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 इस मामला में वादीगण अपीलार्थीगण की मदद नहीं करेगा–सी॰पी॰सी॰ की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक इसे विकृत नहीं पाया जाता है–अपील खारिज। (पैराएँ 8, 9 एवं 10)

निर्णयज विधि.–(2010) 15 SCC 530—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. B.K. Sinha, For the Appellants.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वादीगण जो अवर अपीलीय न्यायालय में अपीलार्थीगण थे और वर्तमान अपीलार्थी हैं द्वारा अभिधान अपील सं॰ 7 वर्ष 2009 में जिला न्यायाधीश, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 26.2.2011 के निर्णय एवं आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज किया है और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री मान्य ठहराया है के विरुद्ध द्वितीय अपील दाखिल किया है।

3. वादीगण का मामला संक्षेप में यह है कि वाद भूमि पाहन की पहनाय बकस्त भूमि के रूप में फागू पाहन के नाम में दर्ज की गयी थी फागू पाहन की संततियों अर्थात लुचु मुंडा, राम मुंडा, पेका मुंडा एवं नेकल मुंडा ने जलाशय अथवा बांध के निर्माण के लिए वाद भूमि भूला महाली को अंतरित करने के लिए 2.12.1946 को उपायुक्त के समक्ष अनुमति के लिए याचिका दाखिल किया। केस सं॰ 20R 8(ii) वर्ष 1946–47 में दिनांक 17.12.1947 के आदेश के तहत उपायुक्त, राँची द्वारा 4200/– रुपयों की राशि के लिए उपायुक्त द्वारा भूमि के अंतरण के लिए अनुमति दी गयी थी। वादीगण द्वारा आगे अभिवचन किया गया है कि यद्यपि भूमि जलाशय के निर्माण के लिए अंतरित की गयी थी किंतु जलाशय का निर्माण कभी नहीं किया गया था। तत्पश्चात, वादीगण के पूर्वजों ने एस॰ए॰आर॰ केस सं॰ 69 वर्ष 1976–77 में एस॰डी॰ओ॰, लोहरदग्गा के पदनामित न्यायालय के समक्ष छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम (अनुसूचित क्षेत्र विनियमन 1969) की धारा 71 A के अधीन भूमि के पुनर्स्थापन के लिए आवेदन दिया किंतु इसे दिनांक 24.9.1976 के आदेश द्वारा खारिज किया गया था। इसके विरूद्ध अपील सं॰ 26R/15/77-78 दाखिल की गयी थी। अपर समाहर्ता, लोहरदग्गा के अपीलीय न्यायालय ने उक्त अपील में दिनांक 31.3.1990 के आदेश के तहत उक्त मामला नए सिरे से सुनवाई के लिए डी॰सी॰एल॰आर॰ के न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया। नयी सुनवाई के लिए प्रतिप्रेषण एवं अंचलाधिकारी की रिपोर्ट की प्रस्तुती के बाद उक्त एस॰ए॰आर॰ सं॰ 69 वर्ष 1976–77 में सीता राम पाहन को भूमि पुनर्स्थापित किए जाने का आदेश दिया गया था। पुनर्स्थापन के उक्त आदेश से व्यथित होकर, प्रतिवादीगण एस॰ए॰ आर॰ अपील सं॰ 17R/15/95-96 में अपर समाहर्ता, लोहरदग्गा के अपीलीय न्यायालय गए और दिनांक 9.7.1996 के आदेश द्वारा प्रतिवादियों की अपील खारिज की गयी थी। प्रतिवादियों ने सी॰डब्लू॰जे॰सी॰सं॰ 2800 वर्ष 1996 (R) के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया और दिनांक 12.5.2003 के आदेश द्वारा इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A वर्तमान मामला के प्रति प्रयोज्य नहीं है और पुनर्स्थापन आदेश अपास्त किया गया था और तत्पश्चात, वादीगण ने वर्तमान अभिधान वाद दाखिल किया और अभिवचन किया कि सिविल रिट अधिकारिता के प्रयोग में रिट अधिकारिता में पारित आदेश निर्णय नहीं है और सिविल न्यायालय की अधिकारिता अभी भी कायम है। प्रतिवादियों ने अपना संयुक्त लिखित कथन दाखिल किया और प्राख्यान किया कि मामला सी॰डब्लू॰जे॰सी॰ सं॰ 2800 वर्ष 1996 (R) में इस न्यायालय की समन्वय न्यायपीठ द्वारा पारित आदेश द्वारा अंतिमता प्राप्त कर चुका है क्योंकि वादीगण द्वारा इसे चुनौती नहीं दी गयी है और सिविल न्यायालय की अधिकारिता छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 258 के अधीन वर्जित है। प्रतिवादियों द्वारा यह अभिवचन किया गया है कि राज्य सरकार द्वारा ऐसी भूमि के पुनर्स्थापन के लिए छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 49(5) के अधीन विनिर्दिष्ट प्रावधान है।

4. परस्पर विरोधी अभिवचनों के आधार पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने छह विवाद्यक विरचित किया। मुख्य विवाद्यक निम्नलिखित है:–

''क्या वादीगण वाद भूमि पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा की डिक्री के लिए हकदार है?''

5. विद्वान विचारण न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि निरसन की शक्ति राज्य सरकार के पास है और न कि सिविल न्यायालय के पास, छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 49(5) के अधीन भी और कि ऐसे निरसन के लिए आवश्यक आधार यह था कि धारा 49 की उपधारा 1 एवं 2 के अधीन सहमति छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 49 की उपधाराओं 1 एवं 2 के प्रावधानों के उल्लंघन में दुर्व्यपदेशन अथवा कपट द्वारा प्राप्त किया जाना होगा और वादीगण ने मामला के किसी चरण पर कपट अथवा दुर्व्यपदेशन का अभिवचन नहीं किया था, अत: वाद खारिज कर दिया गया था।

6. अभिधान वाद सं० 25 वर्ष 2003 में उपन्यायाधीश II, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 27.2. 2009 के निर्णय एवं डिक्री से व्यथित होकर अपीलार्थियों ने जिला न्यायाधीश, लोहरदग्गा के समक्ष अपील दाखिल किया और इसे अभिधान अपील सं० 7 वर्ष 2009 के रूप में संख्यांकित किया गया था। अपील विद्वान जिला न्यायाधीश, लोहरदग्गा द्वारा सुना गया था और आक्षेपित निर्णय द्वारा निपटाया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री एवं साक्ष्य का अपना स्वतंत्र अधिमूल्यन करने के बाद अभिनिर्धारित किया कि वादीगण का वाद चार कारणों से अनुज्ञात नहीं किया जा सकता था। प्रथमत:, वादी के हित पूर्वाधिकारी द्वारा प्रतिफल राशि की प्राप्ति पर वाद भूमि के अंतरण के बाद वादीगण का अभिधान नहीं है। द्वितीयत:, उपायुक्त की सम्यक अनुमति के बाद 4200/- रुपयों के प्रतिफल के भुगतान पर 1947 में अंतरण किया गया था। तृतीयत:, अंतरण निरसित करने की शक्ति छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 49(5) के अधीन राज्य सरकार में निहित है और चतुर्थत: क्योंकि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A जो 9.2.1969 को प्रभाव में आयी के अधीन भूमि का पुनर्स्थापन अनुज्ञात किया जा सकता है जब यह युक्तियुक्त समय के भीतर लाया जाता है और अपील खारिज कर दिया।

7. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री बी०के० सिन्हा द्वारा निवेदन किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का समुचित परिप्रेक्ष्य में अधिमूल्यन करने में विफल रहा है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि विद्वान विचारण न्यायालय इस तथ्य को ध्यान में लेने में विफल रहा कि वादीगण का वाद छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 के अधीन पोषणीय है। अत: उन्होंने निवेदन किया कि अवर न्यायालयों का आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री अपास्त किया जाए और वादीगण का वाद डिक्री किया जाए।

8. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि वादीगण ने वाद भूमि पर कब्जा की संपुष्टि के साथ अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा की डिक्री के लिए सिविल न्यायालय में वाद दाखिल किया। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने समुचित परिप्रेक्ष्य में अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री एवं साक्ष्य पर विचार किया है कि चूँकि वादीगण के पूर्वजों ने वाद भूमि अंतरित किया है। अत: वादीगण वाद भूमि पर अभिधान का दावा नहीं कर सकते हैं क्योंकि उनके पूर्वजों द्वारा वाद भूमि के अंतरण के बाद वादीगण-अपीलार्थीगण के पास वाद भूमि के संबंध में अभिधान नहीं है। जहाँ तक अंतरण के निरसन का संबंध है, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने विचार किया है कि उक्त शक्ति राज्य सरकार में निहित है और इसके लिए अभिवचन, कपट एवं दुर्व्यपदेशन अनिवार्य था जिसे वादीगण-अपीलार्थीगण द्वारा मामला के किसी चरण पर अभिवचनित नहीं किया गया है।

9. जहाँ तक अपीलार्थियों की प्रार्थना कि वादीगण का वाद छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 के अधीन पोषणीय है, का संबंध है, छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 को निर्दिष्ट करना लाभदायी होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *''258. **कतिपय मामलों में वाद के प्रति वर्जना.**–इस अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित है उसके सिवाए, **कपट अथवा अधिकारिता की कमी के आधार पर के सिवाए,** धारा 20, धारा 32, धारा 35, धारा 42, धारा 46, उपधारा (4), धारा 49, धारा 50, धारा 54, धारा 61, धारा 63, धारा 65, धारा 73, [धारा 74(A)], धारा 75, धारा 85, धारा 86, धारा 87, धारा 89 अथवा धारा 91 (परन्तुक), अथवा अध्याय XIII, XIV, XV, XVI; अथवा XVII के अधीन किसी वाद, आवेदन अथवा कार्यवाही में किसी उपायुक्त अथवा राजस्व अधिकारी का [निर्णय], आदेश अथवा डिक्री, प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः परिवर्तित, उपांतरित अथवा अपास्त करने के लिए किसी न्यायालय में वाद ग्रहण नहीं किया जाएगा [और ऐसे प्रत्येक निर्णय, आदेश अथवा डिक्री का पक्षों के बीच वाद में सिविल न्यायालय की डिक्री का बल एवं प्रभाव होगा और, अपील से संबंधित इस नियम के प्रावधानों के अध्यधीन अंतिम होगा]''*
>
> *(जोर दिया गया)*

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 का सादा पठन प्रकट करता है कि उक्त धारा कपट अथवा अधिकारिता की कमी के आधार पर के सिवाए उक्त धारा 258 में उल्लिखित धारा के संबंध में उपायुक्त अथवा राजस्व अधिकारी द्वारा पारित आदेश के संबंध में कोई वाद ग्रहण करने के लिए सिविल न्यायालय सहित किसी न्यायालय की अधिकारिता वर्जित करती है किंतु जैसा पहले ही उपर उपदर्शित किया गया है, वादीगण ने किसी कपट अथवा अधिकारिता की कमी का अभिवचन नहीं किया है, अत: स्पष्टत: छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 258 इस मामला में वादीगण–अपीलार्थीगण की मदद नहीं करेगी।

10. जहाँ तक सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में इस न्यायालय की अधिकारिता का संबंध है, यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक इसे विकृत नहीं पाया जाता है जैसा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **गुरवचन कौर एवं अन्य बनाम सलीकराम (मृतक) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से, (2010)5 SCC 530,** में दोहराया गया है:–

> *''10. **यह सुस्थापित विधि है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक इसे विकृत नहीं पाया जाता है।** अवस्था ऐसी होने के कारण यह अभिनिर्धारित करना होगा कि उच्च न्यायालय वादी एवं प्रतिवादी के बीच मकान मालिक–किराएदार संबंध के अस्तित्व तथा किराया के भुगतान में किराएदार द्वारा किए गए व्यतिक्रम के विवाद्यक पर प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज तथ्य का निष्कर्ष उलटने में न्यायोचित नहीं था।''* *(जोर दिया गया)*

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता किसी साक्ष्य विशेष पर विचार नहीं किए जाने का विनिर्दिष्ट उदाहरण इंगित नहीं कर सके थे। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता अवर अपीलीय न्यायालय के आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री में कोई अवैधता अथवा गलती भी इंगित नहीं कर सके थे जो द्वितीय अपीलीय

अधिकारिता के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा विरचित एवं विनिश्चित किए जाने के लिए विधि का कोई सारवान प्रश्न उद्भूत करे।

11. इस प्रकार, यह अपील गुणागुणरहित होने के कारण खारिज की जाती है किंतु व्यय के बिना।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

आनन्दी महतो एवं एक अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.5172 of 2006. Decided on 8th May, 2018.

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949–धाराएँ 20 एवं 42–भूमि से किराएदार की बेदखली–जहाँ न्यायालय पाता है कि कोई व्यक्ति 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज है, प्रतिकूल कब्जा के विवाद्यक पर विचार किया जा सकता है–वर्तमान मामला में ऐसी आवश्यकता नहीं है, विशेषतः इस तथ्य की दृष्टि में कि याचीगण यह स्थापित करने में सक्षम नहीं हुए हैं कि मूल याची का पिता 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से अधिक से संपत्ति पर काबिज था–आक्षेपित आदेश मान्य ठहराया गया।

(पैराएँ 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.–1985 BBCJ 12 (Full Bench); 1998 (1) PLJR 3; (1997) 10 SCC 51—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Lalit Kumar Lal, D.C. Mishra, For the Petitioners; Mr. Sahil, For the Resp.-State; Mr. Rajesh Kumar, For Private Respondents.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री ललित कुमार लाल सुने गए।

2. प्राइवेट प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री राजेश कुमार सुने गए।

3. प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री साहिल सुने गए।

4. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए दाखिल की गयी है:–

''आयुक्त (प्रत्यर्थी सं० 2) द्वारा राजस्व विविध अपील सं० 84/1989-90 में पारित दिनांक 24.7.06 के आदेश के अभिखंडन के लिए जिसके द्वारा प्रभारी अधिकारी प्रत्यर्थी सं० 3 का दिनांक 30.5.89 का आदेश (परिशिष्ट 4) अपास्त किया गया है यद्यपि तथ्य, साक्ष्य एवं विधि प्रभार अधिकारी के दिनांक 30.5.89 के उक्त आदेश में कोई हस्तक्षेप आवश्यक नहीं बनाता था जिसने 1.11.1949 के पहले निरंतर कब्जा के कारण प्रश्नगत भूखंडों पर याची का कब्जा वैध पाया और मान्य ठहराया और तद्नुसार यह निर्देश देने के लिए कि याची का नाम प्रश्नगत भूमि/भूखंडों के संबंध में दर्ज किया जाए और ऐसे अन्य अनुतोष अथवा अनुतोषों के लिए जिनका याची विधितः हकदार है।

2. याचीगण के अधिवक्ता निम्नलिखित निवेदन करते हैं:–

(a) मौजा खसिया, पी०एस० हसडीह, जिला दुमका की एक बीघा कठ्ठा 17 धूर क्षेत्रवाली विवादित संपत्ति अर्थात भूखंड सं० 295 आनन्दी कापरी एवं किस्टोमकापरी के नाम में दर्ज की गयी।

(b) आनन्दी कापरी की विधवा अर्थात्, पाटो कपराइन ने मूल रिट याची (अब मृत तथा प्रतिस्थापित) के पिता के पक्ष में वर्ष 1934 तथा वर्ष 1935 में दो कुर्फनामा निष्पादित किया और तत्पश्चात तब से याचीगण संपत्ति पर काबिज हुए और प्राइवेट प्रत्यर्थीगण की पूर्ण जानकारी में लगान के भुगतान पर काबिज बने रहे जिसके लिए आनन्दी कापरी को विधवा द्वारा कुर्फनामा रसीद प्रदान किए गए थे और वर्ष 1960–61 से लगान का भुगतान बिहार राज्य को किया गया था।

(c) संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 दिनांक 1.11.1949 से प्रभाव में आया और याचीगण का यह विनिर्दिष्ट मामला है कि 1.11.1949 के पहले मूल याची के पिता ने विनियमन III वर्ष 1872 की धारा 27 के प्रावधान के मुताबिक भूमि पर 12 वर्षों से काबिज बने रह कर प्रतिकूल कब्जा के रूप में अपना अभिधान पुख्ता किया है। वह निवेदन करते हैं कि यह धारा निरसित की गयी थी और 1.11.1949 के प्रभाव से संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20 द्वारा प्रतिस्थापित की गयी थी। वह निवेदन करते हैं कि चूँकि याचीगण ने 1.11.1949 के पहले प्रतिकूल कब्जा के रूप में अपना अभिधान पुख्ता किया था, याचीगण को संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 20 सहपठित धारा 42 के प्रावधानों के अधीन बेदखल नहीं किया जा सकता था।

(d) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सर्वे व्यवस्थापन में और आरंभिक चरण पर मूल याची का नाम उक्त संपत्ति के संबंध में अवैध कब्जा की टिप्पणी के साथ दर्ज किया गया था और किसी नोटिस और सुनवाई के बिना सहायक बंदोबस्ती अधिकारी ने दिनांक 10.1.1981 के अपने आदेश द्वारा पूर्वोक्त संपत्ति से मूल याची की बेदखली की अनुशंसा बंदोबस्ती अधिकारी दुमका को किया जिसे बंदोबस्ती अधिकारी, दुमका ने स्वीकार किया था और बेदखली आदेश 8.4.1981 को पारित किया गया था। दिनांक 10.1.1981 के आदेश में दर्ज किया गया था कि मूल याची के पिता ने कुर्फनामा के फलस्वरूप यह संपत्ति अर्जित किया है।

(e) किंतु, जब बेदखली आदेश पारित किया गया था और याची ने आयुक्त, संथाल परगना, भागलपुर के समक्ष राजस्व विविध पुनरीक्षण सं० 113 वर्ष 1981–82 दाखिल किया, उक्त प्राधिकारी ने 5.5.1984 को बेदखली आदेश अपास्त कर दिया था और मामला विधि के अनुरूप निपटान के लिए बंदोबस्ती अधिकारी को प्रतिप्रेषित किया गया था।

(f) तत्पश्चात, मामला चार्ज अधिकारी 1, दुमका के न्यायालय के समक्ष टी०एल० केस सं० 27 वर्ष 1987 के रूप में दर्ज किया गया था और चार्ज अधिकारी के समक्ष प्रतिवाद किया गया था कि वर्ष 1934 एवं 1935 का कुर्फनामा सहायक बंदोबस्ती अधिकारी द्वारा इस आधार पर विचार में नहीं लिया गया था कि उक्त दस्तावेज में कतिपय प्रक्षेपांश था किंतु उक्त अभिकथन गलत था।

(g) याचीगण के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि दिनांक 30.5.1989 के आदेश के तहत चार्ज अधिकारी सं०1, दुमका ने आदेश पारित किया कि मूल याची संपत्ति पर काबिज है और वह निवेदन करते हैं कि दिनांक 30.5.1989 के आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि चार्ज अधिकारी का दृष्टिकोण था कि संपत्ति पर कब्जा काफी पहले वर्ष 1934 एवं 1935 में निष्पादित कुर्फनामा के फलस्वरूप है और तद्नुसार, उक्त प्राधिकारी ने संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 42 के अधीन मूल याची को संपत्ति से बेदखल करने से इनकार कर दिया। इस आदेश

के विरूद्ध प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने अपील दाखिल किया जिसे आर०एम०ए० केस सं० 84 वर्ष 1989–90 के रूप में संख्यांकित किया गया था और चार्ज अधिकारी सं०1, दुमका द्वारा पारित दिनांक 30.5.1989 का आदेश दिनांक 24.7.2006 के आदेश के तहत अपास्त किया गया था जो इस रिट याचिका में आक्षेपित आदेश है।

(h) याचीगण के अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का विरोध करते हुए निवेदन किया है कि संदेह नहीं है कि कुर्फनामा अनरजिस्टर्ड दस्तावेज है और भले ही इसे अवैध दस्तावेज माना जाता है, मूल याची का कब्जा वर्ष 1934–35 से इस कुर्फनामा के फलस्वरूप था और 1.11.1949 के पहले 12 वर्ष पूरा किया गया था अर्थात तिथि जिस पर संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 प्रभाव में आया। अतः, मूल याची ने प्रतिकूल कब्जा के फलस्वरूप अपना अभिधान पुख्ता किया था और तद्नुसार याचीगण को बेदखल नहीं किया जा सकता था।

(i) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस मामला में अंतर्ग्रस्त विधि का एकमात्र प्रश्न यह है कि–

> *''क्या याचीगण इस तथ्य के कारण संपत्ति अपने पास रखने के हकदार हैं कि उन्होंने वर्ष 1934 एवं 1935 में निष्पादित पूर्वोक्त दो कुर्फनामा के फलस्वरूप 1.11.1949 के काफी पहले 12 वर्ष का कब्जा पूरा करके प्रतिकूल कब्जा के रूप में अपना अभिधान पुख्ता किया है भले ही उक्त दस्तावेजों को अवैध माना जाता है?''*

(j) वह निवेदन करते हैं कि चूँकि चार्ज अधिकारी सं०1, दुमका ने दिनांक 30.5.1989 के आदेश में निष्कर्ष दर्ज किया था कि याची वर्ष 1934 एवं 1935 में निष्पादित कुर्फनामा के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज है, आयुक्त आर०एम०ए०सं० 84 वर्ष 1989–90 विनिश्चित करते हुए आदेश अपास्त नहीं कर सकते थे और केवल इस आधार पर आक्षेपित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है।

3. याचीगण के अधिवक्ता ने **1985 BBCJ 12 (पूर्ण न्यायपीठ)** में प्रकाशित इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर यह निवेदन करने के लिए विश्वास किया है कि इस न्यायालय द्वारा यह अधिकथित किया गया है कि यदि कोई व्यक्ति 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज है, तब उसे संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धाराओं 20 एवं 42 का सहारा लेकर बेदखल नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसने अब तक पहले ही प्रतिकूल कब्जा के रूप में अपना अभिधान पुख्ता कर लिया है।

4. दूसरी ओर, प्राइवेट प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से प्रश्नगत संपत्ति आनन्दी कापड़ी एवं किस्टो कापड़ी के नाम में दर्ज की गयी थी जिनकी मृत्यु क्रमशः 1945 एवं 1947 में हो गयी और इसलिए वर्ष 1934 एवं 1935 में कोई कुर्फनामा निष्पादित करने के लिए अभिलिखित अभिधारी की विधवा के पास अवसर नहीं था। वह आगे निवेदन करते हैं कि आनंदी कापड़ी की विधवा बिंदु देवी थी और न कि पाटो कपड़ाइन और इसलिए पाटा कपड़ाइन द्वारा कुर्फनामा निष्पादित नहीं किया जा सकता था।

5. वह आगे निवेदन करते हैं कि स्वयं कुर्फनामा कूट रचित एवं मनगढ़ंत दस्तावेज है और याचीगण ऐसे कुर्फनामा पर विश्वास नहीं कर सकते हैं। वह निवेदन करते हैं कि प्रश्नगत संपत्ति लक्ष्मण साह को वर्ष 1966 की भुगतबंधा विलेख द्वारा दी गयी थी और छह वर्ष पूरा करने के बाद प्रत्यर्थी पुनः इस पर काबिज हुआ।

6. प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह दर्शाने के लिए कोई निष्कर्ष अथवा अभिलेख पर सामग्री नहीं है कि याचीगण उक्त कुर्फनामा के फलस्वरूप 1934–1935 से संपत्ति पर काबिज थे जिस पर याचीगण द्वारा विश्वास किया गया है और तद्नुसार, संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने के पहले प्रतिकूल कब्जा के रूप में अभिधान पुख्ता करने का दावा उद्भूत नहीं होता है।

7. प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि ऐसे निष्कर्ष कि याचीगण 1.11.1949 के पहले 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज थे की अनुपस्थिति में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति के प्रयोग में याचीगण को अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है और आक्षेपित आदेश में विकृतता नहीं है।

8. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि किसी भी प्राधिकारियों द्वारा निश्चयात्मक निष्कर्ष नहीं है कि मूल याची कुर्फनामा के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज था अथवा 1.11.1949 के पहले 12 वर्षों से अधिक से संपत्ति पर काबिज था और इसलिए याचीगण का दावा कि उन्होंने संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने के काफी पहले से प्रतिकूल कब्जा के रूप में संपत्ति पर अपना अभिधान पुख्ता किया है, आधारहीन है। वह यह निवेदन भी करते हैं कि **1985 BBCJ 12 (पूर्ण न्यायपीठ)** में प्रकाशित निर्णय जिस पर याचीगण द्वारा विश्वास किया गया था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 1998(1) PLJR 3 में प्रकाशित निर्णय द्वारा अपास्त किया गया है और तद्नुसार, इस माननीय न्यायालय के पूर्वोक्त पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के आधार पर याचीगण को अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है।

9. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर विचार करने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के बाद यह न्यायालय याचीगण को निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से अनुतोष प्रदान करने का इच्छुक नहीं है:–

(a) मामला अभिलेख के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि सर्वे व्यवस्थापन के दौरान मूल याची का नाम आरंभ में संपत्ति के संबंध में ''अवैध कब्जा'' की टिप्पणी के साथ दर्ज किया गया था और दिनांक 10.1.1981 का आदेश पारित किया गया था जिसमें याची का दावा कि वह कुर्फनामा के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज है उल्लिखित किया गया है और उसी आदेश में यह भी उल्लिखित किया गया है कि कुर्फनामा में कतिपय लिप्त लेखन है और तत्पश्चात उक्त प्राधिकारी ने पूर्वोक्त संपत्ति से मूल याची की बेदखली के लिए मामला बंदोबस्ती अधिकारी, दुमका को अनुशंसित किया और दिनांक 8.4.1981 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था जिसके विरुद्ध याचीगण ने अपना पुनरीक्षण विविध अपील सं० 114 वर्ष 1981–82 आयुक्त के समक्ष दाखिल किया था और बेदखली आदेश अपास्त किया गया था और मामला विधि के अनुरूप निपटान के लिए बंदोबस्ती न्यायालय प्रतिप्रेषित किया गया था। यह न्यायालय याचीगण का प्रतिवाद स्वीकार करने का इच्छुक नहीं है कि दिनांक 10.1.1981 के आदेश के तहत निष्कर्ष दर्ज किया गया है कि मूल याची स्वयं कुर्फनामा के निष्पादन से अर्थात 1934–1935 से कुर्फनामा के आधार पर संपत्ति पर काबिज है।

(b) प्रतिप्रेषण आदेश के बाद दिनांक 30.5.1989 का नया आदेश पारित किया गया था जिसमें निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया था कि याची 1934–35 से संपत्ति पर काबिज है। दिनांक 30.5.1989 के संपूर्ण आदेश के परिशीलन से यह न्यायालय उक्त आदेश में कोई निष्कर्ष नहीं पाता है कि मूल याची उक्त कुर्फनामा के आधार पर वर्ष 1934–35 से संपत्ति पर काबिज हुआ। वस्तुतः उक्त आदेश बिंदु के

संबंध में निष्कर्ष नहीं है कि कब से मूल रिट याची का पिता संपत्ति पर काबिज था यद्यपि यह कुर्फनामा एवं कुर्फ रसीद तथा सरकारी रसीद के बारे में उल्लेख करता है। वस्तुत: उक्त आदेश केवल यह निष्कर्ष दर्ज करता है कि याचीगण के पूर्वाधिकारी का कब्जा काफी पुराना है और उन्होंने अपना अभिधान पुख्ता किया है। इसके विरूद्ध, अपील आर०एम०ए० केस सं० 84 वर्ष 1989–90 दाखिल की गयी थी जिसमें दिनांक 24.7.2006 के आदेश के तहत आयुक्त ने पैराग्राफ सं० 2 पर विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *''प्रत्यर्थी अभिधान अर्जित नहीं कर सकता है जब तक यह सिद्ध नहीं किया जाता है कि वह संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने से पहले 12 वर्षों से भूमि पर लगातार काबिज था। चार्ज अधिकारी ने टी० एल० 27/1981 में विनिर्दिष्टतः अभिनिश्चित नहीं किया है कि किस समय से इस मामला का प्रत्यर्थी भूमि पर काबिज हुआ था।''*

(c) यह न्यायालय पाता है कि यह स्थापित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि मूल याची संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने से पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज था और आयुक्त द्वारा दिनांक 24.7.2006 के आक्षेपित आदेश के तहत दर्ज निष्कर्ष सही है और इसे किसी विकृतता की अनुपस्थिति में रिट अधिकारिता में अस्त व्यस्त नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय का सुविचारित दृष्टिकोण है कि तथ्यों के ऐसे विवादित प्रश्नों को रिट अधिकारिता में उठाया और विनिश्चित नहीं किया जा सकता है।

(d) इसके अतिरिक्त, जहाँ तक कुर्फनामा का संबंध है, गंभीर संदेह/ विवाद है, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि कुर्फनामा पाटो कपड़ाइन द्वारा निष्पादित किया गया बताया गया था और संदेह है कि क्या वह अभिलिखित अभिधारी की पत्नी थी या नहीं। प्रत्यर्थियों ने दावा किया है कि अभिलिखित अभिधारी की पत्नी बिन्दु देवी है। यह विवाद भी है कि अभिलिखित अभिधारी की मृत्यु कब हुई, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों का विनिर्दिष्ट मामला यह है कि अभिलिखित अभिधारियों की मृत्यु 1945 एवं 1947 में हो गयी, अत: वर्ष 1934 एवं 1935 में अभिलिखित अभिधारियों की विधवा द्वारा कुर्फनामा के निष्पादन का प्रश्न नहीं था। प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने पूरे समय कुर्फनामा की विधिकता एवं वैधता को चुनौती दिया है और यह उनका विनिर्दिष्ट मामला था कि यह कूटरचित एवं मनगढ़ंत है।

(e) तथ्यों के अन्य विवादित प्रश्न हैं जो इस मामला में अंतर्ग्रस्त हैं जिन पर चर्चा नहीं की जा सकती है क्योंकि याचीगण का विनिर्दिष्ट मामला है कि भले ही कुर्फनामा अवैध दस्तावेज माना जाता है, मूल याची के पिता ने संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने के पहले अर्थात 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से इस कुर्फनामा के फलस्वरूप संपत्ति पर काबिज बने होने के नाते अपना अभिधान पुख्ता किया था। याचीगण यह स्थापित करने में विफल रहे हैं कि मूल याची का पिता संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 के प्रभाव में आने के पहले अर्थात 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज था।

(f) चूँकि याचीगण यह स्थापित करने में विफल रहे हैं, कि वे उक्त अधिनियम के प्रभाव में आने के पहले अर्थात 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज थे, इस न्यायालय को **''देव नारायण सिंह एवं अन्य बनाम आयुक्त, भागलपुर डिविजन एवं अन्य, 1985 BBCJ 12 (F.B.)**

मामला में पारित निर्णय के निर्णयाधार की प्रयोज्यता पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धाराओं 20 एवं 42 के प्रावधानों का सहारा लेकर बेदखल नहीं किया जा सकता है यदि उसने 1.11.1949 के पहले 12 वर्ष से अधिक से संपत्ति पर निरंतर काबिज रहकर अपना अभिधान पुख्ता किया है। इस चरण पर यह इंगित करना प्रासंगिक होगा कि यह निर्णय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **(1997)10 SCC 51,** में प्रकाशित निर्णय में अपास्त किया गया है जिसमें पैरा 9 में विनिर्दिष्टत: निम्नलिखित दर्ज किया गया है:–

''परिणामस्वरूप, अपील अनुज्ञात की जाती है। उच्च न्यायालय का निर्णय एवं आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है। इसी प्रकार से अपर उपायुक्त, दुमका द्वारा दिया गया दिनांक 30 सितंबर, 1975 का निर्णय और आयुक्त द्वारा दिया गया दिनांक 2 जून, 1976 का निर्णय भी अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है और अधिनियम की धारा 20 उपधारा (5) सहपठित धारा 42 के अधीन प्रत्यर्थी सं० 4 से 15 द्वारा दिया गया आवेदन भी खारिज करने का आदेश दिया जाता है। मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, व्यय को लेकर आदेश नहीं होगा।''

उक्त निर्णय निम्नलिखित भी दर्ज करता है:–

''..... हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमारे पूर्वोक्त निर्णय की दृष्टि में हमने भौरी लाल जैन मामला में उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय और क्षेत्र में भूमि के अवैध संव्यवहार के अधीन क्रेता के प्रतिकूल कब्जा के संबंध में पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय की शुद्धता पर विचार करना इसके विनियम की धारा 27(1) अथवा अधिनियम की धारा 20(1) के उल्लंघनकारी होने के कारण उपयुक्त नहीं समझते हैं। अतः यह प्रश्न खुला रखा गया है।''

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वोक्त निष्कर्षों पर विचार करते हुए समुचित मामला में जहाँ यह न्यायालय पाता है कि कोई व्यक्ति 1.11.1949 के पहले विगत 12 वर्षों से संपत्ति पर काबिज है, इस विवाद्यक पर विचार किया जा सकता है, किंतु वर्तमान मामला में ऐसी आवश्यकता नहीं है, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में याचीगण यह स्थापित करने में सक्षम नहीं हुए हैं कि मूल याची का पिता 1.11. 1949 के पहले 12 वर्षों से अधिक से संपत्ति पर काबिज था।

11. तद्नुसार, यह न्यायालय दिनांक 24.7.2006 के आक्षेपित आदेश में कोई विकृतता अथवा अवैधता नहीं पाता है और रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता है, अत: रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय डॉ॰ एस॰ एन॰ पाठक, न्यायमूर्ति

आशीष कुमार चौरसिया

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(S).No. 568 of 2018. Decided on 18th April, 2018.

सेवा विधि–नियुक्ति–सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में सहायक सब इंसपेक्टर एवं कांस्टेबल के पद से सब इंसपेक्टर के पद पर भरती–याची का विनिर्दिष्ट मामला है कि लिखित परीक्षा

में बहुविकल्पीय उत्तर में गलत उत्तर वाले अनेक प्रश्नों को गलत रूप से विरचित किया गया था और उनमें से कुछ सिलेबस से बाहर के थे, तद्द्वारा सब इंसपेक्टर के पद पर नियुक्ति के लिए लिखित परीक्षा में चयन के लिए 50% कट ऑफ अंक पाने का याची के अवसर को गंभीर रूप से दुर्बल बनाते थे–चूँकि परीक्षा पहले ही समाप्त हो गयी है और परिणाम प्रकाशित कर दिया गया है और रिट याचिका परिणाम के प्रकाशन के बाद दाखिल की गयी है, वर्तमान मामला में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है–संदेह की स्थिति में लाभ उम्मीदवार के बजाए परीक्षा प्राधिकारी को मिलना चाहिए–भले ही कुछ प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे, उम्मीदवार ग्रेस अंक के आवंटन के लिए इसका लाभ नहीं ले सकते हैं–दिनांक 26.11.2017 को ली गयी सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में सहायक सब इंसपेक्टर तथा कांसटेबल के पद से सब इंसपेक्टर के पद पर नियुक्ति के लिए प्रत्यर्थीगण–जे०एस०एस०सी० द्वारा संचालित भरती प्रक्रिया में कोई अवैधता अथवा दुर्बलता नहीं है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 9, 12, 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.–(2018)2 SCC 357; (2010) 6 SCC 759; 2018 (1) JBCJ 641 (HC)]—Relied; (2005) 11 SCC 192; (2005)13 SCC 744; AIR 1983 SC 1230; (2018)1 JLJR 99; (2014)3 JCR 291 Jhr.; (1979) 2 SCC 339—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan, Shray Mishra, For the Petitioner; M/s Samir Sahay, Sanjoy Piprawal, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता तथा प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची मेधा सूची (परिशिष्ट 6) के अभिखंडन की प्रार्थना के साथ इस न्यायालय के पास आया है जिसके निबंधनानुसार उम्मीदवारों का नाम 26.11.2017 को ली गयी सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में सहायक सब इंसपेक्टर एवं काँसटेबल के पद से सब इंसपेक्टर के पद पर भरती के लिए शारीरिक परीक्षा के लिए शार्टलिस्ट किया गया है क्योंकि उक्त परीक्षा में बहुविकल्पीय उत्तर में गलत विकल्पों वाले अनेक प्रश्नों को गलत रूप से विरचित किया गया है और कुछ प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे।

आगे, उक्त परीक्षा में उपस्थित हुए याची/उम्मीदवारों की उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन/पुनर्सारणीकरण, प्रश्नों जिन्हें गलत रूप से विरचित किया गया था के लिए अंक देने, और शारीरिक परीक्षा के लिए उम्मीदवारों की मेधा सूची पुनर्प्रकाशित करने का निर्देश प्रत्यर्थियों को देने की प्रार्थना की गयी है क्योंकि पर्याप्त सीट रिक्त पड़े हैं। यह प्रार्थना भी की गयी है कि तब तक उक्त परीक्षा के माध्यम से सब इंसपेक्टर की चयन प्रक्रिया प्रास्थगित रखी जाए।

3. मामला के तथ्य संकुचित क्षेत्र में हैं। प्रत्यर्थी आयोग ने पूरे झारखंड राज्य में 1544 सीटों की कुल संख्या के लिए सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से सब इंसपेक्टर की नियुक्ति के लिए विज्ञापन सं० 9 वर्ष 2017 प्रकाशित किया। अध्यपेक्षित मापदंड परिपूर्ण करने वाले याची ने प्रत्यर्थियों के समक्ष अपना आवेदन दिया और 26.11.2017 को ली गयी लिखित परीक्षा में उपस्थित भी हुआ है। याची का आगे मामला यह है कि लिखित परीक्षा तीन विषयों अर्थात (i) सामान्य हिन्दी, (ii) सामान्य ज्ञान और (iii)

सामान्य अध्ययन से गठित थी। याची का विनिर्दिष्ट मामला है कि स्वयं विज्ञापन में विधि के उन विनिर्दिष्ट प्रावधानों का वर्णन था जिनसे प्रश्न पूछे जाएँगे। लिखित परीक्षा के समापन के बाद आयोग ने प्रथम उत्तरकुंजी उसमें मल्टिपल च्वायस प्रश्नों के उत्तरों का सही विकल्प उल्लिखित करते हुए प्रकाशित किया और व्यथित उम्मीदवारों से 1.12.2017 से 8.12.2017 तक की अवधि के बीच आपत्ति आमंत्रित किया है। उसके प्रत्युत्तर में, उम्मीदवारों जो उक्त परीक्षा में उपस्थित हुए द्वारा अनेक आपत्ति दाखिल की गयी थीं और उन समस्त आपत्तियों को विचार में लेते हुए आयोग द्वारा 28.12.2017 को पुनरीक्षित द्वितीय उत्तर कुंजी प्रकाशित की गयी थी। किंतु, पुनरीक्षित द्वितीय उत्तर कुंजी में भी अनेक गलतियाँ अंतर्विष्ट किया और इस दशा में उम्मीदवारों द्वारा आपत्तियाँ दाखिल की गयी थी और परिणामस्वरूप आयोग द्वारा 7.1.2018 को तृतीय उत्तरकुंजी प्रकाशित की गयी थी। तृतीय उत्तर कुंजी के आधार पर झारखंड स्टाफ चयन आयोग ने शारीरिक परीक्षा के लिए चयनित उम्मीदवारों से गठित मेधा सूची 8.1.2018 को प्रकाशित की गयी थी। याची का विनिर्दिष्ट मामला यह है कि लिखित परीक्षा में प्रत्यर्थियों द्वारा बहुविकल्पीय उत्तर में गलत उत्तरों वाले अनेक गलत प्रश्न गलत रूप से विरचित किए गए थे और उनमें से कुछ सिलेबस के बाहर के थे, तद्द्वारा सब इंसपेक्टर के पद पर नियुक्ति के लिए लिखित परीक्षा में चयन के लिए 50% कट ऑफ अंक पाने का याची का अवसर गंभीर रूप से दुर्बल बना दिया था हुए। अत:, याची अपनी शिकायत दूर करवाने इस माननीय न्यायालय के पास आया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव रंजन ने आग्रह किया कि प्रत्यर्थीगण सिलेबस से प्रश्न विरचित करने के लिए कर्तव्यबद्ध थे और सिलेबस के परे प्रश्न पूछने में प्रत्यर्थियों की कार्रवाई विधि में दोषपूर्ण था। विद्वान वरीय अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि चूँकि प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे, इसके लिए समस्त उम्मीदवारों को उसका समान अंक दिया जाना चाहिए था। आगे यह तर्क किया गया है कि इस तथ्य कि प्रत्यर्थीगण उन प्रश्नों के लिए अतिरिक्त अंक प्रदान करने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं, के बावजूद उन प्रश्नों के लिए भी जो गलत थे अथवा जिनका गलत उत्तर दिया गया था अथवा सिलेबस के परे थे, अतिरिक्त अंक प्रदान नहीं किए गए हैं। विद्वान वरीय अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि कुल 1544 सीटों में से केवल 399 उम्मीदवारों को शारीरिक परीक्षा के बाद शार्टलिस्ट किया गया है और इस दशा में सीटों की विशाल संख्या अभी भी रिक्त पड़ी है, अत: याची के मामला पर विचार किया जा सकता है।

अपने तर्कों को पुख्ता करने के लिए याची के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(1) ***रणविजय सिंह एवं अन्य बनाम उ० प्र० राज्य एवं अन्य, (2018)2 SCC 357***

(2) ***पी० के० वेलसन एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2005)11 SCC 192***

(3) ***मनीश उज्जवल एवं अन्य बनाम महर्षि दयानंद सरस्वती विश्व विद्यालय एवं अन्य, (2005)13 SCC 744***

(4) ***कानपुर विश्वविद्यालय एवं अन्य बनाम समीर गुप्ता एवं अन्य, AIR 1983 SC 1230***

5. अपने तर्कों को मजबूत करने के लिए विद्वान वरीय अधिवक्ता ने न्यायालय का **ध्यान रणविजय सिंह (ऊपर)** के निर्णय के पैरा 30.2 की ओर आकृष्ट किया है जिसको यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

''30.2 यदि परीक्षा शासित करने वाले संविधि, नियम अथवा विनियम उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन अथवा संवीक्षण की अनुमति नहीं देते हैं (इसे प्रतिषिद्ध करने से सुभिन्न), तब न्यायालय पुनर्मूल्यांकन अथवा संवीक्षण की अनुमति दे सकता है यदि यह अत्यन्त स्पष्टतः प्रदर्शित किया जाता है कि ''तर्क की किसी अनुमति संबंधी प्रक्रिया अथवा तर्कसंगतिकरण की प्रक्रिया'' के बिना और केवल विरल अथवा आपवादिक मामलों में तात्विक गलती की गयी है।''

6. विद्वान वरीय अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि स्वीकृत रूप से प्रत्येक एक अंकवाले 11 प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे और इस दशा में याची ग्रेस अंक का हकदार है और इसलिए ग्रेस अंक प्रदान करने के लिए मामले पर विचार करने का निर्देश दिया जा सकता है। याची किसी पुनर्मूल्यांकन पर जोर नहीं दे रहा है। आगे, यह तर्क किया गया है कि **राकेश कुमार बनाम झारखंड राज्य, 2018(1) JBCJ 641 (HC),** मामला में अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामला में प्रयोज्य नहीं है बल्कि **मनीष उज्जवल (ऊपर)** में अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामला में पूर्णतः प्रयोज्य है।

7. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थियों द्वारा प्रतिशपथपत्र दाखिल किया गया है। प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता संजय पिपरवाल तर्क करते हैं कि झारखंड कर्मचारी चयन आयोग ने परीक्षा संचालित करने के बाद मॉडल उत्तरों को प्रकाशित किया और व्यथित उम्मीदवारों से आपत्ति/सुझाव आमंत्रित भी किया। उसके अनुसरण में उम्मीदवारों ने जे०एस०एस०सी० के समक्ष अपनी आपत्ति/सुझाव भी प्रस्तुत किया है जिन्हें सत्यापन एवं सुधार के लिए विशेषज्ञ कमिटी के समक्ष रखा गया था और विशेषज्ञ कमिटी द्वारा किए गए सुधार तथा दिए गए सलाह के आधार पर अंतिम पुनरीक्षित मॉडल उत्तर प्रकाशित किया गया था और अंतिम पुनरीक्षित मॉडल उत्तरों के आधार पर उम्मीदवारों की उत्तर पुस्तिकाएँ मूल्यांकित की गयी थी। और तत्पश्चात उम्मीदवारों जिन्होंने विज्ञापन के निबंधनानुसार न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त किया है को शारीरिक परीक्षा एवं मेडिकल स्वस्थता परीक्षा में उपस्थित होने की अनुमति दी गयी थी और इस दशा में परिणाम के प्रकाशन तथा सफल उम्मीदवारों की नियुक्ति के लिए अनुशंसा करने में कोई अवैधता नहीं है। विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि विशेषज्ञ कमिटी का मत/सुझाव जे०एस०एस०सी० पर बाध्यकारी है और जे०एस०एस०सी० विषय विशेषज्ञ के मत के आधार पर उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन का काम करता है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि जे०एस०एस०सी० ने पहले ही सफल उम्मीदवारों की नियुक्ति की अनुशंसा किया है और याची ने उन सफल उम्मीदवारों को वर्तमान रिट आवेदन में पक्ष प्रत्यर्थीगण नहीं बनाया है और इस दशा में यह रिट आवेदन पोषणीय नहीं है और आवश्यक पक्ष के गैर संयोजन के आधार पर इस माननीय न्यायालय द्वारा खारिज किए जाने योग्य है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि याची ने चयन प्रक्रिया के समापन के बाद चयन प्रक्रिया को चुनौती दिया है जो याची का बाद में सोचा गया विचार है और इसे इस चरण पर ग्रहण नहीं किया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता आगे तर्क करते हैं कि परीक्षा के दौरान आपत्ति कभी नहीं की गयी है और न ही ग्रेस अंक के संबंध में कोई अभ्यावेदन दिया गया है। परिणाम को इसके प्रकाशन के बाद चुनौती दी गयी है। यदि याची वस्तुतः व्यथित था, परिणाम के प्रकाशन के पहले इसे चुनौती देने की छूट याची को थी। याची ने केवल असफल घोषित किए जाने के बाद परिणाम और चयन प्रक्रिया को चुनौती देना चुना है और प्रश्नों के सिलेबस से बाहर होने का दावा किया है। विद्वान अधिवक्ता न्यायालय का ध्यान प्रतिशपथ पत्र के पैरा 34 की ओर आकृष्ट करते हैं जिसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

''34. कि यह कथन किया गया है कि वर्तमान रिट आवेदन भी पोषणीय नहीं है और इस तथ्य की दृष्टि में कि जे० एस० एस० सी० ने पहले ही सफल उम्मीदवारों की नियुक्ति के लिए अनुशंसा किया है और याची ने इस रिट आवेदन में उन सफल उम्मीदवारों को पक्ष प्रत्यर्थीगण नहीं बनाया है और इस दशा में वर्तमान रिट आवेदन आवश्यक पक्षों के गैर-संयोजन के आधार पर पोषणीय नहीं है और इस न्यायालय द्वारा खारिज किए जाने योग्य है।''

8. अपने तर्कों को पुख्ता करने के लिए प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(i) ***रणविजय सिंह एवं अन्य बनाम उ० प्र० राज्य एवं अन्य,*** *(2018)1 JLJR 99*

(ii) ***हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग बनाम मुकेश ठाकुर एवं एक अन्य, (2010)6 SCC 759;*** *तथा*

(iii) ***श्रीमती प्रभा रंजन गुप्ता बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2014)3 JCR 291 Jhr.***

9. चाहे जो भी हो, पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करने पर इस न्यायालय का सुविचारित दृष्टिकोण है कि चूँकि परीक्षा पहले ही समाप्त हो गयी है और परिणाम प्रकाशित किया गया है, वर्तान मामला में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। भले ही याची ने मामला बनाया है कि प्रत्येक एक अंक वाले 11 प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे और इस दशा में याची उन प्रश्नों के लिए ग्रेस अंक का हकदार है, आवेदन निम्नलिखित आधारों पर ग्रहण नहीं किया जा सकता है:–

(i) परीक्षा समाप्त हो गयी है और परिणाम प्रकाशित किया गयी है।

(ii) याची परीक्षा प्रक्रिया में पूर्णतः भाग लेने के बाद और केवल असफल घोषित किए जाने के बाद इस न्यायालय के पास आया है।

(iii) भले ही अभी भी रिक्तियाँ हैं, याची को नियुक्ति के लिए अधिकार प्रोद्भूत नहीं होता है क्योंकि रिक्तियाँ भरा जाना नियोक्ता के कार्यक्षेत्र में हैं और उम्मीदवारों का विधिक अधिकार नहीं है।

(iv) याची ने आपत्ति कभी नहीं किया बल्कि परीक्षा में पूर्णतः भाग लिया। ग्रेस अंक के प्रदान के लिए प्रार्थना के साथ याची के अलावा कोई भी इस न्यायालय के पास नहीं आया है।

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग बनाम मुकेश ठाकुर एवं एक अन्य (ऊपर)** में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

''20. उक्त की दृष्टि में, स्वयं प्रश्न पत्र एवं उत्तर पुस्तिका का परीक्षण करना उच्च न्यायालय के लिए अनुज्ञेय नहीं था, विशेषतः, जब आयोग ने उम्मीदवारों की परस्पर मेधा का निर्धारण किया था। यदि प्रश्नपत्र विरचित करने अथवा उत्तर के मूल्यांकन में अंतर था, यह परीक्षा के लिए उपस्थित होने वाले समस्त उम्मीदवारों के लिए और न कि केवल प्रत्यर्थी सं० 1 के लिए हो सकता था। यह संयोग की बात है कि उच्च न्यायालय विधि से संबंधित उत्तर पुस्तिकाओं का परीक्षण कर रहा था। यदि यह भौतिकी, रसायन शास्त्र एवं गणित जैसे अन्य विषय होते, हम यह समझने में अक्षम हैं कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा रास्ता अपनाया जा सकता था। अतः, हमारा सुविचारित मत है कि ऐसा रास्ता उच्च न्यायालय के लिए अनुज्ञेय नहीं था।

24. उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन का विवाद्यक अब अनिर्णीत विषय नहीं है। इस विवाद्यक पर इस न्यायालय द्वारा महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक परीक्षा बोर्ड एवं एक अन्य बनाम पारितोष भूपेश कुमार सेठ आदि, AIR 1984 SC 1543, में विस्तारपूर्वक विचार किया गया था जिसमें इस न्यायालय ने इस प्रतिवाद को अस्वीकार किया कि पुनर्मूल्यांकन के लिए प्रावधान की अनुपस्थिति में, न्यायालय द्वारा इस प्रभाव का निर्देश जारी किया जा सकता है। न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि पुनः जाँच/सत्यापन/पुनर्मूल्यांकन प्रावधानित नहीं करने वाले नियमों/विनियमों में सम्मिलित नीतिगत निर्णय को भी चुनौती नहीं दी जा सकती है जब तक यह दर्शाने का आधार नहीं है कि स्वयं नीति किसी सांविधिक प्रावधान के उल्लंघन में है। न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित कियाः

''..... नीति बतौर यह विनिश्चित करना अनन्य रूप से विधानमंडल एवं इसके प्रतिनिधि के क्षेत्र के अंतर्गत है कि किस प्रकार संविधि सर्वोत्तम रूप से क्रियान्वित की जा सकती है और किन उपायों, अधिष्ठायी एवं प्रक्रियात्मक दोनों को अधिनियम के उद्देश्यों एवं प्रयोजनों की प्रभावकारी प्राप्ति के लिए नियमों अथवा विनियमों में सम्मिलित किया जाना होगा....

.....न्यायालय विधानमंडल और अधीनस्थ विनियम बनाने वाले निकाय द्वारा विकसित नीति की बुद्धिमता पर निर्णय नहीं कर सकता है। यह विवेकपूर्ण नीति हो सकती है जो अधिनियम के प्रयोजन को पूर्णतः कार्यान्वित करेगी अथवा इसमें प्रभावकारिता की कमी हो सकती है जो पुनरीक्षण एवं सुधार के लिए कहती हो। किंतु नियम अथवा विनियम में सम्मिलित नीति में कोई कमी इसे अधिकारातीत नहीं बनाएगी और न्यायालय इस आधार पर विखंडित नहीं कर सकता है कि इसके मत में यह बुद्धिमतापूर्ण अथवा विवेकशील नीति नहीं है बल्कि मूर्खतापूर्ण नीति भी है और कि यह वस्तुतः अधिनियम के प्रयोजन का कार्यान्वयन पूरा नहीं करेगा....''

रणविजय सिंह एवं अन्य बनाम उ०प्र०राज्य एवं अन्य (उपर) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के हाल के निर्णय में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

''31. हमारी ओर से हम जोड़ सकते हैं कि सहानुभूति अथवा करुणा उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन का निर्देश देने अथवा निर्देश नहीं देने के मामला में कोई भूमिका नहीं निभाती है। यद्यपि परीक्षा प्राधिकारी द्वारा गलती की जाती है, समस्त उम्मीदवार पीड़ित होते हैं। संपूर्ण परीक्षा प्रक्रिया केवल इसलिए पटरी से उतारने योग्य नहीं है कि कुछ उम्मीदवार गलत प्रश्न अथवा गलत उत्तर से निराश अथवा असंतुष्ट हैं और उनको कारित कुछ अन्याय का बोध करते हैं। समस्त उम्मीदवार समान रूप से पीड़ित होते है, यद्यपि उनमें से कुछ अधिक पीड़ित हो सकते हैं किंतु उससे बचा नहीं जा सकता है चूँकि गणितीय सटीकता सदैव संभव नहीं है। इस न्यायालय ने गतिरोध से बचने का रास्ता दिखाया है– संदिग्ध अथवा उल्लंघन करने वाले प्रश्न को अपवर्जित करना।''

इस माननीय न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **राकेश कुमार बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य (ऊपर)** में **एम०सी० गुप्ता (डॉ०) बनाम अरुण कुमार गुप्ता (डॉ०), (1979)2 SCC 339** में पारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए इसे दोहराया है। **एम०सी० गुप्ता (डॉ०) बनाम अरुण कुमार गुप्ता (डॉ०)** में पारित निर्णय का प्रासंगिक पैरा नीचे उद्धृत किया जाता है:–

''जब विशेषज्ञ क्षेत्र में तकनीकी अनुभव एवं उच्च एकेडमिक अर्हता वाले विशेषज्ञों द्वारा दिए गए सलाह एवं सहायता के साथ आयोग द्वारा चयन किया जाता है, न्यायालयों को विशेषज्ञों द्वारा अभिव्यक्त मत में हस्तक्षेप करने में धीमा होना चाहिए जब तक उनके विरूद्ध असद्भाव का अभिकथन नहीं है। विशेषज्ञ जो न्यायालयों की तुलना में अपने द्वारा सामना किए गए समस्या से अधिक परिचित है पर एकेडमिक मामलों का निर्णय छोड़ना न्यायालयों के लिए अधिक विवेकशील एवं सुरक्षित होगा।''

11. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव रंजन ने ग्रेस अंक प्रदान करने के लिए याची के मामला पर विचार करने के लिए **पी०के० वेलसन एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (ऊपर)** में निर्णय पर भारी विश्वास किया है। किंतु उक्त निर्णय वर्तमान मामला में बिलकुल प्रयोज्य नहीं है क्योंकि पी०के०वेलसन मामला में समरूप स्क्रीनींग परीक्षा के संबंध में अन्य उम्मीदवारों को ग्रेस अंक भी दिया गया था और न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि मामला के विचित्र तथ्यों में अपीलार्थीगण समान व्यवहार किए जाने के हकदार थे किंतु वर्तमान मामला में किसी भी उम्मीदवार को ग्रेस अंक नहीं दिया गया है और किसी भेदभाव अथवा समरूपता का प्रश्न नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विचित्र तथ्यों एवं परिस्थितियों में हस्तक्षेप किया था किंतु यहाँ हस्तक्षेप का मामला नहीं बनता है और मामला सुभिन्न है। याची ग्रेस अंक पाने का हकदार नहीं है क्योंकि अन्य उम्मीदवार जो परीक्षा में उपस्थित हुए इसमें उत्तीर्ण हुए और इस दशा में याची कोई ग्रेस अंक पाने का हकदार नहीं था। वर्तमान मामला के तथ्य **पी०के०वेलसन** मामला के तथ्यों से संपूर्णत: भिन्न हैं। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए अन्य मामले भी वर्तमान मामला में प्रयोज्य नहीं है।

समरूप विवाद्यक **डब्लू०पी०(सी०) सं० 4184 वर्ष 2005 (बिमलेश कुमार बनाम झारखंड लोक सेवा आयोग एवं एक अन्य)** में इस माननीय न्यायालय के विचारार्थ आया और इस माननीय न्यायालय ने उक्त रिट आवेदन खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि याची किसी आपत्ति के बिना परीक्षा में उपस्थित हुआ था और बाद में परिणाम घोषित किए जाने और नियुक्ति किए जाने के बाद रिट आवेदन दाखिल किया गया है और इस दशा में मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

12. रण विजय सिंह एवं अन्य बनाम उ०प्र० राज्य एवं अन्य में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि संदेह की स्थिति में लाभ उम्मीदवार के बजाए परीक्षा प्राधिकारी को मिलना चाहिए। भले ही कुछ प्रश्न सिलेबस से बाहर के थे, उम्मीदवार ग्रेस अंक के आवंटन के लिए इसका लाभ नहीं ले सकते हैं।

13. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों, नियमों, दिशा निर्देशों, विधिक प्रतिपादनाओं के समेकित प्रभाव के कारण मैं 26.11.2017 को ली गयी सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में सहायक सब इंसपेक्टर एवं कॉंस्टेबल के पद से सब इंसपेक्टर के पद पर नियुक्ति के लिए प्रत्यर्थी जे०एस०एस०सी० द्वारा संचालित भरती प्रक्रिया में कोई अवैधता अथवा कोई दुर्बलता नहीं पाता हूँ। वर्तमान रिट आवेदन में गुणागुण नहीं है।

14. परिणामस्वरूप, रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय अपरेश कुमार सिंह एवं रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्तिगण

सुरेश प्रसाद

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 658 of 2018. Decided on 1st May, 2018.

(क) परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धारा 138—चेक का अनादर—दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध विशेष अनुमति आवेदन—यह हो सकता है कि बैंक की गलती के कारण चेक इस तथ्य के बावजूद लौटाया जा सकता है कि खाता जिससे राशि का भुगतान किया जाना है में पर्याप्त शेष है—ऐसे मामलों में यदि चेक के लेखीवाल को नोटिस के बिना अभियोजित किया जाता है, इसका परिणाम इमानदार लेखीवाल को अत्यन्त अन्याय एवं कठिनाई में होगा—कोई ऐसे मामलों की कल्पना भी कर सकता है जहाँ सुआशयित लेखीवाल अनवधानता के कारण अपने नियंत्रण के परे कारणों से आवश्यक व्यवस्था करने से चूक सकता था यद्यपि उसने अपने द्वारा लिखे गए चेक का आदर करने का आशय रखा—विधि अनवधानता अथवा उपेक्षा द्वारा प्रेरित ऐसी चूकों को क्षमा योग्य मानती है परन्तु यह कि लेखीवाल नोटिस के बाद संशोधन करे और विहित अवधि के भीतर राशि का भुगतान करे—यह पूर्णतः अतार्किक प्रतिपादना है कि अभियुक्त को उसी तिथि जिस पर रजिस्टर्ड नोटिस प्रेषित किया गया था पर नोटिस प्राप्त करता हुआ समाझा जाएगा—विचारण न्यायालय समयपूर्व के रूप में परिवाद अस्वीकार करने में सही था—याची ने आक्षेपित निर्णय के विरूद्ध अपील की विशेष अनुमति अनुज्ञात करने का कोई अच्छा आधार नहीं बनाया है—याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 9, 11, 12 एवं 13)

(ख) संविधि का निर्वचन–उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन का नियम तथा रिष्टि नियम–संविधि का निर्वचन करते समय, न्यायालय को वह अर्थान्वयन अपनाना चएहिए जो रिष्टि का दमन तथा उपचार अग्रतर करता हो। (पैरा 12)

निर्णयज विधि.–1584(76) ER 637—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Birendra Burman, For the Petitioner; Mr. Satish Kr. Keshri, For the Opp. Parties.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याची ने परिवाद मामला सं॰ 686 वर्ष 2013/ टी॰ आर॰ सं॰ 339 वर्ष 2017 में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, राँची द्वारा 25.1.2017 को पारित दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध अपील करने के लिए विशेष अनुमति इप्सित किया है जिसके अधीन एकमात्र अभियुक्त/विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन आरोप से इस आधार पर दोषमुक्त किया गया है कि परिवादी ने 5.3.2013 को रजिस्टर्ड कानूनी नोटिस जारी किए जाने के 16वें दिन पर अर्थात 21.3.2013 को समयपूर्व परिवाद दाखिल किया था।

3. वर्तमान दां॰ एम॰ पी॰ दाखिल करने में 352 दिनों का विलंब हुआ है जिसे आई॰ ए॰ सं॰ 2660 वर्ष 2018 के माध्यम से माफ किया जाना इप्सित किया गया है। याची ने स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया है कि वह कुछ बीमारियों से पीड़ित 70 वर्षीय सेवानिवृत्त व्यक्ति है और दिनांक 25.1.2017 के आक्षेपित

निर्णय की जानकारी होने के बाद उसने 1.3.2017 को आक्षेपित आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त किया जिसमें कुछ समय लगा। उसने अधिवक्ता को काम पर लगाने के लिए किसी तरह निधि का प्रबंध किया और तत्पश्चात एस॰ एल॰ ए॰ नाम के साथ मामला दाखिल किया जिसे एस॰ एल॰ ए॰ सं॰ 2 वर्ष 2017 के रूप में दर्ज किया गया था। स्टाम्प रिपोर्ट ने गलत नाम के बारे में इंगित किया और तत्पश्चात इसे दिनांक 15.2.2018 के आदेश के तहत दां॰ एम॰ पी॰ में संपरिवर्तित किया गया था। तत्पश्चात् यह उपदर्शित करते हुए कि याचिका 352 दिनों द्वारा समय वर्जित है, स्टाम्प रिपोर्ट द्वारा एक अन्य त्रुटि इंगित की गयी थी। अत: विलंब आशयपूर्ण नहीं है बल्कि गलत नाम द्वारा कारित अनवधानता के कारण है। यदि याचिका की दाखिली की तिथि 21.3.2017 को गिनी जाती है, दिनांक 25.1.2017 के आदेश से याचिका दाखिल करने में शायद ही कोई विलंब हुआ है।

4. वर्तमान आई॰ ए॰ में स्पष्टीकरण पर विचार करने पर हम पाते हैं कि विलंब वस्तुत: गलत नाम के कारण हुआ है और याचिका आरंभ में आक्षेपित निर्णय पारित होने के 60 दिनों से न्यून के भीतर 21.3.2017 को दाखिल किया गया था। शेष विलंब स्टाम्प रिपोर्ट द्वारा त्रुटि इंगित किए जाने के बाद नाम की शुद्धि के प्रति अभ्यारोपणीय है। आई॰ ए॰ सं॰ 2660 वर्ष 2018 निपटाया जाता है।

5. हमने अपील करने की विशेष अनुमति इप्सित करने वाली प्रार्थना के गुणागुण पर याची के विद्वान अधिवक्ता एवं विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ के निवेदन पर विचार किया है।

6. दिनांक 21.3.2013 को दाखिल परिवाद याचिका के माध्यम से किए गए अभिकथन दर्शाते हैं कि छह माह के भीतर इसको लौटाने का वादा के साथ अभियुक्त/वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के अनुरोध पर 4,50,000/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया था। किंतु, अभियुक्त ने परिवादी के घर आना जाना छोड़ दिया और लंबे समय तक नहीं आया जिसने उसके सद्भाव के बारे में संदेह सृजित किया। अंतत: परिवादी ने राशि के प्रति संदाय के लिए अभियुक्त पर कुछ दबाव डाला जब अभियुक्त द्वारा स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, डोरन्डा शाखा, राँची पर लिखा गया 4,50,000/- रुपयों का दिनांक 12.2.2013 का चेक सं॰ 471039 जारी किया गया था। चेक नगदकरण के लिए जमा किया गया था किंतु दिनांक 14.2.2013 के रिटर्न मेमो पर पृष्ठांकन ''अपर्याप्त निधि'' के साथ अनादृत किया गया था। तत्पश्चात, परिवादी ने 5.3.2013 को रजिस्टर्ड डाक द्वारा अभियुक्त को कानूनी नोटिस भेजा किंतु परिवादी को अभियुक्त ने भुगतान नहीं किया था। तब परिवादी ने 21.3.2017 को अर्थात रजिस्टर्ड कानूनी नोटिस जारी किए जाने के 16वें दिन पर वर्तमान मामला दाखिल किया।

7. परिवादी ने सी॰ डब्लू॰ 1 के रूप में स्वयं का परीक्षण करवाया और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, डोरन्डा शाखा, राँची के 4,50,000/- रुपयों के लिए दिनांक 12.2.2013 का चेक सं॰ 471039 प्रदर्श 1, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, डोरन्डा शाखा, राँची के दिनांक 14.2.2013 को चेक रिटर्न मेमो प्रदर्श 2, दिनांक 5.3.2013 का कानूनी नोटिस प्रदर्श 3 और दिनांक 5.3.2013 का डाक रसीद प्रदर्श 4 प्रदर्शित किया। विद्वान विचारण न्यायालय विचारण के समापन पर इस मत पर आया कि याचिका समयपूर्व थी क्योंकि एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138(c) के अधीन आज्ञापक आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया गया था। परिवाद तिथि जिससे एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन वाद हेतुक उद्भूत हुआ के एक माह के भीतर एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 142(b) के मुताबिक दाखिल किया जाना था।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को अन्य बातों के साथ यह प्राख्यान करते हुए चुनौती दिया है कि एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138(c) की आवश्यकता परिपूर्ण होती है जब एक बार लेखीवाल अर्थात परिवादी ने लेखीवाल के सही पता पर रजिस्टर्ड डाक के माध्यम से कानूनी नोटिस प्रेषित कर देता है। चेक के लेखीवाल को लिखित में नोटिस देने के अवयवों को परिपूर्ण करने के लिए परिवादी की ओर से अधिनियम की 138(c) के निबंधनानुसार किसी अन्य कृत्य

की आवश्यकता नहीं थी। असंदत्त के रूप में चेक की वापसी के संबंध में बैंक द्वारा जारी रिटर्न मेमो के 30 दिनों के भीतर नोटिस जारी किया गया था। लेखीवाल उक्त नोटिस की प्राप्ति की तिथि के 15 दिनों के भीतर उक्त राशि का भुगतान करने में विफल रहा था। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 के निबंधनानुसार उपधारणा परिवादी के पक्ष में जाएगी क्योंकि दस्तावेज अंतर्विष्ट करने वाले पत्र का तामीला समुचित रूप से संबोधित करके, पूर्वभुगतान करके और रजिस्टर्ड डाक द्वारा भेजकर प्रभावी बनाया गया समझा जाएगा। जब तक विपरीत सिद्ध नहीं किया जाता है, इसे उस समय पर प्रभावी बनाया गया समझा जाएगा जिस समय पर डाक के सामान्य क्रम में पत्र डिलीवर किया जाएगा। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 114(f) के प्रावधानों के निबंधनानुसार नैसर्गिक घटनाओं के सामान्य क्रम, मामला विशेष के तथ्यों के संबंध में मानव आचरण ध्यान में रखकर न्यायालय अधिसंभाव्य तथ्यों का अस्तित्व उपधारित कर सकता है। याची ने मामला विशेष में व्यवसाय के सामान्य क्रम का अनुसरण किया है। ऐसी कोई सांविधिक आज्ञा नहीं है कि रजिस्टर्ड कवर के अधीन नोटिस का तामील केवल जारी किए जाने की तिथि से 30 दिनों के अवसान पर प्रभावी बनाया गया समझा जाएगा यदि रजिस्टर्ड डाक कवर लौटाया नहीं जाता है अथवा ऐसे पृष्ठांकन के साथ अभिस्वीकृति लौटायी नहीं जाती है। वह निवेदन करते हैं कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 5 नियम 19A के प्रासंगिक प्रावधान 1.7.2002 के प्रभाव से विलोपित किए गए हैं।

9. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि याची का निवेदन किसी सूरत में स्वीकार करने योग्य नहीं है। उसने दिनांक 5.3.2013 के रजिस्टर्ड नोटिस को जारी करने की तिथि से नोटिस का तामील समझा गया उपधारित किया है और रजिस्टर्ड नोटिस जारी करने की तिथि से गिनते हुए 16वें दिन पर अर्थात 21.3.2013 को परिवाद दाखिल किया है। यह पूर्णत: अतार्किक प्रतिपादना है कि अभियुक्त को उसी दिन पर जिस पर रजिस्टर्ड नोटिस भेजा गया था नोटिस प्राप्त करता हुआ समझा जाएगा। अत: विद्वान विचारण न्यायालय समयपूर्व होने के नाते परिवाद अस्वीकार करने में सही था।

10. हमने पक्षों के निवेदन पर विस्तारपूर्वक विचार किया है और याची के प्रतिवाद पर भी गंभीरतापूर्वक विचार किया कि भले ही रजिस्टर्ड कवर के अधीन नोटिस का तामील समझा गया उपधारित करने के लिए समयावधि विहित नहीं है, यदि रजिस्टर्ड कवर अथवा अभिस्वीकृति पृष्ठांकन के साथ अथवा इसके बिना लौटायी नहीं जाती है, नोटिस स्वयं प्रेषण की तिथि पर प्राप्त किया गया समझा जाएगा और अधिनियम की धारा 142(b) एवं 138(c) के निबंधनानुसार परिवाद दाखिल करने के लिए 15 दिन रजिस्टर्ड कानूनी नोटिस भेजने की तिथि से गिने जा सकते थे।

11. हम एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन सम्मिलित प्रावधान के उद्देश्य एवं आज्ञा को अनदेखा नहीं कर सकते हैं जिन्हें उन बेईमानों को दंडित करने के लिए अधिनियमित किया गया था जो ऐसा करने का वस्तुत: आशय रखे बिना चेक जारी करने अपने दायित्व का उन्मोचन करने का तात्पर्य रखते थे। सिविल दायित्व के अतिरिक्त, चेकों के ऐसे बेइमान लेखीवालों पर दांडिक दायित्व अधिरोपित किया गया था। किंतु, अभियोजन कतिपय शर्तों के अध्यधीन किया गया था। चेक के इमानदार लेखीवाल के अनावश्यक अभियोजन से बचने की दृष्टि से अथवा लेखीवाल को सुधार करने का अवसर देने की दृष्टि से धारा 138 का परन्तुक प्रावधानित करता है कि चेक के अनादर के बाद पाने वाला अथवा चेक धारक को सम्यक क्रम में लेखीवाल को भुगतान पूरा करने के लिए लिखित नोटिस देना होगा। लेखीवाल को भुगतान करने के लिए नोटिस की प्राप्ति की तिथि से 15 दिनों का समय दिया गया है और यदि वह

भुगतान करने में विफल रहता है, उसे अभियोजित किया जा सकता है। उद्देश्य जिसे परन्तुक प्राप्त करना इप्सित करता है, बिलकुल स्पष्ट है। यह हो सकता है कि बैंक की गलती के कारण इस तथ्य के बावजूद कि खाता में पर्याप्त शेष था जिससे राशि का भुगतान किया जाना है, चेक लौटाया जा सकता है। ऐसे मामला में यदि चेक के लेखीवाल को नोटिस के बिना अभियोजित किया जाता है, इसका परिणाम इमानदार लेखीवाल को घोर अन्याय एवं कठिनाई में होगा। ऐसे मामलों की कल्पना की जा सकती है जहाँ सुआशयित लेखीवाल ने अपने नियंत्रण के परे कारणों से आवश्यक व्यवस्था करने में अनवधानता के कारण चूक सकता था यद्यपि उसने वास्तविक रूप से अपने द्वारा लिखे गए चेक का आदर करने का आशय रखा। विधि अनवधानता अथवा उपेक्षा से प्रेरित ऐसी चूकों को क्षमा योग्य मानती है परन्तु यह कि लेखीवाल नोटिस के बाद सुधार करता है और विहित अवधि के भीतर राशि का भुगतान करता है। इसी कारण से धारा 138 के परन्तुक का खंड (d) प्रावधानित करता है कि धारा लागू नहीं होगी जबतक चेक का लेखीवाल उक्त नोटिस की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर भुगतान करने में विफल नहीं होता है।

12. यह सुस्थापित है कि संविधि की व्याख्या करते हुए न्यायालय को ऐसा अर्थान्वयन अपनाना होगा जो रिष्टि का दमन करता है और उपचार अग्रसर करता है यह **हेडन मामला 1584(76) ER 637** में विश्वास किया गया सिद्धांत है जो अयोजनात्मक अर्थान्वयन और रिष्टि सिद्धांत के रूप में भी ज्ञात है। किंतु वर्तमान के प्रयोजनात्मक अर्थान्वय द्वारा भी हम याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दी गयी प्रतिपादना को स्वीकार करने में अक्षम हैं कि लेखीवाल प्रेषण की तिथि अर्थात 5.3.2013 को रजिस्टर्ड कानूनी नोटिस प्राप्त करता हुआ समझा जाएगा और कि वह उससे 15 दिनों के अवसान के पहले भुगतान करने का दायी होगा। ऐसी प्रतिपादना न केवल अयुक्तियुक्त अपितु पूर्णत: अतार्किक है।

13. मामला के ताथ्यिक मैट्रिक्स में की गयी चर्चा ध्यान में रख कर हम संतुष्ट है कि याची ने आक्षेपित निर्णय के विरूद्ध अपील की विशेष अनुमति के लिए कोई अच्छा आधार नहीं बनाया है। तद्नुसार, वर्तमान याचिका खारिज की जाती है।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

श्री छोटन साव

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.2734 of 2008. Decided on 13th June, 2018.

बिहार भूमि सुधार (महत्तम क्षेत्र का नियतिकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961—धारा 16(3)—अग्रक्रय—विक्रय की गयी संपत्ति का विवरण देने तथा कुछ ग्रामीणों के हस्ताक्षरों एवं पक्षों के तथाकथित हस्ताक्षरों को अंतर्विष्ट करने के अतिरिक्त निरीक्षण रिपोर्ट निरीक्षण पर कोई टिप्पण अंतर्विष्ट बिलकुल नहीं करता है—यह संपत्ति की सीमा अंतर्विष्ट नहीं करता है और उल्लेख नहीं करता है कि अग्रक्रयाधिकारी सहअंशधारी हैं अथवा विक्रय की गयी संपत्ति का पार्श्विक रैयत है—ऐसी लापरवाह रिपोर्ट के आधार पर आदेश पारित नहीं किया जा सकता था—आक्षेपित आदेश अपास्त और मामला अग्रक्रयाधिकारी की चौहद्दी एवं दर्जा

के प्रति विशेष निर्देश में विक्रय की गयी संपत्ति के संबंध में नया निरीक्षण संचालित करने के बाद तथा आदेश पारित करने के लिए भूमि सुधार उप समाहर्ता के पास वापस भेजा गया। (पैराएँ 15, 16 एवं 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Saurav Arun, For the Petitioner; Mr. Shamim Akhtar, For the State; Mr. Niraj Kishore, For the Resp. Nos. 5 and 6.

आदेश

याची के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री सौरभ अरूण सुने गए।

2. प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री शमीम अख्तर सुने गए।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 5 एवं 6 के लिए उपस्थित अधिवक्ता श्री नीरज किशोर सुने गए।

4. आरंभ में याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि रिट याचिका में पक्षों के मेमो में प्रत्यर्थी सं॰ 7 का क्रमांक संख्या गलत रूप से प्रत्यर्थी सं॰ 6 के रूप में टंकित किया गया है। वह आगे निवेदन करते हैं कि उन्हें दिन के दौरान इसे सुधारने की अनुमति दी जा सकती है।

5. अनुमति दर्ज की गयी।

6. दिन के दौरान आवश्यक सुधार किया जाए।

7. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोष के लिए दाखिल की गयी है:–

''मूल तथ्यों को जानबूझकर अनदेखा करने पर/ विचार में लिए बिना और याची के मूल अधिकारों का अतिलंघन करते हुए, प्रश्नगत विवाद्यक पर विवेक का इस्तेमाल किए बिना भूमि सुधार उपसमाहर्ता, रामगढ़ द्वारा पारित दिनांक 20.12.2006 के आदेश और आई० सी० अपील सं० 11/2006 में अपर समाहर्ता भूमि महत्तम सीमा हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 11.5.2007 के आदेश और पुनरीक्षण सं० 37/2007 में सदस्य, राजस्व बोर्ड, झारखंड के न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 13.2.2008 के आदेशों के अभिखंडन के लिए। आदेश पारित करने के लिए जिन्हें मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों और न्याय के हित में सुयोग्य एवं समुचित समझा जा सकता है।''

8. दिनांक 12.4.2018 के आदेश के तहत इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी राज्य को अग्रक्रय मामला सं॰ 1 वर्ष 2006-07 का अभिलेख भूमि सुधार उप समाहर्ता के न्यायालय से प्रस्तुत करने का निर्देश दिया और इस आदेश के अनुसरण में अभिलेख प्रस्तुत किए गए थे और परिशीलन के लिए न्यायालय को प्रस्तुत किए गए थे। वर्तमान पक्षों ने भी अवर न्यायालय अभिलेख का परिशीलन किया है।

9. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 20.12.2006 का आक्षेपित आदेश दिनांक 25.11.2006 की निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर पारित किया गया है और उक्त निरीक्षण रिपोर्ट प्रत्यर्थी राज्य द्वारा यथा प्रस्तुत अग्रक्रय मामला सं॰ 1 वर्ष 2006-07 के अभिलेख के पृष्ठ 15 पर है। अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि बिहार भूमि सुधार (महत्तम क्षेत्र का नियतकरण एवं अधिशेष भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 की धारा 16(3) के अधीन आदेश पारित करने के प्रयोजन से आवश्यक जाँच नहीं की गयी है और वस्तुत: संपत्ति की चौहद्दी भी निरीक्षण रिपोर्ट में उल्लिखित नहीं की गयी है। निरीक्षण रिपोर्ट इस पर भी विचार नहीं करती है कि अग्रक्रयाधिकारी सहअंशधारी है या विक्रय की गयी संपत्ति का पार्श्विक रैयत। वह निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश में इस निरीक्षण रिपोर्ट को निर्दिष्ट किया गया है और इस निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर कतिपय निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं जो निरीक्षण रिपोर्ट से

सिद्ध नहीं होते हैं और तदनुसार, भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है।

10. याची के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा मामला के इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है और यह प्रतीत होता है कि अपीलीय एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी ने निरीक्षण रिपोर्ट का परिशीलन करने का परवाह नहीं किया है और आक्षेपित आदेश पारित किए गए हैं। वह यह निवेदन भी करते हैं कि यद्यपि वह समस्त तीनों न्यायालयों में मामला हार चुके हैं किंतु आदेशों की पूर्वोक्त विकृतता के कारण ये समस्त तीनों आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं और नया आदेश पारित करने की आवश्यकता है। वह निवेदन करते हैं कि मामला समुचित निरीक्षण करने के बाद तथा पक्षों को सुनने के बाद नए सिरे से विचार किए जाने के लिए भूमि सुधार उप समाहर्ता, रामगढ़ को वापस भेजा जाना चाहिए।

11. दूसरी ओर, प्राइवेट प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अग्रक्रय आवेदन सही प्रकार से दाखिल किया गया था और यह पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 16(3) के प्रावधानों के अधीन समस्त शर्तों को संतुष्ट करता है।

12. किंतु, प्रत्यर्थी प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता तथाकथित निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर आक्षेपित आदेश पारित किया जाना न्यायोचित ठहरा नहीं सके थे जो आवश्यक विवरण अंतर्विष्ट नहीं करती है जिनका पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 16(3) के अधीन आदेश पारित करने के प्रयोजन से निरीक्षण किया जाना आवश्यक है।

13. राज्य के अधिवक्ता निरीक्षण रिपोर्ट निर्दिष्ट करके यह तथ्य विवादित नहीं कर सके थे कि निरीक्षण रिपोर्ट में संपत्ति की चौहद्दी का उल्लेख नहीं किया गया है और किसी चीज का उल्लेख नहीं किया गया है। कि क्या अग्रक्रयाधिकारी विक्रय की गयी संपत्ति का सहअंशधारी है अथवा विक्रय की गयी संपत्ति का पार्श्विक रैयत है यद्यपि आक्षेपित आदेश भूमि सुधार उप समाहर्ता द्वारा अन्य बातों के साथ निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर पारित किया गया है और भूमि सुधार उप समाहर्ता का आदेश अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण अधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया है।

14. पक्षों को सुनने के बाद और अग्रक्रय मामला सं॰ 1 वर्ष 2006-07 में अभिलेख जिन्हें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है सहित अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार करते हुए यह न्यायालय भूमि सुधार उप समाहर्ता, रामगढ़ द्वारा पारित दिनांक 20.12.2006 का आदेश, एल॰ सी॰ अपील सं॰ 11/2006 में अपर समाहर्ता भूमि महत्तम सीमा, हजारी बाग द्वारा पारित दिनांक 11.5.2007 का आदेश और सदस्य, राजस्व बोर्ड, झारखंड के न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण सं॰ 37/2017 में पारित दिनांक 13.2.2008 का आदेश केवल इस कारण से अपास्त करने के इच्छुक हैं कि प्रथम आक्षेपित आदेश, जिसे भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा अन्य बातों के साथ निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर पारित किया गया था, स्वयं विक्रय हैं दिनांक 25.11.2006 की निरीक्षण रिपोर्ट के अंतर्वस्तु को नीचे उद्धृत किया जाता है:–

''भूमि सुधार उपसमाहर्त्ता रामगढ़, हजारीबाग द्वारा किए गए स्थल जाँच स्थल जाँच मेमो

भू–हदबन्दी वाद संख्या– 01/06-07

भैरो साव वगैरह बनाम् छोटन साव वगैरह

ग्राम–बारु घुटू *अंचल का नाम–माण्डू*

स्थल निरीक्षण की तिथि–25/11/06

प्रस्तावित भूमि का विवरण– बारु घुटू, खाता नं०–7, प्लाट नं०–504, रकवा–0.07 एकड़

ग्राम	*खाता नं०*	*प्लौट नं०*	*रकबा*	*चौहद्दी*
बारु घुटू	*7*	*504*	*0.07*	*उ०–*
				द०–
				पु०–
				प०–

ह०–भैरो साव

25.11.2006 *ह०–छोटन साव*

प्रथम पक्ष का हस्ताक्षर *द्वितीय पक्ष का हस्ताक्षर*

उपस्थित ग्रामीणों का हस्ताक्षर

1. ह०–अस्पष्ट

2. ह०–जीवलाल साव

3. ह०–पप्पु कुमार गुप्ता

4. ह०–अशोक कुमार

5.

ह०–अस्पष्ट

25.11.06

भूमि सुधार उपसमाहर्त्ता

रामगढ़, हजारीबाग।''

15. यहाँ उपर उद्धृत निरीक्षण रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विक्रय की गयी संपत्ति का विवरण देने और कुछ ग्रामीणों के हस्ताक्षरों तथा पक्षों के तथाकथित हस्ताक्षरों को अंतर्विष्ट करने के अतिरिक्त निरीक्षण रिपोर्ट निरीक्षण पर कोई टिप्पण बिलकुल अंतर्विष्ट नहीं करता है। यह संपत्ति की चौहद्दी अंतर्विष्ट नहीं करता है और उल्लेख नहीं करता है कि अग्रक्रयाधिकारी विक्रय की गयी संपत्ति का सहअंशधारी अथवा पार्श्विक रैयत है।

16. इस न्यायालय का सुविचारित दृष्टिकोण है कि ऐसी लापरवाह निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर आदेश पारित नहीं किया जा सकता था और वस्तुतः निरीक्षण रिपोर्ट जिसे दिनांक 20.12.2006 के आक्षेपित आदेश में उल्लिखित किया गया है की अंतर्वस्तु का उल्लेख निरीक्षण रिपोर्ट में बिलकुल नहीं किया गया है। मामला के इस दृष्टिकोण में भूमि सुधार उपसमाहर्ता द्वारा पारित दिनांक 20.12.2006 का आक्षेपित आदेश विकृत है और अपास्त किए जाने योग्य है। अपीलीय प्राधिकारी अथवा पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा मामला के इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है और अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि उन्होंने दिनांक 25.11.2006 की निरीक्षण रिपोर्ट का परिशीलन करने का परवाह नहीं किया है।

17. इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए समस्त पूर्वोक्त आक्षेपित आदेशों को एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है और मामला विक्रय की गयी संपत्ति, विशेषतः अग्रक्रयाधिकारी की

चौहद्दी एवं हैसियत के संबंध में नया निरीक्षण करने के बाद नया आदेश पारित करने के लिए भूमि सुधार उपसमाहर्ता, रामगढ़ के पास वापस भेजा जाता है। पक्षों की उपस्थिति में निरीक्षण किया जाना है और निरीक्षण रिपोर्ट तैयार की जानी है और इसकी प्रति पक्षों को सौंपी जानी चाहिए। भूमि सुधार उप समाहर्ता को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर पक्षों को सुनने के बाद अग्रक्रय आवेदन पर नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

18. अग्रक्रय मामला सं॰ 1 वर्ष 2006-07 के अभिलेख जिन्हें भूमि सुधार उप समाहर्ता, रामगढ़ के न्यायालय से मंगाया गया था, एतद्द्वारा राज्य के अधिवक्ता को लौटाया जा रहा है।

19. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ रिट याचिका एतद्द्वारा निपटायी जाती है।

माननीय राजेश कुमार, न्यायमूर्ति

मुन्ना कनसेरा

बनाम

बीरेन्द्र शुक्ला एवं अन्य

Second Appeal No. 152 of 2015. Decided on 17th July, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 100—द्वितीय अपील—सामान्यतः पृथक अभिधान अपीलों में पारित डिक्रियों के विरूद्ध पृथक अपीलें दाखिल की जानी चाहिए—किंतु, यह अनुसरित नहीं होता है कि एकल द्वितीय अपील अपोषणीय के रूप में खारिज की जा सकती है अथवा की जानी चाहिए। (पैरा 2)

निर्णयज विधि.—AIR 1984 PATNA 220—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Sudhir Kumar Sharma, For the Appellant; None, For the Respondent.

आदेश

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. जहाँ तक त्रुटि सं॰ 2 का संबंध है, कार्यालय ने इंगित किया है कि व्यथित भाग एवं प्रार्थना भाग मामला संख्या केवल एक अभिधान अपील तक सीमित की जा सकती हैं। किंतु, दोनों अभिधान अपील सं॰ 6/13 एवं 9/13 के लिए डिक्री की प्रमाणित प्रति दाखिल की गयी है।

3. अपीलार्थी (मूल वादी) का मामला यह है कि वाद विक्रय विलेख सं॰ 75 वर्ष 2005 को अवैध, अकृत एवं शून्य घोषित करने के लिए दाखिल किया गया है और वादी पर तथा प्रतिवादी सं॰ 2 पर भी बाध्यकारी नहीं है। प्रतिवादी सं॰ 2 मूल वादी की पुत्री है।

4. वाद वादी एवं प्रतिवादी सं॰ 2 के पक्ष में डिक्री किया गया है।

5. व्यथित होकर, प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 3 ने दो पृथक अपीलों अर्थात अभिधान अपील सं॰ 6/13 तथा 9/13 दाखिल किया है। दोनों अपीलों में, 8.1.2015 के एक ही निर्णय के विरूद्ध दो प्रथम डिक्रियाँ तैयार की गयी है।

6. वर्तमान द्वितीय अपील अभिधान अपील सं॰ 6/13 एवं 9/13 में पारित दोनों डिक्रियों के विरूद्ध दाखिल की गयी है।

7. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने **हरिबंश सिंह बनाम बसिष्ठ कुमार एवं अन्य, AIR 1984 Patna 220,** में पटना उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय पर विश्वास किया है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक पैरा 5 नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *''5. सामान्यतया, पृथक अभिधान अपीलों में पारित डिक्रियों के विरूद्ध पृथक अपीलें दाखिल की जानी चाहिए किंतु क्या यह अनुसरित होता है कि उक्त उल्लिखित तथ्यों एवं परिस्थितियों में अपोषणीय के रूप में खारिज की जा सकती है या की जानी चाहिए? चूँकि पृथक अभिधान अपीलों में अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा विचार किए गए दो अनुतोषों की प्रार्थना एकल वाद में की गयी थी जिसे दोनों न्यायालयों द्वारा बहुलता के लिए दोषपूर्ण नहीं होने के रूप में समवर्ती रूप से और सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया गया था, मेरा दृष्टिकोण है कि वाद को पूर्णतः डिक्री करने के लिए वर्तमान द्वितीय अपील में वादीगण की प्रार्थना ग्रहण की जानी चाहिए और द्वितीय अपील समेकित अपील के रूप में मानी जानी चाहिए। अपने दृष्टिकोण का समर्थन करने के लिए श्री सिंह द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का दावा नहीं किया गया है। सी० पी० सी० के आदेश 41 का नियम 1 अपील ज्ञापन के साथ डिक्री की प्रति दाखिल करने की आज्ञा देता है और जैसा कथन ऊपर किया गया है, दोनों डिक्रियों की प्रतियाँ वर्तमान मामला में संलग्न की गयी हैं और डिक्री को चुनौती देने के लिए और वाद अपनी संपूर्णता में डिक्री किए जाने के लिए भुगतेय पूर्ण न्यायालय शुल्क का भुगतान किया गया है। अतः मैं अपोषणीय के रूप में अपील अस्वीकार करने का कोई कारण नहीं देखता हूँ।''*

8. हरिबंश सिंह (ऊपर) में पटना उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय की दृष्टि में कार्यालय द्वारा यथा इंगित त्रुटि सं॰ 2 एतद्द्वारा अनदेखा किया जाता है।

माननीय अपरेश कुमार सिंह एवं रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्तिगण

श्रीमती उषा

बनाम

महेश कुमार

AFOD no. 61 of 2016. Decided on 18th June, 2018.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अधीन मूल वाद (एम॰टी॰एस॰) सं॰ 34 वर्ष 2009 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 5.4.2016 के निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 13(1A)(ii)—तलाक—अपीलार्थी पत्नी द्वारा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का अननुपालन—पत्नी अपीलार्थी स्वयं अपने स्वीकरण के मुताबिक 1991 से अलग रह रही है—यद्यपि उसने पति के विरूद्ध विवाह में क्रूरता तथा हत्या कारित करने का प्रयास अभिकथित करते हुए भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 498A एवं 307 के अधीन दांडिक मामला दर्ज किया, यह पति की दोषमुक्ति में समाप्त हुआ—दांपत्य गृह छोड़ने और 1991 से अलग रहने के लिए अपीलार्थी की ओर से कोई युक्तियुक्त कारण नहीं बनाया जा सकता

है— अपने पक्ष में दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के बावजूद प्रत्यर्थी पति की ओर से दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए प्रयास विफल रहे हैं-जब एक बार पति के समाज से जुड़ने और उसके साथ साहचर्य करने में अपीलार्थी पत्नी की विफलता दर्शाते हुए अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य द्वारा अधिनियम वर्ष 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अवयव स्थापित किए गए है, प्रत्यर्थी पति के पास विवाह का विघटन इप्सित करने के समस्त कारण थे—अपील खारिज की गयी। (पैराएँ 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.—Mr. Badal Vishal, For the Appellant; Mr. Rajan Sahay, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.—पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान अपील व्यथित पत्नी (मूल वाद (एम॰ टी॰ एस॰) सं॰ 34 वर्ष 2009 में (प्रत्यर्थी) द्वारा विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, राँची द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 (1A) (ii) के अधीन पारित दिनांक 5.4.2016 के निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा पक्षों के बीच विवाह विघटित किया गया है। वाद वर्तमान प्रत्यर्थी/याची पति द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1A) (ii) के प्रावधानों का अवलंब लेते हुए केवल एक आधार पर संस्थित किया गया था कि वैवाहिक वाद सं॰ 501 वर्ष 1999 में पारित उसके पक्ष में दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के बावजूद प्रत्यर्थी पत्नी पति के समाज से नहीं जुड़ी थी और साहचर्य चालू नहीं किया था।

उक्त वाद में पक्षों द्वारा यथा अभिवचनित प्रासंगिक आवश्यक तथ्यों को संक्षेप में यहाँ नीचे निर्दिष्ट किया जा रहा है।

3. याची पति के मामला के मुताबिक, 28.6.1986 को जयपुर में हिंदू रीति-रिवाज के मुताबिक उनका विवाह संपन्न होने के बाद वे इंदौर में पति-पत्नी के रूप में साथ रहे। उनके विवाह संबंध से 10.1.1988 को जुड़वां पुत्र का जन्म हुआ था जो सारे समय याची पति के साथ रह रहे हैं। प्रत्यर्थी पत्नी ने किसी समुचित कारण के बिना अपने माता-पिता के साथ रहने के लिए 1991 से दांपत्य गृह छोड़ दिया। उसने 500/- रुपया प्रतिमाह की दर पर (अब 5000/- रुपया प्रतिमाह तक बढ़ाया गया) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण पाया। उसने सदर बाजार एवं धारा 307 के अधीन दांडिक मामला दाखिल किया था। जोरदार रूप से लड़े गए विचारण में अपर सत्र न्यायाधीश, इंदौर के विद्वान न्यायालय द्वारा याची पति को दोषमुक्त किया गया था और माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने भी व्यथित पत्नी द्वारा दाखिल अपील पर दोषमुक्ति का निर्णय अभिपुष्ट किया था। याची ने दांपत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन इप्ति करते हुए एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 501 वर्ष 1999 दाखिल किया था जिसे विद्वान कुटुम्ब न्यायालय, इंदौर द्वारा उसके पक्ष में 14.5.2001 को एकपक्षीय डिक्री किया गया था। जब दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए कदम विफल रहे, उसने प्रत्यर्थी के विरूद्ध 2.2.2006 को निष्पादन मामला सं॰ 501/1999/2006 संस्थित किया। वह उपस्थित होने से बची। अतः विद्वान निष्पादन न्यायालय ने यह उपधारित करते हुए कि वह याची के समाज से जुड़ने में दिलचस्पी नहीं रखती थी, दिनांक 28.3.2007 के आदेश के तहत निष्पादन मामला निपटाया। तत्पश्चात, वर्तमान वाद दाखिल किया गया था चूँकि दांपत्य गृह के प्रत्यास्थापन के लिए वाद में डिक्री पारित किए जाने की तिथि से एक वर्ष की अवधि बीतने के बावजूद प्रत्यर्थी याची के समाज से जुड़ने से बचते रही। वाद आरंभ में प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, इंदौर के समक्ष दाखिल किया गया था किंतु प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा दाखिल अंतरण याचिका सं॰ 473 वर्ष 2007 पर पारित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद इसे विद्वान कुटुम्ब न्यायालय, राँची को अंतरित किया गया था।

4. प्रत्यर्थी ने अपने लिखित कथन के माध्यम से प्राख्यान किया कि वह विकलांग महिला है और इंदौर में अपना मामला अग्रसर करने में अक्षम थी। उसे दहेज मांग पूरी नहीं करने के कारण विवाह में क्रूरता के अध्यधीन किया गया था। जुड़वां पुत्रों के जन्म के बाद उसके साथ किया गया अत्याचार बढ़ गया। उसके पति ने उसके पिता को उसकी ननद के विवाह के दौरान काफी धन खर्च करने के लिए मजबूर किया। याची ने 26.2.1991 को उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसको अपने पिता से एक लाख रुपया लाने को कहा। उसके इनकार करने पर उसके पति एवं ससुराल वालों ने उसको दो मंजिला भवन से नीचे फेंका जिसने उसे पूरी तरह पक्षाघात से पीड़ित किया क्योंकि उसका मेरूदंड टूट गया था। उसका प्रतिष्ठित अस्पताल में डेढ़ माह इलाज करवाया गया था और तत्पश्चात वह राँची आयी। याची ने उसके दो पुत्रों सहित उसका समस्त स्त्रीधन एवं अन्य सामान रख लिया। उसने अपने पति एवं ससुराल वालों के विरूद्ध दांडिक मामला संस्थित किया था किंतु धन के बल पर याची और उसके परिवार के सदस्यों ने प्रत्यर्थी को विचारण न्यायालय में साक्ष्य लाने से अवरूद्ध किया और वे दोषमुक्त हो गए। उसने अपने पति से भरण–पोषण पाना स्वीकार किया। उसने उक्त मामला में पारित एक पक्षीय डिक्री की जानकारी होने से इनकार किया। केवल निष्पादन मामला सं० 501 वर्ष 1999 में नोटिस के बाद उसे 14.5.2001 के दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के आदेश के बारे में जानकारी हुई। उसने निष्पादन मामला सं० 501 वर्ष 1999 में भी उत्तर भेजा था। प्रत्यर्थी पत्नी ने आगे कथन किया कि उसके पति ने क्रूरता के आधार पर तलाक इप्सित करते हुए कुटुम्ब न्यायालय, इंदौर के समक्ष तलाक वाद सं० 700 वर्ष 2002 संस्थित किया था जिसे अंतरण याचिका सं० 515 वर्ष 2003 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश द्वारा प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, राँची को अंतरित किया गया था। किंतु याची उक्त वाद में उपस्थित नहीं हुआ था जो व्यतिक्रम के लिए इसकी खारिजी की ओर ले गया। इन तथ्यों को छुपाते हुए वर्ष 2006 में निष्पादन मामला दाखिल किया गया था, इस दशा में पति को स्वयं अपनी गलती का लाभ लेने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

5. पक्षों के विरोधी अभिवचनों पर आधारित विद्वान कुटुम्ब न्यायालय द्वारा निम्नलिखित विवाद्यक विचार किए जाने के लिए विरचित किए गए थे:–

''I. क्या वाद पोषणीय है?

II. क्या याची के पास वाद हेतुक है?

III. क्या दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित करने के बाद साहचर्य हुआ?

IV. क्या याची अनुतोष, जैसा दावा किया गया है, का हकदार है?''

6. विचारण के दौरान याची पति ने स्वयं का अ० सा० 1 तथा किसी मुकेश नागर का अ० सा० 2 के रूप में परीक्षण करवाया। प्रत्यर्थी ने भी आर० डब्लू० 1 और अपने पिता प्रभु दयाल विजय का आर० डब्लू० 2 के रूप में परीक्षण करवाया।

याची ने एम० टी० एस० सं० 501 वर्ष 1999 में पारित निर्णय की प्रमाण पत्रित प्रति और विविध मामला सं० 51 वर्ष 1999 में प्रत्यर्थी पत्नी के अभिसाक्ष्य की प्रमाण पत्रित प्रति क्रमश: प्रदर्श 1 एवं 2 के रूप में प्रदर्शित किया।

प्रत्यर्थी ने अपनी ओर से निम्नलिखित दस्तावेजों को प्रदर्शित किया:–

''I.- प्रदर्श A एम० टी० एस० सं० 9 वर्ष 2004 (एच० एम० ए० 700 वर्ष 2002) की संपूर्ण ऑर्डर शीट की प्रमाण पत्रित प्रति है।

II. प्रदर्श B एम० टी० एस० 501 वर्ष 1999 की प्रमाण पत्रित प्रति है।

III.- प्रदर्श C अंतरण याचिका (सिविल) सं० 515/2003 में पारित आदेश की प्रमाण पत्रित प्रति है।

IV.- प्रदर्श D एवं D/1 डॉ० एन० पी० सिन्हा के दिनांक 14.12.1998, 14.12.1998 एवं 23.5.1998 के नुस्खों की प्रमाणपत्रित प्रतियाँ है।

V.- प्रदर्श E डॉ० पी० आर० प्रसाद के नुस्खा की प्रमाणपत्रित प्रति है।

VI.- प्रदर्श F दिनांक 23.11.2006 के नुस्खा की प्रमाणपत्रित प्रति है।

VIII.- प्रदर्श G दिनांक 18.12.2006 के नुस्खा की प्रमाणपत्रित प्रति है।

VIII.- प्रदर्श H डॉ० सुरेश्वर पांडे की दिनांक 14.2.2007 के नुस्खा की प्रमाण पत्रित प्रति है।

IX.- प्रदर्श I डॉ० पी० आर० प्रसाद की दिनांक 10.1.2007 के नुस्खा की प्रमाणपत्रित प्रति है।

X.- प्रदर्श J नागरमल मोदी सेवा सदन, राँची की दिनांक 17.10.2006 के नुस्खा की प्रमाणपत्रित प्रति है।

XI.- प्रदर्श K सुधीर सर्जिकल की दिनांक 20.12.2006 के कैशमैमो की प्रमाणपत्रित प्रति है।

XII.- प्रदर्श L श्रीमती उषा देवी के रोग विवरण की प्रमाणपत्रित प्रति है।

XIII.- प्रदर्श M से M/s जय हिन्द फार्मा की दिनांक 4.4.2002, भारत मेडिकल हॉल की दिनांक 4.4.2002, जय हिन्द फार्मा की दिनांक 1.12.2006, पेलेस ड्रग्स एवं कॉस्मेटिक्स की दिनांक 18.12.2006, 23.12.2006, 9.1.2007 आर 27.1.2007 के कैशमैमो रसीदों की प्रमाणपत्रित प्रतियां हैं।

XIV.- प्रदर्श N से N/1 लालपुर एक्सरे क्लिनिक की दिनांक 27.12.2006 के धन रसीद और लालपुर एक्सरे क्लिनिक की एक्सरे रिपोर्ट की सी० सी० की प्रमाण पत्रित प्रति हैं।

XV.- प्रदर्श O रामजन्म सुलक्षणा संस्थान की दिनांक 14.2.2007 के धन रसीद की प्रमाणपत्रित प्रति है।

XVI.- प्रदर्श P एवं P1, टॉपिकल फार्मा की दिनांक 16.2.2007 एवं 15.1.2007 के कैशमेमो की प्रमाणपत्रित प्रतियाँ हैं।

XVII.- प्रदर्श Q एवं Q/1 आर्थेको, राँची के दो रजिस्ट्रेशन फॉर्म की प्रमाण पत्रित प्रति हैं।

XVIII.- प्रदर्श R शांति मेडिकल हॉल की दिनांक 17.10.2006 के कैशमेमो की प्रमाण पत्रित प्रति है।

XIX.- प्रदर्श S उषा विजय वर्गीय की जिला मेडिकल बोर्ड रिपोर्ट की प्रमाण पत्रित प्रति।

XX.- प्रदर्श T एम० टी० एस० 09 वर्ष 2004 के वाद पत्र की प्रमाणपत्रित प्रति है।''

7. विद्वान विचारण न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का अधिमूल्यन करने अग्रसर हुआ और विरचित विवाद्यकों का उत्तर दिया।

वाद की पोषणीयता से संबंधित विवाद्यक सं० 1 का उत्तर याची पति के पक्ष में इस आधार पर दिया गया था कि प्रत्यर्थी पत्नी दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित किए जाने एवं निष्पादन मामला के अभियोजन के बाद भी पति की समाज से जुड़ने में विफल रही थी। विद्वान कुटुम्ब न्यायालय

ने पत्नी के प्रतिवाद पर विचार किया वर्तमान वाद सी० पी० सी० के आदेश IX नियम 9 के प्रावधान के विरूद्ध है क्योंकि यह उसी वाद हेतुक से संबंधित है जिसके लिए याची द्वारा पहले वैवाहिक वाद सं० 700 वर्ष 2002 दाखिल किया गया था और व्यतिक्रम के लिए खारिज किया गया था। विद्वान कुटुम्ब न्यायालय ने पाया कि पूर्ववाद विवाह में क्रूरता एवं त्यजन के आधार पर दाखिल किया गया था यद्यपि उक्त मामला में याची ने प्रकथन किया था कि दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित किए जाने के बाद भी प्रत्यर्थी पत्नी दांपत्य गृह में वापस आने की इच्छुक नहीं थी। इस दशा में, यह अभिकथन कि वर्तमान वाद उसी वाद हेतुक के संबंध में था, सही नहीं था। अत: वाद सी० पी० सी० के आदेश IX नियम 9 के प्रावधान के विरूद्ध नहीं है। विद्वान विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि प्रत्यर्थी द्वारा वर्ष 1991 में भा० दं० सं० की धाराओं 498A एवं 307 के अधीन संस्थित दांडिक मामला सत्र मामला सं० 16 वर्ष 1997 में अपर सत्र न्यायाधीश, इंदौर द्वारा दिए गए 8.5.2000 के निर्णय के तहत याची पति की दोषमुक्ति में समाप्त हुआ है। प्रत्यर्थी पत्नी ने माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील 900 वर्ष 2000 दाखिल किया जिसे दिनांक 9.10.2010 के निर्णय के तहत खारिज किया गया था। इस दशा में प्रत्यर्थी पत्नी का प्रतिवाद कि याची स्वयं अपनी गलती का लाभ ले रहा था जैसा हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 23 के अधीन अनुध्यात किया गया है, स्वीकार करने योग्य नहीं है। जब दांडिक मामला के रूप में अभिकथित विवाह में क्रूरता का अभिवचन पति की दोषमुक्ति में समाप्त होता है, प्रत्यर्थी पत्नी को यह आधार लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती थी कि उसके पास दांपत्य गृह से दूर रहने का युक्तियुक्त कारण था इस दशा में विवाद्यक का उत्तर याची के पक्ष में दिया गया था।

8. तब विद्वान कुटुम्ब न्यायालय विवाद्यक सं० 3 पर विचार करने के लिए अग्रसर हुआ कि क्या दांपत्य अधिकार के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित किए जाने के बाद साहचर्य हुआ। भरण पोषण के लिए उसके द्वारा दाखिल विविध मामला सं० 51 वर्ष 1999 में दर्ज प्रत्यर्थी का परिसाक्ष्य (प्रदर्श 2) ने दर्शाया कि वह पति के समाज से जुड़ने की इच्छुक बिलकुल नहीं थी। उसने अपने प्रतिपरीक्षण में कथन किया कि वह याची को अपने पति के रूप में स्वीकार नहीं करती है। उसने आगे कथन किया कि यदि याची उसे न्यायालय से उसके दांपत्य गृह वापस ले जाने के लिए कदम उठाता है, वह उसके लिए तैयार नहीं है। स्वयं प्रत्यर्थी पत्नी के मामला से यह स्पष्ट था कि पति–पत्नी मार्च 1991 से अलग रह रहे थे और दांपत्य अधिकार के प्रत्यास्थापन के लिए सक्षम न्यायालय के आदेश के बावजूद साहचर्य नहीं हुआ था और वह अपने दांपत्य गृह वापस लौटने के लिए बिलकुल तैयार नहीं थी। इस दशा में, हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अवयव संतुष्ट किए गए थे।

9. वाद हेतुक से संबंधित विवाद्यक सं० 2 का उत्तर याची के पक्ष में दिया गया था।

10. पक्षों के बीच प्रतिवादित मुख्य विवाद्यकों पर विचार करने पर विद्वान कुटुम्ब न्यायालय पक्षों के बीच विवाह विघटित करने तथा पति के पक्ष में वाद डिक्री करने के लिए अग्रसर हुआ। विद्वान कुटुम्ब न्यायालय ने दुर्घटना जो वर्ष 1991 में हुई के कारण पत्नी की विकलांगता को ध्यान में लिया। किंतु इसका दृष्टिकोण था कि उसने साहचर्य के उसके अधिकार से याची को वंचित करने में अपने व्यवहार में अड़ियलपन दर्शाया है जिसे विगत अनेक वर्षों से अकेली जिंदगी गुजारने के लिए मजबूर किया गया है। दोनों पुत्र भी याची की अभिरक्षा में हैं और उसकी संरक्षण के अधीन शिक्षा पा रहे थे। पत्नी ने विविध मामला सं० 51 वर्ष 1999 में दिए गए अपने बयान के मुताबिक अपने पुत्रों की देखभाल नहीं किया था।

उसने अपने पुत्रों के साथ संपर्क भी नहीं किया था। इन अभिवचनों एवं अभिलेख पर मौजूद तात्विक साक्ष्य की पृष्ठभूमि में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान कुटुम्ब न्यायालय के निष्कर्ष पर प्रश्न मुख्यत: इस आधार पर उठाया था कि पति द्वारा कारित विवाह में क्रूरता से संबंधित प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अभिवचन का पर्याप्त रूप से उत्तर नहीं दिया गया है अथवा इस पर विचार नहीं किया गया है। वर्ष 1991 में दो मंजिला घर से उसको नीचे फेंकने के पति के कृत्यों के कारण पायी गयी उपहतियों के लिए उसके इलाज से संबंधित अनेक दस्तावेजी साक्ष्य को विद्वान कुटुम्ब न्यायालय द्वारा मामला विनिश्चित करते हुए पूरी तरह अनदेखा किया गया है। पति को अधिनियम वर्ष 1955 की धारा 23 के अवयव के विपरीत स्वयं अपनी गलती का लाभ लेने की अनुमति दी गयी है। अत: आक्षेपित निर्णय हस्तक्षेप योग्य है।

11. किंतु प्रत्यर्थी पति के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निष्कर्ष का समर्थन किया है। वह निवेदन करते हैं कि विद्वान कुटुम्ब न्यायालय द्वारा अभिलेख पर मौजूद तात्विक साक्ष्य के आलोक में तथ्यों के संपूर्ण क्रम को समुचित रूप से ध्यान में लिया गया है। अपीलार्थी बिना किसी युक्तिसंगत कारण के 1991 से अलग अलग रह रही है। प्रत्यर्थी पति के उसको दांपत्य गृह वापस लाने के प्रयासों का बार–बार प्रतिरोध किया गया है। उसकी ओर से दांपत्य अधिकार के प्रत्यास्थापन की डिक्री का भी अनुपालन नहीं किया गया था। इस दशा में, वर्तमान प्रत्यर्थी/पति को अधिनियम 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अधीन विवाह के विघटन की डिक्री इप्सित करने का अच्छा आधार था। संतानें भी उसकी संरक्षकता के अधीन बड़े हुए हैं और पति द्वारा उनका विवाह भी संपन्न किया गया है। अपीलार्थी विद्वान न्यायालय के आदेशों के मुताबिक 5000/- रुपया का भरण पोषण पा रही है। अत: आक्षेपित निष्कर्ष हस्तक्षेप योग्य नहीं है।

12. हमने विस्तार में विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विश्वास किया है और आक्षेपित निर्णय का भी परिशीलन किया है। उक्त वर्णित कथा से, हम इस मत पर आने में मुश्किल नहीं पाते हैं कि विद्वान कुटुम्ब न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष विधि अथवा तथ्य की ऐसी गलतियों से पीड़ित नहीं हैं जो अपील में हस्तक्षेप योग्य हैं। पत्नी–अपीलार्थी स्वयं अपने स्वीकरण के मुताबिक 1991 से अलग रह रही है। यद्यपि उसने पति के विरूद्ध विवाह में क्रूरता और हत्या कारित करने का प्रयास अभिकथित करते हुए भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 498A एवं 307 के अधीन दांडिक मामला दर्ज किया जो पति की दोषमुक्ति में समाप्त हुआ। इसे मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपील में अभिपुष्ट किया गया था। इस दशा में, दापत्य गृह छोड़ने एवं 1991 से दूर रहने के लिए अपीलार्थी की ओर से युक्तियुक्त कारण नहीं बनाया जा सकता है। इसके विपरीत, प्रत्यर्थी पति की ओर से दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के प्रयास उसके पक्ष में दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के बावजूद विफल हुए हैं। वर्तमान वाद केवल हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अधीन उपलब्ध आधार पर संस्थित किया गया है। व्यथित पति/पत्नी की ओर से ऐसे मामला में गलती का आधार अभिकथित नहीं किया गया है अथवा स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। जब एक बार पति के समाज के साथ जुड़ने और उसके साथ साहचर्य करने में अपीलार्थी पत्नी की विफलता दर्शाते हुए अभिलेख पर साक्ष्य द्वारा अधिनियम वर्ष 1955 की धारा 13(1A) (ii) के अवयव को स्थापित किया गया है, प्रत्यर्थी पति के पास पूर्वोक्त प्रावधानों के अधीन विवाह का विघटन इप्सित करने का समस्त कारण था। विद्वान न्यायालय ने समुचित तरीके से अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन किया है जो किसी विकृतता से पीड़ित नहीं है। अत: हम वर्तमान अपील में हस्तक्षेप करने का कोई अच्छा आधार नहीं पाते हैं।

13. तद्नुसार, वर्तमान अपील खारिज की जाती है। तद्नुसार, डिक्री किया गया।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

सुनील कुमार दत्ता

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (S.J.) No. 183 of 2004. Decided on 17th May, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 546 वर्ष 2002 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश XI, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 15.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 16.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 395—डकैती—दोषसिद्धि एवं दंडादेश—भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपीलार्थी के विरूद्ध विरचित आरोप विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध गठित करने की मूल आवश्यकता पाँच अथवा पाँच से अधिक अभियुक्तगण हैं—अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर उसकी दोषसिद्धि जहाँ सूचक ने उसको परीक्षा पहचान परेड में उस व्यक्ति के रूप में पहचाना है जो घर के बाहर खड़ा था किंतु विचारण के दौरान न्यायालय में उसको नहीं पहचाना है, साक्ष्य का सारवान टुकड़ा नहीं है और इस दशा में दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा ससकती है—संदेह का लाभ देकर अपीलार्थी दोषमुक्त किया गया।

(पैराएँ 7, 10 से 13)

निर्णयज विधि.—(1998) 3 SCC 625—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Prabir Chatterjee, For the Appellant; Mr. Mukesh Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रबीर चटर्जी और राज्य के विद्वान अधिवक्ता विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री मुकेश कुमार सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश XI धनबाद द्वारा सत्र विचारण सं॰ 546 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 15.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 16.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और तीन वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया है और 200/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करने और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में दो माह का सामान्य कारावास भुगतने का निर्देश दिया गया है।

दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने 29.1.2004 को वर्तमान दांडिक अपील सं॰ 183 वर्ष 2004 दाखिल किया है जिसे 5.3.2004 को ग्रहण किया गया था और दिनांक 16.12.2003 के आदेश के तहत विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया अनंतिम जमानत संपुष्ट किया गया हैं तब से दांडिक अपील इस माननीय न्यायालय के समक्ष लंबित है।

3. अभियोजन मामला सूचक प्रदीप कुमार के फर्दबयान पर आधारित है जो कैप्टिव ऊर्जा संयंत्र में अधीक्षक अभियन्ता है। यह कथन किया गया था कि 12/13 मार्च, 2002 की रात में जब वह अपने परिवार के साथ अपने घर में सो रहा था, तब उसने रात के लगभग 1.45 बजे गोली चलने की आवाज सुना और तुरन्त बाद अपने घर का दरवाजा तोड़ने का आवाज सुना। दुष्टों ने पत्थर से दरवाजा तोड़ दिया और 8-9 अपराधी घर में घुस गए। एक अपराधी पतला, लंबा था और कमीज-पैन्ट पहने था और लगभग

45 वर्ष का था। उसके हाथ में पिस्तौल था। उसने अपनी पत्नी, संतानों एवं स्वयं को ढंक लिया। अन्य अपराधी सामान्य कदकाठी के थे। वे हाफ पैन्ट पहने थे, उनके हाथों में छड़ी थी और वे लगभग 20-25 वर्ष के थे। एक अपराधी ने सामान निकालने का आदेश दिया, दूसरे ने गोली मारने की धमकी दी। तब सूचक ने उनसे प्रहार नहीं करने और घर की सारी चीज लेने का अनुरोध किया। उनके अलमारी से सोने की तीन चेन तथा उसकी पत्नी, माता एवं पुत्री के गला से तीन चेन, 12000/- रुपया नगद सोने की परत चढ़ी चार चूड़ियों, पाँच कान का झुमका, सोने का टाप्स, आयातित बाइनोकुलर, एक अल्विन घड़ी, एक टॉर्च आदि छीन लिया। अपराधी 20-25 मिनट तक घर लूटते रहे और इस क्रम में टेलीफोन तोड़ दिया, जब अपराधी चले गए, वे डर से शोर नहीं कर सके थे जब उन्होंने मुहल्ला के लोगों की आवाज सुनी, वे घर से बाहर आए और उन्हें पता चला कि उनके पड़ोसी हिमांशु शेखर को भी लूटा गया था और अपराधियों ने हिमांशु के घर से भी गहना, घड़ी, झुमके, टी॰ वी॰ रिमोट कंट्रोल आदि लूटा था। सूचक ने उनको देखने के बाद अपराधियों तथा लूटी गयी चीजों को पहचानने का दावा किया है।

4. फर्दबयान के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन दिनांक 13.3.2002 का पुटकी पी॰ एस॰ केस सं॰ 23/2002 दर्ज किया है। अन्वेषण के बाद चार अभियुक्तों अर्थात 1. सुनील दत्ता, 2. लालजी पासी, 3. साधु पासी, 4. पुतुल चारू के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन आरोप पत्र दाखिल किया गया था। सी॰ जे॰ एम॰, धनबाद के न्यायालय में 5.10.2002 को आरोप-पत्र एवं केस डायरी दाखिल किया गया था और आरोप-पत्र के कॉलम 11 में नोट किए गए अभियुक्त/अपीलार्थी सुनील दत्ता के विरूद्ध न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया था।

मामला 13.12.2002 को सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा 21.1.2003 को एकमात्र अभियुक्त/अपीलार्थी सुनील दत्ता के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन आरोप विरचित किया गया था जिसके प्रति अपीलार्थी ने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

5. अभियोजन ने कुल आठ गवाहों का परीक्षण किया है और फर्दबयान सिद्ध किया है जिसे प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया है। फर्दबयान पर हिमांशु शेखर हिमांशु का हस्ताक्षर प्रदर्श 2 चिन्हित किया गया है। प्राथमिकी एवं औपचारिक प्राथमिकी पर अन्वेषण अधिकारी का हस्ताक्षर प्रदर्श 3 चिन्हित किया गया है और टी॰ आई॰ पी॰ रिपोर्ट प्रदर्श 4 चिन्हित की गयी है।

6. अभियोजन गवाहों का साक्ष्य बंद करने के बाद अभियुक्त/अपीलार्थी सुनील कुमार दत्ता का 25.11.2003 को दं॰ प्र॰सं॰ की धारा 313 के अधीन परीक्षण किया गया था जहाँ उसने प्रश्न सं॰ 3 में कथन किया है कि उसे परीक्षा पहचान परेड के दौरान पहचाना गया था और बाद में प्रश्न सं॰ 4 में उसने कथन किया है कि उसकी परीक्षा पहचान परेड के पहले पुलिस उसको उसकी पहचान दर्शाने सूचक के घर ले गयी थी। विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है।

7. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रबीर चटर्जी ने निवेदन किया है कि यह ऐसा मामला है जहाँ एकमात्र अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन पुलिस द्वारा आरोप-पत्रित किया गया है और अपराध का संज्ञान भी लिया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध गठित करने के लिए मूल आवश्यकताओं का न्यायिक ध्यान में लिए बिना भारतीय दंड संहिता की धारा

395 के अधीन आरोप विरचित किया गया है। पुलिस ने अन्वेषण के बाद अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप–पत्र दाखिल करते हुए कभी नहीं कहा है कि अन्य अभियुक्तों के विरूद्ध अन्वेषण लंबित है बल्कि पुलिस ने केवल इस अपीलार्थी (सुनील कुमार दत्ता) के विरूद्ध आरोप पत्र दाखिल किया है और पाँच से न्यून व्यक्तियों की अनुपस्थिति में भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध गठित नहीं किया जा सकता है और इस दशा में धारा 395 के अधीन अपीलार्थी के विरूद्ध दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय विधि में दोषपूर्ण है।

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि यद्यपि सूचक द्वारा अपीलार्थी को परीक्षा पहचान परेड में उस व्यक्ति के रूप में पहचाना गया है जो बम के साथ घर के बाहर खड़ा था किंतु सूचक ने अपने फर्दबयान में अथवा अपने अभिसाक्ष्य में कभी नहीं कहा है कि वह अभियुक्त/अपीलार्थी को पहचानने का अवसर पाने के लिए घर के बाहर गया। इसके अतिरिक्त, सूचक ने अभियुक्त को विचारण के दौरान नहीं पहचाना है। **रॉनी उर्फ रोनाल्ड जेम्स अलावरेस एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1998) 3 SCC 625,** में निर्णय ने अभिनिर्धारित किया है। कि **''पहचान परीक्षा परेड में अभियुक्त की पहचान सारवान साक्ष्य नहीं है सारवान साक्ष्य गवाह द्वारा न्यायालय में दिया गया बयान है।''** और इस दशा में, अपीलार्थी साक्ष्य अधिनियम की धारा 9 के कार्यक्षेत्र के अधीन नहीं आएगा। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अपराध गठित करने के लिए मूल अवयव के बिना अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है।

8. राज्य के विद्वान अधिवक्ता विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री मुकेश कुमार ने मामला पर जोरदार तर्क किया है किंतु निष्पक्ष रूप से निवेदन किया है कि अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि एकमात्र अपीलार्थी को पुलिस द्वारा धारा 395 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और विद्वान न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन एकमात्र अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप विरचित किया है जो उनकी दृष्टि में भी विधितः मान्य नहीं है।

9. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रबीर चटर्जी तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री मुकेश कुमार को सुनने के बाद इस न्यायालय का मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपीलार्थी के विरूद्ध विरचित आरोप विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं हैं क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध गठित करने की मूल आवश्यकता पाँच अथवा पाँच से अधिक व्यक्ति है। परिणामस्वरूप, अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य, जहाँ सूचक ने परीक्षा पहचान परेड में उसको उस व्यक्ति के रूप में पहचाना है जो घर के बाहर खड़ा था किंतु जिसे उसने विचारण के दौरान न्यायालय ने नहीं पहचाना है, साक्ष्य का सारवान टुकड़ा नहीं है और इस दशा में उस आधार पर उसकी दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा सकती है।

10. परिणामस्वरूप, इस न्यायालय का मत है कि अपीलार्थी संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त किया जाय। इस प्रकार, पुटकी पी॰ एस॰ केस सं॰ 23/2002, जी॰ आर॰ केस सं॰ 642 वर्ष 2002 के तत्सम, के संबंध में सत्र विचारण सं॰ 546 वर्ष 2002 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश XI, धनवाद द्वारा पारित दिनांक 15.12.2003 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दिनांक 16.12.2003 का दंडादेश अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन अपराध से दोषमुक्त किया जाता है।

11. अपीलार्थी जो जमानत पर है को उसके जमानत बंधपत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

12. परिणामस्वरूप, वर्तमान दांडिक अपील अनुज्ञात किया जाता है।

13. आवश्यक कार्रवाई के लिए संबंधित न्यायालय को इस निर्णय की प्रति के साथ अवर न्यायालय अभिलेख भेजे जाएँ।

माननीय डी॰ एन॰ पटेल, ए॰ सी॰ जे॰ एवं अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति

श्रीमती मीता कुमार

बनाम

झारखंड राज्य

W.P. (C) No.2504 of 2017. Decided on 2nd July, 2018.

(क) झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सीय सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली, 2004—नियम 3(d) तथा 3(f)—चिकित्सीय प्रतिपूर्ति से इनकार—मृत न्यायाधीश की विधवा द्वारा याचिका—इस न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश की पत्नी अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश की पत्नी चिकित्सीय प्रतिपूर्ति पा रही है जबकि इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा नियमावली 2004, विशेषतः नियम 3 (d) सहपठित नियम 3(f) की त्रुटिपूर्ण प्रारूपण के कारण चिकित्सीय प्रतिपूर्ति नहीं पा रही है—न्यायालय विधि अधिनियमित नहीं कर सकता है, किंतु जब नियम अथवा अधिनियम में प्रयुक्त शब्द अस्पष्ट है, तब न्यायालय मूकदर्शक बना नहीं रह सकता है और ऐसी आपवादिक परिस्थिति में संदेह एवं अस्पष्टता समाप्त करने के लिए अर्थपूर्ण तरीके से शब्द अथवा अभिव्यक्ति की व्याख्या करने के लिए और नियम का प्रयोजन एवं उद्देश्य प्राप्त करने के प्रयोजन से अभिव्यक्ति अथवा शब्द को अर्थपूर्ण परिभाषा देने के लिए अपने स्वविवेक का प्रयोग करने की बाध्यता एवं कर्तव्य न्यायालय पर डाला गया है—शब्द ''परिवार'' की परिभाषा इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा भी सम्मिलित करेगी—नियमों को संशोधित किए जाने तक, ''परिवार'' इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा सम्मिलित करता है और न्यायाधीश झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सा सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली, 2004 के अधीन इस न्यायालय का मृत न्यायाधीश सम्मिलित करता है और इसका भूतलक्षी प्रभाव होगा—झारखंड राज्य को इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा के समस्त मेडिकल बिल की प्रतिपूर्ति करने का निर्देश दिया जाता है। (पैराएँ 3, 6, 7 एवं 8)

(ख) झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सीय सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली, 2004—नियम 3(d) एवं 3(f)—चिकित्सीय प्रतिपूर्ति—''परिवार'' से अभिप्रेत है मुख्य न्यायाधीश सहित न्यायाधीश की पत्नी/विधवा/विधुर अथवा यदि न्यायाधीश की एक से अधिक विधितः ब्याहता पत्नियाँ/विधवाएं है वैध संतान, माता-पिता जो उस पर आश्रित हैं—धारा 3(f) के अधीन 'न्यायाधीश' का अर्थ है झारखंड उच्च न्यायालय का पीठासीन अथवा सेवानिवृत्त अथवा मृत न्यायाधीश और इसका मुख्य न्यायाधीश सम्मिलित करता है—यह न्यायाधीश को भी सम्मिलित करता है जो 14 नवंबर 2000 को अथवा इसके पहले पटना उच्च न्यायालय से सेवा निवृत्त हुआ है और जो झारखंड राज्य में निवास कर रहा है। (पैरा 9)

अधिवक्तागण.—None. For the Petitioner; Mr. Rajeev Ranjan Mishra, For the Respondents.

आदेश

डी॰ एन॰ पटेल, ए॰ सी॰ जे॰.—यह रिट याचिका आरंभ में लोकहित याचिका डब्लू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 2504 वर्ष 2017 थी क्योंकि इस उच्च न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा द्वारा इस प्रभाव का पत्र लिखा गया था कि वह **झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सीय सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली, 2004** के अधीन चिकित्सीय प्रतिपूर्ति नहीं पा रही है।

2. इस उच्च न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा द्वारा लिखा गया पत्र दिनांक 10 अप्रिल, 2017 का था जिसे रिट याचिका (पी॰ आई॰ एल॰) में संपरिवर्तित किया गया था। तत्पश्चात, 3 मई, 2017 के आदेश के तहत लोकहित याचिका डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2504 वर्ष 2017 में संपरिवर्तित की गयी थी। दिनांक 3 मई 2017 के आदेश का पठन निम्नलिखित है:

''3.5.2017 दिनांक 10.4.2017 के पत्र का परिशीलन किया गया।

यह प्रतीत होता है कि यह मामला रिट याचिका (सिविल) के बजाए लोकहित वाद (डब्लू० पी० (पी० आई० एल०) के रूप में गलत रूप से दर्ज किया गया है।

तद्नुसार, यह न्यायालय रजिस्ट्री का यह मामला भारत के संविधान के अनुच्छेदों 226 एवं 227 के अधीन दर्ज करने और मामला का नाम ''रिट याचिका (सिविल)'' के रूप में बदलने का निर्देश दिया जाता है।

यह न्यायालय विद्वान अधिवक्ता श्रीमती अनुभा रावत चौधरी को न्यायमित्र के रूप में याची की ओर से इस न्यायालय की सहायता करने के लिए नियुक्त करता है।

यह न्यायालय आगे रजिस्ट्री को दिन के क्रम में याचिका की प्रति विद्वान न्यायमित्र श्रीमती ए० आर० चौधरी और विद्वान जी० पी० II श्री आर० आर० मिश्रा को तामील करने का निर्देश देता है।

विद्वान जी० पी० II श्री मिश्रा प्रधान सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, झारखंड सरकार, राँची से इस मामला में अनुदेश प्राप्त करने का वचन देते हैं।

चूँकि इस मामला में नियमावली के प्रावधान चुनौती के अधीन हैं, यह मामला खंड न्यायपीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया जाना चाहिए।

तद्नुसार, इस मामला को आगे सुनवाई के लिए खंड न्यायपीठ सं० 1 के समक्ष ***परसों अर्थात 5.5.2017 को*** *सूचीबद्ध किया जाए।''* *(जोर दिया गया)*

3. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता को सुनने पर और मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश की पत्नी अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश की पत्नी चिकित्सीय प्रतिपूर्ति पा रही है जबकि इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा नियमावली 2004, विशेषत: नियम 3(d) सहपठित नियम 3(f) की त्रुटिपूर्ण प्रारूपण के कारण चिकित्सीय प्रतिपूर्ति नहीं पा रही है।

4. त्वरित संदर्भ के लिए नियम 3(d) एवं 3(f) का पठन निम्नलिखित है:–

***''परिभाषाएँ.**–जब तक संदर्भ आवश्यक नहीं बनता है, इस नियमावली में*

(a) .....

(b) .....

(c) .....

(d) ***''परिवार'' से अभिप्रेत है न्यायाधीश की पत्नी अथवा यदि न्यायाधीश की एक से अधिक विधितः ब्याहता पत्नी है, पत्नियाँ/वैध संतान/माता पिता जो उस पर आश्रित है।***

(e) .....

(f) ***''न्यायाधीश'' से अभिप्रेत है झारखंड उच्च न्यायालय का पीठासीन अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश और इसका मुख्य न्यायाधीश सम्मिलित करता है। यह उस न्यायाधीश को भी सम्मिलित करता है जो 14 नवंबर, 2000 को अथवा इसके पहले पटना उच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त हुआ है और जो झारखंड राज्य में निवास कर रहा है।''***

(g) .....

(h) .....

(i) .....

(j) ..... *(जोर डाला गया)*

5. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रत्यर्थी राज्य प्राधिकारियों के सचिवों द्वारा दो शपथ पत्र दाखिल किए गए थे और यह निवेदन किया गया है कि नियमावली में संशोधन की आवश्यकता है और मामला वित्त विभाग के पास लंबित है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों एवं समय की आवश्यकता को देखते हुए राज्य द्वारा नियमावली संशोधित किए जाने तक परिवार इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा सम्मिलित करेगा और न्यायाधीश इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश को सम्मिलित करेगा। यह सत्य है कि न्यायालय विधि अधिनियमित नहीं कर सकता है किंतु यह भी सुस्थापित सिद्धांत है कि जब नियमावली अथवा अधिनियम में प्रयुक्त शब्द या अभिव्यक्ति अस्पष्ट है, तब न्यायालय मूक दर्शक बना नहीं रह सकता है बल्कि ऐसी आपवादि परिस्थिति में संदेह एवं अस्पष्टता समाप्त करने के लिए अर्थपूर्ण तरीके से शब्द अथवा अभिव्यक्ति की व्याख्या करने के लिए और नियमावली का प्रयोजन एवं उद्देश्य प्राप्त करने के लिए शब्द अथवा अभिव्यक्ति को अर्थपूर्ण परिभाषा देने के लिए न्यायालय पर कर्तव्य एवं बाध्यता डाला गया है। तद्नुसार, इस न्यायालय को यह कथन करने में संकोच नहीं है कि शब्द ''परिवार'' की परिभाषा इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा को सम्मिलित करेगी।

7. अत: नियमावली संशोधित किए जाने तक ''**परिवार**'' में इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा सम्मिलित करता है और ''**न्यायाधीश**'' इस न्यायालय का मृत न्यायाधीश झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सीय सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली, 2004 के अधीन सम्मिलित करता है और इसका भविष्यलक्षी प्रभाव होगा।

8. परिणामस्वरूप, हम झारखंड राज्य को इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा के समस्त मेडिकल बिल की प्रतिपूर्ति करने का निर्देश देते हैं। इस आवेदक का नाम श्रीमती मीरा कुमार है जो स्वर्गीय प्रदीप कुमार, भूतपूर्व न्यायाधीश झारखंड उच्च न्यायालय की पत्नी हैं। हम इस न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल को इस आदेश को माननीय कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश भी देते हैं ताकि यदि इस न्यायालय द्वारा कोई प्रक्रिया पूरी की जाती है, इसे आज के दिन से चार सप्ताह की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा और राज्य अब इस न्यायालय के मृत न्यायाधीश की विधवा के मेडिकल बिल की राशि की प्रतिपूर्ति करेगा।

9. प्रत्यर्थी सरकार द्वारा संशोधित किए जाने तक झारखंड उच्च न्यायालय न्यायाधीश (चिकित्सीय सुविधाएँ) प्रतिपूर्ति नियमावली के नियमों 3(d) एवं 3(f) का पठन निम्नलिखित रूप से किया जाएगा और इसका भविष्यलक्षी प्रभाव होगा।

''3(d) ***''परिवार''*** *से अभिप्रेत है मुख्य न्यायाधीश सहित न्यायाधीश की पत्नी/विधवा/विधुर अथवा यदि न्यायाधीश की एक से अधिक विधितः ब्याहता पत्नियाँ/विधवाएँ है, वैध संतान एवं माता-पिता जो उस पर आश्रित है''*

और

*''3(f) **'न्यायाधीश'** से अभिप्रेत है झारखंड उच्च न्यायालय का पीठासीन अथवा सेवानिवृत्त अथवा मृत न्यायाधीश और इसका मुख्य न्यायाधीश सम्मिलित करता है। यह उस न्यायाधीश को भी सम्मिलित करता है जो 14 नवंबर, 2000 को अथवा इसके पहले पटना उच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त हुआ है और जो झारखंड राज्य में रह रहा है।*

10. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

11. इस आदेश की प्रति–

(a) झारखंड राज्य के मुख्य सचिव और

(b) इस उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल को भेजी जाए।

माननीय अपरेश कुमार सिंह एवं रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्तिगण

प्रतिमा करकेत्ता

बनाम

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 2888 of 2017. Decided on 17th May, 2018.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 376—बलात्कार—दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध विशेष अनुमति आवेदन—परिवाद दर्ज करने में अत्यधिक विलंब हुआ है और अनेक संदेह उत्पन्न करता है—काफी अवधि के लिए पक्षों के बीच अस्तित्वयुक्त संबंध था जिसके दौरान उसने कम से कम पाँच अवसरों पर अपीलार्थी के साथ यौनकर्म किया था—भले ही वह बाद में बलात्कार अभिकथित करती है, औपचारिक रूप से इसे किए जाने में विलंब अत्यन्त संदेह सृजित करता है—भले ही उसकी माता, चाचा एवं कजिन भाई ने परिवादी के नग्न चित्रों के चलते अपीलार्थी द्वारा उसे अभिकथित रूप से ब्लैक मेल करने से उसको बचाने के लिए उसको विपुल धन दिया जिसे अपीलार्थी ने लिया था, उनमें से कोई गवाह के रूप में आगे नहीं आया है और कजिन भाई ने अपने साक्ष्य में बलात्कार का उल्लेख कभी नहीं किया है—दोषमुक्ति के सुतार्किक निर्णय के विरूद्ध अपील की विशेष अनुमति के प्रदान के लिए याची द्वारा अच्छा आधार नहीं बनाया गया—आवेदन खारिज। (पैराएँ 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.–(1996) 2 SCC 384—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Birendra Burman, For the Petitioner; Mr. Suraj Mohan, For the State.

रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्ति.—पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान आवेदन याची की ओर से परिवाद मामला सं॰ 3028/2014 से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 63/2017 में विद्वान न्यायिक आयुक्त XVII सह–एफ॰टी॰सी॰ (सी॰ ए॰ डब्लू॰), राँची द्वारा पारित विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को दोषमुक्त करने वाले दिनांक 28.8.2017 के निर्णय के विरूद्ध अपील करने की विशेष अनुमति इप्सित करते हुए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन विद्वान अवर न्यायालय द्वारा विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोपित अपराध से दोषमुक्त किया गया है।

3. परिवादी द्वारा 3.11.2014 को विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राँची के समक्ष दाखिल परिवाद के आधार पर संस्थित अभियोजन मामला संक्षेप में यह है कि अभियुक्त जॉर्ज तरुण हंस उससे सितम्बर,

2011 में फेसबुक के जरिए मिला। तत्पश्चात, वे मोबाइल पर एक-दूसरे से बात करने लगे और 22.10.2011 को परिवादी और अभियुक्त मित्रों की तरह एक-दूसरे से मिले। तत्पश्चात्, वे अनेक बार विभिन्न स्थानों पर मिले। परिवादी ने आगे कथन किया कि उसने 14.8.2013 को शिक्षिका के रूप में सेंट फ्रांसिस स्कूल, बनहोरा में पदग्रहण किया और वह अपने संबंधी के घर में रह रही थी और अभियुक्त के दबाव के कारण वह 26.8.2013 को हरमू बस्ती, पी॰ एस॰ अरगोरा, जिला राँची अवस्थित अलबर्ट टिग्गा के किराए के घर में रहने लगी और उसी दिन अभियुक्त द्वारा उसका जबरन बलात्कार किया गया था। अभियुक्त ने उसका नग्न चित्र भी लिया और परिवादी के इसका विरोध करने पर अभियुक्त ने धमकी दिया कि यदि उसने प्राथमिकी दर्ज किया अथवा परिवाद किया, तब वह इंटरनेट पर उक्त फोटोग्राफ अपलोड कर देगा और 27.8.2013 को अभियुक्त ने उसकी इच्छा के विरूद्ध अनेक बार उसका बलात्कार किया।

4. मामला परिवादी द्वारा 3.11.2014 को संस्थित परिवाद मामला से उद्भूत होता है जिसे परिवाद मामला 3028/2014 के रूप में संख्यांकित किया गया था। विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, राँची ने भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया और मामला विचारण के लिए सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया। अभियुक्त विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोप विरचित किया गया था जिसके प्रति अभियुक्त ने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण इप्सित किया। विचारण किया गया था जिसके समापन पर अभियुक्त दोषमुक्त किया गया था। अत: परिवादी द्वारा अपील करने की अनुमति के लिए यह आवेदन दाखिल किया गया है।

5. अभियोजन ने अ॰ सा॰ 1 के रूप में स्वयं परिवादी पीड़िता का और अ॰ सा॰ 2 के रूप में फ्रैंसिस होरो सहित केवल दो गवाहों का परीक्षण किया है।

6. अ॰ सा॰ 1 ने अभिसाक्ष्य दिया कि उसने जॉर्ज तरूण हंस के विरूद्ध मामला दर्ज किया था। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि वह फेसबुक के माध्यम से अभियुक्त के संपर्क में आयी। वइ उससे पहली बार 22.10.2011 को भटिंडा, पंजाब में मिली और उसके बाद वे फेसबुक पर बात करते रहे। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि उसने 11 अगस्त, 2013 को सेंट फ्रांसिस स्कूल में शिक्षिका के रूप में पदग्रहण किया और वह अपने परिवार के साथ ढेला टोली में रह रही थी। इस बीच अभियुक्त जॉर्ज तरुण हंस ने उसको प्रलोभन दिया और उसे 26 अगस्त, 2013 को अपराह्न लगभग 7-8 बजे हरमू बस्ती लाया और सब चीज रखने के बाद जॉर्ज तरूण हंस ने उसको आँख बंद करने कहा क्योंकि उसके लिए कुछ खास है और उसने आँख बंद किया। तब अभियुक्त ने उसका हाथ बांध दिया और उसके मुँह में कपड़ा ठूंस दिया और उसके कपड़े उतार दिया और उसका बलात्कार किया। उसने मोबाइल पर उसका नग्न फोटो लिया। उसने आगे कथन किया कि वह शोर नहीं कर सकी थी, वह केवल रोती रही। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि विडियो बनाने के बाद अभियुक्त ने उसको किसी को भी घटना नहीं बताने को कहा, पुलिस के पास जाने से भी मना किया और यदि वह ऐसा करती है, तब उसका नग्न विडियो इंटरनेट पर अपलोड कर दिया जाएगा और वह अपमानित होगी और उसकी नौकरी भी चली जाएगी और उसके पास मरने के सिवाए कोई अन्य विकल्प नहीं होगा। उसने आगे अभिकथित किया कि 27 अगस्त, 2013 को प्रात: लगभग 7-8 बजे अभियुक्त ने उसको धमकी देकर दूसरी बार उसका बलात्कार किया। अभियुक्त 28, अगस्त, 2013 को अभियुक्त जॉर्ज तरुण हंस ने उसको नग्न करने का प्रयास किया, तब वह रोने-चिल्लाने लगी। तब वह उसको मुक्का से मारने लगा और कहा कि अगर वह बहाना करेगी, तब वह उसका नग्न विडियो इंटरनेट पर अपलोड कर देगा और वह बदनाम हो जाएगी और चौथी बार उसका बलात्कार किया। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि सोचने के बाद और डरते हुए वह 22 सितंबर, 2013 को वह 10.30 बजे

अभियुक्त जॉर्ज तरूण हंस के घर गयी और जॉर्ज तरुण हंस के माता पिता से मिली और उनको संपूर्ण घटना बताया। तब उसके माता–पिता भी अपने पुत्र के पक्ष में बोलने लगे और कहा कि उनका पुत्र जो कुछ भी कहेगा, उसे सुनना और करना पड़ेगा। उसके आगे अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त के माता पिता ने उसको कहा कि वे अपने पुत्र को उसका नग्न विडियो विलोपित करने को कहेंगे और उनके पुत्र के साथ उसका विवाह संपन्न किया जाएगा और उसे पुलिस के पास नहीं जाना चाहिए और किसी को सूचित नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे अपमान होगा। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि 3 अक्टूबर, 2013 को सायं लगभग 5 बजे जॉर्ज तरुण हंस पुन: उसके घर आया और उसको धमकी दिया और विडियो डिलीट करने के लिए 5 लाख रुपया मांगा। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि उसने उसको कहा कि वह इतना अधिक धन नहीं दे सकती थी क्योंकि इस समय उसके पास धन नहीं है, तब उसने कहा कि वह इस समय कितना दे सकती है। वह चुप थी और रो रही थी और वह उसे धमकी दे रहा था और कहा कि उसे तीन लाख रुपया देना होगा और उसने इसके लिए एक सप्ताह का समय मांगा। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि उसने अपनी माता से 50,000/- रुपया और अपने 'बड़े पापा' ज्यूल टोप्पो से एक लाख रुपया और अपने बड़े भाई से पचास हजार रुपया लिया और उसके पास अपना पचास हजार रुपया था और इस प्रकार उसने अभियुक्त जॉर्ज तरूण हंस को अपने घर में 6 अक्टूबर, 2013 को अपराह्न लगभग 6 बजे 2.50 लाख रुपया दिया और उसको कहा कि उसके पास तीन लाख रुपया नहीं है और उसके पास केवल 2.5 लाख रुपया है। तब उसने उसका सोने का चेन एवं मोबाइल छीन लिया और कहा कि इन वस्तुओं को बेचने के बाद वह उसका विडियो डिलीट कर देगा। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि 18 अक्टूबर, 2013 को अपराह्न 7-8 के बीच उसने उसको विडियो को बहाना पर धमकी देकर उसको निर्वस्त्र किया और पाँचवीं बार उसके साथ बलात्कार किया। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि वह रो रही थी और डरी हुई थी और इस दशा में उसने किसी को कुछ नहीं कहा। उसने अभिसाक्ष्य दिया कि उसने किसी डॉक्टर से अपनी चिकित्सीय परीक्षा नहीं करवाया है।

उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि 19 अक्टूबर, 2013 को प्रात: लगभग 7 बजे जॉर्ज तरुण हंस उसके घर आया और उसको धमकी देकर उसको अपने मोटरसाइकिल पर बैठने के लिए कहा और वह उसे फ्रांसिस स्कूल, बनहोरा ले जा रहा था और उसने रास्ता में अचानक मोटरसाइकिल में ब्रेक लगाया और वह गड्ढ़ा में गिर गयी और अपने मस्तक पर उपहति पाया। निकट के लोग वहाँ जमा हुए और जॉर्ज तरूण हंस डर कर उसको देवकमल अस्पताल लाया और स्वयं को उसका पति दर्शाते हुए उसने उसको वहाँ भर्ती किया। वह वहाँ पहुँचने पर बेहोश थी और चिंता जनक अवस्था में थी। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि जॉर्ज तरूण हंस और उसके परिवार के सदस्य उसको देखने अस्पताल नहीं आए थे। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि उसका इलाज देवकमल अस्पताल, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, सेवा सदन और विभिन्न स्थानों पर किया गया था और वह 11-12 माह में अच्छी हुई थी। अच्छा होने के बाद वह 20 अक्टूबर, 2014 को प्रात: लगभग 8.30 बजे जॉर्ज तरूण हंस के घर अपने बड़े भाई फ्रांसिस होरा और नितेश मुकेश के साथ गयी और उसके माता–पिता से मिली। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि जॉर्ज तरूण हंस ने उसका हाथ पकड़ा और उसके माता–पिता ने उसे तमाचा मारा और कहा कि वह अभी जिंदा है, यदि वह फिर आएगी तब वह जिंदा नहीं रहेगी और उन्होंने उसको बुरी तरह गाली दिया। उसके भाई ने उसे उनसे बचाया और उसको घर लाया और उसी दिन वह अरगोड़ा पी॰ एस॰ गयी और घटना के बारे में सूचित किया और पुलिस ने उसको आश्वासन दिया कि ''हो जाएगा'' किंतु उसे न्याय नहीं मिला था। तत्पश्चात, वह वकील के पास गयी और उसे घटना के बारे में बताया और तब उसने उसका बयान टंकित किया और उसने इस पर अपना हस्ताक्षर किया और उसके वकील ने भी इस पर हस्ताक्षर किया जिसे उसने पहचाना और इसे

प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया है। अपने प्रतिपरीक्षण में, उसने कथन किया कि किराए के घर जहाँ वह रहती थी अनेक किराएदार भी रहते थे किंतु वह उनमें किसी को नहीं पहचानती थी।

7. अ॰ सा॰ 2 फ्रांसिस होरो ने अभिसाक्ष्य दिया कि घटना 2012 की है, उस समय पर उसकी कजिन (चचेरी बहन) स्कूल जा रही थी और तरूण उसको स्कूल छोड़ने जा रहा था और उसी समय पर बड़ी दुर्घटना हुई और उसके बाद तरूण उसको अस्पताल लाया और परिवादी घायल थी और अनेक दिनों तक उसका इलाज चल रहा था। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि उसके इलाज का खर्च जॉर्ज तरूण ने नहीं उठाया था। उसने कहा कि वह जॉर्ज तरूण को नहीं पहचानता है। यह गवाह पक्षद्रोही हो गया। अपने प्रतिपरीक्षण में उसके कथन किया कि परिवादी की जॉर्ज के साथ मित्रता थी और वह उससे विवाह करना चाहती थी।

<u>याची के अधिवक्ता का तर्क</u>

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने मुख्यत: स्वयं को अ॰ सा॰ 1 जो अभिकथित पीड़ित एवं सूचक बतायी गयी है के साक्ष्य पर आधारित करते हुए तर्क किया है। उन्होंने निवेदन किया है कि सूचक ने अपने साक्ष्य में अपना परिवाद सारवान रूप से संपुष्ट किया है और अनेक तिथियों के प्रति आगे विवरण भी दिया है जब उस पर प्रहार किया गया था। उन्होंने निवेदन किया है कि बलात्कार महिला के अस्तित्व एवं मर्यादा पर प्रहार है, और इस मामला में न केवल एक अवसर पर बल्कि पाँच भिन्न तिथियों पर उस पर प्रहार किया गया था जैसा उसके साक्ष्य में इंगित किया गया है। प्रत्यर्थी लंबे समय तक अपने अपराध से बचने में सक्षम हुआ था क्योंकि उसने पीड़िता का नग्न फोटो लिया था और उसको धमकाया था। प्रकट करण की ऐसी धमकी के अधीन वह लंबे समय तक उसपर अत्याचार करता रहा और पाँच भिन्न अवसरों पर उसका बलात्कार किया। उसने प्रकटीकरण की ऐसी धमकी और अन्यथा भी अपने जीवन एवं शरीर के प्रति धमकी के कारण उस मामला पर मौन रखा।

9. इसके अतिरिक्त 19.10.2003 को अर्थात यौन प्रहार के बाद उसके साथ दुर्घटना हुई और वह 11-12 माह अस्पताल में रही और इसलिए, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरूद्ध उसका परिवाद आगे विलंबित हुआ था।

10. याची के अधिवक्ता ने **पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह एवं अन्य, (1996) 2 Supreme Court Cases 384,** पैरा 8, में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *''.....ऐसे मामलों में पीड़िता का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक अनिवार्य कारण नहीं है जो उसके बयान की संपुष्टि आवश्यक बनती है, न्यायालय को अभियुक्त को दोषी सिद्ध करने के लिए केवल यौन प्रहार की पीड़िता के परिसाक्ष्य पर कृत्य करने में मुश्किल नहीं होना चाहिए जहाँ उसका परिसाक्ष्य विश्वास उत्पन्न करता है और विश्वसनीय पाया जाता है। इस पर विश्वास करने के पहले उसके बयान की संपुष्टि इप्सित करना सिद्धांततः ऐसे मामलों में जले पर नमक छिड़कने के तुल्य है, लड़की अथवा औरत जो बलात्कार अथवा यौन अनाचार का अभिकथन करती है के साक्ष्य को क्यों संदेह, अविश्वास की दृष्टि से देखा जाना चाहिए? न्यायालय अभियोक्त्री के साक्ष्य का अधिमूल्यन करते हुए अपनी न्यायिक अंतरात्मा को संतुष्ट करने के लिए उसके बयान का कुछ आश्वासन की मांग कर सकता है चूँकि वह ऐसी गवाह है जो अपने द्वारा लगाए गए आरोप के परिणाम में दिलचस्पी रखती है किंतु अभियुक्त की दोषसिद्धि आधारित करने के लिए उसके बयान की संपुष्टि पर जोर देने की आवश्यकता विधि में नहीं है, यौन प्रहार की पीड़िता का साक्ष्य लगभग घायल गवाह के साक्ष्य के समतुल्य है और एक सीमा तक अधिक विश्सनीय है.....''*

11. अधिवक्ता तर्क करते हैं कि यदि भारतीय महिला बलात्कार का अभिकथन करती है, इसे उसी तरह स्वीकार किया जाना चाहिए क्योंकि वह क्यों स्वयं अपनी प्रतिष्ठा, मर्यादा और नाम दाँव पर लगाएगी।

अत: स्वयं अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य के आधार पर याची का अपील करने की अनुमति का आवेदन अनुज्ञात किया जाना चाहिए।

राज्य की ओर से उपस्थित ए॰ पी॰ पी॰ का तर्क:-

12. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने तर्क किया है कि **पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह एवं अन्य (ऊपर)** केवल तब सहायक है यदि तथा कथित पीड़िता का परिसाक्ष्य विश्वसनीय और निर्भरनीय है। उन्होंने तर्क किया कि वर्तमान मामला में ऐसा मामला नहीं था। प्रथमत:, अपराध की उत्पत्ति और अपराध की तिथियाँ माहों अथवा एक वर्ष से अधिक पहले की है। पहला बलात्कार अभिकथित रूप से 26.8.2013 को हुआ और उसने 3.11.2014 को परिवाद दाखिल किया। अपने परिवाद में जिसे स्वीकृत रूप से अधिवक्ता की सहायता से लिखा गया है, उसने दो अवसरों पर बलात्कार अभिकथित किया किंतु अपने अभिसाक्ष्य में वह तीन और अवसर उद्धृत करती है, अंतिम 18.10.2013 को उसके पास बलात्कार सिद्ध करने के लिए किसी डॉक्टर से चिकित्सीय रिपोर्ट नहीं है और इस सारे समय तक 18.10.2013 तक अथवा तुरन्त तत्पश्चात उसने पुलिस या किसी को परिवाद नहीं किया था।

13. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ यह तर्क भी करते हैं कि अभिकथित बलात्कार शुरू होने के पहले भी उसने सितंबर, 2011 में उसके साथ फेसबुक पर मित्रता किया था, बाद में 22.10.2011 को उससे मिली और जब उसने सेन्ट फ्रांसिस स्कूल बनहोरा राँची में पद ग्रहण किया, वह उसकी मित्र बनी रही और तब बाद में अभिकथित बलात्कार किया गया। ए॰ पी॰ पी॰ ने तर्क किया यह संबंध से उद्भूत होने वाली अंतरंगता का मामला था।

14. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने यह तर्क भी किया कि नग्न विडियो विलोपित करने के लिए यह अभिकथित किया गया है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने पाँच लाख रुपया मांगा था। अभियोक्त्री ने आगे प्राख्यान किया है कि उसने अपनी माता से 50,000/- रुपया, अपने चाचा से 1,00,000/- रुपया, अपने बड़े भाई से 50,000/- रुपया और अपना 50,000/- रुपया मिलाकर उसने विडियो डिलीट करने के लिए कुल 2,50,000/- रुपया दिया। किंतु, उसके पास ऐसे भुगतान का साक्ष्य नहीं है। इसके अतिरिक्त, उसकी माता एवं चाचा गवाह के रूप में सामने नहीं आए हैं जब उसका भाई जो कजिन है ने अपने संक्षिप्त साक्ष्य में 2,50,000/- रुपया का निर्देश नहीं दिया है। अत: लंबी अंतरंगता, बिलंब, संपुष्टि की कमी एवं असंगतियों के कारण से अपील की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

निष्कर्ष:

15. दोनों अधिवक्ता को सुनने एवं अभिलेख तथा साक्ष्य का परिशीलन करने पर निम्नलिखित संप्रेक्षित किया जाता है:-

(i) याची ने तर्क किया है कि बलात्कार अथवा बलात्कारों के पहले भी मामला के पीछे कुछ इतिहास है। याची परिपक्व महिला है, वह अवयस्क नहीं है। वस्तुत: वह विद्यालय में शिक्षिका है। वह आरंभ में पहले फेसबुक के जरिए विरोधी पक्षकार सं॰ 2 से मिली, तब उससे आमने-सामने मिली और उनके बीच दोस्ती हुई। सूचक/पीड़िता ने अभिकथित किया है कि पहला बलात्कार 26.8.2013 को हुआ था और तब विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने अभिकथित रूप से याची का नग्न फोटो लिया और इसे सार्वजनिक करने की धमकी दी यदि वह मामला के बारे में रिपोर्ट अथवा परिवाद करती है। उसने पहली बार में मामला रिपोर्ट नहीं किया, यह समझा जा सकता है किंतु विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने अभिकथित रूप से चार से अधिक बार उसका बलात्कार किया, फिर भी उसने पुलिस या किसी को मामला रिपोर्ट नहीं किया। उसके अभिकथन कुछ ज्यादा ही बढ़े-चढ़े हैं।

(ii) वह तब अभिकथित करती है कि फोटो अथवा विडियो डिलीट करने के लिए विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने पाँच लाख मांगा। उसने अपनी माता, चाचा, कजिन भाई से विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को भुगतान

करने के लिए पर्याप्त धन इकठ्ठा किया। उसने 2,50,000/- रुपयों का भुगतान किया। यदि उसकी माता, चाचा, बड़ा भाई क्रमशः 50,000/-, 1,00,000/- एवं 50,000/- रुपया देने के इच्छुक थे, तब यह उपदर्शित करेगा कि याची का परिवार मामला में अंतर्ग्रस्त था, विशेषतः याची की प्रतिष्ठा बचाने के लिए। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को भुगतान करने के लिए उसको धन देकर उनकी भी मामला में धनीय दाँव था। चिंताजनक रूप से माता एवं चाचा विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विरूद्ध साक्ष्य देने के लिए अभियोजन गवाहों के रूप में उपस्थित नहीं हुए हैं। माता गवाह के रूप में अपना दृष्टिकोण लेगी। किंतु खेद जनक रूप से, ऐसा नहीं हुआ है। दूसरी ओर, उसका कजिन या बड़ा भाई अपने साक्ष्य में बलात्कार निर्दिष्ट बिलकुल नहीं करता है किंतु केवल दुर्घटना निर्दिष्ट किया है और कहा कि याची विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ विवाह करना चाहती थी। किंतु, यह कटु बन गया संबंध प्रतीत होता है। यह ऐसा मामला है जो आजकल अपरिचित नहीं है। आभासी दुनिया में फेसबुक पर एक-दूसरे से मिलते नवयुवक युवती, जिससे काफी कुछ छिपा रहता है और केवल अच्छा व्यक्तित्व प्रकट किया जाता है। तब वे आमने-सामने मिलते हैं, संबंध विकसित होता है और पाँच बार बलात्कार किए जाने का अभिकथन किया जाता है। परिवाद दर्ज करने में भी विलंब हुआ है और संदेह उत्पन्न करता है।

(iii) अंत में उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि उसके साथ दुर्घटना हुई थी और लंबे समय तक वह अस्पताल में भरती रही और उसका इलाज हुआ किंतु ऐसे इलाज के संबंध में दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है और न ही दुर्घटना के मुख्य विवरण का भी।

16. मामले के अभिलेख, साक्ष्य एवं दोनों अधिवक्ता के तर्कों पर विचार करने पर, यह देखा जाता है कि पक्षों के बीच लंबी अवधि तक अस्तित्वयुक्त संबंध था जिसके दौरान उसने अपीलार्थी के साथ कम से कम पाँच अवसरों पर यौन कर्म किया था। भले ही वह बाद में बलात्कार का अभिकथन करती है, औपचारिक रूप से इसे उठाने में विलंब काफी संदेह सृजित करता है। स्वयं उसकी माता, चाचा एवं कजिन भाई, जिन्होंने परिवादी के नग्न फोटो के कारण अपीलार्थी द्वारा किए जा रहे अभिकथित ब्लैकमेल से उसे बचाने के लिए विपुल राशि दिया, गवाहों के रूप में आगे नहीं आए हैं और इस कजिन भाई ने बलात्कार का उल्लेख भी नहीं किया गया है। हम परिवाद मामला सं॰ 3028/2014 से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 63/2017 में विद्वान न्यायिक आयुक्त XVII सह एफ॰टी॰सी॰ (सी॰ ए॰ डब्लू॰) राँची द्वारा पारित दिनांक 28.8.2017 के भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन आरोप से विरोधी पक्षकार सं॰ 2 जॉर्ज तरूण हंस की दोषमुक्ति के अत्यन्त सुतार्किक निर्णय के विरूद्ध अपील करने की विशेष अनुमति प्रदान करने के लिए याची द्वारा कोई अच्छा आधार नहीं बनाया गया नहीं पाते हैं।

17. तद्नुसार, दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध अपील करने की विशेष अनुमति इप्सित करते हुए याची द्वारा दाखिल आवेदन खारिज किया जाता है।

अपरेश कुमार सिंह, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

श्यामल सामन्ता

बनाम

नवीन कुमार सिंह एवं अन्य

W.P.(C) No. 3760 of 2017. Decided on 14th May, 2018.

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 73—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VII नियम 14—हस्ताक्षर का परीक्षण—अभिधान वाद—करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में न्यायालय के समक्ष विवाद्यक विक्रय करार की वैधता एवं निष्पादनीयता और क्या विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 के अधीन प्रावधानित परिसीमाओं की दृष्टि में वादी को विनिर्दिष्ट पालन का स्वविवेकी अनुतोष प्रदान किया जा सकता है या नहीं—वादी सं॰ 2 की पत्नी द्वारा वादी सं॰ 1 के पक्ष में विक्रय करार के अधीन उसके अधिकारों का समनुदेशन, यदि हो, लंबित अभिधान वाद में विवाद्यक नहीं है—शायद वादी सं॰ 1 द्वारा उठाए जाने के लिए इप्सित विवाद्यक पृथक वाद दाखिल करके उठाया जा सकता है किंतु निश्चय ही अभिधान वाद की कार्यवाही में नहीं—आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.—M/s A.K. Das, Swati Shalini, For the Petitioner; Mr. A. K. Sahani, For the Respondents.

आदेश

अभिधान वाद सं॰ 56 वर्ष 2010 में प्रतिवादी सं॰ 1 याची दिनांक 26.4.2017 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा वादी सं॰ 2 के हस्ताक्षर के परीक्षण के संबंध में वादी सं॰ 1 द्वारा दाखिल आवेदन अनुज्ञात किया गया है।

2. अभिधान वाद सं॰ 56 वर्ष 2010 नवीन कुमार सिंह तथा संजय राय द्वारा दिनांक 10.11.2004 के विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री के लिए संस्थित किया गया था। वादीगण ने अभिवचन किया है कि विभाजन वाद सं॰ 22 वर्ष 1999 में प्रतिवादी सं॰ 1 को चौथाई हिस्सा जिसे अनुसूची A संपत्ति के रूप में वर्णित किया गया है और प्रतिवादी सं॰ 1 एवं अन्य प्रोफॉर्मा प्रत्यर्थियों प्रत्येक को एक चौथाई हिस्सा जिसे अनुसूची B एवं अनुसूची संपत्तियों के रूप में वर्णित किया गया है के लिए 18.3.2008 को आरंभिक डिक्री तैयार की गयी थी। विभाजन वाद सं॰ 22 वर्ष 1999 के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 ने विभाजन वाद में प्रोफॉर्मा प्रतिवादियों के एक–चौथाई हिस्सा के साथ अपनी एक चौथाई संपत्ति के विक्रय के लिए करार किया। दिनांक 10.11.2004 के विक्रय विलेख के अधीन विक्रय प्रतिफल 12 लाख रुपया प्रति कठ्ठा था और वादीगण ने यह अभिकथित किया है कि प्रतिवादीगण ने अग्रिम धन के रूप में 1,05,000/- रुपया प्राप्त किया। विनिर्दिष्ट पालन वाद के लंबित रहने के दौरान वादी सं॰ 2 की मृत्यु हो गयी और उसके स्थान पर उसकी पत्नी को उसके विधिक उत्तराधिकारी एवं प्रतिनिधि के रूप में प्रतिस्थापित किया गया था। अभिधान वाद सं॰ 56 वर्ष 2010 में गवाह के रूप में अपने परीक्षण के दौरान जब उसने दिनांक 23.5.2015 के करार से इनकार किया जिसे अभिकथित रूप से वादी सं॰ 1 द्वारा उसके साथ किया गया था, वादी सं॰ 1 द्वारा उसके हस्ताक्षर के परीक्षण एवं सत्यापन के लिए दिनांक 22.2.2017 का आवेदन दाखिल किया गया था। यह आवेदन विचारण न्यायाधीश द्वारा दिनांक 26.4.2017 के आक्षेपित आदेश के तहत अनुज्ञात नहीं किया गया था।

3. सी॰ पी॰ सी॰ का आदेश VII नियम 14 प्रावधानित करता है कि वाद के संस्थापन के समय पर वादी दस्तावेज प्रस्तुत करेगा जिस पर उसका दावा आधारित है (उपनियम 1 देखें) और यदि ऐसा दस्तावेज उसके कब्जा में नहीं है, जहाँ कहीं भी यह संभव है, वह अभिवचन करेगा कि यह किसके कब्जा में है (उपनियम 2) वादी सं॰ 1 द्वारा अभिवचनित मामला यह है कि वादी सं॰ 2 की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी ने दिनांक 23.5.2015 का करार निष्पादित करके 52,500/- रुपया के प्रतिफल पर उसको अपना अधिकार समनुदेशित किया है। प्रतिस्थापित वादी सं॰ 2 द्वारा इस करार की वैधता से इनकार किया गया है। स्पष्टतः, यह दस्तावेज वह दस्तावेज नहीं है जिस पर वादीगण ने विक्रय करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए अपना दावा आधारित किया है। करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद में न्यायालय के समक्ष

विवाद्यक विक्रय करार की वैधता एवं निष्पादनीयता और क्या विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 के अधीन प्रावधानित परिसीमा की दृष्टि में वादी का विनिर्दिष्ट पालन का स्वविवेक अनुतोष प्रदान किया जा सकता है या नहीं, वादी सं॰ 1 के पक्ष में वादी सं॰ 2 की पत्नी द्वारा विक्रय करार, यदि हो, के अधीन अपने अधिकारों का समनुदेशन लंबित अभिधान वाद सं॰ 56 वर्ष 2010 में विवाद्यक नहीं है। शायद वादी सं॰ 1 द्वारा उठाए जाने के लिए इप्सित विवाद्यक पृथक वाद दाखिल करके उठाया जा सकता है किंतु निश्चय ही अभिधान वाद सं॰ 56 वर्ष 2010 की कार्यवाही में नहीं।

4. उक्त तथ्यों में, दिनांक 26.4.2017 के आक्षेपित आदेश में गंभीर दुर्बलता पाते हुए यह अपास्त किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

माननीय राजेश कुमार, न्यायमूर्ति

घूरम मांझी एवं अन्य

बनाम

ब्रह्मदेव मांझी उर्फ बालमुकुंद मांझी एवं अन्य

S.A. No.463 of 2016. Decided on 10th July, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 22 नियम 3 एवं 4—अपील का उपशमन—यदि वाद अथवा अपील के निपटान के बाद वाद अथवा अपील के किसी पक्ष की मृत्यु हो जाती है और यदि वाद हेतुक बना रहता है, तब विधिक उत्तराधिकारी जिन पर हित न्यागत हुआ है अपील उसमें यह उल्लिखित करते हुए दाखिल कर सकते हैं कि वाद का पक्षकार की मृत्यु हो गयी है, और उसकी ओर से उसके विधिक प्रतिनिधि अपील दाखिल कर रहे हैं—ऐसी स्थिति में, उपशमन का सिद्धांत लागू नहीं होगा—उसके विधिक प्रतिनिधियों की ओर से अपील दाखिल करने के लिए न्यायालय से अनुमति मात्र इप्सित करने की आवश्यकता है। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.—Mr.Amar Kr. Sinha, For the Appellants; Mr. Rajiv Nandan, For the Resp. No.1.

आदेश

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 3903 वर्ष 2018</u>

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन सिविल अपील सं॰ 4/2008 में अपीलार्थी सं॰ 1 अर्थात गोविन्द मांझी, जिसकी मृत्यु सिविल अपील सं॰ 4/2008 में 13.6.2016 को निर्णय पारित किए जाने के बाद 25.6.2016 को हो गयी, के प्रतिस्थापन के लिए अपीलार्थियों द्वारा दाखिल किया गया है। डिक्री 22.6.2016 को हस्ताक्षरित की गयी है।

2. विलंब की माफी, उपशमन अपास्त करने तथा आगे प्रतिस्थापन की अनुमति देने के लिए प्रार्थना की गयी है।

3. इस संदर्भ में, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 22 नियम 3 एवं 4 को उद्धृत करना प्रासंगिक है जो निम्नलिखित है:—

*3. **कई वादियों में से एक या एकमात्र वादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया.** —(1) जहां दो या अधिक वादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार अकेले उत्तरजीवी वादी को या अकेले उत्तरजीवी वादियों को बचा नहीं रहता है, या एकमात्र वादी या एकमात्र उत्तरजीवी वादी की मृत्यु हो जाती है, और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां इस निमित्त आवेदन किए जाने पर न्यायालय मृत वादी के विधिक प्रतिनिधि को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा।*

(2) जहां विधि द्वारा परिसीमित समय के भीतर कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन नहीं किया जाता है वहां वाद का उपशमन वहां तक हो जाएगा जहां तक मृत

वादी का संबंध है और प्रतिवादी के आवेदन पर न्यायालय उन खर्चों को उसके पक्ष में अधिनिर्णीत कर सकेगा जो उसने वाद की प्रतिरक्षा में उपगत किए हों और वे मृत वादी की सम्पदा से वसूल किए जायेंगं।

4. ***कई प्रतिवादियों में से एक या एकमात्र प्रतिवादी की मृत्यु की दशा में प्रक्रिया.****–(1) जहां दो या अधिक प्रतिवादियों में से एक की मृत्यु हो जाती है और वाद जाने का अधिकार अकेले उत्तरजीवी प्रतिवादी के या अकेले उत्तरजीवी प्रतिवादियों के विरूद्ध बचा नहीं रहता है या एकमात्र प्रतिवादी या एकमात्र उत्तरजीवी प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है और वाद लाने का अधिकार बचा रहता है वहां उस निमित्त किए गए आवेदन पर न्यायालय मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि को पक्षकार बनवाएगा और वाद में अग्रसर होगा।*

(2) इस प्रकार पक्षकार बनाया गया कोई भी व्यक्ति जो मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि के नाते अपनी हैसियत के लिए समुचित प्रतिरक्षा कर सकेगा।

(3) जहां विधि द्वारा परिसीमित समय के भीतर कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन नहीं किया जाता है वहां वाद का, जहां तक वह मृत प्रतिवादी के विरूद्ध है, उपशमन हो जाएगा।

(4) जब कभी वह ठीक समझे, वादी को किसी ऐसे प्रतिवादी के जो लिखित कथन फाइल करने में असफल रहा है या जो उसे फाइल कर देने पर, सुनवाई के समय उपसंजात होने में और प्रतिवाद करने में असफल रहा है, विधिक प्रतिनिधि को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता से छूट दे सकेगा और ऐसे मामले में निर्णय उक्त प्रतिवादी के विरूद्ध उस प्रतिवादी की मृत्यु हो जाने पर भी सुनाया जा सकेगा और उसका वही बल और प्रभाव होगा मानो वह मृत्यु होने के पूर्व सुनाया गया है।

(5) जहां–

(a) वादी, प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था और उस कारण से वह इस नियम के अधीन प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि का प्रतिस्थापन करने के लिए आवेदन, परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर नहीं कर सकता था और जिसके परिणामस्वरूप वाद का उपशमन हो गया है; और

(b) वादी, परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) में इसके लिए विनिर्दिष्ट अवधि के अवसान के पश्चात, उपशमन अपास्त करने के लिए आवेदन करता है और उस अधिनियम की धारा 5 के अधीन उस आवेदन को इस आधार पर ग्रहण किए जाने के लिये भी आवेदन करता है कि ऐसी अनभिज्ञता के कारण उक्त अधिनियम में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर उसके आवेदन न करने के लिए उसके पास पर्याप्त कारण था, वहां न्यायालय उक्त धारा 5 के अधीन आवेदन पर विचार करते समय ऐसी अनभिज्ञता के तथ्य पर, यदि साबित हो जाता है, सम्यक् ध्यान देता है।

4. यह धारा लंबित वाद एवं अपील में लागू होती है। यदि वाद के निपटान के बाद अथवा अपील दाखिल करने के पहले अर्थात जब किसी न्यायालय के समक्ष वाद अथवा अपील लंबित नहीं है, वादी प्रतिवादी अथवा अपीलार्थी/प्रत्यर्थी की मृत्यु हो जाती है, यह झारखंड उच्च न्यायालय के अध्याय 12 नियम 96 द्वारा आच्छादित है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

''अध्याय XII नियम 96*—उस से अपील करने और किसी पक्ष जिसकी मृत्यु डिक्री या आदेश पारित करने के पहले हो गयी के विधिक प्रतिनिधि को पक्ष बनाने की इच्छा रखने वाला डिक्री या आदेश का पक्ष, एक प्रत्यर्थी, यदि ऐसा विधिक प्रतिनिधि ऐसी डिक्री या आदेश के अधीन किसी पश्चातवर्ती कार्यवाही का पक्ष नहीं बनाया गया है, उसका नाम प्रत्यर्थी के रूप में अपील ज्ञापन में प्रविष्ट कर सकता है यदि वह उसके*

साथ यह दर्शाने वाला शपथपत्र प्रस्तुत करता है कि वह नहीं जानता था कि डिक्री या आदेश पारित किए जाने के पहले ऐसे पक्ष की मृत्यु हो गयी थी अथवा ऐसी डिक्री या आदेश पारित होने के पहले उसके पास न्यायालय को यह सूचित करने का युक्तियुक्त अवसर नहीं था कि ऐसे पक्ष की मृत्यु हो गयी थी और ऐसे अन्य तथ्यों जो उसके आवेदन के समर्थन में आवश्यक हो सकते हैं का कथन करता है।''

5. इस प्रकार, उक्त धारा के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि यदि वाद अथवा अपील के पक्ष की मृत्यु वाद अथवा अपील के निपटान के बाद हो जाती है, तब विधिक उत्तराधिकारी जिस पर हित न्यागत हुआ है और यदि वाद हेतुक बना रहता है, उसमें यह उल्लिखित करते हुए अपील दाखिल कर सकता है कि वाद के पक्ष में मृत्यु हो गयी है और उसकी ओर से उसके विधिक प्रतिनिधि अपील दाखिल कर रहे हैं।

6. ऐसी स्थिति में, उपशमन का सिद्धांत लागू नहीं होगा, उसके विधिक प्रतिनिधियों की ओर से अपील दाखिल करने के लिए न्यायालय से अनुमति मात्र इप्सित करने की आवश्यकता है।

7. वर्तमान मामला में, चूँकि डिक्री पारित होने के बाद अपीलार्थी सं॰ 1 की मृत्यु हुई है और उसकी मृत्यु के तथ्य का उल्लेख विधिक प्रतिनिधि जो अपीलार्थी है द्वारा वर्तमान अपील में उल्लिखित किया गया है और इस दशा में उपशमन का प्रश्न नहीं है।

8. उक्त चर्चा की दृष्टि में, अपीलार्थी सं॰ 1 के विधिक प्रतिनिधि को अपीलार्थी सं॰ 1 की ओर से वर्तमान अपील बनाए रखने की अनुमति दी जाती है।

9. किंतु पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए और न्याय के हित में आई॰ ए॰ सं॰ 3903 वर्ष 2018 अनुज्ञात किया जाता है।

10. वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन के पैरा 4 में यथा उल्लिखित उसके विधिक उत्तराधिकारी द्वारा अपीलार्थी सं॰ 1 का नाम प्रतिस्थापित किया जाए।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को एक सप्ताह के भीतर लाल स्याही से आवश्यक शुद्धि करने का निर्देश दिया जाता है।

माननीय अपरेश कुमार सिंह एवं रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्तिगण

जितेन्द्र कुमार सिंह

बनाम

झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M. P. (D.B) No. 466 of 2018. Decided on 3rd April, 2018.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धारा 138—चेक का अनादर—दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध अपील की विशेष अनुमति—परिवादी याची ने अभियुक्त के गलत पता पर विधिक नोटिस भेजा था—विचारण न्यायालय का निष्कर्ष पूर्णतः तार्किक है—अपील न्यायालय के समक्ष आक्षेपित निर्णय का विरोध करने के लिए अपील की विशेष अनुमति इप्सित करने के लिए याची की ओर से आधार नहीं बनाया गया है—याचिका खारिज। (पैराएँ 15 एवं 16)

निर्णयज विधि.–AIR 2008 SC 3086; A.I.R 2000 SC 2946; (2007) 6 SCC 555; AIR 2014 SC 3057—Referred; (2007) 6 S.C.C 555—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. Chinmoy Pal, Sudhansu Kumar Deo, Shirshir Suman, For the Petitioner; Mr. Asif Khan, For the Opp. Parties.

आदेश

याची एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर के विद्वान न्यायालय द्वारा सी॰/1 मामला सं॰ 2710 वर्ष 2013 में पारित दिनांक 20 दिसंबर, 2017 के दोषमुक्ति के निर्णय के विरूद्ध अपील करने की विशेष अनुमति इप्सित करता है जिसके अधीन एकमात्र अभियुक्त/वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन आरोप से दोषमुक्त किया गया है।

3. परिवादी का मामला संक्षेप में यह है कि अभियुक्त, जे॰ यू॰ एस॰ सी॰ ओ॰ के अधीन रजिस्टर्ड ठेकेदार और उसको अच्छी तरह ज्ञात, ने अपना व्यवसाय विकसित करने के लिए परिवादी से पाँच लाख रुपयों की राशि लिया और उसको आश्वासन दिया कि वह जुलाई, 2013 तक पूर्वोक्त राशि लौटा देगा। उसने 22 जुलाई, 2013 को मांगे जाने पर परिवादी के पक्ष में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साकची शाखा, जमशेदपुर पर लिखा गया उसी दिन पाँच लाख रुपयों के लिए चेक सं॰ 191026 जारी किया। बैंक के समक्ष प्रस्तुत किए जाने पर इसे 5 अगस्त 2013 को मेमो ''अपर्याप्त निधि'' के साथ वापस लौटा दिया गया था। परिवादी ने 15 दिनों की अवधि के भीतर चेक राशि के नगद भुगतान की मांग करते हुए 5 अगस्त 2013 को ए॰/डी॰ के साथ रजिस्टर्ड डाक द्वारा अपने अधिवक्ता के माध्यम से अभियुक्त को कानूनी नोटिस भेजा, किंतु पूर्वोक्त अवधि बीतने के बावजूद अभियुक्त ने न तो कानूनी नोटिस का उत्तर दिया न ही उक्त राशि का भुगतान किया। अत:, 24 अगस्त, 2013 को परिवाद दाखिल किया गया था।

4. परिवादी के सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान एवं जाँच के बाद विद्वान विचारण न्यायालय ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला पाया और अभियुक्त को उपस्थित होने के लिए समन जारी किया। फरवरी 6, 2014 को उसकी उपस्थिति पर अभियुक्त को अभियोग स्पष्ट किए जाने पर उसने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

5. परिवादी ने सी॰ डब्लू॰ 1 के रूप में अपना परीक्षण करवाया और उसे प्रति परीक्षण के अधीन भी किया गया था। उसकी ओर से निम्नलिखित प्रदर्श दिए गए थे:

प्रदर्श 1	एस॰ बी॰ आई॰ साकची शाखा, जमशेदपुर पर लिखा गया 5,00,000/- रुपयों का मूल चेक सं॰ 191026 दिनांक 22.7.2013 (आपत्ति के साथ)
प्रदर्श 2	चेक सं॰ 191026 का मूल बैंक रिटर्न मेमो दिनांक 5.8.2013
प्रदर्श 3	दिनांक 5.8.2013 के कानूनी नोटिस की प्रति
प्रदर्श 1/3	दिनांक 5.8.2013 का डाक रसीद

6. प्रतिपरीक्षण के दौरान बचाव ने प्रमाणपत्र मामला के नोटिस की प्रमाणित प्रति और 8 सितंबर 2014 को सी॰ डब्लू॰ 1 की उपस्थिति पर कैपिटल लेटर से परिवादी का हस्ताक्षर सिद्ध किया जिसे क्रमश: प्रदर्श A एवं B (आपत्ति के साथ) चिन्हित किया गया था।

7. परिवादी के साक्ष्य के समापन के बाद दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अभियुक्त का बयान दर्ज किया गया था।

8. अभियुक्त ने स्वयं का ब॰ सा॰ 1 के रूप में परीक्षण करवाया और अपने बचाव में निम्नलिखित दस्तावेजों को प्रस्तुत किया:

प्रदर्श C से प्रदर्श C/4	दिनांक 29.8.14, 27.6.14, 31.7.14, 28.10.14 और 29.12.14 का पाँच नगद जमा परची।

9. विद्वान विचारण न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के विश्लेषण के बाद इस सुविचारित निष्कर्ष पर आया कि परिवादी अभियुक्त के सही पता पर अर्थात M4-20, ओल्ड केबल टाउन, गोलमुरी, जमशेदपुर पर कानूनी नोटिस भेजने में विफल रहा था। परिवाद याचिका में भी इस पता का प्रकथन किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने पाया कि सी॰ डब्लू॰ 1 परिवादी ने अपने प्रतिपरीक्षण में अभिसाक्ष्य दिया कि उसे अभियुक्त के M4-80 पत्र की जानकारी थी और पैरा 20 में उसने स्वयं स्वीकार किया उसने M4-20 केबल टाउन (प्रदर्श 3/1) पर मांग नोटिस भेजा। उसने पैरा 21 पर यह भी स्वीकार किया कि वह ए॰/डी॰ पर काबिज था किंतु उसने इसे न्यायालय में दाखिल नहीं किया था। उसने पैरा 22 पर यह कथन भी किया कि वह अवगत था कि अभियुक्त ने नोटिस प्राप्त किया था और उसने स्वीकार किया कि वह घर पर ए॰/डी॰ रखे था किंतु वह आश्वासन नहीं दे सका था कि क्या वह इसे न्यायालय में दाखिल कर सकता था। प्रतिपरीक्षण के दौरान, सी॰ डब्लू॰ 1 को सुझाव दिया गया था कि मांग नोटिस गलत पता पर भेजा गया था और इसे न्यायालय से छुपाया गया था जिससे सी॰ डब्लू॰ 1 ने इनकार किया। अपने प्रतिपरीक्षण में पैराओं 24 एवं 25 में उसने स्वीकार किया कि अभियुक्त M4-80 में रहा करता था और उसे M-20 क्वार्टर में कभी नहीं देखा गया था। उसने पैरा 26 पर यह भी स्वीकार किया कि परिवाद याचिका में अभियुक्त का पता M 20 दर्शाया गया है। पैरा 34 में उसने स्वीकार किया कि उसने अभियुक्त के पता पर मांग नोटिस नहीं भेजा था और कि अभियुक्त ने उससे कोई कर्ज कभी नहीं लिया।

10. अभियुक्त ब॰ सा॰ 1 ने अपने मुख्य परीक्षण में मांग नोटिस की प्राप्ति से इनकार किया था। प्रतिपरीक्षण के दौरान पैरा 12 में उसने कथन किया कि उसे केवल न्यायालय से नोटिस की प्राप्ति पर मामला के बारे में जानकारी हुई।

11. अत:, विद्वान विचारण न्यायालय ने पाया कि ''नोटिस की प्राप्ति'' वर्तमान मामला में विनिश्चयकरण का बिंदु है। चूँकि स्वयं अभियोजन ने प्राख्यान किया कि अभियुक्त नोटिस प्राप्त करने पर उसको चेक राशि का भुगतान करने में विफल रहा, तब उस स्थिति में नोटिस की डिलीवरी का तथ्य सिद्ध करने का भार अभियोजन पर है। किंतु परिवादी विचारण के दौरान अभियुक्त को नोटिस की डिलीवरी का कोई तथ्य सिद्ध करने में तब भी विफल हुआ जब उसने स्वीकार किया कि उसने तामील का ए॰/डी॰ पाया था। स्वयं सी॰ डब्लू॰ 1 ने स्वीकार किया कि नोटिस अभियुक्त के गलत पता पर भेजी गयी थी। विद्वान विचारण न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि परिवादी ने गलत पता पर अभियुक्त को नोटिस के तामील का तथ्य छुपाया था और इसलिए कोई तर्क पूर्ण साक्ष्य देकर अभियुक्त को मांग नोटिस की डिलीवरी के तामील अथवा अभिस्वीकृति के तथ्य को सिद्ध करने में विफल रहा जो परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अभियोजन आरंभ करने के लिए अभियोजन द्वारा सिद्ध किया जाने वाला तात्विक तथ्य है। **सुबोध एस॰ सलसकर बनाम जय प्रकाश एम॰ शाह एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 3086** तथा **योगेन्द्र प्रताप सिंह बनाम सावित्री पांडे, AIR 2000 SC 2946** मामलों में अभियुक्त के पक्ष में दोषमुक्ति के निष्कर्ष पर आने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया गया था।

12. याची के विद्वान अधिवक्ता ने हमें यह आश्वस्त करने के लिए मेहनत किया है कि परिवाद याचिका में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अवयवों को परिपूर्ण करने के लिए समस्त आवश्यक प्रकथन सम्मिलित किए गए थे और परिवादी सी॰ डब्लू॰ 1 द्वारा सिद्ध भी किए गए थे। अपर्याप्त निधि के कारण चेक की वापसी भी स्वीकार की गयी थी। रजिस्टर्ड कवर के अधीन अभियुक्त के पता अर्थात M4-20 ओल्ड केबल टाउन, गोलमुरी, जमशेदपुर पर भेजी गयी कानूनी नोटिस भी साक्ष्यित की गयी थी। अत: अपराध के अवयव संतुष्ट होंगे। विद्वान विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में विधि में गलती किया कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध अभियोजित करने के लिए परिवादी के लिए वाद हेतुक उद्भूत नहीं हुआ था। **सी॰ सी॰ अलावी हाजी बनाम पालापेट्टी मुहम्मद एवं एक अन्य, (2007)6 SCC 555,** पैरा 17 और **मेसर्स अजीत सीड्स लि॰ बनाम के॰ गोपाल कृष्णय्या, AIR 2014 SC 3057,** पैरा 10 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया गया है।

13. राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन एवं निवेदन किया कि आक्षेपित निर्णय नोटिस के समुचित तामील की कमी के बिन्दु पर सुतार्किक है जो परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 (परन्तुक का खंड b एवं c) के अवयवों को परिपूर्ण करने के लिए आवश्यक है।

14. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के विस्तारपूर्ण निवेदन पर विचार किया है और आक्षेपित निर्णय का परिशीलन भी किया है। हमने याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णयों का परिशीलन भी किया है।

15. अभिलेख पर मौजूद निष्कर्षों से, जो याची द्वारा अधिक्षेपित नहीं किए गए हैं, यह स्पष्ट है कि वर्तमान परिवादी याची ने अभियुक्त के गलत पता अर्थात M4-20 ओल्ड केबल टाउन, गोलमुरी, जमशेदपुर पर कानूनी नोटिस भेजा था। उसने अपने प्रतिपरीक्षण में पैरा 19 पर स्वयं स्वीकार किया कि उसे अभियुक्त के M4-80 केबल टाउन पता की जानकारी थी। वह परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 (परन्तुक का खंड b एवं c) के निबंधनानुसार परिवादी पर भार उन्मोचित करने के लिए अभियुक्त की ओर से तामील अथवा नोटिस प्राप्ति दर्शाने के लिए ए॰/डी॰ प्रस्तुत करने में विफल रहा। विधि में अपरिहार्य अवस्था, जो याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय से सामने आती है, यह है कि परिवादी अथवा पाने वाले के लिए प्रथमत: साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 के अधीन सम्मिलित सिद्धांतों के निबंधनानुसार चेक लिखने वाले के सही पता के साथ रजिस्टर्ड डाक द्वारा नोटिस भेजना आवश्यक है। यदि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के परन्तुक के खंड b की इस आवश्यकता का अनुपालन किया जाता है, उक्त परन्तुक के खंड B में विहित अवधि के अवसान पर परिवाद दाखिल करने का वाद हेतुक उद्भूत होता है यदि चेक लिखने वाले द्वारा भुगतान नहीं किया जाता है। किंतु फिर भी अभियुक्त को यह दर्शाने की छूट है कि उसे जानकारी नहीं थी कि उसके पता पर नोटिस लाया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए **सी॰ सी॰ अलावी हाजी (ऊपर)** में पैरा 17 में किए गए संप्रेक्षण का पठन उस संदर्भ में किया जाना होगा। यदि परिवादी द्वारा इस अवयव को परिपूर्ण किया जाता है, अभियुक्त जिस पर समन तामील किया गया है के पास समन की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर भुगतान करने और अभिवचन करने कि परिवाद अस्वीकार किए जाने का दायी है, का विकल्प है। तब अभियुक्त यह प्रतिवाद नहीं कर सकता है कि साधारण खंड अधिनियम की धारा 27 तथा साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के अधीन विपरीत सांविधिक उपधारणा अनदेखा करके धारा 138 के अधीन यथा आवश्यक नोटिस का समुचित तामील नहीं था। (देखें **(2007) 6 SCC 555** पैराएँ 10 एवं 17)

16. उस आलोक में, विद्वान विचारण न्यायालय का निष्कर्ष सुतार्किक है और विधि अथवा तथ्य की किसी गलती से पीड़ित होता नहीं कहा जा सकता है। अत:, हम संतुष्ट हैं कि अपीलीय न्यायालय के समक्ष आक्षेपित निर्णय का विरोध करने के लिए अपील की विशेष अनुमति इप्सित करने के लिए याची की ओर से आधार नहीं बनाया गया है। तद्नुसार, वर्तमान याचिका खारिज की जाती है।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

न्यू इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लि॰

बनाम

मोसमात सोनामुनि एवं अन्य

W.P. (C) No. 3074 of 2010. Decided on 2nd April, 2018.

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987—धारा 22C(8)—दुर्घटना दावा कार्यवाही—स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय को चुनौती—सुलह कार्यवाही विफल रही और पक्षगण विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन यथा प्रावधानित गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करवाने के लिए सहमत हुए हैं—ऐसी परिस्थितियों में, स्थायी लोक अदालत ने सही प्रकार से विवाद पर विचार किया है और गुणागुण पर मामला विनिश्चित किया है—किंतु स्थायी लोक अदालत द्वारा दर्ज विनिर्दिष्ट निष्कर्ष है कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था—बीमा कंपनी को अपना सांविधिक दायित्व उन्मोचित करना होगा और बीमा संविदा के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन के समुचित मामला में बीमा कंपनी को बीमाकृत से वसूली का अधिकार है—आक्षेपित अधिनिर्णय उपांतरित। (पैराएँ 10, 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.—2005 (3) JLJR 24 (Jhr); (2013) 10 SCC 217; (2012) 8 SCC 243; Swaran Singh's Case, (2004) 3 SCC 297—Relied; 2017 SCC Online S.C. 1479—Distinguished.

अधिवक्तागण.—Mr. D.C. Ghosh, For the Petitioner; Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the Resp. nos. 6, 7; M/s Vishal Kumar Trivedi, Bhaskar Trivedi, Satish Kumar, Divya Suman, For the Resp. nos. 1 to 5.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री डी॰ सी॰ घोष सुने गए।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री प्रभात कुमार सिन्हा सुने गए।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री विशाल कुमार त्रिवेदी सुने गए।

4. याची बीमा कंपनी है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 दावादार हैं और प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 क्रमश: रजिस्ट्रेशन सं॰ BR-13B-0189 वाले बस के स्वामी एवं चालक हैं।

5. यह रिट याचिका पी॰ एल॰ ए॰ (एम॰ए॰सी॰टी॰) मामला सं॰ 68 वर्ष 2007 में विद्वान स्थायी लोक अदालत, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 23.11.2009 के आदेश को चुनौती देते हुए रिट याची द्वारा दाखिल की गयी है।

6. याची के अधिवक्ता निम्नलिखित निवेदन करते हैं:—

a. आक्षेपित आदेश विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1984 की धारा 22C(8) के प्रावधानों की पूर्ण उपेक्षा में पारित किया गया है, तद्नुसार, आक्षेपित आदेश विकृत है।

b. आगे, मामला के गुणागुण पर अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि बीमा कंपनी 2005(3) JLJR 24 (Jhr.) में प्रकाशित इस न्यायालय द्वारा पारित पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय की दृष्टि में इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन वसूली के अधिकार की हकदार है।

c. याची के अधिवक्ता ने एल॰पी॰ए॰सं॰ 53 वर्ष 2013 और एल॰पी॰ए॰ सं॰ 52 वर्ष 2013 में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को निर्दिष्ट किया है और उक्त निर्णय के पैराग्राफ सं॰ 8 को निर्दिष्ट किया है जिसमें विनिश्चयकरण के लिए निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए थे:–

(i) क्या स्थायी लोक अदालत को तथ्यों के विवादित प्रश्न पर विचार करके गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने की अधिकारिता थी;

(ii) क्या स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय के विरूद्ध रिट याचिका पोषणीय है; तथा

(iii) क्या अपीलार्थी द्वारा यथा अभिकथित उसके स्वास्थ्य के संबंध में लाइफ एश्योर्ड द्वारा तात्विक तथ्यों का दमन किया गया था।

d. याची के अधिवक्ता ने उक्त निर्णय के पैराग्राफ सं॰ 18 को भी निर्दिष्ट किया है जो स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय के विरूद्ध रिट आवेदन की पोषणीयता पर विचार करता है और निवेदन किया है कि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यद्यपि स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय अंतिम है और किसी वाद, आवेदन अथवा निष्पादन कार्यवाही में इसे चुनौती नहीं दिया जा सकता है किंतु यह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति ग्रहण नहीं कर सकता है और किसी पक्ष को उपचार हीन नहीं छोड़ा जा सकता है जहाँ अधिनिर्णय अपास्त करने अथवा अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने के लिए पर्याप्त आधार हैं।

e. याची के अधिवक्ता ने 2005(3) JLJR 24(Jhr.) में प्रकाशित इस माननीय न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा पारित निर्णय को निर्दिष्ट करके निवेदन किया है कि यद्यपि स्थायी लोक अदालत ने पूर्वोक्त पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के आधार पर बीमा कंपनी के दायित्व के संबंध में ध्यान रखा है, किंतु वसूली के अधिकार को पूर्णत: अनदेखा किया है जिसे इसी निर्णय में मान्य ठहराया गया है।

f. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित आक्षेपित अधिनिर्णय में विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज किया गया है कि मृतक वाहन की छत पर यात्रा कर रहा था और वह निवेदन करते हैं कि यह स्वयं नीति के विरूद्ध है। वह आगे निवेदन करते हैं कि यद्यपि वाहन के स्वामी का दायित्व आक्षेपित अधिनिर्णय द्वारा नियत किया गया है, किंतु चूँकि वाहन बीमाकृत है, बीमा कंपनी को दावादार को भुगतान करने का निर्देश दिया गया है किंतु वसूली के अधिकार पर विचार नहीं किया है और तद्नुसार याची बीमा कंपनी को प्रदान नहीं किया गया है।

g. अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस कारण आक्षेपित आदेश विकृत है और वर्तमान मामला पूर्वोक्त पूर्ण न्यायपीठ निर्णय द्वारा पूर्णत: आच्छादित है क्योंकि याची स्वीकृत रूप से बस की छत पर यात्रा कर रहा था, अत: वसूली के अधिकार पर विचार और बीमा कंपनी को प्रदान किया जाना चाहिए था और ऐसा नहीं किए जाने पर वह निवेदन करते हैं कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की अधिकारिता का प्रयोग करने की आवश्यकता है।

7. दूसरी ओर, दावादारों अर्थात प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 के अधिवक्ता निम्नलिखित निवेदन करते हैं।

(a) राशि जिसे अधिनिर्णीत किया गया है का भुगतान अभी तक इस रिट याचिका के लंबित रहने के कारण उसको नहीं किया गया है। वह आगे निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश सही प्रकार से पारित किया गया है और वह आक्षेपित आदेश में निम्नलिखित उद्धरण को निर्दिष्ट करते हैं:–

> *''उनके द्वारा दाखिल दावा याचिका, लिखित कथन/कारण बताओ का परिशीलन करने के बाद विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22 C(4) से (7) के अधीन यथा प्रावधानित विवाद के पक्षों के बीच सुलह कार्यवाही संचालित की गयी थी। यद्यपि पक्षों ने अपने विद्वान अधिवक्ताओं के माध्यम से सुलह कार्यवाही में भाग लिया और न्यायालय ने भी इसके लिए उनकी मदद की किंतु वे विवाद के समाधान पर सहमति पर आने में विफल हुए। किंतु, पक्षगण विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन यथा प्रावधानित गुणागुण पर इस विवाद को विनिश्चित करवाने के लिए सहमत हुए।''*

(b) दावादार के अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि चूँकि स्थायी लोक अदालत ने स्पष्टत: पूर्वोक्त निष्कर्ष दर्ज किया है और न्यायालय सुलह कार्यवाही विफल हो जाने के बाद विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन पक्षों की सहमति से गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हुआ, अत: आक्षेपित आदेश सही प्रकार से मामला के गुणागुण पर पारित किया गया है।

(c) वह आगे निवेदन करते हैं कि जहाँ तक वसूली के संबंध में बिंदु, जैसा याची द्वारा तर्क किया गया है, का संबंध है, उसे कुछ नहीं कहना है क्योंकि उसे केवल बीमा कंपनी से इसे प्राप्त करना है। वसूली के प्रयोजन से बीमा कंपनी को कदम उठाना है। वह निवेदन करते हैं कि बीमा कंपनी को सही प्रकार से पूर्ण न्यायपीठ निर्णय की दृष्टि में राशि का भुगतान करने को कहा गया है।

8. वाहन के स्वामी तथा चालक के अधिवक्ता निम्नवत् निवेदन करते हैं:–

(a) यद्यपि निष्कर्ष दर्ज किया गया है कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था, किंतु यह दर्ज किए गए प्राथमिकी के आधार पर था और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य मौजूद नहीं है कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था। वह आगे निवेदन करते हैं कि बीमा कंपनी को सिद्ध करना था कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री मौजूद नहीं है कि मृतक वाहन की छत पर यात्रा कर रहा था। वह आगे निवेदन करते हैं कि वाहन के स्वामी से वसूली के लिए रिट याची की हकदारी के संबंध में रिट याचिका में ऐसी प्रार्थना नहीं है।

(b) अधिवक्ता ने **(2013)10 SCC 217** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किसा है और उक्त निर्णय के पैराग्राफ सं॰ 10 को निर्दिष्ट किया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *''10. मुआवजा के लिए दावा में बीमाकर्ता को निश्चय ही धारा 149(2)(a)(ii) के अधीन बचाव लेने की छूट है कि दुर्घटना में अंतर्ग्रस्त वाहन का चालक सम्यक रूप से लाइसेंस शुदा नहीं था। जब एक बार ऐसा बचाव लिया जाता है, भार बीमाकर्ता पर है। किंतु यह सिद्ध किए जाने के बाद भी कि चालक का लाइसेंस नकली था, क्या बीमाकर्ता पर दायित्व है, यह विवादित प्रश्न है। जहाँ तक वाहन के स्वामी का संबंध है, जब वह चालक भाड़ा पर लेता है, उसे जाँच करना है कि क्या चालक के पास वैध चालन लाइसेंस है। तत्पश्चात उसे स्वयं को चालक की सक्षमता के प्रति संतुष्ट करना है। यदि उस संबंध में भी संतुष्टि की गयी है, यह कहा जा सकता है कि स्वामी ने वाहन चलाने के लिए व्यक्ति जो अर्हित एवं सक्षम है को नियोजित करने में युक्तियुक्त ख्याल रखा*

था। स्वामी से उसके परे जाने की उम्मीद नहीं की जा सकती है, चालक की सेवा भाड़ा पर लेने के पहले अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से चालन लाइसेंस की वास्तविकता सत्यापित करने की सीमा तक। किंतु स्थिति भिन्न होगी यदि वाहन के बीमा के समय पर अथवा तत्पश्चात बीमा कंपनी वाहन के स्वामी के लिए अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से लाइसेंस सम्यक रूप से सत्यापित करवाना आवश्यक बनाती है अथवा यदि वाहन के स्वामी का ध्यान अन्यथा इस अभिकथन की ओर आकृष्ट किया जाता है कि उसके द्वारा नियोजित चालक को जारी लाइसेंस नकली है और फिर भी स्वामी अनुज्ञप्ति प्राधिकारी से लाइसेंस की वास्तविकता के संबंध में मामला के सत्यापन के लिए समुचित कार्रवाई नहीं करता है। इसे स्वर्ण सिंह मामला में स्पष्ट किया गया है। यदि स्वामी के पास ऐसी सूचना कि उसके चालक का लाइसेंस नकली है के बावजूद बीमाकृत द्वारा समुचित सत्यापन के लिए कार्रवाई नहीं की जाती है, तब बीमाकृत गलती पर होगा और ऐसी परिस्थितियों में बीमा कंपनी मुआवजा के लिए दायी ही है।''

(c) प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने **2017 SCC online SC 1479,** में प्रकाशित निर्णय को भी निर्दिष्ट किया है जिसके पैरा 9 का पठन निम्नलिखित है:–

''उच्च न्यायालय शुद्धतः इस आधार पर अधिकरण का निष्कर्ष उलटने के लिए अग्रसर हुआ है कि प्राथमिकी जिसे अपीलार्थी के परिवाद पर दर्ज किया गया था ने विवरण अंतर्विष्ट किया जो उस साक्ष्य से अलग था जो अधिकरण के समक्ष आया। अधिकरण ने आर॰ डब्लू॰ 1 का उसके प्रतिपरीक्षण के क्रम में स्वीकरण ध्यान में लिया था कि बीमाकर्ता ने दुर्घटना के संबंध में पृथक फाइल रखा था। बीमाकर्ता ने फाइल अथवा मामले में अन्वेषक की रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं किया था। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी द्वारा एवं अ॰ सा॰ 3 द्वारा यथा अभिसाक्ष्यित घटना का विवरण विस्थापित करने के लिए बीमाकर्ता द्वारा स्वतंत्र गवाह प्रस्तुत नहीं किया गया था। अधिकरण द्वारा साक्ष्य का तर्कपूर्ण विश्लेषण उच्च न्यायालय द्वारा अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के तात्विक पहलूओं पर विचार किए बिना विस्थापित किया गया है। उच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित नहीं था कि अधिकरण दावादार द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों के प्रति अपने विवेक का इस्तेमाल किए बिना अथवा कि इसने लापरवाही से तथ्य का निष्कर्ष दिया था, तथ्य के निष्कर्ष पर आया था। इसके विपरीत हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा निष्कर्ष उलटा जाना साक्ष्य के तात्विक पहलूओं जिसने अधिकरण पर औचित्यपूर्ण अधिमान डाला पर विचार किए बिना था। अतः, हमारा दृष्टिकोण है कि उच्च न्यायालय का निष्कर्ष स्पष्ट रूप से गलत है और कि अधिकरण द्वारा तथ्य का निष्कर्ष सही था।''

9. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर मौजूद सामग्री एवं मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए यह न्यायालय पाता है कि इस न्यायालय द्वारा विनिश्चयकरण के लिए निम्नलिखित विवाद्यक उद्भूत होते है:–

A. ***क्या स्थायी लोक अदालत ने विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22(c)(8) के अधीन सही प्रकार से अपनी अधिकारिता का प्रयोग किया है?***

B. ***क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप के लिए कहते हुए आक्षेपित अधिनिर्णय में कोई विकृतता है?***

C. ***याची किस अनुतोष का हकदार है?***

10. जहाँ तक विवाद्यक सं॰ A का संबंध है, यह न्यायालय अभिनिर्धारित करने का इच्छुक है कि स्थायी लोक अदालत ने सही प्रकार से विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से किया है:

(a) जहाँ तक विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के प्रावधानों का संबंध है, यह **भारतीय विधिज्ञ परिषद बनाम भारत संघ, (2012)8 SCC 243** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा चुनौती एवं व्याख्या का विषयवस्तु था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब एक बार सुलह कार्यवाही विफल होती है, स्थायी लोक अदालत गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने की अधिकारिता अर्जित करता है। उक्त निर्णय के पैराओं 26 एवं 27 को उद्धृत करना लाभदायी होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

''26. यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि लोक उपयोगिता सेवाओं से संबंधित विवाद स्थायी लोक अदालत को सौंपे गए हैं यदि सुलह एवं समाधान की प्रक्रिया विफल होती है। जोर स्थायी लोक अदालत के माध्यम से लोक उपयोगिता सेवाओं सें संबंधित विवादों के संबंध में समाधान पर है। इसी कारण से धारा 22C की उपधारा (1) स्पष्ट शब्दों में कथन करती है कि विवाद का कोई पक्ष किसी न्यायालय के समक्ष विवाद लाए जाने के पहले विवाद के समाधान के लिए स्थायी लोक अदालत के समक्ष आवेदन दे सकता है। इस प्रकार, लोक उपयोगिता सेवाओं के मामलों में पक्षों के बीच विवाद का समाधान मुख्य विषय है। किंतु, जहाँ स्थायी लोक अदालत के प्रयासों के बावजूद पक्षों के बीच समझौता नहीं हुआ है और पक्षों को अपना विवाद विनिश्चित एवं न्यायनिर्णीत करवाने की आवश्यकता है, लोक उपयोगिता सेवाओं से संबंधित विवादों के न्यायनिर्णयण में विलंब से बचने के लिए संसद ने मध्यक्षेप किया है और स्थायी लोक अदालत पर न्यायनिर्णयण की शक्ति प्रदत्त किया है।

27. विनिर्दिष्ट धनीय सीमा तक लोक उपयोगिता सेवा से संबंधित पक्षों के बीच विवाद न्यायनिर्णीत करने के लिए स्थायी लोक अदालत पर प्रदत्त शक्ति यदि विवाद धारा 22C(8) के अधीन यथा प्रावधानित किसी अपराध से संबंधित नहीं है, असंवैधानिक एवं अतार्किक कही जा सकती है? हम ऐसा नहीं समझते हैं। यह सुस्थापित विधि है कि पक्षों के बीच विवाद न्याय निर्णीत करने और अधिकरण के रूप में कृत्य करने के लिए सशक्त बनाए गए प्राधिकारी के पास आवश्यकतः न्यायालय की सभी शक्तियाँ नहीं हो सकता है। आवश्यक यह है कि इसे संविधि का सृजन होना होगा और इसे निष्पक्षता एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के साथ संगत उनको युक्तियुक्त अवसर देने के बाद अपने समक्ष पक्षों के बीच विवाद न्यायनिर्णीत करना चाहिए। केवल न्यायालय द्वारा विवाद न्यायनिर्णीत करवाना किसी व्यक्ति का संवैधानिक अधिकार नहीं है। अध्याय VIA न्यायालय के समक्ष मामला लाए जाने के पहले लोक उपयोगिता सेवा से संबंधित विवादों के समाधान के लिए स्थायी लोक अदालत के स्थापन के माध्यम से सांस्थानिक मेकेनिज्म प्रदान करने के लिए और किसी समाधान पर आने में विफलता की स्थिति में, ऐसे विवाद यदि यह किसी अपराध से संबंधित नहीं है न्यायनिर्णीत करने के लिए स्थायी लोक अदालत को सशक्त बनाते हुए अधिनियमित किया गया है।''

(b) आक्षेपित अधिनिर्णय में विनिर्दिष्टत: निम्नवत् अभिलिखित किया गया है **''उनके द्वारा दाखिल दावा याचिका, लिखित कथन/कारण बताओ का परिशीलन करने के बाद विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22 C(4) से (7) के अधीन यथा प्रावधानित विवाद के पक्षों के बीच सुलह कार्यवाही संचालित की गयी थी। यद्यपि पक्षों ने अपने विद्वान अधिवक्ताओं के माध्यम से सुलह कार्यवाही में भाग लिया और न्यायालय ने भी इसके लिए उनकी मदद की किंतु वे विवाद के समाधान पर सहमति पर आने में विफल हुए। किंतु, पक्षगण विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन यथा प्रावधानित गुणागुण पर इस विवाद को विनिश्चित करवाने के लिए सहमत हुए।''**

पूर्वोक्त उद्धरण से यह प्रकट है कि सुलह कार्यवाही विफल हुई थी और पक्षगण विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22C(8) के अधीन यथा प्रावधानित गुणागुण पर विवाद विनिश्चित करवाने के लिए सहमत हुए हैं। ऐसी परिस्थितियों में न्यायालय का दृष्टिकोण है कि स्थायी लोक अदालत ने सही प्रकार से विवाद पर विचार किया है और मामला गुणागुण पर विनिश्चित किया है और तद्नुसार अधिकारिता का बिंदु जैसा याची द्वारा उठाया गया है एतद् द्वारा अस्वीकार किया जाता है और विवाद्यक सं॰ A याची के विरूद्ध विनिश्चित किया जाता है।

11. जहाँ तक मामला के गुणागुण पर विवाद्यक सं॰ B का संबंध है, यह न्यायालय निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का इच्छुक है:–

I. स्थायी लोक अदालत द्वारा दर्ज विनिर्दिष्ट निष्कर्ष है कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था और इस तथ्य की दृष्टि में स्थायी लोक अदालत ने इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त पूर्ण न्यायपीठ निर्णय के आलोक में याची बीमा कंपनी को याची को भुगतान करने का निर्देश दिया था। यह न्यायालय आगे पाता है कि स्थायी लोक अदालत ने पूर्वोक्त पूर्ण न्याय पीठ निर्णय पर विश्वास करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *''यद्यपि पीड़ित बस की छत पर यात्रा कर रहा था किंतु 2005(3) JLJR पृ॰ 6 सं॰ 24 से 35 में यथा प्रकाशित 399 वर्ष 1999 के साथ मूल आदेश सं॰ 292 वर्ष 2003 से अपील में 29.4.2005 को पारित माननीय झारखंड उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ निर्णय की दृष्टि में जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि बीमा कंपनी द्वारा आच्छादित यात्रियों से अधिक ढोना इसे पॉलिसी द्वारा आच्छादित संख्या के परे व्यक्ति के संबंध में मुआवजा का भुगतान करने के इसके दायित्व से विमुक्त नहीं कर सकता है। यदि बीमा कंपनी को पॉलिसी के निबंधनों के आधार पर सीमित दायित्व का बचाव उठाने की अनुमति दी जाती है, धारा 147 का उद्देश्य विफल हो जाएगा। अन्यथा भी, बीमाकृत द्वारा पॉलिसी के निबंधनों का अभिकथित भंग शायद अधिनियम के प्रावधानों के अधीन अपराध हो सकता है किंतु निश्चय ही वह अधिनियम की धारा 149(2) के अधीन नहीं आता है।*
>
> *उक्त पूर्ण न्यायपीठ निर्णय की दृष्टि में हम एकमत से सहमत हैं कि दावेदारगण मुआवजा पाने के हकदार हैं यद्यपि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था। अब मुआवजा की राशि विनिश्चित करने के लिए दो अन्य कारकों पर विचार किया जाना है, प्रथमतः पीडित की आयु और द्वितीयतः पीड़ित की आय।''*

II. किंतु, उक्त पूर्ण न्यायपीठ निर्णय पर विचार करते हुए विद्वान स्थायी लोक अदालत बीमा कंपनी वसूली के अधिकार पर विचार करने में पूर्णत: विफल रहा है जो उक्त पूर्ण न्यायपीठ निर्णय के समापन पैरा 32(ii) से प्रकट हैं जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *''बीमाकर्ता केवल तब अपने दायित्व से बच सकता है यदि धारा 149(2) में विनिर्दिष्ट शर्तें संतुष्ट की जाती है और न कि अन्यथा। संविधि धारा 149 (2) में दिए गए शर्तों के सिवाए किसी अन्य शर्त को बीमाकर्ता को अपने दायित्व से बच निकलने के लिए मान्यता नहीं देती है, चाहे बीमाकर्ता एवं बीमाकृत के बीच निबंधन एवं शर्त कुछ भी हो। बीमाकर्ता एवं बीमाकृत के बीच उनके एक-दूसरे के प्रति अधिकारों एवं दायित्वों को विनिश्चित करने वाली संविदा के निबंधनों को तृतीय पक्ष जोखिम के लिए बीमाकर्ता के सांविधिक दायित्व के साथ भ्रमित नहीं करना है और न ही किया जा चाहिए। यदि बीमाकृत की ओर से संविदा का भंग नहीं हुआ है, बीमाकर्ता बीमाकृत के विरूद्ध अग्रसर हो सकता है। जहाँ तक तृतीय पक्ष जोखिम का संबंध है, दायित्व सांविधिक होने*

के नाते पक्षों के बीच बीमा की संविदा के निबंधनें इसपर अभिभावी नहीं हो सकते हैं।''

स्थायी लोक अदालत द्वारा मामला के इस पहलू को पूर्णत: नजर अंदाज किया गया है जो आक्षेपित आदेश को विकृत बनाता है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप के लिए कहता है। यह न्यायालय एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 53 वर्ष 2013 में और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 52 वर्ष 2013 में इस न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय की दृष्टि में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करने का इच्छुक है जिसमें पैरा 18 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

''18. ***स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय के विरूद्ध रिट आवेदन की पोषणीयता.****–धारा 22E की उपधारा (4) के मुताबिक, विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के अधीन स्थायी लोक अदालत द्वारा पारित प्रत्येक अधिनिर्णय अंतिम होगा और इसे किसी मूल वाद, आवेदन अथवा निष्पादन कार्यवाही में चुनौती नहीं दिया जाएगा। अपीलार्थी की ओर से प्रतिवाद किया गया था कि विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 22E(4) भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति वापस नहीं ले सकती है और अपीलार्थी को उपचारहीन नहीं छोड़ा जा सकता है जहाँ अधिनिर्णय अपास्त करने के लिए पर्याप्त आधार है।''*

III. जहाँ तक प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 के प्रतिवाद का संबंध है, प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 ने इस निष्कर्ष कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था, को कोई रिट याचिका दाखिल कर के अथवा इस मामला विशेष में कोई प्रति आपत्ति दाखिल करके चुनौती नहीं दिया है।

IV. प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 का प्रतिवाद कि याची ने वर्तमान रिट याचिका में वसूली के किसी अधिकार का दावा नहीं किया है और ऐसी प्रार्थना नहीं की गयी है, को भी रिट याचिका के पैराग्राफ सं॰ 15 पर रिट याची द्वारा दिए गए बयान की दृष्टि में अस्वीकार किया जाता है कि इसे पहले ही इस माननीय न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया गया है और यह अभिनिर्धारित किया गया है कि व्यक्ति के बस के छत पर यात्रा करने की स्थिति में बीमा कंपनी वसूली के अधिकार की हकदार है।

V. जहाँ तक प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 द्वारा **(2013)10 SCC 217** में प्रकाशित निर्णय पर किए गए विश्वास का संबंध है, स्वयं उक्त निर्णय के पैराग्राफ 10 से प्रतीत होता है कि **स्वर्ण सिंह मामला, (2004)3 SCC 297** में यह स्पष्ट किया गया था कि समुचित मामला में बीमा कंपनी मुआवजा का भुगतान करने का दायी नहीं हो सकती है जो ऐसी स्थिति सम्मिलित कर सकती है जब वाहन के स्वामी को कुछ सूचना है कि चालक का लाइसेंस नकली है। **(2013) 10 SCC 217** में प्रकाशित निर्णय किसी तरीके से, विशेषत: इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों में याची की मदद नहीं करता है जहाँ स्थायी लोक अदालत द्वारा दर्ज निष्कर्ष के मुताबिक मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था, तब यह पॉलिसी के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन के तुल्य है।

VI. इस न्यायालय का सुविचारित दृष्टिकोण है कि बीमा कंपनी को अपने सांविधिक दायित्व का उन्मोचन करना होगा और बीमा संविदा के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन के समुचित मामला में बीमा कंपनी को बीमाकृत से वसूली करने का अधिकार है।

VII. जहाँ प्रत्यर्थी स्वामी एवं वाहन के चालक के अधिवक्ता द्वारा **2017 SCC online SC 1479** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास का संबंध है, उक्त निर्णय में यह दर्शाने के लिए सामग्री अथवा निश्चयात्मक प्रमाण नहीं था कि मृतक ट्रैक्टर के मडगार्ड पर यात्रा कर रहा था अथवा उसने अन्यथा

उपहति पाया और इसलिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय का दृष्टिकोण था कि चालक द्वारा तथ्यों का तात्विक पहलू दर्शाया जाना चाहिए था। यह निर्णय इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों के प्रति लागू नहीं होता है, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि स्थायी लोक अदालत ने निष्कर्ष दर्ज किया है कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था। वाहन के स्वामी अथवा चालक द्वारा कोई रिट याचिका दाखिल करके अथवा कोई प्रति आपत्ति दाखिल करके इस निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी गयी है।

VIII. तद्नुसार, विवाद्यक सं॰ B याची के पक्ष में विनिश्चित किया जाता है।

12. <u>विवाद्यक सं॰ C</u>

मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, यह न्यायालय पाता है कि अभिलेख पर उपलब्ध अखंडित तथ्यों की दृष्टि में कि मृतक बस की छत पर यात्रा कर रहा था जो स्वयं पॉलिसी के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन के तुल्य है, बीमा कंपनी को वाहन के स्वामी से वसूली करने का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए था।

तद्नुसार, यह न्यायालय इस सीमा तक कि बीमा कंपनी इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से चार सप्ताह की अवधि के भीतर अधिनिर्णय के मुताबिक दावादार को राशि का भुगतान करेगी और उसे वाहन के स्वामी से वसूली करने का अधिकार होगा, आक्षेपित आदेश उपांतरित करके स्थायी लोक अदालत, गिरीडीह द्वारा पी॰ एल॰ ए॰ दावा मामला सं॰ 168/2007 में पारित आक्षेपित अधिनिर्णय उपांतरित करने का इच्छुक है।

यदि इस आदेश की प्रति की प्राप्ति से चार सप्ताह की अवधि के भीतर राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, बीमा कंपनी द्वारा भुगतान की जानेवाली राशि पर अधिनिर्णय की तिथि से भुगतान की तिथि तक 12% वार्षिक दर पर ब्याज लगेगा और ब्याज की राशि बीमा कंपनी द्वारा सहन की जाएगी। बीमा कंपनी द्वारा अधिनिर्णय के मुताबिक दावादारों के नाम में स्थायी लोक अदालत में चेक राशि जमा की जाएगी।

माननीय राजेश शंकर, न्यायमूर्ति

भागीनाथ महतो

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 2494 of 2016. Decided on 14th May, 2018.

झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004—नियम 23—भारतीय वन अधिनियम, 1927—धारा 29—खनन पट्टा के नवीकरण के लिए आवेदन का अस्वीकरण—याची के पास प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा सम्यक रूप से प्रदान किया गया खनन पट्टा था, किंतु, खनन पट्टा का नवीकरण इस आधार पर अस्वीकार किया गया है कि भूमि संरक्षित वनक्षेत्र के अंतर्गत अवस्थित है जिसमें किसी खनन गतिविधि की अनुमति नहीं दी जा सकती थी, वह भी याची को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना—यदि उसके अधिकारों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए व्यक्ति के विरूद्ध किसी प्रशासनिक/न्यायिक कल्प प्राधिकारी द्वारा कोई निर्णय लिया जाता

है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन औपचारिकता मात्र नहीं है—सहायक खनन अधिकारी द्वारा जारी आक्षेपित पत्र अपास्त किया गया और उपायुक्त को खनन पट्टा के नवीकरण के लिए याची के आवेदन पर नया आदेश परित करने का निर्देश दिया गया।

(पैराएँ 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.—(2010)9 SCC 496; (2015)8 SCC 519—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Sumeet Gadodia, For the Petitioner; Mr. A.C to A.G., For the State.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा जारी दिनांक 27.4.2016 के मेमो सं॰ 735 में यथा अंतर्विष्ट पत्र रिट याचिका का परिशिष्ट–8) के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची को सूचित किया गया है कि मौजा नवाडीह, थाना बढ़ही, खाता सं॰ 1, भूखंड सं॰ 832 (भाग) जिला हजारीबाग, 2.10 एकड़ मापवाले क्षेत्र से संबंधित स्टोन चिप्स के संबंध में खनन पट्टा के नवीकरण के लिए उसका आवेदन प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है। कि प्रश्नगत क्षेत्र जिसके पट्टा का नवीकरण याची द्वारा इप्सित किया गया था, दिनांक 2.1.1953 की अधिसूचना सं॰ C/PF-10160/52-21R के तहत संरक्षित वन के अंतर्गत आता है। आगे प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित दिनांक 25.4.2016 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना की गयी है जिसके द्वारा प्रश्नगत भूमि पर अवस्थित अपने खनन पट्टा के नवीकरण के प्रदान के लिए याची का आवेदन याची को सुनवाई का अवसर दिए बिना अस्वीकार किया गया है। याची ने झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 (इसमें इसके बाद ''नियमावली 2004' के रूप में निर्दिष्ट) के नियम 23 के निबंधनानुसार 10 वर्षों की अतिरिक्त अवधि के लिए ग्राम नवाडीह के संबंध में खनन पट्टा के नवीकरण के लिए उसके दिनांक 4.3.2014 के आवेदन को प्रसंस्कृत करने और परिणामस्वरूप उक्त क्षेत्र पर याची को खनन पट्टा का नवीकरण प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थी को निर्देश जारी करने की प्रार्थना भी गयी है।

2. रिट याचिका में यथा कथित मामला की ताथ्यिक पृष्ठभूमि यह है कि खाता सं॰ 1, भूखंड सं॰ 815, 824, 832 एवं 833, 6.81 एकड़ कुल क्षेत्र से संबंधित भूमि (इसमें इसके बाद 'उक्त भूमि' के रूप में निर्दिष्ट) 12.11.1930 का रामगढ़ के राजा द्वारा प्रदान किए गए हुक्मनामा के माध्यम से याची के पिता के पक्ष में बंदोबस्त की गयी थी। जमीन्दारी निहित करने के बाद, बिहार राज्य द्वारा उसके पक्ष में लगान रसीद जारी किया गया था। याची के आवेदन पर उसे दिनांक 18.6.2004 के आवंटन पत्र सं॰ 1437 के तहत उक्त भूमि पर खनन गतिविधि करने की अनुमति दी गयी थी। इसके नवीकरण के अध्यधीन दस वर्षों की अवधि के लिए उक्त आवंटन किया गया था। उक्त आवंटन के अनुसरण में याची और प्रत्यर्थियों के बीच दिनांक 11.7.2004 के रजिस्टर्ड पट्टा विलेख के तहत पट्टा विलेख निष्पादित किया गया था जो 11.7.2004 से 10.7.2014 तक के लिए वैध था। उक्त पट्टा विलेख के अवसान के पहले याची ने नियमावली 2004 के नियम 23 के निबंधनानुसार इसके नवीकरण के लिए आवेदन दिया। जब याची का आवेदन प्रसंस्कृत नहीं किया गया था, उसने आयुक्त, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, राँची के समक्ष समय के विस्तारण के लिए पुनरीक्षण मामला सं॰ 97 वर्ष 2014 दाखिल किया जिसे खनन पट्टा के नवीकरण के लिए याची के आवेदन को निपटाने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 को निर्देश के साथ दो बार प्रदान किया गया था। किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने दिनांक 27.4.2016 के पत्र सं॰ 735 में अंतर्विष्ट आदेश के तहत याची को सूचित किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने प्रश्नगत क्षेत्र पर खनन पट्टा के नवीकरण के लिए उसका आवेदन इस आधार पर अस्वीकार दिया है कि भूमि जिसपर खनन पट्टा का नवीकरण इप्सित किया गया था दिनांक 2.1.1953 की अधिसूचना सं॰ C/PF 10160/52-21-R के तहत संरक्षित वन क्षेत्र है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 27.4.2016 के आक्षेपित पत्र में प्रत्यर्थी सं० 2 द्वारा जारी दिनांक 25.4.2016 के पत्र को निर्दिष्ट किया गया था जिसके द्वारा पट्टा के नवीकरण के लिए याची का आवेदन अस्वीकार कर दिया गया बताया गया है किंतु उक्त पत्र उस पर तामील नहीं किया गया था। दिनांक 2.1.1953 की अधिसूचना के कोरे परिशीलन से यह स्पष्ट होगा कि इसे भारतीय वन अधिनियम, 1927 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम, 1927' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 29 के तात्पर्यित प्रयोग में जारी किया गया था, किंतु उक्त वन भूमि में अथवा पर सरकार अथवा प्राइवेट व्यक्तियों के अधिकार की प्रकृति एवं सीमा की जाँच अधिनियम, 1927 की धारा 29(3) के निबंधनानुसार नहीं की गयी थी और इस प्रकार उक्त भूमि संरक्षित वन भूमि के रूप में नहीं मानी जा सकती है। वर्ष 1960-61 में विवाद कि क्या उक्त भूमि संरक्षित वन क्षेत्र के अंतर्गत आती है, उद्भूत हुआ और वन व्यवस्थापन अधिकारी, हजारीबाग के न्यायालय द्वारा मामला सं० 1 वर्ष 60-61 में आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था कि उक्त भूमि वन की चौहद्दी से अपवर्जित की जानी है। याची के पिता द्वारा दाखिल अभिधान वाद सं० 89 वर्ष 1998 में प्रत्यर्थी सं० 2 ने स्केच मैप दाखिल किया था जिसमें उक्त भूमि वन क्षेत्र के सीमांकन के अंतर्गत नहीं दर्शायी गयी थी। भले ही याची का खनन पट्टा क्षेत्र दिनांक 2.1.1953 की अधिसूचना के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत आता है, आज के दिन पर, उक्त भूमि अधिनियम, 1927 की धारा 30 की दृष्टि में संरक्षित वन क्षेत्र के रूप में नहीं मानी जा सकती है जो राज्य सरकार को 30 वर्षों से परे न होने वाली अवधि के लिए संरक्षित वन घोषित करने के लिए अधिसूचना जारी करने की शक्ति देता है। दिनांक 2.1.1953 की अधिसूचना राज्य सरकार द्वारा पुनर्विधिमान्य नहीं की गयी है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची ने अधिनियम 1927 की धारा 29 के अधीन प्रावधानित प्रावधानों का गलत अर्थ लगाया है जिसमें कहीं नहीं उल्लेख किया गया है कि इस धारा के अधीन जारी अधिसूचना का अवसान 30 वर्ष बाद हो जाएगा। प्रश्नगत भूमि न केवल अधिसूचित वन क्षेत्र के अंतर्गत आती है, बल्कि यह 'वन' की परिभाषा के अधीन भी आती है और इस प्रकार खनन पट्टा के नवीकरण के लिए भी याची को वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के अधीन वन अनापत्ति लेने की आवश्यकता थी। यद्यपि प्रश्नगत भूमि सीमांकित वन भूमि के बाहर है, फिर भी यह असीमांकित संरक्षित वन के अधीन आती है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया। याची के विद्वान अधिवक्ता ने मुख्यत: नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन के विरूद्ध शिकायत किया है क्योंकि दिनांक 27.4.2016 का आक्षेपित आदेश पारित करने के पहले उसे सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था। प्रत्यर्थीगण अभिलेख पर कोई तर्कपूर्ण सामग्री लाकर रिट याचिका में याची द्वारा किए गए उक्त प्रकथन को खंडित करने में विफल रहे हैं।

6. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **क्रांति एसोसिएट्स प्राइवेट लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम मसूद अहमद खान एवं अन्य, (2010)9 SCC 496,** मामला में दिए गए निर्णय में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के पालन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में कारण दर्ज करने की आवश्यकता पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया:–

''47. उक्त चर्चा को सार संक्षिप्त करते हुए यह न्यायालय अभिनिर्धारित करता है:

(a) भारत में, प्रशासनिक निर्णयों में भी, कारण दर्ज करने की न्यायिक प्रवृति सदैव रही है यदि ऐसे निर्णय किसी को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं।

(b) न्यायिक कल्प प्राधिकारी को अपने निष्कर्ष के समर्थन में कारण दर्ज करना होगा।

(c) कारण दर्ज करने पर जोर न्याय के व्यापक सिद्धांत का पालन करने के लिए आशयित है कि न्याय न केवल किया जाना होगा बल्कि इसे किया गया भी प्रतीत होना होगा।

(d) कारण दर्ज किया जाना न्यायिक और न्यायिक कल्प अथवा प्रशासनिक शक्ति के किसी संभावित मनमाना प्रयोग पर वैध अवरोध के रूप में प्रवर्तित होता है।

(e) कारण आश्वासन देता है कि प्रासंगिक आधारों पर और विषयेतर विचारों की उपेक्षा करके निर्णयकर्ता द्वारा स्वविवेक का प्रयोग किया गया है।

(f) कारण असल में न्यायिक, न्यायिक कल्प निकायों द्वारा और प्रशासनिक निकायों द्वारा भी नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के पालन की तरह निर्णय लेने की प्रक्रिया के अपरिहार्य घटक बन गए हैं।

(g) कारण उच्चतर न्यायालयों द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन की प्रक्रिया सुकर बनाते हैं।

(h) विधि के शासन एवं संवैधानिक शासन के प्रति प्रतिबद्ध समस्त देशों में चल रही न्यायिक प्रवृति प्रासंगिक तथ्यों पर आधारित तार्किक निर्णयों के पक्ष में है। यह सिद्धांत कि कारण न्याय की आत्मा है, को न्यायोचित ठहरते हुए न्यायिक निर्णय का असल में प्राण है।

(i) इन दिनों न्यायिक अथवा न्यायिक कल्प मत उतने ही भिन्न हो सकते हैं जितने इनको देने वाले न्यायाधीश एवं प्राधिकारी। ये समस्त निर्णय एक सामान्य प्रयोजन पूरा करते हैं जो कारण देकर यह प्रदर्शित करना है कि प्रासंगिक कारकों पर वस्तुपरकता से विचार किया गया है। यह न्याय परिदाय प्रणाली में वादकारों का विश्वास संपोषित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

(j) कारण पर जोर न्यायिक उत्तरदायित्वता एवं पारदर्शिता के लिए आवश्यक है।

(k) यदि कोई न्यायाधीश अथवा न्यायिक कल्प प्राधिकारी अपने निर्णय लेने की प्रक्रिया के बारे में पर्याप्त रूप से स्पष्टवादी नहीं है, तब यह जानना असंभव है कि क्या निर्णय करने वाला व्यक्तिपूर्व निर्णय के सिद्धांत अथवा इंक्रिमेंटलिज्म (क्रमिक वृद्धि) के सिद्धांत का पालन करता हैं।

(l) निर्णयों के समर्थन में कारण तर्कपूर्ण, स्पष्ट एवं सारगर्भित होना होगा। कारण का बहाना अथवा ''रबरस्टाम्प कारण'' को वैध निर्णय लेने की प्रक्रिया के समतुल्य नहीं बनाया जाना है।

(m) इसपर संदेह नहीं किया जा सकता है कि पारदर्शिता न्यायिक शक्तियों के दुरुपयोग पर अवरोध के लिए अनिवार्य है। निर्णय लेने की प्रक्रिया में पारदर्शिता न केवल न्यायाधीशों एवं निर्णयकर्ताओं को गलती से बचाती है बल्कि उनको व्यापक संवीक्षण के अध्यधीन भी बनाती है।

(n) चूँकि कारण दर्ज करने की आवश्यकता निर्णय लेने में निष्पक्षता के मोटे सिद्धांत से उद्भूत होती है, उक्त आवश्यकता अब असल में मानव अधिकार का घटक है और स्ट्रासबर्ग विधिशास्त्र का भाग माना गया था। देखें: रूइज टोर्जिया बनाम स्पेन, EHRR, Pg. 562, Para 29 और अन्य बनाम ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय जिसमें न्यायालय ने यूरोपीय मानवाधिकार कन्वेंशन के अनुच्छेद 6 को निर्दिष्ट किया है जो

आवश्यक बनाती है कि ''न्यायिक निर्णयों के लिए पर्याप्त एवं बुद्धिमत्तापूर्ण कारण दिया जाना होगा।''

(o) कॉमन लॉ विधिशास्त्र में निर्णय भविष्य के लिए पूर्वोदाहरण स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः विधि के विकास के लिए निर्णय के लिए कारण देने की आवश्यकता सारवान है और असल में ''सम्यक प्रक्रिया'' का भाग है।''

7. धरमपाल सत्यपाल लिमिटेड बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क उपायुक्त, गौहाटी एवं अन्य, (2015)8 SCC 519, मामला में दिए गए निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के ऐतिहासिक विकास पर विचार करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*''35. पूर्वोक्त चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि कोई निर्णय करने के पहले सुनवाई का अवसर प्रदान करना न्यायालय कार्यवाही में मूल आवश्यकता माना गया था। बाद में, यह सिद्धांत अन्य न्यायिक कल्प प्राधिकरणों एवं अन्य अधिकरणों के प्रति लागू किया गया था और अंततः अब यह स्पष्टतः अधिकथित किया गया है कि प्रशासनिक कार्रवाई में भी जहाँ प्राधिकारी के निर्णय का सिविल परिणाम हो सकता है, निर्णय लेने के पहले सुनवाई आवश्यक है। इस प्रकार, ए० के० क्रायपक मामला में यह संप्रेक्षित किया गया था कि यदि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का प्रयोजन न्याय की विफलता रोकना है, हम यह देखने में विफल हैं कि किस प्रकार इन सिद्धांतों को प्रशासनिक जाँचों में उपलब्ध क्यों नहीं कराया जाना चाहिए। **मेनका गांधी बनाम भारत संघ** में भी नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की प्रयोज्यता राज्य एवं इसके प्राधिकारियों की प्रशासनिक कार्रवाई तक विस्तारित की गयी थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि कार्रवाई करने के पहले नोटिस का तामील एवं नोटिस दिए गए व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने की आवश्यकता है। महाराष्ट्र राज्य वित्त निगम बनाम सुवर्ण बोर्ड मिल्स, में इस पहलू को निम्नलिखित तरीके से स्पष्ट किया गया था:*

''3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा हमारे समक्ष प्रतिवाद किया गया है कि यह मानते हुए कि ऐसा करना आवश्यक था, धारा 29 के अधीन कार्रवाई करने के पहले नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को संतुष्ट किया गया था। अब यह देखा जाए कि क्या ऐसा था। यह सुस्थापित है कि नैसर्गिक न्याय को बंदिश में नहीं रखा जा सकता है; इसके सिद्धांत समाविष्ट नहीं है और प्रत्येक मामला एवं प्रत्येक तथ्य स्थिति में अलग–अलग होती है। केवल यह देखा जाना है कि किसी को नोटिस के परिणाम अनुसरित होंगे यदि वह चूक नहीं सुधारता है, देने के पहले किसी प्रतिकूल सिविल परिणाम को परिणत होने की अनुमति नहीं दी जाती है, जिस चूक के कारण अवगत करायी गयी कार्रवाई अनुध्यात की गयी है। नोटिस का कोई फॉर्म विशेष विधि की मांग नहीं है। सब कुछ मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।''

*36. **इस्ट इंडिया कमर्शियल कं० लि० बनाम सीमा शुल्क समाहर्ता** में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चाहे संविधि नोटिस दिया जाना प्रावधानित करती हो या नहीं, परिस्थितियों जिनके अधीन उनके विरूद्ध कार्यवाही आरंभ किया जाना इप्सित किया गया है, को प्रकट करते हुए संबंधित व्यक्ति को नोटिस जारी करना न्यायिक कल्प प्राधिकारी पर बाध्यकारी है जिसमें विफल होने पर निष्कर्ष यह होगा कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है। इसी प्रभाव के निम्नलिखित निर्णय हैं:*

(a) भारत संघ बनाम मधुमिलन सिनटेक्स (प्रा०) लि०

(b) मोरारजी गोकुलदास बी० एन्ड डब्लू० कं० लि० बनाम भारत संघ

(c) मेटल फोर्जिंग्स बनाम भारत संघ

(d) भारत संघ बनाम टाटा योडोगावा लि०''

8. स्वीकृत रूप से, याची के पास प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा सम्यक रूप से प्रदान किया गया खनन पट्टा था किंतु खनन पट्टा के नवीकरण से इस आधार पर इनकार किया गया है कि उक्त भूमि संरक्षित वन क्षेत्र के भीतर अवस्थित है जिसमें किसी खनन गतिविधि की अनुमति नहीं दी जा सकती है, वह भी याची को सुनवाई का अवसर दिए बिना। यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि किसी व्यक्ति के अधिकारों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए उसके विरूद्ध किसी प्रशासनिक/न्यायिक कल्प प्राधिकारी द्वारा कोई निर्णय लिया जाता है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन औपचारिकता मात्र नहीं है।

9. यहाँ उपर की गयी चर्चा और न्यायिक उद्घोषणाओं की दृष्टि में प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा जारी दिनांक 27.4.2016 के मेमो सं॰ 735 में यथा अंतर्विष्ट आक्षेपित पत्र (रिट याचिका का परिशिष्ट 8) विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और इसे एतद्द्वारा अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर याची को सुनवाई का अवसर देने के बाद उक्त खनन पट्टा के नवीकरण के लिए याची के आवेदन पर नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

10. दिनांक 27.4.2016 के मेमो सं॰ 735 में अंतर्विष्ट पत्र में निर्दिष्ट प्रत्यर्थी सं॰ 2 पारित दिनांक 25.4.2016 का आक्षेपित आदेश भी प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा मामला में उक्त आदेश पारित किए जाने तक प्रास्थगित रखा जाएगा और प्रश्नगत पट्टा धृत क्षेत्र के संबंध में यथा स्थिति जैसी आज के दिन विद्यमान है पक्षों द्वारा बनायी रखी जाएगी।

11. तद्नुसार, पूर्वोक्त संप्रेक्षण एवं निर्देश के साथ वर्तमान रिट याचिका निपटायी जाती है।

12. परिणामस्वरूप, आई॰ ए॰ सं॰ 3830/2017 भी निपटाया जाता है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

क्रिति भूषण पॉल एवं एक अन्य

बनाम

मधुसूदन पॉल

W.P.(C) No. 5724 of 2011. Decided on 14th May, 2018.

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश VI नियम 17—हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956—धारा 22—वादपत्र का संशोधन—सी॰पी॰सी॰ का आदेश VI नियम 17 न्यायालय पर अभिवचनों में संशोधन करने की अनुमति देने के लिए व्यापक शक्ति प्रदत्त करता है—अभिवचनों में संशोधन किसी भी चरण पर, वाद के अंतिम सुनवाई के चरण पर भी, अनुज्ञात किया जा सकता है—यदि अभिवचनों में संशोधन वाद में वास्तविक विवाद को न्यायनिर्णीत करने के लिए आवश्यक है, सामान्यतः इसकी अनुमति दी जाएगी—वाद अनुसूची संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती दिए बिना हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 22 पर आधारित वाद में वास्तविक विवाद प्रभावकारी रूप से न्यायनिर्णीत नहीं किया जा सकता है—

विचारण न्यायाधीश ने सही प्रकार से वादपत्र में संशोधन करने की अनुमति दिया है—आक्षेपित आदेश मान्य ठहराया गया—रिट याचिका का खारिज। (पैराएँ 4 एवं 5)

(ख) परिसीमा अधिनियम, 1963—अनुच्छेद 59—विक्रय विलेख का रद्दकरण—लिखत अथवा डिक्री को रद्द अथवा अपास्त करने के लिए तीन वर्षों की परिसीमा उस तिथि से आकृष्ट होती है जब वादी को लिखत अथवा डिक्री को रद्द करवाने के लिए हकदार बनाने वाला तथ्य उसकी जानकारी में आता है—अनुच्छेद 59 के अधीन तीन वर्षों की परिसीमा विक्रय विलेख का रद्दकरण इप्सित करने वाले अनुतोष के प्रति वर्जना के रूप में प्रवर्तित नहीं होगी। (पैरा 3)

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Sahani, For the Petitioners; Mr. Shailesh Kumar Singh, For the Respondent.

आदेश

याचीगण अभिधान वाद सं॰ 3 वर्ष 2003 में प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7, दिनांक 9.9.2011 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा वादपत्र में संशोधन अनुज्ञात किया गया है।

2. अभिधान वाद सं॰ 3 वर्ष 2003 संस्थित करने का आधार हिंदू विवाह अधिनियम 1956 की धारा 22 है। यह प्रावधानित करती है कि यदि निर्वसीयत की किसी अचल संपत्ति में अथवा उसके द्वारा किए गए किसी व्यवसाय, चाहे यह अकेला या किसी के साथ किया जा रहा हो, में हित दो अथवा अधिक वर्ग । उत्तराधिकारियों पर न्यागत होता है और ऐसे उत्तराधिकारियों में से कोई संपत्ति अथवा व्यवसाय में अपना हित अंतरित करने का प्रस्ताव देता है, अन्य उत्तराधिकारियों को ऐसा हित जिसको अंतरित किया जाना प्रस्तावित किया गया है अर्जित करने का अधिमानी अधिकार होगा। वादी एवं प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 5 गोत्रज हैं। वे अपने सामान्य पूर्वज हरिबोल पॉल के माध्यम से दावा कर रहे हैं। वाद में उनको पक्षकार बनाए जाने के बाद प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7 द्वारा यह अभिवचन करते हुए कि दिनांक 4.8.2005 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख द्वारा उनके पक्ष में अनुसूची B संपत्ति अंतरित की गयी है, लिखित कथन दाखिल करके इसका प्रतिवाद किया गया था। याचीगण जो वाद में प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7 है उस आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा वादी को दिनांक 4.8.2005 के विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती देने की अनुमति दी गयी है।

3. आरंभ में, यह दर्ज करना उपयुक्त है कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 22 के अधीन प्रयुक्त भाषा और इस तथ्य कि पश्चातवर्ती खरीदारों को अभिधान वाद सं॰ 3 वर्ष 2003 में प्रतिवादीगण, के रूप में पक्षकार बनाया गया है की दृष्टि में यदि वादीगण को दिनांक 4.8.2005 के विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती देने की अनुमति नहीं दी जाती है; लिखित कथन में विक्रय विलेख का निष्पादन प्रकट किया गया था; वाद में इप्सित अनुतोष निष्फल बना दिया जाएगा। परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 59 पर आधारित प्रतिवाद कि तीन वर्षों के अवसान के बाद विक्रय विलेख का रद्दकरण इप्सित नहीं किया जा सकता है और इस प्रकार अनुतोष जो परिसीमा द्वारा वर्जित है संशोधन के माध्यम से वाद पत्र में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है, इस कारण से अमान्य है कि लिखत अथवा डिक्री को रद्द अथवा अपास्त करने के लिए तीन वर्षों की परिसीमा उस तिथि से आकृष्ट होती है जब लिखत अथवा डिक्री रद्द करवाने के लिए वादी को हकदार बनाने वाला तथ्य उसकी जानकारी में आता है लिखित कथन के पैराग्राफ सं॰ 13 एवं 18 में, जिस पर प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने विश्वास किया है, प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7 ने अभिवचन किया है कि वे वादी और प्रतिवादी सं॰ 1 से 5 के परिवार से अनजान नहीं है। यह ऐसा तथ्य नहीं है जो विक्रय विलेख का रद्दकरण इप्सित करने के लिए वादी के लिए वाद हेतुक उद्भूत करेगा। उक्त तथ्यों में, परिसीमा अधिनियम, 1963 का अनुच्छेद 59 इस मामला के प्रति प्रयोज्य नहीं है। अनुच्छेद 59 के अधीन तीन वर्षों की परिसीमा इस प्रकार दिनांक 4.8.2005 के विक्रय विलेख का रद्द करण इप्सित करने वाले अनुतोष के प्रति वर्जना के रूप में प्रवर्तित नहीं होगी।

4. सी॰ पी॰ सी॰ का आदेश VI नियम 17 अभिवचनों में संशोधन करने की अनुमति देने के लिए न्यायालय पर व्यापक शक्ति प्रदत्त करता है और अब यह सुस्थापित है कि किसी चरण पर, वाद के अंतिम सुनवाई के चरण पर भी, अभिवचनों में संशोधन अनुज्ञात किया जा सकता है। यदि अभिवचनों में संशोधन वाद में वास्तविक विवाद न्यायनिर्णीत करने के लिए आवश्यक है, सामान्यत: उसकी अनुमति दी जाएगी। वाद अनुसूची संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख का निष्पादन वादी को वाद के संस्थापन के समय पर ज्ञात नहीं था। वाद पत्र के प्रकथन प्रकट करते हैं कि इस आशंका पर कि प्रतिवादीगण जो वाद संपत्ति के विक्रय की बातचीत कर रहे थे किसी अन्य व्यक्ति को संपत्ति बेचेंगे, वाद संस्थित किया गया था। किंतु, यह प्रकट किए जाने के बाद कि विक्रय विलेख प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7 के पक्ष में निष्पादित किया गया है, दिनांक 4.8.2005 के विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती दिए बिना हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 22 पर आधारित वाद में वास्तविक विवाद प्रभावकारी रूप से न्यायनिर्णीत नहीं किया जा सकता है और चूँकि ऐसा है, विचारण न्यायाधीश ने सही प्रकार से वाद पत्र में संशोधन करने की अनुमति दिया है।

5. उक्त तथ्यों में, मैं दिनांक 9.9.2011 के आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाता हूँ और तद्नुसार रिट याचिका गुणागुण रहित होने के कारण खारिज की जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

जसमुद्दीन अंसारी उर्फ जसीम मियां

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No.56 of 2004. Decided on 2nd May, 2018.

एस॰ सी॰/एस॰टी॰ मामला सं॰ 18 वर्ष 1999 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश सह-विशेष न्यायाधीश, एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम मामला, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 324—अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958—धारा 4(i)—घोर उपहति—दोषसिद्धि—परिवीक्षा पर निर्मुक्ति—चश्मदीद गवाह का साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य के साथ संगत है—अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य अभियोजन मामला के साथ संगत है और विचारण न्यायालय अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में न्यायोचित है—विचारण न्यायालय द्वारा नरम दृष्टिकोण लिया गया है और इसमें हस्तक्षेप करने के लिए इस न्यायालय के समक्ष कारण नहीं है—दोषसिद्धि का निर्णय और अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के अधीन बंधपत्र निष्पादित करने का आदेश अभिपुष्ट किया जाता है—दांडिक अपील खारिज।

(पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.—Mr. Surendra Prasad Sinha, For the Appellant; Mr. Sanjay Kumar Pandey, For the State.

न्यायालय द्वारा.—याची के अधिवक्ता एवं राज्य के अपर लोक अभियोजक सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील एस॰ सी॰/एस॰टी॰ मामला सं॰ 18 वर्ष 1999 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, एस॰ सी॰/एस॰टी॰ अधिनियम मामला, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा एकमात्र

अपीलार्थी जसमुद्दीन अंसारी उर्फ जसिम मियाँ को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और अपीलार्थी को दो वर्षों की अवधि के लिए अच्छा व्यवहार और शांति बनाए रखने तथा समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ 2000/- रुपयों का बंधपत्र प्रस्तुत करने का निर्देश देते हुए अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(i) के अधीन निर्मुक्त किया गया है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिन्हा ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी ने बंधपत्र निष्पादित किया है, किंतु 9.1.2004 को आक्षेपित आदेश के विरूद्ध इस दांडिक अपील को दाखिल किया है और दिनांक 20.2.2004 के आदेश के तहत बंधपत्र के निष्पादन का निर्देश देने वाला आदेश पहले ही स्थगित किया गया है और तब से मामला इस माननीय न्यायालय के समक्ष लंबित है।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि पक्षों के बीच मामला एवं प्रतिमामला है और झारी सिंह (अ॰ सा॰ 5) के सिवाए इस मामला की घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। भूमि विवाद है जैसा स्वयं सूचक द्वारा स्वीकार किया गया है और इस दशा में विद्वान विचारण न्यायालय अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध करने में न्यायोचित नहीं है।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पाँच नामित अभियुक्तों अर्थात वर्तमान सूचक झारी सिंह और धानु सिंह, अजय राम, हरि सिंह और प्रसादी सिंह के विरूद्ध उसके पिता (जसमुद्दीन अंसारी) पर प्रहार करने के लिए प्रति मामला दाखिल किया गया था किंतु उक्त मामला वर्तमान मामला के बाद संस्थित किया गया था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि भूमि विवाद के कारण पक्षों के बीच मामला एवं प्रति मामला की दृष्टि में विद्वान विचारण न्यायालय मामला के एकमात्र चश्मदीद गवाह-सह-पीड़ित के परिसाक्ष्य पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में न्यायोचित नहीं है जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 5 (झारी सिंह) के रूप में किया गया है और निवेदन किया है कि अपीलार्थी के पक्ष में संदेह का लाभ प्रदान किया जा सकता है।

6. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे ने निवेदन किया है कि दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य पर आधारित है। सूचक अ॰ सा॰ 5 झारी सिंह ने प्राथमिकी में स्पष्टत: कथन किया है कि अभियुक्त जसिम मियाँ ने उसकी दायीं जांघ पर चाकू से प्रहार किया जिसे उपहति रिपोर्ट द्वारा संपुष्ट किया गया है जिसे प्रदर्श 1 चिन्हित किया गया है और डॉ॰ रामरेखा प्रसाद (अ॰सा॰ 3) द्वारा सिद्ध किया गया है। प्राथमिकी में यथाकथित सूचक (अ॰ सा॰ 5) का परिसाक्ष्य अथवा न्यायालय में अ॰ सा॰ 5 के रूप में उसका अभिसाक्ष्य अत्यन्त संगत है, अत: इस प्रभाव की पृष्ठभूमि में अ॰ सा॰ 5 की विश्वसनीयता विवादित नहीं की जा सकती है कि उसने स्पष्टत: कथन किया है कि अभियुक्त जसिम मियाँ ने चाकू से उसकी दायीं जांघ पर प्रहार किया था और उक्त उपहति न्यायालय को भी दिखायी गयी थी। इस गवाह ने यह कथन भी किया कि झारी सिंह (अ॰ सा॰ 5) के सिवाए किसी ने घटना नहीं देखा है, इस दशा में इस गवाह की विश्वसनीयता विश्वसनीय है और अभिलेख पर कुछ नहीं है जो सूचक का बयान अविश्वसनीय बनाएगा।

7. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिन्हा और राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री संजय कुमार पांडे को सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन पर भी इस न्यायालय का मत है कि अभिलेख पर लाया गया साक्ष्य अभियोजन मामला के साथ संगत है और विद्वान विचारण न्यायालय अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में न्यायोचित है क्योंकि अ॰ सा॰ 5 झारी सिंह का साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य (प्रदर्श 1) के साथ संगत है और भारतीय दंड संहिता और विशेष अधिनियम की अनेक धाराओं के अधीन अन्य अभियुक्तों और अपीलार्थी को भी दोषमुक्त करके यह न्यायालय एस॰ सी॰/एस॰टी॰

मामला सं॰ 18 वर्ष 1999 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, एस॰सी॰/एस॰टी॰ अधिनियम मामला, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश को इसे मान्य ठहराते हुए अभिपुष्ट करता है। जहाँ तक दंडादेश का संबंध है, विद्वान विचारण न्यायालय ने भी अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) का लाभ दिया है इस दशा में, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा नरम दृष्टिकोण लिया गया है और इसमें हस्तक्षेप करने के लिए इस न्यायालय के पास कारण नहीं है। दोषसिद्धि का निर्णय एवं अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के अधीन बंधपत्र निष्पादित करने का आदेश अभिपुष्ट किया जाता है।

8. पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए वर्तमान दांडिक अपील खारिज की जाती है।

9. इस न्यायालय द्वारा दिनांक 20.2.2004 के आदेश के तहत प्रदान किया गया अंतरिम आदेश एतद्द्वारा रिक्त किया जाता है। अपीलार्थी द्वारा दाखिल बंधपत्र उसी बंधपत्र पर बना रहेगा जैसा निर्देश विद्वान अवर न्यायालय द्वारा दिया गया है।

10. इस निर्णय की प्रति एल॰ सी॰ आर॰ के साथ संबंधित न्यायालय को भेजी जाए।

माननीया अनुभा रावत चौधरी, न्यायमूर्ति

सांभा मांझी एवं अन्य

बनाम

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No.4166 of 2002. Decided on 11th April, 2018.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 71A—आदिवासी भूमि का पुनर्स्थापन—कब्जा महत्वपूर्ण पहलू है जहाँ तक नामांतरण का संबंध है—अंचलाधिकारी ने संपत्ति पर भौतिक कब्जा के संबंध में अपना रिपोर्ट दिया किंतु निरीक्षण रिपोर्ट के अनुसरण में अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया था जिसे केवल पक्षों की आपत्ति सुनने के बाद पारित किया जा सकता था—इस तथ्य पर विचार करते हुए कि पक्षों को निरीक्षण रिपोर्ट जिसे अंचलाधिकारी द्वारा तैयार किया गया है के प्रति आपत्ति करने का अधिकार है और भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में नया आदेश पारित किया जाना था और चूँकि भूमि सुधार उपसमाहर्ता का आदेश आयुक्त द्वारा मान्य ठहराया गया है, अंचलाधिकारी द्वारा तैयार किए गए पत्र में यथा अंतर्विष्ट निरीक्षण रिपोर्ट के अनुसरण में अंचलाधिकारी/भूमि सुधार उप समाहर्ता द्वारा नया आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता है—अंचलाधिकारी/भूमि सुधार उप समाहर्ता को पक्षों की आपत्तियों पर विचार करने के बाद नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैरा 8)

निर्णयज विधि.—(2012) 4 JLJR 210; (1993) 2 PLJR 255—Distinguished.

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Sahani, For the Petitioners; M/s Rajiv Anand, Aditya Raman, For the Resp.-State; M/s Sudarshan Shrivastava, Sunil Singh, For the Private Resp.

आदेश

याची की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ साहनी सुने गए।

2. श्री सुनील सिंह अधिवक्ता द्वारा सहायित प्राइवेट प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री सुदर्शन श्रीवास्तव सुने गए।

3. प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित अधिवक्ता श्री आदित्य रमन सुने गए।

4. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोष के लिए दाखिल की गयी है:–

''प्रत्यर्थी सं० 2 द्वारा बोकारो राजस्व पुनरीक्षण सं० 59/98 में पारित दिनांक 25.6.02 के आदेश के अभिखंडन के लिए निर्देश के लिए जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं० 3 द्वारा पारित आदेश उलटा गया है और किसी अन्य समुचित रिट अथवा आदेश अथवा निर्देश के लिए जिसे यह माननीय न्यायालय समुचित एवं योग्य समझ सकता है।''

5. याची के अधिवक्ता निम्नलिखित निवेदन करते हैं:–

(a) याचीगण के पूर्वजों ने दिनांक 27.4.1954 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के तहत विवादित भूमि किसी छोटू सिंह चौधरी से खरीदा था जिसने इसे दिनांक 27.4.1954 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के तहत किसी कन्हैया लाल मारवाड़ी से खरीदा था जिसने इस निष्पादन मामला सं॰ 1871 वर्ष 1932-33 में जमीन्दार से अन्य भूमि के साथ निष्पादन मामला में नीलामी विक्रय में खरीदा था। याचीगण के पूर्वजों ने खरीद के बाद मांग खोलने के लिए आवेदन दिया और इसे निर्धारित किया गया था और तब से वे राज्य को लगान का भुगतान कर रहे हैं और हाल के खतियान में याचीगण का नाम दर्ज किया गया है।

(b) याचीगण और प्राइवेट प्रत्यर्थीगण कुम्हार जाति से आते हैं जो अनुसूचित जनजाति नहीं है। इस तथ्य को दबाते हुए प्राइवेट प्रत्यर्थियों के सदस्यों ने वर्ष 1987 में छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 71A के अधीन भूमि के पुनर्स्थापन के लिए आवेदन पुनर्स्थापन मामला सं॰ 523/1987-88 दाखिल किया और उनके पक्ष में पुनर्स्थापन आदेश पारित किया गया था किंतु निष्पादन के समय पर यह प्रकाश में आया कि दोनों पक्ष अनुसूचित जनजाति के नहीं हैं और तद्नुसार समाहर्ता ने दिनांक 3.10.1991 के आदेश के तहत भूमि पुनर्स्थापन मामला सं॰ 523/1987-88 छोड़ दिया।

(c) भूमि पुनर्स्थापन मामला सं॰ 523/1987-88 के माध्यम से भूमि वापस पाने में विफल होने के बाद प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने अपने नाम में जमाबन्दी खोलने के लिए आवेदन दिया जिसे प्रत्यर्थी सं॰ 5 के समक्ष विविध मामला सं॰ 5(ix) वर्ष 1994-95 के रूप में संख्यांकित किया गया था और अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा दिनांक 7.8.1994 का आदेश पारित किया गया था जिसमें अंचलाधिकारी, चंदन कियारी ने आवेदकों से लगान के भुगतान के लिए अनुशंसा किया था और आदेश पारित करने के लिए मामला भूमि सुधार उपसमाहर्ता चास के समक्ष रखा गया था।

(d) तत्पश्चात, भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास ने दिनांक 15.5.1996 का आदेश पारित किया जिसमें उक्त प्राधिकारी ने संप्रेक्षित किया कि अभिलेख जिसे अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा रखा गया है, यह प्रकट नहीं करता है कि कौन वस्तुत: संपत्ति पर काबिज है और तद्नुसार सम्यक सत्यापन के बाद आवश्यक आदेश पारित करने के लिए मामला अंचलाधिकारी, चंदन कियारी को भेजा गया था।

(e) इस आदेश के विरूद्ध, याची ने अपील विविध अपील सं॰ 5 वर्ष 1996-97 दाखिल किया और अपील लंबित रहने के दौरान अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा आवश्यक निरीक्षण किया गया था जो दिनांक 16.9.1996 के पत्र सं॰ 620 में अंतर्विष्ट था जो दिनांक 15.5.1996 के पूर्वोक्त आदेश के

अनुसरण में था जिसमें उक्त प्राधिकारी ने पाया कि याचीगण संपत्ति पर काबिज है और दिनांक 16.9.1996 के इस विशेष निरीक्षण रिपोर्ट पर अपीलीय प्राधिकारी द्वारा विचार किया गया था जिन्होंने दिनांक 27.12.1997 के आदेश के तहत याचीगण के पक्ष में अपील विनिश्चित किया।

(f) इसके विरूद्ध वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने आयुक्त, उत्तरी छोटानागपुर, डिविजन, हजारीबाग के समक्ष पुनरीक्षण याचिका दाखिल किया जिसे बोकारो राजस्व पुनरीक्षण मामला सं॰ 59 वर्ष 1998 के रूप में संख्यांकित किया गया था और उक्त प्राधिकारी ने पक्षों को सुनने के बाद अभिनिर्धारित किया कि भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश सही था और अपीलीय प्राधिकारी का आदेश अपास्त कर दिया।

(g) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अनेक संप्रेक्षण एवं निष्कर्ष जिसे आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा दर्ज किया गया है, अभिलेख की गंभीर गलती है और तद्नुसार, आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग के न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 25.6.2002 का आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है। याची के अधिवक्ता ने रिट याचिका के परिशिष्ट 6 में यथा अंतर्विष्ट सर्वे अधिकार अभिलेख (खतियान) की प्रमाणित प्रति पर भारी विश्वास किया है।

(h) याचीगण के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास का आदेश जिसे अंतत: विद्वान आयुक्त द्वारा मान्य ठहराया गया था ने सत्यापन अनुध्यात किया कि कौन संपत्ति पर वास्तविक रूप से काबिज था। ऐसे निर्देश के अनुसरण में, अंचलाधिकारी द्वारा स्थानीय निरीक्षण किया गया था और दिनांक 16.9.1996 का निरीक्षण रिपोर्ट तैयार किया गया था जिसमें याचीगण को संपत्ति पर काबिज पाया गया था और तद्नुसार भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश में यथा अंतर्विष्ट निर्देश के अनुपालन में नया आदेश पारित किए जाने की अब आवश्यकता है। वह निवेदन करते हैं कि संप्रेक्षण एवं निष्कर्ष जिन्हें गलत रूप से विद्वान आयुक्त के आदेश में आक्षेपित आदेश पारित करते हुए दर्ज किया गया है कार्यवाही में याचीगण के मामला पर प्रतिकूलता कारित कर सकता है जिसे भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश के अनुसारण में किया जाना है।

6. दूसरी ओर, प्राईवेट प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आवेदन जिसे प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा दाखिल किया गया था नामांतरण के लिए आवेदन नहीं था बल्कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों के पूर्वाधिकारी को अभिधारी के रूप में दर्ज किया गया था और उन्होंने केवल लगान के भुगतान के लिए आवेदन दिया था। किंतु, वह निवेदन करते हैं कि दिनांक 16.9.1996 का निरीक्षण रिपोर्ट जिसे अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा तैयार किया गया था सही अवस्था परिलक्षित नहीं करता है जहाँ तक संपत्ति पर कब्जा का संबंध है और इसे अपीलीय आदेश, जिसे भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास द्वारा पारित दिनांक 15.5.1996 के आदेश के अनुसरण में पारित किया गया था, पर विचार करते हुए विचार में नहीं लिया जा सकता था। वह आगे निवेदन करते हैं कि चूँकि अपीलीय प्राधिकारी ने अपीलीय आदेश पारित करते हुए पश्चातवर्ती निरीक्षण रिपोर्ट को विचार में लिया था, इस मामला में प्राइवेट प्रत्यर्थियों ने सही प्रकार से आयुक्त, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग के समक्ष अपना पुनरीक्षण दाखिल किया था जिन्होंने इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के बाद भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश को मान्य ठहराया है। वह आगे निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नही है क्योंकि भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा मान्य ठहराया गया है। प्राइवेट प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता ने निवेदन

किया है कि याचीगण को उपलब्ध एकमात्र उपचार संपत्ति पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा के लिए सिविल वाद दाखिल करना है और इस प्रयोजन से उन्होंने (2012) 4 JLJR 210 में प्रकाशित इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और (1993) 2 PLJR 255 में प्रकाशित माननीय पटना उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है। जहाँ तक रिट याचिका के परिशिष्ट 6 पर याची के विश्वास का संबंध है, इसे प्रत्यर्थियों द्वारा विवादित किया गया है।

7. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश सही प्रकार से पारित किया गया है, तद्नुसार, इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

8. इस मामला के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के बाद यह न्यायालय निम्नलिखित पाता है:–

(a) आदेश जिसे 15.5.1996 को भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित किया गया था ने स्पष्टत: अंचलाधिकारी को यह पता लगाने का निर्देश दिया कि कौन वस्तुत: संपत्ति पर भौतिक रूप से काबिज है और तद्नुसार आदेश पारित किया।

(b) इस रिट याचिका के प्राइवेट प्रत्यर्थियों द्वारा दिनांक 15.5.1996 के आदेश को चुनौती कभी नहीं दी गयी थी। वस्तुत: याचीगण ने इसे चुनौती दिया था।

(c) इसपर कोई विवाद नहीं है कि कब्जा महत्वपूर्ण पहलू है जहाँ तक नामांतरण का संबंध है। अंचलाधिकारी, चंदन कियारी ने वाद में दिनांक 16.9.1996 के पत्र सं॰ 620 के तहत संपत्ति पर भौतिक कब्जा के संबंध में अपना रिपोर्ट दिया किंतु दिनांक 16.9.1996 के निरीक्षण रिपोर्ट के अनुसरण में अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया था जिसे केवल पक्षों की आपत्ति सुनने के बाद पारित किया जा सकता था जहाँ तक उक्त निरीक्षण रिपोर्ट का संबंध है। किंतु, रिट याचीगण के पक्ष में निष्कर्ष देने के लिए अपीलीय प्राधिकारी द्वारा इस विशेष निरीक्षण रिपोर्ट पर विश्वास किया गया है जिसे बाद में पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा बोकारो पुनरीक्षण केस सं॰ 59 वर्ष 1998 में अपास्त किया गया था जिसमें भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश मान्य ठहराया गया है और याचीगण के विरूद्ध कतिपय निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं।

(d) इस तथ्य पर विचार करते हुए कि पक्षों को निरीक्षण रिपोर्ट, जिसे अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा दिनांक 16.9.1996 के पत्र सं॰ 620 के तहत तैयार किया गया है के प्रति आपत्ति करने का अधिकार है और भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास द्वारा पारित दिनांक 15.5.1996 के आदेश के अनुसरण में नया आदेश पारित किया जाना था और चूँकि भूमि सुधार उप समाहर्ता का आदेश विद्वान आयुक्त द्वारा मान्य ठहराया गया है, अंचलाधिकारी, चंदन कियारी द्वारा तैयार की गयी दिनांक 16.9.1996 के पत्र सं॰ 620 में यथा अंतर्विष्ट निरीक्षण रिपोर्ट के अनुसरण में अंचलाधिकारी/भूमि सुधार उप समाहर्ता द्वारा नया आदेश पारित किए जाने की अवश्यकता थी।

(e) इस तथ्य पर विचार करते हुए कि प्रत्यर्थियों द्वारा दाखिल आवेदन पर दिनांक 15.5.1996 के आदेश के अनुसरण में नया आदेश पारित किए जाने की आवश्यकता है, प्रत्यर्थियों द्वारा विश्वास किया गया (2012)4 JLJR 210 में प्रकाशित निर्णय और (1993) 2 PLJR 255 में प्रकाशित माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय इस चरण पर किसी तरीके से प्रत्यर्थियों की मदद नहीं करते हैं क्योंकि ये निर्णय इस बिंदु पर हैं कि राजस्व प्राधिकारी नामांतरण कार्यवाही के दौरान संपत्ति का अभिधान विनिश्चित नहीं करते हैं और न ही कर सकते हैं और उक्त कार्यवाही केवल राजस्व अभिलेख के लिए है।

(f) मामला के उस दृष्टिकोण में संप्रेक्षण/निष्कर्ष जिन्हें आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा आक्षेपित आदेश में दर्ज किया गया है, भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में नया आदेश पारित करते हुए अंचलाधिकारी अथवा भूमि सुधार उप समाहर्ता के रास्ते में आ सकते हैं। तद्नुसार, अंचलाधिकारी, चंदन कियारी/भूमि सुधार उपसमाहर्ता, चास को पक्षों की आपत्ति पर विचार करने के बाद और दिनांक 16.9.1996 की निरीक्षण रिपोर्ट के संबंध में पक्षों के निवेदन एवं आपत्ति पर भी विचार करने के बाद दिनांक 15.5.1996 के आदेश के अनुसरण में नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है और उक्त प्राधिकारी किसी संप्रेक्षण अथवा निष्कर्ष जिन्हें विद्वान आयुक्त द्वारा दिनांक 25.6.2002 के आक्षेपित आदेश में दर्ज किया गया है द्वारा पूर्वाग्रहग्रस्त नहीं होगा। उक्त प्राधिकारी अनेक दस्तावेजों आदि अथवा पक्षों द्वारा उक्त प्राधिकारी के समक्ष किए गए निवेदनों पर भी विचार करेगा और आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा बोकारो राजस्व पुनरीक्षण सं॰ 59/98 में पारित दिनांक 25.6.2002 के आक्षेपित आदेश में किए गए किसी संप्रेक्षण और विविध अपील सं॰ 5 वर्ष 1996-97 में पारित दिनांक 27.12.1997 के अपीलीय आदेश द्वारा पूर्वाग्रहग्रस्त नहीं होगा। अंचलाधिकारी चंदन कियारी/भूमि सुधार उप समाहर्ता, चास को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर अंतिम आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

9. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

माननीय श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति

भागमनि देवी एवं अन्य

बनाम

किरण कुमारी एवं अन्य

W.P.(C) No. 783 of 2011. Decided on 10th May, 2018.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश XXIII नियम 1 एवं नियम 1(3) सहपठित धारा 151—वाद वापस लेना—वाद वापस लेने के लिए आवेदन देने के लिए सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1 के अधीन परिसीमा प्रावधानित नहीं की गयी है—एकमात्र परिसीमा यह है कि त्रुटि जिस कारण वादी वाद वापस लेने के लिए न्यायालय की अनुमति इप्सित करता है, को औपचारिक त्रुटि होना होगा और इसे मामला के गुणागुण पर प्रभाव नहीं डालना चाहिए—यदि वाद में विचारण आरंभ हो गया है और वादी ने पहले ही अपने कुछ तात्विक गवाहों का परीक्षण किया है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 3 के अधीन आवेदन पोषणीय नहीं है—इस चरण पर जब वाद तर्क के लिए रखा गया था, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1 (1) के अधीन आवेदन पोषणीय था किंतु सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1(3) के अधीन पोषणीय नहीं था। (पैराएँ 3 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. Sanjay Kumar Pandey, For the Petitioners; Mr. S.N. Das, For the Respondents.

आदेश

याचीगण, अभिधान वाद सं॰ 11 वर्ष 2002 में वादीगण, दिनांक 2.12.2010 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1 एवं नियम (3) सहपठित सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 151 के अधीन उनका आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है।

2. सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 80 आज्ञा देती है कि अपने पदीय हैसियत में ऐसे लोक अधिकारी द्वारा तात्पर्यित रूप से किए जाने वाले किसी कृत्य के संबंध में सरकार के विरूद्ध अथवा लोक अधिकारी के विरूद्ध वाद सरकार/लोक अधिकारी के कार्यालय में लिखित में नोटिस दिए या छोड़े जाने के बाद अगले दो माह के अवसान तक संस्थित नहीं किया जाएगा। किंतु सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 80 की उपधारा 2 सरकार के विरूद्ध अत्यावश्यक एवं तुरन्त अनुतोष के लिए अपवाद बनाती है।

3. वाद वापस लेने के लिए आवेदन देने के लिए सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1 के अधीन परिसीमा प्रावधानित नहीं की गयी है। एकमात्र परिसीमा यह है कि त्रुटि जिस कारण वादी वाद वापस लेने के लिए न्यायालय की अनुमति इप्सित करता है को औचारिक त्रुटि होना होगा और इसे मामला के गुणागुण पर प्रभाव नहीं डालना चाहिए। स्पष्टत:, यदि वाद में विचारण आरंभ हो गया है और वादी ने पहले ही अपने कुछ तात्विक गवाहों का परीक्षण किया है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 3 के अधीन आवेदन पोषणीय नहीं है।

4. यह स्वीकृत अवस्था है कि वादीगण द्वारा दोनों पक्षों का साक्ष्य बंद किए जाने के बाद नया वाद संस्थित करने की अनुमति के साथ वाद वापस लेने के लिए न्यायालय की अनुमति इप्सित करते हुए दिनांक 4.10.2010 का आवेदन दाखिल किया गया था। याचीगण द्वारा अभिवचन कि वादी सं॰ 1 निरक्षर महिला है जिसे पूर्व कार्यवाही की सूचना नहीं थी याचीगण का मामला में सुधार नहीं करेगी क्योंकि अभिधान वाद सं॰ 11 वर्ष 2002 के संस्थापन के पहले धारा 80 के अधीन भेजी गयी नोटिस उनके वाद संस्थित करने के पहले वादीगण को ज्ञात होनी होगी।

5. इस चरण पर जब वाद तर्क के लिए रखा गया था, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXIII नियम 1(1) के अधीन आवेदन पोषणीय था किंतु सी॰ पी॰ सी॰ के आदश XXIII नियम (3) के अधीन नहीं।

6. उक्त तथ्यों में, दिनांक 2.12.2010 के आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाते हुए रिट याचिका खारिज की जाती है।

माननीय कैलाश प्रसाद देव, न्यायमूर्ति

बिनोद कुमार

बनाम

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (SJ) No.65 of 2004. Decided on 15th May, 2018.

सत्र विचारण सं॰ 86 वर्ष 2000 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला खरसावाँ, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 22.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 307—हत्या का प्रयास—अपने पति और पुलिस अधिकारी जिसने फर्दबयान दर्ज किया है के साक्ष्य के साथ पीड़िता का साक्ष्य उपहति रिपोर्ट के साथ संगत है—उपहति घोर प्रकृति की नहीं थी—अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दोषसिद्ध करने के बजाए न्यायालय अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध करता है और 15000/- रुपयों के जुर्माना जो पीड़ित को भुगतेय होगा के साथ डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत करता है। (पैरा 15)

अधिवक्तागण.–M/s Navneet Sahay, Jitendra Nath Upadhyay, For the Appellant; Mr. Manoj Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक सुने गए।

2. वर्तमान दांडिक अपील सत्र विचारण सं॰ 86 वर्ष 2000 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला खरसावाँ, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 17.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 22.12.2003 के दंडादेश के विरूद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा एकमात्र अपीलार्थी बिनोद कुमार को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और सात वर्षों का कठोर कारावास अधिनिर्णीत किया गया है।

वर्तमान दांडिक अपील एकमात्र अपीलार्थी द्वारा 13.1.2004 को दाखिल की गयी है, जिसे 1.4.2004 को ग्रहण किया गया है और अपीलार्थी को दंडादेश निलंबित करके जमानत पर निर्मुक्त किया गया था और तब से दांडिक अपील इस माननीय न्यायालय के समक्ष लंबित है।

3. अभियोजन मामला जैसा सूचक संतोष देवी द्वारा प्राथमिकी में बनाया गया है, यह है कि जब सूचक 'खटाल' से दूध लाने जा रही थी, खटाल जाने के रास्ते में अपीलार्थी ने उसे बुलाया और खून बहती उपहति कारित करते हुए उसके मस्तक पर 'भुजाली' से दाएँ हाथ पर हमला किया। बाद में अपीलार्थी ने महिला (सूचक) के दायें हाथ पर वार किया जिससे उपहति कारित हुई। हल्ला करने पर खटाल का स्वामी मंटू दूबे एवं अन्य वहाँ पहुँचे और महिला (सूचक) को बचाया। उसे इलाज के लिए वेलफेयर नर्सिंग होम ले जाया गया था और अभियुक्त/अपीलार्थी भाग गया। अस्पताल में सूचक का बयान दर्ज किया गया था और तत्पश्चात उसका इलाज किया गया था।

सूचक संतोष देवी के पूर्वोक्त 'फर्दबयान' के आधार पर पुलिस ने अभियुक्त/अपीलार्थी के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324/307 के अधीन प्राथमिकी आदित्यपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 59 वर्ष 1999 (दिनांकित 2.5.1999), जी॰ आर॰ सं॰ 189 वर्ष 1999 के तत्सम, संस्थित किया।

4. अन्वेषण के बाद पुलिस ने अभियुक्त/अपीलार्थी के विरूद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324/307 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया। अपराध का संज्ञान किया गया था और दिनांक 18.3.2000 की अधिसूचना के तहत मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था।

5. विद्वान विचारण न्यायालय ने 8 जून, 2000 को अभियुक्त/अपीलार्थी के विरूद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307 के अधीन आरोप विरचित किया जिसके प्रति अभियुक्त/ अपीलार्थी ने निर्दोषिता का अभिवचन किया और इस प्रकार उसका विचारण किया गया था।

6. अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल आठ गवाहों का परीक्षण किया है और अपने मामला के समर्थन में अनेक दस्तावेजों को भी प्रदर्शित किया।

कार्तिक कुमार मोहन्ती जो औपचारिक गवाह का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में परीक्षण किया गया है। जय गोविन्द दूबे का अ॰ सा॰ 2 के रूप में परीक्षण किया गया है। साकेश कुमार भूषण का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। करूणा निधि दूबे का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया गया है। श्रीबास पॉल का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है। इन समस्त गवाहों (अ॰ सा॰ 2 से 5) को अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित किया गया है।

7. संतोष देवी, मामला की सूचक-सह-पीड़िता का परीक्षण अ॰ सा॰ 6 के रूप में किया गया है। उसने फर्दबयान में दिए गए बयान का समर्थन किया है और कथन किया है कि चूँकि यह अपीलार्थी (बिनोद

कुमार) उसकी पुत्री को छेड़ रहा था, उसने उसे फटकारा था। इसके लिए जब वह किसी मनोज दूबे के खटाल से दूध लाने जा रही थी, अभियुक्त/अपीलार्थी ने उसे बुलाया और जब वह रूकी, अपीलार्थी द्वारा भुजाली से उसके मस्तक पर प्रहार किया गया था और खून बहती हुई उपहति कारित की गयी थी। अभियुक्त/अपीलार्थी ने उपहति कारित करते हुए सूचक के दाएँ हाथ पर भी प्रहार किया। इसके परिणाम स्वरूप, अ॰ सा॰ 6 गिर गया और तत्पश्चात मंटू दूबे एवं अन्य उसको इलाज के लिए वेलकेयर नर्सिंग होम लाए जहाँ उसका बयान दर्ज किया गया था। उसके पति को सूचित किया गया था जो भी वहाँ आया।

उसका (अ॰ सा॰ 6) का इलाज डॉक्टर द्वारा किया गया था, जिन्होंने पीड़िता पर दो उपहति पाया, (i) मस्तक के दाएँ भाग पर 6 cm x 2 cm का कटने का जख्म (ii) 5 से॰ मी॰ x 2½ से॰ मी॰ आकार का दायीं केहुनी पर कटने का जख्म। डॉक्टर ने दोनों उपहतियों को तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित किया गया पाया है। उपहति सं॰ (i) गंभीर प्रकृति की घोषित की गयी है जब कि उपहति सं॰ (ii) सामान्य प्रकृति की घोषित की गयी है।

बचाव पक्ष ने महिला जो इस मामला की सूचक है का प्रतिपरीक्षण किया है किंतु उसके परिसाक्ष्य पर अविश्वास करने के लिए कुछ भी निकाला नहीं गया है। उसका परिसाक्ष्य 'फर्दबयान' में किए गए प्रकथन के अनुरूप है। न्यायालय में उसका अभिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य के साथ संगत है जिसे सिद्ध किया गया है और प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया है। महिला (अ॰ सा॰ 6) के परिसाक्ष्य पर अविश्वास करने के लिए कुछ नहीं है।

8. राजेन्द्र प्रसाद चौधरी, पीड़िता (अ॰ सा॰ 6) के पति का परीक्षण अ॰ सा॰ 7 के रूप में किया गया है। वह अनुश्रुत गवाह है और अभियुक्त द्वारा पुत्री को छेड़े जाने के बिन्दु पर महिला (अ॰ सा॰ 6) के विवरण का समर्थन किया है। स्वीकृत रूप से, यह गवाह अनुश्रुत गवाह है।

9. मामला के अन्वेषण अधिकारी रामनाथ चौधरी का परीक्षण अ॰ सा॰ 8 के रूप में किया गया है। वह पुलिस अधिकारी है जिसने वेलकेयर नर्सिंग होम, गम्हरिया में पीड़िता महिला (संतोष देवी) का फर्दबयान दर्ज किया है और चिकित्सीय तलब तैयार किया है जिसे प्रदर्श 3 के रूप में सिद्ध एवं चिन्हित किया गया है। उसने प्रदर्श 4 के रूप में फर्दबयान और प्रदर्श 4/1 के रूप में फर्दबयान पर प्रभारी अधिकारी का पृष्ठांकन सिद्ध किया है। उसने पुलिस सब इसंपेक्टर शैलेन्द्र को मामला का अन्वेषण सौंपा।

प्रति परीक्षण के दौरान इस गवाह ने कथन किया है कि डॉ॰ गोपाल चंद्र महतो जिन्होंने घायल का परीक्षण किया की मृत्यु मामला लंबित रहने के दौरान हो गयी। इस गवाह ने स्पष्टत: कथन किया है कि उसने महिला जो घायल दशा में थी और जिसे खटाल स्वामी मंटू दूबे द्वारा इलाज के लिए लाया गया था का रक्त रंजित वस्त्र देखा है। इस गवाह ने डॉ॰ गोपाल चंद्र महतो (अब मृतक) द्वारा लिखे गए उपहति रिपोर्ट प्रदर्श 5 के रूप में सिद्ध किया है। बचाव द्वारा उसके प्रति परीक्षण से कुछ नहीं निकाला गया है।

10. अभियोजन गवाहों का साक्ष्य बंद करने के बाद अपीलार्थी का बयान 29.8.2003 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था। बचाव ने किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया है।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री नवनीत सहाय, विद्वान अधिवक्ता श्री जे॰ एन॰ उपाध्याय द्वारा सहायित, ने निवेदन किया है कि इस मामला के अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है। पीड़िता की पुत्री का परीक्षण भी नहीं किया गया है और इस दशा में घटना के कारण और घटना के तरीका के संबंध में गंभीर प्रतिकूलता कारित की गयी है। विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन

में निवेदन किया है कि स्वतंत्र गवाहों, जो अ॰ सा॰ 2 से अ॰ सा॰ 5 हैं, ने अभियोजन मामला का समर्थन नहीं किया है और इस प्रकार उन्हें अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित किया गया था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि यद्यपि डॉक्टर ने उपहति सं॰ 1 जो सूचक के मस्तक पर थी को गंभीर प्रकृति की पाया है, किंतु भारतीय दंड संहिता की धारा 320 के परिशीलन से उक्त उपहति गंभीर प्रकृति की नहीं कही जा सकती और इस दशा में भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि विधि की दृष्टि में पोषित नहीं की जा सकती है।

12. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अपीलार्थी घटना के समय पर नवयुवक था और वह लगभग एक वर्ष तक अभिरक्षा में रहा इस प्रकार अपीलार्थी विचारण के दौरान पहले ही अवधि भुगत चुका है और इस दांडिक अपील को मुजरा किया जाए।

13. राज्य के विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री मनोज कुमार ने जोरदार निवेदन किया है कि दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश में दुर्बलता नहीं है क्योंकि विद्वान विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर पारित किया है और आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से, विद्वान विचारण न्यायालय ने सपष्टत: कथन किया है कि अ॰ सा॰ 6 का साक्ष्य किसी दुर्बलता से मुक्त है और विचारण न्यायालय के पास यह स्वीकार करने का कारण नहीं है कि सूचक को इस मामला में झूठा आलिप्त किया गया है। उसका साक्ष्य संगत है और यह भी प्रतीत होता है कि पुलिस द्वारा उसका बयान किसी विलंब के बिना दर्ज किया गया था। यह विश्वास करने का कारण नहीं है कि घायल किसी व्यक्ति को झूठा आलिप्त करेगी और बदले में वास्तविक हमलावर को बच जाने देगी। सूचक (अ॰ सा॰ 6) का साक्ष्य उसके पति द्वारा समर्थित किया गया है। जहाँ तक घटना के कारण का संबंध है, अ॰ सा॰ 7 (राजेन्द्र प्रसाद चौधरी) के साक्ष्य से, यह अभियुक्त/अपीलार्थी सूचक की पुत्री को छेड़ा करता था और अन्वेषण अधिकारी के गैर-परीक्षण के कारण प्रतिकूलता कारित नहीं हुई है क्योंकि प्रथम पुलिस अधिकारी, जिसने अ॰ सा॰ 8 (रामनाथ चौधरी) द्वारा पीड़िता का बयान दर्ज किया है, का परीक्षण किया गया है और अभियोजन मामला पर अविश्वास करने के लिए बचाव द्वारा कुछ नहीं निकाला गया है।

14. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री एवं दंड की मात्रा पर विचार करते हुए यह सत्य है कि घोर उपहति, जैसा भारतीय दंड संहिता की धारा 320 के अधीन स्पष्ट किया गया है, लागू नहीं होती है, किंतु निष्पक्षत: निवेदन किया है कि दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश में हस्तक्षेप करने का कारण इस न्यायालय के पास नहीं है।

भारतीय दंड संहिता की धारा 320 का पठन निम्नलिखित है:–

> *320.* ***घोर उपहति–****उपहति की केवल नीचे लिखी किस्में ''घोर'' कहलाती हैं–*
>
> *पहला–पुंस्त्वहरण।*
>
> *दूसरा–दोनों में से किसी नेत्र की दृष्टि का स्थायी विच्छेद।*
>
> *तीसरा–दोनों में से किसी भी कान की श्रवणशक्ति का स्थायी विच्छेद।*
>
> *चौथा–किसी भी अंग या जोड़ का विच्छेद।*
>
> *पांचवां–किसी भी अंग या जोड़ की शक्तियों का नाश या स्थायी ह्रास।*

छठा–सिर या चेहरे का स्थायी विद्रूपीकरण।

सातवां–अस्थि या दांत का भंग या विसंधान।

आठवां–कोई उपहति जो जीवन को संकटापन्न करती है या जिसके कारण उपहत व्यक्ति बीस दिन तक तीव्र पीड़ा में रहता है या अपने मामूली कामकाज को करने में असमर्थ रहता है।

15. विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र नाथ उपाध्याय द्वारा सहायित अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री नवनीत सहाय और विद्वान लोक अभियोजक मनोज कुमार सुने गए और प्राथमिकी, फर्दबयान, गवाहों के अभिसाक्ष्य एवं प्रदर्शों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि महिला (अ॰ सा॰ 6) सूचक पर भुजाली से उसके मस्तक एवं हाथ पर प्रहार किया गया है, यद्यपि डॉक्टर ने उपहति गंभीर प्रकृति का पाया है, किंतु भारतीय दंड संहिता की धारा 320 (यथा उल्लिखित) जो 8 कोटियों में घोर उपहति परिभाषित करता है, किसी कोटि ने ऐसी उपहति घोर उपहति के रूप में प्रकट नहीं किया है। अपने पति और अ॰ सा॰ 8 (पुलिस अधिकारी) के साक्ष्य के साथ पीड़ित का साक्ष्य उपहति रिपोर्ट के साथ संगत है, जिसे मामला में प्रदर्श 5 चिन्हित किया गया है और इस दशा में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 307 के अधीन दोषसिद्ध करने के बजाए, यह न्यायालय अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 324 के अधीन दोषसिद्ध करता है और 15000/- रुपया के जुर्माना, जो इस निर्णय की प्रति की प्राप्ति की तिथि से एक माह की अवधि के भीतर पीड़िता संतोष देवी (अ॰ सा॰ 6) को भुगतेय होगा, के साथ डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास अधिनिर्णीत करता है।

16. अपीलार्थी द्वारा पहले ही भुगत ली गयी अवधि डेढ़ वर्ष की अवधि से मुजरा की जाएगी।

17. तद्नुसार, पूर्वोक्तानुसार दंडादेश में उपांतरण के साथ वर्तमान अपील खारिज की जाती है।

18. अपीलार्थी विनोद कुमार को शेष दंडादेश, भुगतने के लिए अवर न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है, जिसमे विफल होने पर विचारण न्यायालय उसका शेष दंडादेश भुगतने के लिए उसकी उपस्थिति सुरक्षित करने के लिए समस्त संभव कदम उठाएगा।

19. आवश्यक कार्रवाई के लिए इस निर्णय की प्रति के साथ एल॰ सी॰ आर॰ संबंधित न्यायालय को भेजा जाए।

माननीय अनिल कुमार चौधरी, न्यायमूर्ति

लगन कुमार एवं अन्य

बनाम

चाकू लायक एवं अन्य

S.A. No.127 of 2012. Decided on 26th April, 2018.

हिंदू दत्तक एवं भरण-पोषण अधिनियम, 1956—धारा 16—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 100—घोषणा कि दत्तक विलेख अकृत एवं शून्य और विधि में अप्रवर्तनीय है, के लिए अभिधान वाद—असफल वादी द्वारा द्वितीय अपील–दत्तक ग्रहण में संतान लेने और देनेवाले व्यक्तियों द्वारा किया गया दत्तक दर्ज करने के तात्पर्य से किसी न्यायालय के समक्ष किसी

विधि के अधीन दर्ज किसी दस्तावेज को प्रस्तुत किया जाता है, न्यायालय उपधारित करेगा कि दत्तक ग्रहण हिंदू दत्तक एवं भरण-पोषण अधिनियम, 1956 के प्रावधान के अनुपालन में किया गया है जब तक इसे खंडित नहीं किया जाता है—वादीगण तर्कपूर्ण एवं विश्वसनीय साक्ष्य देकर उपधारणा खंडित करने के भार का निर्वहन करने में विफल हुए हैं—अवर अपीलीय न्यायालय ने विस्तारपूर्ण विश्लेषण करके इसके सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्य पर विचार किया है और उसके आधार पर तथ्य के निष्कर्ष पर आया है कि दत्तक विलेख वैध, वास्तविक एवं विधि में प्रवृत्त है—सी॰ पी॰ सी॰ के धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक इसे विकृत नहीं पाया जाता है—अपील खारिज। (पैराएँ 8, 10, 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.—(2010) 15 SCC 530—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Arbind Kumar Sinha, For the Appellants; M/s Rajiv Ranjan, Shashank Saurav, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.—पक्षों को सुना गया।

2. असफल वादीगण जो अवर अपीलीय न्यायालय में अपीलार्थीगण थे, इस द्वितीय अपील में भी अपीलार्थीगण हैं।

3. यह द्वितीय अपील जिला न्यायाधीश I, दुमका द्वारा पारित दिनांक 21.6.2012 के निर्णय एवं डिक्री के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने प्रतिवाद पर अपील खारिज किया है और उपन्यायाधीश III, दुमका द्वारा अभिधान वाद सं॰ 31/1990 में पारित दिनांक 12.7.2005 का निर्णय एवं डिक्री मान्य ठहराया है।

4. अभिधान वाद सं॰ 31/1990 वादीगण द्वारा इस घोषणा के लिए दाखिल किया गया था कि दत्तक विलेख सं॰ 174/1980 अकृत, शून्य एवं विधि में अप्रवर्तनीय है क्योंकि प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा प्रतिवादी सं॰ 4 का विधिपूर्ण दत्तक ग्रहण नहीं था।

5. मूल वादी का मामला संक्षेप में यह है कि पक्षगण हिन्दु धर्मावलम्बी हैं तथा हिन्दू विधि की मिताक्षरा पद्धति द्वारा शासित हैं। प्रतिवादी सं॰ 1 पारो कुमारिन मूल वादी पेन्टर कुमार (अब मृतक) की विधिवत ब्याहता पत्नी है। मूल वादी के चार बेटे हैं। मूल वादी का आगे मामला यह है कि प्रतिवादी सं॰ 1 ने अपनी ननद/भाभी अझोला देवी जो प्रतिवादी सं॰ 1 की कजिन है के साथ अपने पिता की संपदा विरासत में पाया। यह अभिवचन भी किया गया था कि प्रतिवादी सं॰ 1 आसानी से मान जाने वाली सरल महिला है। मूल वादी का आगे मामला यह है कि प्रतिवादी सं॰ 2 चकु लायक अत्यन्त चालाक एवं धूर्त व्यक्ति है और प्रतिवादी सं॰ 3 पुरनी लयकिन की मौनानुकूलता से प्रतिवादी सं॰ 1 पारो कुमाराइन को राजी किया और प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा दत्तक विलेख सं॰ 174/1980 के रूप में तात्पर्यित नकली एवं झूठा कागज निष्पादित करवाया और उसमें चित्रित करवाया कि प्रतिवादी सं॰ 1 ने प्रतिवादी सं॰ 4 को अपने पुत्र के रूप में गोद लिया था। उक्त दत्तक विलेख प्रतिवादी सं॰ 1 के साथ कपट कर सृजित किया गया था और कपटपूर्वक उसके बाएँ अंगूठा का निशान प्राप्त किया। उक्त विलेख के परिवर्णन में झूठा प्रकथन करके कि मूल वादी जो प्रतिवादी सं॰ 1 का पति है की मृत्यु पुत्रहीन हो गयी, 22.9.1980 को उपरजिस्ट्रार, दुमका के कार्यालय में उक्त दत्तक विलेख रजिस्टर्ड किया गया था। मूल वादी ने आगे अभिवचन किया कि प्रतिवादी सं॰ 4 को दत्तक में प्रतिवादी सं॰ 1 को कभी नहीं दिया गया था। और वह पूरे समय अपने

नैसर्गिक माता–पिता के साथ रहा। मूल वादी का आगे मामला यह था कि मूल वादी तथा मूल प्रतिवादी सं॰ 1 का संतन कुमार नामक पुत्र है। अत: उस समय पर प्रतिवादी सं॰ 1 एक अन्य पुत्र गोद लेने की हकदार नहीं थी। अपने संयुक्त लिखित कथन में, सामान्य बचाव के अतिरिक्त, प्रतिवादियों ने अभिवचन किया है कि मूल वादी पेन्टर कुमार किसी तरीके से प्रतिवादी सं॰ 1 से संबंधित नहीं है बल्कि वह प्रतिवादी सं॰ 1 के पति के साथ एक ही नाम साझा करता है जिसकी मृत्यु काफी पहले पुत्र के बिना हो गयी। प्रतिवादियों का आगे मामला यह है कि मूल वादी ने बुलनी कुमराइन से विवाह किया और उक्त पत्नी के माध्यम से मूल वादी ने संतन कुमार सहित पुत्र–पुत्री पाया है। प्रतिवादियों ने यह अभिवचन भी किया कि प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा प्रतिवादी सं॰ 4 को गोद लेने के समय पर समस्त रीतियाँ संपन्न की गयी थी और दत्तक ग्रहण के बाद प्रतिवादी सं॰ 1 ने दत्तक विलेख निष्पादित किया और प्रतिवादी सं॰ 4 प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा अपने दत्तक ग्रहण के बाद प्रतिवादी सं॰ 1 के साथ रहना जारी रखा और उक्त दत्तक विलेख के संबंध में कुछ भी कपटपूर्ण नहीं है।

6. पक्षों के परस्पर विरोधी अभिवचनों के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने सात विवाद्यक विरचित किया। मुख्य विवाद्यक IV, V एवं VI है:–

(IV) क्या स्वर्गीया पारो कुमराइन मूल वादी पेन्टर कुमार की विधिवत ब्याहता पत्नी थी।

(V) क्या प्रतिवादी सं० 4 केश्वर लायक उर्फ हरि चरण कुमार पारो कुमराइन का विधितः दत्तक पुत्र है''

(VI) क्या दत्तक विलेख सं० 174/80 वैध, वास्तविक एवं प्रवृत्त है?

परस्पर विरोधी पक्षों द्वारा दिए गए मौखिक एवं दस्तावेजी दोनों साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि वादीगण यह सिद्ध करने में विफल रहे हैं कि प्रतिवादी सं॰ 1 मूल वादी पेन्टर कुमार की पत्नी है और यह भी अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी सं॰ 1 का पति जिसका नाम भी पेन्टर कुमार था की मृत्यु काफी पहले हो गयी और प्रतिवादी सं॰ 4 के दत्तक ग्रहण के समय पर प्रतिवादी सं॰ 1 पुत्रहीन विधवा थी। अत: वह पुत्र गोद लेने के लिए सक्षम थी। विद्वान विचारण न्यायालय आगे इस निष्कर्ष पर आया कि प्रतिवादी सं॰ 4 प्रतिवादी सं॰ 1 का विधित: दत्तक पुत्र है और दत्तक विलेख सं॰ 174/80 दिनांकित 22.9.1980 वैध, वास्तविक एवं प्रवृत्त है। विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर भी आया कि वाद परिसीमा द्वारा वर्जित था क्योंकि दत्तक विलेख सं॰ 174 वर्ष 1980 को अकृत, शून्य एवं विधि में अप्रवृत्त घोषित करने के लिए प्रार्थना उक्त विलेख के निष्पादन के 10 वर्ष बाद दाखिल की गयी थी और वाद प्रतिवाद पर व्यय के साथ खारिज कर दिया।

7. उक्त निर्णय से व्यथित होकर वादीगण ने जिला न्यायाधीश, दुमका के न्यायालय में अपील दाखिल किया जिसे अभिधान अपील सं॰ 12 वर्ष 2005 के रूप में दर्ज किया गया था और अंतत: इसे जिला न्यायाधीश I, दुमका द्वारा सुना गया था और आक्षेपित निर्णय द्वारा निपटाया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने पक्षों का निवेदन सुनने के बाद विनिश्चयकरण के लिए निम्नलिखित दो बिंदु निरूपित किया:–

(I) क्या दत्तक विलेख सं० 174/80 वैध, वास्तविक एवं विधि में प्रवर्तनीय है और पारो कुमराइन मूल वादी पेन्टर कुमार की विधिवत ब्याहता पत्नी है और इस पेन्टर कुमार की मृत्यु काफी पहले हो गयी और आगे प्रतिवादी सं० 4 केश्वर लायक अथवा हरिचरण कुमार पारो कुमाराइन का विधितः दत्तक पुत्र है?

(II) क्या वादी का वाद जैसा विरचित किया गया है पोषणीय है और उसके पास इसके लिए वैध वाद हेतुक है और आगे वाद परिसीमा विधि द्वारा वर्जित है?

8. अभिलेख पर मौजूद मौखिक एवं दस्तावेजी दोनों साक्ष्य के संवीक्षण के बाद विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने हिंदू दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम, 1956 की धारा 16 की दृष्टि में विधि में उपधारणा पर विचार किया कि दत्तक ग्रहण में संतान लेने–देने वाले व्यक्तियों द्वारा किया गया दत्तक ग्रहण दर्ज करने के तात्पर्य से किसी न्यायालय के समक्ष किसी विधि के अधीन रजिस्टर्ड कोई दस्तावेज प्रस्तुत किया जाता है, न्यायालय उपधारित करेगा कि दत्तक ग्रहण हिंदू दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम, 1956 के प्रावधान के अनुपालन में किया गया है जब तक इसे खंडित नहीं किया जाता है और अभिनिर्धारित किया कि वादीगण तर्कपूर्ण एवं विश्वसनीय साक्ष्य देकर उक्त उपधारणा खंडित करने का भार उन्मोचित करने में विफल हुए हैं और यह भी अभिनिर्धारित किया कि वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है।

9. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री अरविन्द कुमार सिन्हा निवेदन करते हैं कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के अधिमान के विरूद्ध आक्षेपित आदेश पारित किया और वादीगण–अपीलार्थीगण द्वारा दिए गए साक्ष्य पर इसके समुचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया। अतः, वह निवेदन करते हैं कि अवर अपीलीय न्यायालय का आक्षेपित आदेश विधि में संपोषणीय नहीं होने के कारण अपास्त किया जाए।

10. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने के बाद मैं पाता हूँ कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने वाद के विरोधी पक्षों द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध कराए गए मौखिक एवं दस्तावेजी दोनों साक्ष्य का विस्तारपूर्ण विश्लेषण एवं संवीक्षण करके इसके सही परिप्रेक्ष्य में अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार किया और उसके आधार पर तथ्य के निष्कर्ष पर आया कि दत्तक विलेख सं॰ 174/80 वैध, वास्तविक एवं विधि में प्रवर्तनीय है।

11. यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जैसा माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **गुरवचन कौर एवं अन्य बनाम सालिकराम (मृत) एल॰ आर॰ द्वारा, (2010) 15 SCC 530,** में दोहराया गया है:–

> *''10.* ***यह सुस्थापित विधि है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय प्रथम अपीलीय न्यायालय जो तथ्य का अंतिम न्यायालय है द्वारा दर्ज तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है जब तक इसे विकृत नहीं पाया जाता है।*** *अवस्था यह होने के नाते यह अभिनिर्धारित करना होगा कि उच्च न्यायालय वादी एवं प्रतिवादी के बीच मकानमालिक किराएदार संबंध के अस्तित्व और किराएदार द्वारा किराया के भुगतान में किए गए व्यतिक्रम के विवाद्यकों पर प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज तथ्य का निष्कर्ष उलटने में न्यायोचित नहीं था।''* *(जोर दिया गया)*

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता किसी साक्ष्य विशेष पर विचार नहीं किए जाने का कोई विनिर्दिष्ट उदाहरण इंगित नहीं कर सके थे। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता अवर अपीलीय न्यायालय के आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री में कोई अवैधता अथवा गलती भी इंगित नहीं कर सके थे जो द्वितीय अपीलीय अधिकारिता के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा विरचित एवं विनिश्चित किए जाने वाले विधि के किसी सारवान प्रश्न को उद्भूत करता है।

12. इस प्रकार, अपील गुणागुण रहित होने के कारण खारिज की जाती है किंतु, इन परिस्थितियों में किसी व्यय के बिना।